Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Samaj Foundation Chennai a

JEEVAN SAKHA

1644

G. K. V.
LIB.
HARDWA

Domain. Gurukul Kangri Collec

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

028767

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

078767

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized

जीवन सत्व

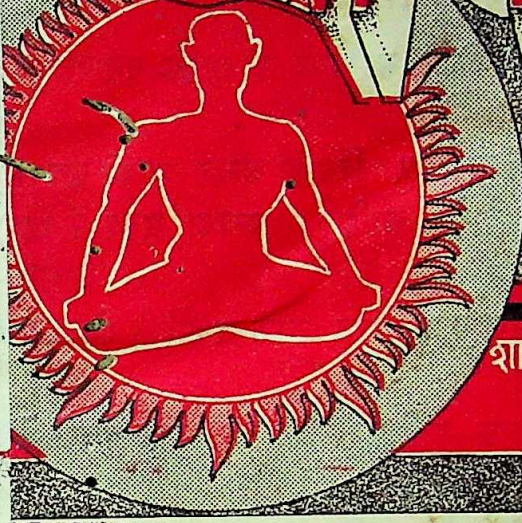

शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का
पथ-प्रदर्शक

संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा बिहार के शिक्षा विभागों द्वारा स्वीकृ

इस अंक में पढ़िये

१—वचनामृत	(आवरण)	
२—रंगों का संदेश !	श्री श्रीकृष्ण	
३—भोजन में स्फोक की उपयोगिता ...	श्री गंगाप्रसाद गौड़, 'नाहर' ...	
४—सर्वांगासन और उसका स्वास्थ्य सम्बन्धी महत्व	डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह ...	
५—'सलाद'	श्री० जानकी शरण वर्मा ...	
६—बूढ़ों के लिए सरल व्यायाम ...	श्री प्रकाशचन्द्र यादव, व्यायाम-विशारद, साहित्य-रत्न ...	
७—तत्त्व-चिकित्सा आदि इतिहास ...	श्री गंगाप्रसाद गौड़, 'नाहर' तत्व-चिकित्सक	
८—असाध्य रोग साध्य कैसे बनते हैं ? ...	डाक्टर पूचा	
९—स्त्री-व्यायाम पर एक दृष्टि ...	... ...	
१०—सम्पादकीय	... ...	

वरी
४४

संपादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

वार्षिक मूल्य
४)

प्रति अंक का
।=)

22 फरवरी 1948 को लाँगी गुरुकुल में प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रति मास इक्कीसवीं तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ४) तथा एक प्रति का ।=) है।

(३) सज्जन-गण जनवरी या जुलाई से ही ग्राहक बनें; यों किसी महीने से भी ग्राहक बनाया जा सकता है।

(४) मास के अन्त तक 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोस्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए। अन्यथा मुफ्त में वह अंक फिर न मिलेगा।

(५) पत्र भेजते समय अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ साफ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।=) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

कविराज महेन्द्रनाथ पान्डेय की दो बिलकुल नई पुस्तकें

(१) फलाहार-चिकित्सा

फलों का विवरण, विविध अवस्थाओं के भोजन में फलों का महत्व, स्वास्थ्य और आरोग्य के लिए फलों का प्रयोग, विभिन्न रोगों के उपचार के लिए फलाहार, आदि अनेक ज्ञातव्य विषयों की जानकारी के लिए इस पुस्तक को एक बार अवश्य पढ़ें। मूल्य १॥)

(२) जुकाम

सरदी या जुकाम प्रकट रूप से बहुत मामूली बीमारी जान पड़ती है, लेकिन जब लोगों को ब्रोंकाइटिस, दमा, निमोनिया आदि भयानक रोगों का शिकार बनना पड़ता है तो ज्ञात हो जाता है कि यह जुकाम का रोग कालनेमि से किसी प्रकार कम नहीं। इस पुस्तक में लेखक ने जुकाम और उससे सम्बन्ध रखने वाले रोगों के लक्षण और उपचार का पूरा-पूरा और बड़ी सरल भाषा में वर्णन किया है, जिसे हिन्दी का साधारण ज्ञान रखने वाले पाठक भी बड़ी आसानी से समझ सकते हैं। यह पुस्तक कितने परिश्रम से तैयार की गई है, रोग-निवारण के सम्बन्ध में इसमें कितनी अधिक जानकारी कराई गई है, यह तो आप एक बार इस पुस्तक को पढ़ लेने पर ही जान सकेंगे। मूल्य १॥)

मैनेजर—
प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

078767

जीवन सखा

वर्ष ९ | जनवरी १९४४ | अङ्क १

वचनामृत

एक भाड़े का टट्टू जो एक मन बोझ सहज में लाद सकता है, चाबुक की मार से यदि किसी दिन इससे अधिक अर्थात् दो या तीन मन बोझ लादकर ले जाय और उसका मालिक अपने मन में यह समझकर कि घोड़ा अधिक बोझ ले जा सकता है, उस पर प्रतिदिन उतना ही बोझा चाबुक के जोर पर लादने लगे तो उसका क्या फल होगा? अर्थात् घोड़ा कुछ दिन तक तो उस भार को जैसे-तैसे ले जा सकेगा, परन्तु बोझ का अधिक परिश्रम उस पशु को शीघ्र ही निकम्मा कर देगा। प्रतिदिन उसकी शक्ति क्षीण होती जायगी और कुछ दिन में ही वह एक मन बोझ ले जाने के योग्य भी न रहेगा। उस पशु की अशक्त टाँगों और दुर्बलता के अन्य लक्षणों से साफ मालूम हो जाता है कि उससे अधिक काम लिया गया है। मनुष्य के पाचन-यंत्र की भी यही दशा है। बहुत दिनों तक चटपटे पदार्थों की उत्तेजना में वह भले ही अपनी स्वाभाविक शक्ति से अधिक कार्य किए चला जाय, परन्तु शनैः शनैः उसकी शक्ति क्षीण होती चली जायगी और अन्त में वह उतना काम भी न कर सकेगा जितना उसके लिए स्वाभाविक था। इस प्रकार मनुष्य का स्वास्थ्य धीरे-धीरे रोग के रूप में बदल जायगा और उस मनुष्य को इसकी कुछ भी खबर न होगी! इस परिवर्त्तन में प्रायः १०-२० या इस से भी अधिक वर्ष लग सकते हैं।

—लुई कुने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंगों का सन्देश !

[श्री श्रीकृष्ण]

[रंगों में मानव-जाति के लिए एक नैसर्गिक सन्देश निहित है। यह मनुष्य के शारीरिक, मानसिक और नैतिक अथवा आध्यात्मिक विकास का मापदण्ड है। रंग के द्वारा मनुष्य की शारीरिक और मानसिक स्थिति, उसके स्वभाव और यहाँ तक कि उसकी आयु का भी सहज अनुमान किया जा सकता है। इसीलिए प्राचीन समय से ही मानव-समाज में रंग को बड़े महत्व का स्थान दिया गया है। अब तो यह रोगोपचार की एक नई प्रणाली का मूलाधार भी बन गया है। रंगों की इसी महिमा का आपको इस लेख में वर्णन मिलेगा।—सं०]

यह संसार 'नामरूपात्मक' है। जहाँ रूप है वहाँ रंग भी है; सर्वत्र रंग-रूप की ही माया फैली हुई है। प्रातःकाल सूर्योदय का नयनाभिराम दृश्य उषा की रंगीनियों से उद्भासित रहता है। लोहित संध्या अपनी अनुरागभरी किरणें समेटती हुई अंधकार के अस्ताचल में देखते-देखते विलीन हो जाती है। प्रभातकाल से लेकर दिवसावसान तक सूर्य देवता अपनी किरण तूलिका से गगन की चित्रपटी पर न जाने कितने मनमोहक रंगीन चित्र बनाते और फिर मिटाते रहते हैं। किन्तु अपने चारों ओर रंगों की माया देखते-देखते हम इतने अभ्यस्त हो गए हैं कि प्रकट रूप से उनसे बहुत कम प्रभावित होते हैं। हमारा ध्यान उधर तभी साधारणतः आकर्षित होता है जब हम कोई विशेष हृदयाकर्षक दृश्य देखते हैं—जैसे नदी या समुद्र के तटपर सूर्योदय, सूर्यास्त, इन्द्रधनुष, हरे भरे खेत, विविध रंगों के फूलों से सुशोभित उपवन, वनस्थली आदि। उसका कारण यह है कि साधारण मनुष्य रंगों से नहीं बल्कि रंगों के सम्मेल अथवा मिश्रण (Colour composition or design) से ही विशेष आकर्षित होता है। उदाहरण के लिए, जब कोई चित्रकार कई रंगों के सम्मेल से अपनी तूलिका से ऐसा रूप चित्रित करता है जो किसी विशेष भाव या विचार को प्रगट करने वाला होता है, तभी हम उससे विशेष रूप से प्रभावित होते हैं। किन्तु हम जो अपने चारों ओर प्राकृतिक दृश्य देखते हैं उनका अप्रत्यक्ष अथवा सूक्ष्म रूप से हम पर प्रभाव तो पड़ता ही रहता है, उससे हम बच ही नहीं सकते। ऊपर की ओर नीलाकाश, अवनीतल पर हरे-भरे खेत, फल-फूल लता-वृक्ष, गिरि-कानन सरि-सर आदि का अव्यक्त प्रभाव, उनके रंगों के अनुसार, हमारे शरीर और मन पर पड़ता है। उदाहरण के लिए, मैदान की अपेक्षा पहाड़ों के निवासी अधिक परिश्रमी और शरीर से हृष्ट-पुष्ट होते हैं। देहात के लोग प्राकृतिक वातावरण में रहने के कारण शहर के लोगों से अधिक स्वस्थ, सीधे-सादे और संतुष्ट दिखायी पड़ते हैं। हमारे देश का प्राकृतिक सौन्दर्य हमारे रहन-सहन, स्वभाव और आचरण, सभ्यता और संस्कृति में स्पष्ट रूप से झलकता है। हमारे साहित्य में हमारे देश की छवि-छटा की रंगीनी है। हमारे दार्शनिक विचारों में हिमालय की सी उच्चता और महानता है।

रंग हमारे विकास-क्रम का माप-दण्ड है—इसका हमारे विकास के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। हम अपने मानसिक विकास का अनुमान रंग विशेष के अभाव या अभिरुचि के अनुसार लगा सकते हैं। हम देखते हैं कि एक व्यक्ति किसी खास रंग को बहुत पसन्द करता है किन्तु वही किसी दूसरे व्यक्ति के लिए घृणोत्पादक बनता है। छोटे बालक चटक और भड़कीले रंग बहुत पसन्द करते हैं और कभी भी केवल एक रंग से संतुष्ट नहीं होते। इसी प्रकार जंगली जाति के लोग अपने साज-शृङ्गार में चटक और भड़कीले रंग की चीजों का अधिक प्रयोग करते हैं। इसका रहस्य उनके मानसिक विकास की हीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थिति अथवा अभाव में छिपा है। अधिक भड़कीले रंगों की ओर उनकी विशेष अभिरुचि उनकी हीन मानसिक स्थिति की परिचायक है। बच्चे और जंगली लोग अपने मानसिक अभाव के ही कारण गहरे और एक साथ कई रंगों के संमिश्रण को पसन्द करते हैं। इसके विपरीत वयस्क, उन्नत मस्तिष्क के पुरुषों को हलके रंग बहुत भले मालूम होते हैं और वे अनेक रंगों की अपेक्षा किसी एक रंग को ही अधिक पसन्द करते हैं। जो उन्नत विचार वाले तथा विवेकशील हैं उनका मन बाहरी दिखावे की वस्तु से प्रभावित नहीं होता और वे बुद्धि-विवेक से काम लेते हैं और उसके अनुसार वे अनेक रंगों के बजाय किसी एक ही रंग पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं।

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि आज जो हम अपनी आँखों से सात रंग देखते हैं वह हमारे कई सौ वर्षों के मानसिक विकास का फल है। सृष्टि के आदि-काल से ही मनुष्य इन सातों रंगों के देखने में समर्थ नहीं रहा है। आजकल भी हमें वर्णान्ध (Colour-blind) व्यक्ति देखने को मिलते हैं। वैज्ञानिकों का विचार है कि सृष्टि के आरम्भ में मनुष्य केवल सफेद और काला रंग ही देख पाता था। उसके बाद धीरे-धीरे नीले, पीले, हरे और लाल रंगों की लहरियाँ (Waves) उसके नेत्र-पटल (Retina) पर प्रतिबिम्बित होकर दृष्टि सम्बन्धी स्नायुओं (Optic nerves) के द्वारा मस्तिष्क में पहुंचकर दृष्टिगोचर होने लगीं। यह दृष्टि-शक्ति हमें दीर्घकाल के विकास के बाद प्राप्त हुई है। रंग-निरीक्षण की शक्ति भी हमारे लिए एक वरदान के रूप में है।

किन्तु मनुष्य का विकास केवल यहीं तक सीमित नहीं रहा, बल्कि वह इससे एक कदम और आगे बढ़ गया। यों तो बच्चे भी सातों रंग देख सकते हैं लेकिन उनका प्रेम अचेतन आकर्षण से अधिक होता है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। उनमें एक स्वाभाविक अन्तर्प्रेरणा (Natural instinct) होती है जो उनको रंग की ओर आकर्षित करती है। साधारण मनुष्य पर उनका एक प्रकार का अचेतन प्रभाव सा ही प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं जो रंगों के प्रत्यक्ष प्रभाव का भी अनुभव करने लगे हैं। उनमें अब वर्ण-चेतना (Colour consciousness) आ गई है। उसके सामने अब रंगों के नए संसार का प्रसार हुआ है। इस नए संसार में उन्हें इन्द्र-धनुष के द्वारा एक नैसर्गिक सन्देश मिला है।

फिर भी अभी तक सब लोग रंगों के महत्व को मानने के लिए तैयार नहीं हैं। कुछ लोग तो इसे बच्चों का खिलवाड़ या कोरी कल्पना मात्र समझे बैठे हैं। लेकिन हमारे वैज्ञानिकों और दार्शनिकों के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं है। वे रंगों के महत्व को सहर्ष स्वीकार करते हैं। आइए, अब हम अपने व्यावहारिक जीवन पर पड़ने वाले रंगों के प्रभाव पर विचार करें।

दिन का रंग श्वेत है, जो चैतन्य, सजगता और स्फूर्ति का सूचक है। उसके श्वेत प्रकाश के ही कारण हमारे समस्त कार्य दिन में संचालित होते हैं। रात्रि के अन्धकार में शुभ, चेतन और मांगलिक वृत्तियाँ शयन करती हैं और अशुभ अधम तथा कुटिल वृत्तियाँ सजग हो जाती हैं।

यह संसार परिवर्तनशील है। प्रकृति के आँगन में प्रतिक्षण नितनूतन परिवर्तन होता रहता है। रंग उसी गतिशीलता का माध्यम है जिसके द्वारा हम वर्तमान और भविष्य का अनुमान और अनुभव कर सकते हैं। रंग से मनुष्य का स्वभाव और उसकी आयु तक का भी अनुमान लगाया जा सकता है।

रंगों का मनुष्य के दैनिक अथवा व्यावहारिक जीवन पर ही नहीं बल्कि उसके अन्य पहलुओं पर भी पड़ता है। हम स्वास्थ्य की लालिमा और रोग की पाण्डुरता से भली भाँति परिचित हैं। इसी तरह क्रोध के रक्तवर्ण, प्रेम की गुलाबी और भय की जर्दी से भी हम अनभिज्ञ नहीं हैं। हमारे धार्मिक ग्रंथों में शुचिता को श्वेत, शान्ति को हरित, और ज्ञान को पीत वर्ण माना गया है। अस्तु, यह स्पष्ट है कि शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन तीनों पहलुओं में प्राचीन काल से ही मानव-जाति रंगों का महत्व मानती रही है।

साधारण तौर से लोग रंग को सौन्दर्य का ही उपकरण मानते रहे हैं। परन्तु अब उसके गूढ़ रहस्य आवरण धीरे-धीरे हटता जा रहा है। अब वह सौन्दर्य का उपकरण ही नहीं बल्कि जीवन का एक मुख्य अंग और मनुष्य के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति और विकास का एक मुख्य साधन भी बन गया है। सौन्दर्य तो उसके बाह्य रूप का प्रदर्शन मात्र है। रंग की गणना अब आकाश, वायु, अग्नि, पृथवी, जल आदि प्राकृतिक शक्तियों (Natural forces) में की जाने लगी है। बल्कि वह इनसे भी सूक्ष्म तत्वों, जैसे प्रकाश, विद्युत, चुम्बक आदि, की श्रेणी में आ गया है। रंग के इस सूक्ष्मतत्व को विशेष विकसित और उन्नत मस्तिष्क वाले व्यक्ति अपने ज्ञान-चक्षु (Auric-vision) से प्रत्यक्ष रूप में देख सकते हैं। अन्य प्राकृतिक साधनों अथवा शक्तियों की तरह अब प्रकाश और रंग का भी मानव-जीवन में उपयोग होने लगा है। रंग ने एक नए विज्ञान को जन्म दिया है जो नवीन रंग विज्ञान (The new science of colour) के नाम से विख्यात है। इसका प्रयोग रोगों की चिकित्सा के सम्बन्ध में विशेष रूप से हुआ है और यह बड़ी सफलतापूर्वक अधिकाधिक उन्नति करता जा रहा है।

रंग के सम्बन्ध के इस आधुनिक वैज्ञानिक अन्वेषण से मनुष्य के जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। मनुष्य के शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य के विकास के लिए रंगों का प्रयोग विविध रूपों में होने लगा है। मनुष्य की आकृति और उसका स्वभाव शरीर के अन्दर रंगों की व्यवस्था पर निर्भर है। रंगों की न्यूनता या अधिकता के अनुसार मनुष्य के स्वभाव तथा उसके शारीरिक और मानसिक स्थिति में अन्तर पड़ जाता है जिसका परिहार उन रंगों के अभाव की पूर्त्ति कर देने से हो जाता है। रंगों के अनुसार रोगों का भी उसी प्रकार निदान किया जा सकता है जिस प्रकार बात, पित्त और कफ का होता है। बात का रंग पीला माना गया है, पित्त का लाल और कफ का नीला। पहले को Colour of inspiration (प्रेरणा का वर्ण) दूसरे को Colour of activity (क्रियाशीलता का वर्ण) और तीसरे को Colour of Rest (विश्राम का रंग) कहते हैं। मनुष्य में इन तीनों रंगों की आदर्श अवस्था को ही सच्ची मानसिक, शारीरिक और नैतिक स्थिति कहेंगे। जब तक शरीर में इन तीनों की समता रहेगी तब तक शरीर, मन और आत्मा में भी आन्तरिक संतुलन अथवा सामंजस्य बना रहेगा और उसके फलस्वरूप मनुष्य पूर्ण रूप से स्वस्थ और सुखी बना रहेगा। लेकिन इन तीनों में से किसी एक का न्यूनाधिक्य होने पर उनका यह सन्तुलन अथवा सामंजस्य नहीं रह जायगा और शरीर तथा मन रोगी बन जायँगे। इस तरह की विकृति को दूर करके पुनः उनमें पहले की ही तरह सामंजस्य स्थापित कर देने का कार्य रंग ही करता है। शारीरिक मानसिक और नैतिक, इन तीनों पहलुओं को एक साथ प्रभावित करने की विशेषता केवल रंगों में ही है। रंगों की यही सब से बड़ी महिमा है।

इतना जान लेने के बाद अब हम रंगों के सन्देश को अच्छी तरह समझ सकेंगे। पहले तो यह बाह्य जगत् में हमारी सौन्दर्य-लालसा को तृप्त करके हृदय और मन को शान्ति और सुख पहुंचाता है। लेकिन बाह्य सौन्दर्य का अनुभव हम तभी कर सकते हैं जब हमारे तन और मन में शान्ति विराजमान है। यह शान्ति तभी सम्भव हो सकती है जब कि हमारे भीतर आन्तरिक संघर्ष का लोप हो जाय। यह आन्तरिक संघर्ष तभी छिड़ता है जब कि कोई कमी या त्रुटि हमारे उद्देश्य की पूर्ति होने में बाधक होती है। इस शारीरिक त्रुटि अथवा विकृति को दूर करके मनुष्य को अपने जीवन के लक्ष्य की ओर अग्रसर करने का कार्य यह रंग ही करता है। जिस प्रकार शारीरिक विकार मनुष्य की शारीरिक उन्नति और विकास में बाधक होते हैं उसी प्रकार मानसिक विकार मनुष्य का मानसिक अथवा नैतिक विकास होने में अड़चन पैदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हैं। रंग का काम है प्रकाश के द्वारा इस अड़चन को दूर करके मनुष्य की चेतना को जागृत करना। इसलिए रंगों का पहला सन्देश है स्वास्थ्य और सुख का जिसे हम अपनी अज्ञानता के कारण भूल गए हैं। हम प्रकाश और रंग की सहायता से अपने हृदय के अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करके पुनः स्वास्थ्य और सुख को प्राप्त कर सकते हैं।

हमारे लिए रंगों का दूसरा सन्देश प्रेम का है। प्रेम का गुलाबी रंग विश्व-शोधक उपकरण (Universal solvent) है, जो मनुष्य को स्वार्थ, लोभ, मोह आदि के निम्न स्तर से ऊपर उठा देता है। यह हमें मानव-जीवन की एकरूपता का पाठ सिखाता है। रंग सात हैं, जिनका हम अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार अपने व्यक्तिगत विकास के लिए उपयोग करते हैं। लेकिन इन सातो रंगों का श्रोत एक—सर्व प्रकाश का केन्द्र सूर्य—ही है, जो इस पृथ्वी पर समस्त चराचर प्राणियों का पालक और संचालक है। यही प्रकाश और शक्ति का केन्द्र है। इस तरह हम सभी एक सूत्र में बंधे हुए हैं। वह सूत्र है प्रेम का। विश्व-कल्याण की भावना से रहित होकर हम अपना व्यक्तिगत कल्याण नहीं कर सकते।

हमारी पृथवी सूर्य के चारों ओर एक गति से नर्तन करती हुई आयतन बना रही है। उसका यह नर्तन के बिना संगीत के नहीं हो रहा है। किन्तु यह संगीत-ध्वनि इतने लय, समता और गम्भीरता के साथ हो रही है कि हमारे कान उसे सुन नहीं पाते अथवा सुनकर भी उसका अनुभव हमें नहीं हो पाता। एक मधुर संगीत के साथ हमारी पृथवी, सप्त रंग के परिधान से आभूषित होकर नर्तन करती हुई सूर्य की परिक्रमा कर रही है। सात रंग हैं और सात स्वर भी। रंग के आधार पर गीत भी बने हैं। भारतीय राग रागिनियों के अलग-अलग रंग और रूप हैं जिनका वर्णन संगीतशास्त्र में देखा जा सकता है। रंग और संगीत के आधार पर रंगशाला अथवा नाटक का निर्माण हुआ है। मनुष्य का जीवन भी तो एक रंगशाला ही है! 'जीवन संगीतमय है और रंग जीवन का संगीत है।'—यह तीसरा सन्देश है।

जब रंग और संगीत में ही कोई भेद नहीं तो भावों में क्या होगा? जब भावों का माध्यम भाषा है तो वह भी भावों के साथ साथ संगीत में लीन हो जायगी। रंग आत्मा की भाषा है। हमारे विचार भी रंगों के झलकते हुए चित्र हैं। हमारे भाव भी रंग के धागे में पिरोए हुए हैं तो फिर अन्त में यहाँ पर भेद किस बात का रह गया? जब आत्मा एक है तो उसकी भाषा का माध्यम भी वही सर्व व्यापी रंग ही हुआ।

मनुष्य उन्नतिशील है। वह अपने लक्ष्य तक पहुँच कर ही रहेगा। उसका अन्तिम ध्येय है परिपूर्णता, जहाँ न कोई इच्छा है, न राग है न द्वेष। वह पूर्ण समता या स्वतन्त्रता है जहाँ कोई कमी या त्रुटि नहीं रह सकती। वहाँ अविद्या अथवा अज्ञान का अंधकार प्रवेश नहीं कर सकता। सात रंग मनुष्य के विकास के सात चरण हैं। पूर्णता को वह तभी प्राप्त होगा जब वह श्वेत प्रकाश में अपने को लीन कर देगा, जहाँ सातों रंग अपनी आदर्श मात्रा में मिले हुए हैं। वही है सब का लक्ष्य—अनन्त शुचिता अखण्ड समता और पूर्ण शान्ति की अवस्था, जहाँ से मनुष्य का आगमन हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन में स्फोक की उपयोगिता

[श्री गंगाप्रसाद गौड़, 'नाहर']

[शरीर की पाचन-प्रणाली के सम्बन्ध में मल-विसर्जन क्रिया बहुत महत्वपूर्ण है। हम जो भोजन करते हैं उसका समीकरण होने बाद मल के रूप में बच रहने वाला अवशिष्ट अंश शरीर से बाहर निकल जाना चाहिए। मल विसर्जन की इस क्रिया में स्फोक से बड़ी सहायता मिलती है। स्फोक से मतलब खुज्झा, चोकर, भूसी आदि से है। बिना छंटा हुआ चावल, छिलके सहित तरकारी और चोकर सहित आटे की रोटी की उपयोगिता पर हम बराबर जोर देते रहते हैं। प्रस्तुत लेख में अनुभवी लेखक ने इस विषय पर विस्तृत विचार प्रकट किए हैं।—सं०]

जिस प्रकार हमारे शरीर के भीतर स्नायुओं का एक जाल-सा बिछा हुआ है और ऊपर से वह सुदृढ़ चमड़े की एक खोल से ढका है, उसी प्रकार हमारे प्राकृतिक खाद्य पदार्थों के भीतरी हिस्से में भी काष्ठ निर्मित नसों का एक जाल-सा बिछा है, जिसके आश्रय खाद्योजादि आवश्यक पोषक तत्व उनमें स्थित होते हैं। उनकी वाह्य रक्षा के निमित्त प्रकृति ऊपर से एक दूसरा आवरण चढ़ाये रहती है, जिसे छिलका या Skin कहते हैं। खाद्य पदार्थों की ये नसें अथवा छिलके अधिकांश में स्फोक के बने होते हैं, या स्वयं स्फोक होते हैं। इस तरह चावल का स्फोक-भाग उसका कना, गेहूँ का उसका चोकर, तथा फल सब्ज़ी आदि का स्फोक-भाग उनका भीतरी खुज्झा एवं ऊपरी छिलका होता है। प्राकृतिक आहार-शास्त्र में यह स्फोक एक अलग तत्त्व ही माना गया है, जिसका महत्व आहार-शास्त्रियों के समग्र विख्यात विटामिनों से किसी हालत में भी कम नहीं है। स्फोक का दूसरा नाम काष्ठोज है। अँग्रेज़ी में इसको Cellulose या Roughage कहते हैं।

यह सत्य है कि स्फोक पेट में जाकर स्वयं नहीं पचता, किन्तु यह भी असत्य नहीं है कि बिना इस तत्त्व के हमारा खाया हुआ भोजन उत्तमता के साथ किसी हालत से भी पच नहीं सकता। घोड़े आदि जानवर भी जई की भूसी तथा अन्नों के छिलके पचा नहीं सकते और उन्हें लीद के साथ निकाल देते हैं। हाथी खड़े धान खाकर धान के छिलकों को लीद द्वारा निकाल फेंकते हैं। परन्तु क्या यह सम्भव है कि इन पशुओं को स्फोकहीन, छिले दाने देकर हम इन्हें निरोग रख सकें? मनुष्यों एवं पशुओं के अतिरिक्त निर्जीव वस्तुओं के सम्बन्ध में भी हम इस नियम की अनुकूलता तथा समता पाते हैं। किसी (Locomotive) इञ्जिन में आप निर्मल (Distilled) जल भर कर उसमें उतनी अच्छी (Steam) नहीं पैदा कर सकते जितनी कि गदला जल (Muddy water) भर कर। उसी प्रकार क्रूड-आयल-इञ्जिन में क्रूड (मोटा, गंदा) आयल की जगह उत्तम स्वच्छ (Refined.) तेल डालकर उसमें द्रुत गति नहीं पैदा की जा सकती।

हमारे बड़ी आँत की बनावट इस प्रकार की है कि उसमें वे पदार्थ जिनका रस निकल गया होता है जमा हो जावें। अतः रसहीन तथा अनावश्यक पदार्थों को निकाल फेंकने के लिये ऐसा भोजन ज़रूरी है, जिसमें काष्ठोज वा स्फोक काफ़ी हो। भोजन में स्फोक की उपस्थिति से भोजन हलका हो जाता है, जिससे पेट उसे शीघ्र पचा सकता है। इसकी अधिकता से आँतों से मल का बाहर निकलना सरल हो जाता है। यह धारणा, कि जब काष्ठोज हमारी पाक-प्रणाली में अपचनशील है तो उसे ग्रहण ही क्यों किया जाय, सर्वथा मिथ्या एवं भ्रमपूर्ण है। वास्तव में हमारे प्रतिदिन के भोजन में यह काष्ठोज ही वह पदार्थ है जिसके कारण भोजन के आवश्यक तत्त्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाले तत्त्व आसानी से पचते हैं। स्फोक रहित भोज्य पदार्थ पाकस्थली में जाकर परस्पर चिमट कर चिकनी मिट्टी के लोंदे वा पिंड के समान निश्चेष्ट पड़ जाते हैं, जिनके बीच पाचन के समय घुसने अथवा जज़्ब होने में, पाचक रस, (Digestive juices) चाहे उनकी मात्रा कितनी ही अधिक क्यों न हो, असफल सिद्ध होते हैं, किन्तु इसके विपरीत स्फोक युक्त खाद्य पदार्थ पाकाशय में पहुँच कर फुलफुले और फैले-फैले रहते हैं, जिससे पाचन के समय पाचक रस उनमें पूर्णतः जज़्ब होकर उन्हें शीघ्राति-शीघ्र पचा डालता है। भोज्य पदार्थों का स्फोक वाला भाग शुद्ध और नियमित रूप से शौच लाने में भी अद्वितीय है। उसका आवश्यक दबाव बड़ी आँत में एकत्रित मल के ऊपर पड़कर, शरीर के उस भाग वाले अवयवों एवं आँतों की मांस पेशियों को क्रियाशील कर देता है, जिससे कोष्ठ बद्धता कभी होती ही नहीं। बोझ डालने की यह स्वाभाविक क्रिया चिकनी-चुपड़ी एवं निष्प्राण खाद्य पदार्थों को खाकर नहीं उत्पन्न की जा सकती। ऐसे पदार्थ तो पाकस्थली में जाकर पड़े-पड़े केवल सड़न ही पैदा करते हैं, जो अनेकानेक रोगों का कारण बनती है।

पाश्चात्य विद्वान् डा० जोसिया ओल्ड फ़ील्ड ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "Constipation, Its causes and cure" में निम्नलिखित पंक्तियाँ, प्रस्तुत विषय के सम्बन्ध में लिखी हैं जो ज्ञातव्य है :—

"The ordinary man in the street is exceedingly illogical; first of all he wants to live upon concentrated food because it is nutritious and contains no waste matter; and then, when he finds that as a result of this there is no work for his lower intestines to do, and that, therefore, he suffers from constipation, he promptly takes pills to cure the effect of the very method he advocates .....People who eat natural rolled oats, or crushed wheat, or whole meal flour, rarely complain of chronic constipation. It is where white flour and pastry flour and finally prepared cereals are used, with all their outer covering removed, that we find constipation most prevalent."

एक दूसरे प्राकृतिक तत्त्ववेत्ता डा० केलॉग ने स्फोक को कोष्ठबद्धता की रामबाण औषधि कहा है। उनके पास जब कोई कब्ज़ का रोगी आता तो वह उससे केवल गेहूं के चोकर की रोटी खाने को कहते, जिससे उसको आशा से अधिक लाभ होता।

उपरोक्त नियम के आधार पर ही कहा जाता है कि पूरा अन्न तथा कच्ची साग-सब्ज़ी आदि खाद्य खाना स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यन्त हितकर है। क्योंकि ऐसा करने से प्राकृतिक स्वाद तथा पूरे खाद्योज तो मिलते ही हैं, साथ-ही-साथ स्फोक भी हमें पूरे परिमाण में एवं बिना नष्ट हुये मिल जाते हैं, जिससे सब रोगों का मूल मलावरोध सदैव के लिये दूर रहता है। पेट ख़राब रहता हो, अपच हो, दस्त साफ़ न होता हो, तो उस दिन अन्न का भोजन बन्द करके केवल किसी शाक मूली, सरसों आदि के हरे पत्ते साफ़ करके भर पेट खालें। चार घंटों के बाद खुल कर पाखाना आजायगा। जो कच्चा शाक न खा सकें वे उसे उबाल सकते हैं, किन्तु उसका पानी हरगिज़ न फेंकें। करमकल्ला के पत्ते बिना पकाये खाने से बहुत शीघ्र कोषाणु बनते हैं। इसी तरह सूखे वा कच्चे नारियल में स्फोक काफ़ी मात्रा में पाया जाता है, जो पेट को शर्तिया साफ़ करता है। हरा अमरूद खाकर यदि ऊपर से दूध पी लिया जाय तो थोड़ी देर में ही शौच जाने की ज़रूरत पड़ जायगी।

यदि यह कहा जाय कि काष्ठोज, खाद्योज 'B' का घर है तो ग़लत न होगा। खाद्योज 'B' का दूसरा नाम स्वाद-खाद्योज (Appetite vitamin) है। इस तरह हम देखते हैं कि काष्ठोज तत्त्व से ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमें भोज्य पदार्थों में प्राकृतिक स्वाद की प्राप्ति होती है। और इससे तो कोई इन्कार ही नहीं कर सकता कि काष्ठोज भोजन के साथ पाचन-प्रणाली में पहुंच कर तथा पाचन-यन्त्रों को उचित व्यायाम देकर उनको पुष्ट एवं स्वस्थ्य करता है। डा० अल्बर्ट ब्रडीनट का कथन है कि स्फोकहीन खाना खाने से बदहज़मी, निर्बलता, गठिया, कमर का दर्द, हृदय-विकार, तथा पथरी आदि रोग आ घेरते हैं। सिलविस्टर साहब एक स्थान पर लिखते हैं कि अट्ठारहवीं शताब्दि में जब ब्रिटेन और फ्रांस में युद्ध हुआ था तो गेहूं की कमी के कारण पार्लियामेन्ट ने फ़ौज के सिपाहियों को चोकर समेत आटे की रोटी देने के लिये आज्ञा निकाली, जिसका आश्चर्यजनक फल यह हुआ कि उन सिपाहियों का स्वास्थ्य पहले से कहीं अधिक सुधर गया। यह प्रताप गेहूँ के चोकर का ही था। प्रसिद्ध विद्वान सुक़रात ने भी बे-छने आटे की बड़ी प्रशंसा की है और उसे आमाशय के लिये हितकर बतलाया है।

गत महायुद्ध के अन्तिम समय में, अर्थात् १९१७ में, जब डेनमार्क की जर्मनों ने बड़ी कड़ी नाकाबंदी कर रखी थी तो वहाँ के निवासी खाद्य पदार्थों की कमी के कारण भूखों मरने लगे। उस वक्त सरकार ने डेनमार्क के प्रसिद्ध आहार-शास्त्री डा० मिकेल हिण्डहीड (Dr. Mikkel Hindhede) को, जो कोपेनहेगेन में भोजन सम्बन्धी खोज करने वाली प्रयोगशाला के डाईरेक्टर थे, भोजन नियामक (Food controller) के पद पर नियुक्त किया। उस वक्त डाक्टर महोदय ने सर्व साधारण को वही भोजन देना आरम्भ किया जो उनकी नियुक्ति के पूर्व, वहाँ जानवरों को दिया जाता था। अर्थात् एक साल के लगभग उन्होंने सारे डेनमार्क वासियों को चोकर समेत आटे की रोटी, छिलका समेत दाल एवं साग सब्ज़ी, तथा पशुओं को सामान्यतः दिये जाने वाले चारे और दाने आदि पर रखा। जिसका परिणाम केवल यही नहीं हुआ कि देश दुर्भिक्ष से पूरी तरह बच गया, अपितु इसका प्रभाव जनता के साधारण स्वास्थ्य पर भी जो आश्चर्यजनक रूप से पड़ा वह वर्णनातीत है। उदाहरण स्वरूप केवल एक वर्ष में ही वहाँ मृत्यु का अनुपात १२३६ से घट कर ९८५ हो गया। कहा जाता है कि इतनी कम मृत्यु-संख्या डेनमार्क में पिछले वर्षों में कभी नहीं हुई थी।

अनाजों और तरकारियों में क्षार का भाग अधिकतर उनके छिलकों वा स्फोक में ही रहा करता है, जैसे गेहूँ में लोहा, फास्फोरस, सल्फर और पोटाशियम नामक क्षार विद्यमान रहते हैं जो सब के सब उसके चोकर वाले भाग में ही पाये जाते हैं। ये क्षार शरीर के लिये अत्यन्त उपयोगी हैं। विशुद्ध रक्त क्षारमय होता है, प्राकृतिक-चिकित्सा का यह सूत्र प्रसिद्ध ही है। इस सिद्धान्तानुसार, स्फोक का महत्व और भी बढ़ जाता है, और यह रक्त-शोधक सिद्ध होता है।

स्फोक में कई प्रकार के प्राकृतिक लवण भी अधिकता से पाये जाते हैं जो सत् स्वास्थ्य के लिये कम आवश्यक नहीं होते। शरीर में इन लवणों की कमी के कारण रक्तहीनता रोग के आक्रमण की सम्भावना रहती है, जिससे चेहरा पीला और शरीर कृश हो जाता है।

भारत-प्राण महात्मा गाँधी अपने आश्रम में एक-न-एक खाद्य विषय का प्रयोग प्रायः किया ही करते हैं। एक बार उन्होंने एक सज्जन के कहने पर गेहूँ के स्फोक (चोकर) से बनने वाले एक अति सुस्वादु खाद्य का प्रयोग करके, उसका वर्णन उन्होंने "हरिजन" में किया था, जो नीचे दिया जाता है :—

"युक्ताहार के विषय में इस पत्र 'हरिजन' में समय-समय पर जो लेख निकलते रहते हैं उन्हें नियमित रूप से पढ़नेवाले पाठक समझते होंगे कि हम जो गेहूँ का चोकर और चावल की भूसी फेंक देते हैं या ढोरों को खिला देते हैं वे हमारे आहार के लिये कितनी उपयोगी वस्तुएँ हैं।..... .....हमें यदि इस दुनिया में किसी भी राष्ट्र से हार नहीं खानी है, और हिंसा-प्रतिहिंसा की प्रतिस्पर्धा में नहीं उतरना है, या एक दूसरे का गला नहीं घोंटना है तो हमें

(आगे १८ पेज पर देखिये)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वांगासन और उसका स्वास्थ्य सम्बन्धी महत्व

[डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह]

[स्वास्थ्य एवं आरोग्य की कामना तो सभी करते हैं, लेकिन बहुत लोग समयाभाव अथवा आलस्य के कारण आवश्यक व्यायाम करने में अपनी उदासीनता या उपेक्षा का ही भाव दिखाते हैं। नौकरीपेशा आदमियों के लिए तो व्यायाम सम्बन्धी कठिनाई और भी अधिक होती है। इसलिए अगर ऐसे लोग कम से कम समय देकर व्यायाम का अधिक से अधिक लाभ उठाना चाहते हैं तो उनके लिए यहाँ एक ऐसा व्यायाम बताया जाता है जिसके करने में मुश्किल से १५-२० मिनट लगेंगे लेकिन इससे लाभ अद्वितीय होगा। इसके साथ ही साथ वे यह भी जान सकेंगे कि सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दृष्टियों से स्वास्थ्य तथा आरोग्य के लिए इस योगासन का क्या महत्व है। —सं०]

यौगिक-व्यायाम के क्षेत्र में सर्वाङ्गासन को बड़ा महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है; कारण यह कि कण्ठमणि अथवा चुल्लिका ग्रंथि (Thyroid) को स्वस्थ बनाने का यह एक सब से अधिक शक्तिशाली साधन है। कण्ठमणि के स्वस्थ होने का अर्थ प्रायः सम्पूर्ण शरीर का स्वस्थ होना है। अतः सबसे पहले यह जान लेना अच्छा होगा कि यह कण्ठमणि अथवा चुल्लिका ग्रंथि क्या है और इस पर सर्वाङ्गासन का किस प्रकार प्रभाव पड़ता है।

कण्ठमणि प्रणाली-रहित (Duct less) ग्रंथि (Gland) है। प्रणाली-रहित ग्रंथियों का शरीर की अन्य ग्रंथियों से क्या अन्तर है, यह इस बात से जाना जा सकता है कि इन ग्रंथियों में प्रणालियाँ नहीं होतीं और इनके द्वारा उत्पन्न होने वाला रस प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से लसीकावाहक नालियों (Lymphatic vessels) के जरिये रक्त में मिलता है। प्रत्येक प्रणाली-रहित ग्रंथि में से एक प्रकार का आन्तरिक स्राव (Secretion) होता है जिसमें एक या उससे अधिक सक्रिय पदार्थ (Active Substance) होते हैं जो शरीर के अवयवों और तन्तुओं (Tissues) में रक्त-प्रवाह के द्वारा पहुँचते हैं, निकण्ठमणि, (Parathyroids), एड्रीनल (Adrenals) और लीहा (Spleen) ये शरीर की अन्य प्रणाली-रहित ग्रंथियाँ हैं। यह कण्ठमणि गर्दन के नीचे के हिस्से में सामने की तरफ़ और अगल-बगल में होती है। कण्ठमणि ऊर्ध्वधमनी (Superior thyroid artery) और कण्ठमणि-अधोधमनी (Inferior thyroid artery), ये दो इसकी सहायक धमनियाँ हैं। चुल्लिका की ये दोनों धमनियाँ बड़े आकार की होती हैं और इनके द्वारा बहुत अधिक परिमाण में स्वच्छ रक्त उसे प्राप्त होता है।

कण्ठमणि का स्वस्थ रहना और ठीक तरह से अपना कार्य करने में समर्थ होना, ये दोनों बातें मुख्यतः इसे शुद्ध रक्त पहुंचाने वाली धमनियों और शिराओं के ठीक तरह से कार्य करने पर निर्भर करती हैं। शरीर के अन्य अंगों की भाँति यह कण्ठमणि भी बराबर क्रियाशील बनी रहती है।

अगर इसे वह तत्त्व नहीं मिलता जो इसके विभिन्न भागों के पोषण के लिए आवश्यक है तो वे शीघ्र ही शक्ति-हीन हो जायँगे और अपना काम करना बन्द कर देंगे। और इस प्रकार समूची प्रणाली के स्वास्थ्य के लिए ख़तरा पैदा हो जायगा। इसलिए इस ग्रंथि के तन्तुओं को अनिवार्य रूप से पोषण तत्व पहुंचाते रहना होगा। इसके अलावा यह भी ध्यान में रखना होगा कि चुल्लिका ग्रंथि को जो पोषक तत्व प्राप्त होता है वह एक रासायनिक प्रक्रिया के द्वारा ही होता है, जिसके फलस्वरूप उसमें (कण्ठमणि में) से मल-युक्त पदार्थ निकलते हैं और अगर उन मलयुक्त पदार्थों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को अपने मूल स्थान में पड़ा रहने दिया जाय तो वे संमूची प्रणाली को विकारयुक्त और विषाक्त कर देते हैं। इसलिए इन अनावश्यक मलयुक्त पदार्थों की बराबर सफ़ाई होती रहनी चाहिए। शरीर के लिए लाभदायक और उपयोगी होने के वास्ते इस ग्रंथि के लिए एक तीसरी बात की भी आवश्यकता होती है। इस ग्रंथि का कार्य एक खास तरह का आन्तरिक पाचक रस (secration) उत्पन्न करना है। इस रस को तैयार करने के लिए इस ग्रंथि को कुछ खास तरह के पदार्थों की आवश्यकता होती है जो उसे अनिवार्यतः प्राप्त होते रहने चाहिएँ। चुल्लिका रक्तवाही नालियों के द्वारा जो रक्त का प्रवाह होता है उससे इस ग्रंथि की इन तीनों आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है।

संक्रामक या छूत की बीमारियाँ, बारम्बार गर्भ धारण, अत्यधिक कामुकता आदि अनेक कारणों से इस ग्रंथि का ह्रास होता है। इन अवस्थाओं में सामान्य रक्तवाही नाली में जो रक्त प्रवाहित होता है वह इस ग्रंथि को पुनः स्वस्थ बनाने के हेतु पर्याप्त नहीं होता; लेकिन अगर रक्तवाही नालियों में अपेक्षाकृत अधिक शुद्ध और स्वस्थ रक्त प्रवाहित होने लगे तो उसके फलस्वरूप इस ग्रंथि के सामान्य कार्यों में सुधार होने लगता है।

सर्वांगासन करने से चुल्लिका रक्तवाही नालियों में रक्त का संचार बढ़ता है और उनमें अपेक्षाकृत अधिक रक्त पहुँचता है। इस प्रकार इस ग्रंथि को जो सामान्य से अधिक रक्त मिलता है वह उसकी धमनियों में आसानी के साथ प्रवाहित हो जाता है। चुल्लिका की धमनियाँ (Veins) उसकी रक्तवाही नालियों के ही समान बड़ी आकृति वाली होती हैं। ये दोनों ही विशेषरूप से बड़े आकार की होती हैं। इसके साथ ही साथ चुल्लिका ग्रंथि से लेकर हृदय तक की धमनियों का मार्ग इस आसन में निर्बाध खुला रहता है जिसके फलस्वरूप चुल्लिका ग्रंथि और हृदय के बीच बिना किसी रोक-टोक के रक्त का आवागमन होता रहता है। अतः यह स्पष्ट है कि सर्वांगासन में चुल्लिका ग्रंथि से लेकर हृदय तक और फिर हृदय से लेकर चुल्लिका ग्रंथि तक समुचित परिमाण में रक्त का संचार होता है और इस ग्रंथि को पोषण तत्व प्राप्त करने, लसीका (Secretion) तैयार करने और मल-विसर्जन का अवसर प्राप्त होता है। इस सम्बन्ध में एक उल्लेखनीय बात यह भी है कि इस आसन से न केवल रक्ताभिसरण प्रणाली के जरिये बल्कि स्नायुप्रणाली के भी जरिये चुल्लिका को अपने कार्य में सहायता मिलती है। इस प्रकार इन दोनों प्रणालियों के जरिये चुल्लिका को सहायता पहुँचाने के कारण स्वास्थ्य की दिशा में सर्वांगासन सब से अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है।

सर्वांगासन का पूरक

मत्स्यासन सर्वांगासन का पूरक है। इसलिए सर्वांगासन का अभ्यास करने के साथ-साथ मत्स्यासन भी करना चाहिए। ऐसा करने से सर्वांगासन का पूरा-पूरा लाभ उठाया जा सकता है। ग्रीवा की कशेरुकाओं (Cervical vertebrae) और संधिबंधों (Ligaments) को स्वस्थ, सशक्त और अपने स्थान पर प्रतिष्ठित होकर कार्य करते रहने के लिए यह बहुत ही आवश्यक है कि उनको नियमित रूप से व्यायाम मिलता रहे। इन दोनों आसनों में ग्रीवा के सभी भाग आगे और पीछे की तरफ़ झुकते हैं और इस प्रकार इन आसनों से इस उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है। इसके साथ ही साथ मत्स्यासन से भसरा (तेज़ी के साथ और लगातार गहरी साँस लेने) क्रिया में भी बड़ी सुविधा होती है, क्योंकि इस आसन में मुखकण्ठ (Pharnyx) पूरी तौर से खुला रहता है।

सर्वांगासन का रोगोपचार सम्बन्धी महत्व

हमारे शरीर का ऐसा शायद ही कोई भाग होगा जिसे असंख्य जीवाणुओं (Bacteria) का सामना न करना पड़ता हो। वे हमारे शरीर के भीतर घुस जाने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। ये हमारे रक्त में प्रवेश कर जाते हैं और उसे विषाक्त कर देते हैं। भोजन और जल के रूप में ये अदृश्य शत्रु हमारे शरीर के भीतर प्रवेश करते ही रहते हैं। इनके अलावा हमारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर के भीतर स्वतः इस प्रकार के विनाशक जीवाणुओं की उत्पत्ति होती रहती है। हम जो भोजन करते हैं उसका पहले समीकरण होता है और उसके बाद वह शक्ति प्रदान करता है। इस रासायनिक प्रक्रिया को अंग्रेजी में 'मेटाबोलिज्म' (Metabolism) कहते हैं। इस क्रिया के द्वारा शरीर के भीतर मल की उत्पत्ति होती है जो भयानक विष के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

किन्तु इन घातक शत्रुओं से रक्षा के लिए प्रकृति ने बड़ी सावधानी के साथ शरीर को साधन भी प्रदान किए हैं। इनमें से कुछ विष तो स्वतः नष्ट हो जाते हैं और कुछ विषों का बहिष्करण हो जाता है। चुल्लिका ग्रंथि विष नष्ट करने वाला शरीर का सब से महत्वपूर्ण अंग है। जब तक यह ग्रंथि स्वस्थ और सशक्त है तब तक यह यथासम्भव इन शत्रुओं को अपनी लसीका के द्वारा नष्ट करती हुई शरीर की रक्षा ही करती रहती है, लेकिन जब इसमें विकृति उत्पन्न हो जाती है या इसमें कमजोरी आ जाती है तो यह शरीर की रक्षा करने में असमर्थ हो जाती है और शरीर में रोग आसानी से घर कर लेते हैं। इसलिए बहुत से डाक्टर चुल्लिका की विकृति के कारण उत्पन्न होने वाले रोगों में इस ग्रंथि का सत्व (Extracts) रोगियों को देते हैं। रोगोपचार की इस प्रणाली को अंग्रेजी में आरगेनोथिरैपी (Organotherapy) कहते हैं और कण्ठमणि के सत्व का प्रयोग चुल्लिकोपचार (Thyroid treatment) कहलाता है।

अब यदि सर्वांगासन विकृत चुल्लिका को पुनः स्वस्थ और सतेज करने की क्षमता रखता है तो यह निर्विवाद है कि यह इस रोगोपचार प्रणाली का भी स्थान ग्रहण कर सकता है। अगर यह चुल्लिका ग्रंथि स्वस्थ हो तो इस तरह की कृत्रिम उपचार प्रणाली की आवश्यकता ही नहीं पड़ सकती।

कुष्ठ रोग के लिए सर्वांगासन

'आरगेनो थिरेपी' चिकित्सा-प्रणाली में कुष्ठ रोग के लिए चुल्लिकोपचार का विधान है। इस चिकित्सा-प्रणाली के एक प्रमुख अधिकारी डा० सेजस (Dr. Sajaus) का कहना है कि इस चिकित्सा का उद्देश्य यह होना चाहिए कि रक्त में जीवाणुओं का नाश करने की क्षमता बढ़ाकर इस रोग के जीवाणुओं का संहार कर दिया जाय। इसके लिए उन्होंने विशिष्ट मात्रा में चुल्लिका ग्रंथि का उपयोग करने की सलाह दी है। अभी तक इस रोगोपचार के सन्तोषजनक परिणाम नहीं हुए हैं, लेकिन उनका विचार है कि इस रोगोपचार के द्वारा रोगी को विशेष लाभ पहुँचाया जा सकता है।

किन्तु भारतीय यौगिक चिकित्सा-प्रणाली का दावा है कि सर्वांगासन के द्वारा कुष्ठ रोग अच्छा किया जा सकता है, जिसके साथ ही साथ दुग्धाहार की भी आवश्यकता होती है। इस रोगोपचार के सम्बन्ध में प्रयोग भी हुए हैं, जिन में यदि शत प्रतिशत नहीं तो काफी सफलता अवश्य मिली है। उन प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया है कि सर्वांगासन से चुल्लिका के स्वास्थ्य और शक्ति में वृद्धि होती है और इस प्रकार वह इस रोग के जीवाणुओं का नाश करने में समर्थ होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जीवन को घृणित और दुर्वह बना देने वाले इस महारोग का अगर कोई सन्तोष जनक उपचार हो सकता है तो वह केवल यह यौगिक उपचार ही है।

प्रणाली-रहित ग्रंथियों के सम्बन्ध में जो आधुनिक अन्वेषण हुए हैं उनसे यह प्रमाणित हो गया है कि इन ग्रंथियों में एक दूसरे से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। कंठमणि का जननेन्द्रिय सम्बन्धी ग्रंथियों (Sexual glands) पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है, और जो स्वतः चुल्लिका ग्रंथियों पर भी अपना प्रभाव डालती हैं। यौगिक चिकित्सा सम्बन्धी किए गए प्रयोगों से यह प्रकट हुआ है कि सर्वांगासन से विकृत वीर्यकोषों (Atrophied testes) को पुनः स्वस्थ और सशक्त बनाया जा सकता है।

आजकल बहुत से नवयुवक स्वयं अपने प्रति तथा समाज के प्रति किए जाने वाले दुराचरणों के फलस्वरूप जननेन्द्रिय-सम्बन्धी रोगों के शिकार बनते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहते हैं। अतः यदि वे सर्वांगासन के उपचार को अपनावें तो वे अपनी खोई हुई शक्ति को पुनः प्राप्त कर सकते हैं, जोकि आजकल की तरह तरह की विज्ञापित पेटेन्ट दवाइयों से प्राप्त करना असम्भव है। लेकिन यहाँ पर यह जान लेना होगा कि नाजुक मामलों में बड़ी सावधानी के साथ इस उपचार को करना चाहिए। यह रोगोपोचार किसी अनुभवी व्यक्ति की ही निगरानी में शुरू करना चाहिए क्योंकि अन्य चिकित्सा-प्रणालियों की भाँति यौगिक चिकित्सा-प्रणाली में भी उपचार सम्बन्धी विस्तृत जानकारी की आवश्यकता होती है।

स्त्री-रोगों के लिए सर्वांगासन

पुरुषों के लिए वीर्यकोष (Testes) का जो महत्व है वही महत्व स्त्रियों के लिए डिम्बग्रंथियों अथवा गर्भाशय (Ovaries) का होता है। अतः यदि महिलाएं भी सर्वांगासन करें तो जनेन्द्रिय सम्बन्धी ग्रंथियों की विकृतियों के कारण उत्पन्न होने वाले नाना प्रकार के रोगों से वे छुटकारा पा सकती हैं।

डा० लोरैण्ड (Dr. Lorand) तथा अन्य विशेषज्ञों के मतानुसार प्रायः कुछ विशिष्ट स्त्रियों को मोटापा (Obesity) का रोग हो जाता है जो किसी संक्रामक रोग के द्वारा अथवा जल्दी जल्दी गर्भधारण करने, अत्यधिक विषयासक्त होने या ऐसे पदार्थ ग्रहण करने, जो शरीर में विष उत्पन्न कर देता है, से डिम्बकोषों में खराबी पैदा जाने के कारण होता है। इस तरह के मोटापा रोग को एण्डोजेनस (Endogenous) कहते हैं जिसका बहुत अधिक सम्बन्ध प्रणाली-रहित ग्रंथियों से ही होता है। इस मोटापा का अन्य प्रकार के मोटापे से, जिसे 'एक्सोजेनस' (Exogenous) कहते हैं, कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि यह दूसरे प्रकार की मोटापा का रोग अनुचित आहार, व्यायाम की अभाव आदि कारणों से होता है। बहुत अधिक पौष्टिक पदार्थ खानेवाली और बहुत कम व्यायाम करने वाली स्त्रियों को यह रोग होता है। अतः यदि वे केवल सीधा-सादा आहार ग्रहण करें और नियमित व्यायाम करें तो उनका मोटापा रोग दूर हो सकता है। उन्हें कब्ज की शिकायत बहुत कम होती है और खूब पसीना आता है। लेकिन पहले प्रकार के मोटापा रोग से ग्रस्त होने वाली स्त्रियों को बहुत अधिक कब्ज की शिकायत रहती है और उन्हें बहुत कम पसीना आता है। उनका चेहरा पीला दीख पड़ता है और शरीर की त्वचा शुष्क और ठण्ढी रहती है। इस तरह के मोटापा रोग के साथ ही साथ बाँझपन (Sterility) का भी रोग उनमें पाया जाता है जिसका कारण गर्भाशय की विकृति होती है। बहुत से चिकित्सक इस तरह की स्त्रियों का मोटापा दूर करने के लिए उपवास-चिकित्सा का प्रयोग कराते हैं लेकिन इससे उन्हें नहीं के बराबर लाभ पहुँचता है और वे बन्ध्या ही बनी रहती हैं।

इन अवस्थाओं में निश्चय ही उन्हें सर्वांगासन के उपचार से बहुत अधिक लाभ पहुँचाया जा सकता है। चुल्लिका के स्वस्थ और शक्तिशाली होने से शरीर-प्रणाली की रासायनिक प्रक्रिया में सुधार होगा और फलस्वरूप मोटापा का रोग दूर हो जायगा। इस के द्वारा डिम्बग्रंथियों को स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त होगी और तब उनके गर्भ रहने की भी आशा हो सकेगी।

सर्वांगासन का प्लीहा, मलांत्र और यकृत पर प्रभाव

रोगोपचार के सम्बन्ध में सर्वांगासन के जो प्रयोग अब तक हुए हैं उनसे प्रकट हुआ है कि इसका प्लीहा (Spleen) मलांत्र (Appendix) और यकृत (Liver) पर भी विशेष प्रभाव पड़ता है।

मनुष्य के शरीर में प्लीहा ही सब से बड़ी प्रणाली-रहित ग्रंथि है और जीवाणुओं से शरीर की रक्षा करने में बहुत महत्वपूर्ण कार्य करती है। श्वेत रक्त-कण (White blood corpuscles) विशेषतया प्लीहा में ही उत्पन्न होते हैं और वहाँ से रक्ताभिसरण प्रणाली के द्वारा शरीर के विभिन्न भागों में पहुंचते हैं। यह समूची प्रणाली में विषाक्त पदार्थों के निराकरण का कार्य करती है और अनिष्टकारी जीवाणुओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का नाश करती हुई शरीर की रक्षा करती है। यह अनिष्टकारी जीवाणुओं को रक्ताभिसरण प्रणाली में प्रवेश करने से रोकती है। संक्रामक रोगों, जैसे टायफायड ज्वर (मियादी बुखार) और मलेरिया, में प्लीहा सूज जाती है क्योंकि यह संक्रामक जीवाणुओं को अपने तक ही क़ैद कर रखती है और शरीर के अन्य भागों में उन्हें फैलने नहीं देती।

प्लीहा पर चुल्लिका का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया है कि सर्वांगासन के द्वारा विकृत प्लीहा को ठीक हालत में लाया जा सकता है। सर्वांगासन का प्रत्यक्ष रूप से चुल्लिका पर और केवल अप्रत्यक्षरूप से प्लीहा पर प्रभाव पड़ता है।

यकृत प्रणाली-रहित ग्रंथि नहीं है, लेकिन इसके भी आन्तरिक स्राव (Secretion) होते हैं। वैज्ञानिक प्रयोगों से यह प्रकट हुआ है यह ग्रंथि भी चुल्लिका से बहुत अधिक अंशों में संचालित होती है। सर्वांगासन से यकृत स्वस्थ और मज़बूत होता है।

इस प्रकार सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों दृष्टियों से यही सिद्ध होता है कि चुल्लिका ही शरीर के स्वास्थ्य और आरोग्य का केन्द्र स्थल है और सर्वांगासन का इस पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ता है। इसलिए अब यह प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं रह जाती कि शरीर को स्वस्थ और रोग रहित रखने के लिए सर्वांगासन कितना उपयोगी और महत्वपूर्ण है।

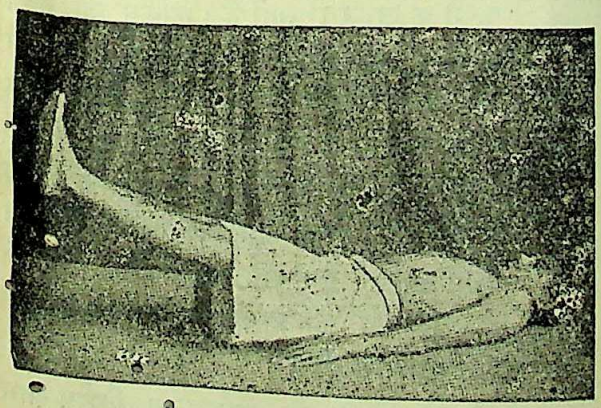

सर्वांगासन (पहली अवस्था)

सर्वांगासन की विधि

सर्वांगासन के महत्व और उपयोगिता का इतने विस्तार के साथ वर्णन करने के बाद अगर यह आसन करने की विधि का उल्लेख न किया जाय तो यह लेख अधूरा ही रह जायगा। अतः उसकी विधि भी जान लीजिए।

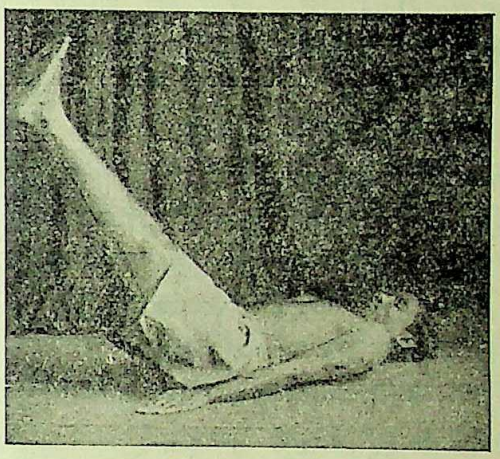

सर्वांगासन (दूसरी अवस्था)

इस आसन के करने से शरीर के सारे अंगों को लाभ होता है, इसीलिए इसको सर्वाङ्गासन कहा जाता है।

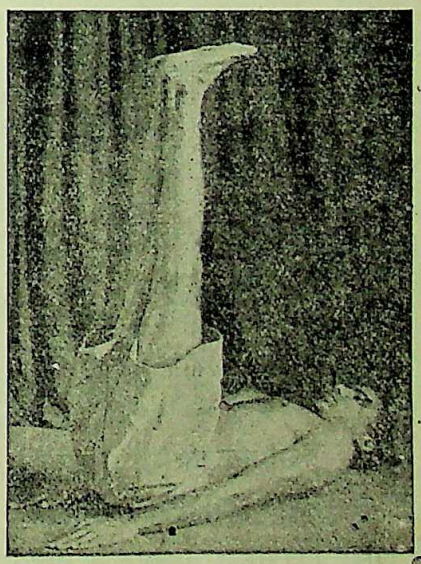

सर्वांगासन (तीसरा अवस्था)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विधि—आसन पर पीठ के बल सीधे लेट जाइए। हाथ बगल में रहें और पैर सीधे। इस अवस्था में बदन को ढीला रखना चाहिए। अब दोनों पैरों को सीधा एवं साथ रखते हुए जमीन से उठाइए। जब पैर जमीन से ३०° का कोण बनाने लगें तो वहाँ पर पाँच सेकेंड के लिए रुकना चाहिए। फिर पैरों को और ऊपर ले जाइए और जब वे ६०° का कोण बनाने लगें तो वहाँ पर पाँच सेकेंड के लिए रुकना चाहिए। इसी प्रकार जब वे ९०° का कोण बनाने लगे तो फिर पाँच सेकेंड के लिए रुकना चाहिए। अब पैरों को सीधा रखते हुए (जैसा कि चित्र में दिया गया है) सिर की ओर पैरों को लाना चाहिए यहाँ तक कि वे १२०° का कोण बनाने लगेंगे। इस अवस्था में पैरों को ऊपर की ओर ले जाना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो पैर और धड़ से एक सीधी रेखा बनानी चाहिए। इस अवस्था में धड़ को दोनों हाथों से सहारा देना चाहिए। यही सर्वाङ्गासन की पूर्णावस्था है। इस अवस्था में ठुड्डी, गले में जो गड्ढा है उसमें लग जाती है। अब मामूली हालत में आने के लिए हाथों को धड़ से हटा कर जमीन पर लाइए और जिस प्रकार पैरों

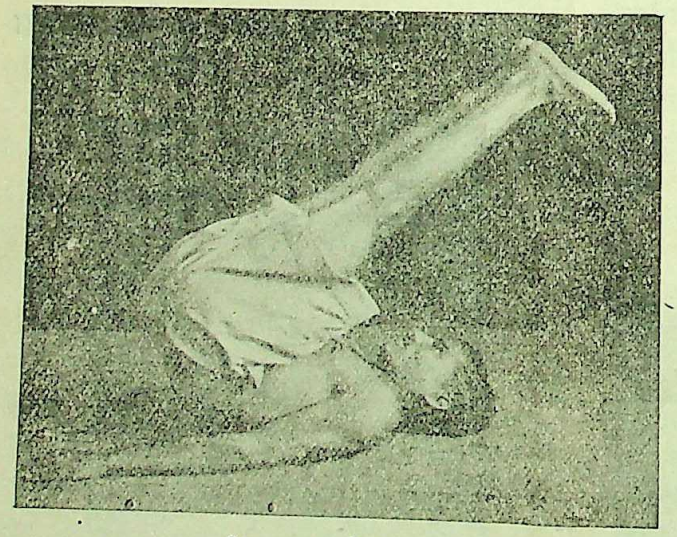

सर्वांगासन (चौथी अवस्था)

को रोकते हुए ऊपर ले गए थे उन्हें धीरे-धीरे रोकते हुए नीचे लाइए। सर्वाङ्गासन करने के बाद उतनी ही देर तक शवासन करना चाहिए जितनी देर तक सर्वाङ्गासन किया गया है।

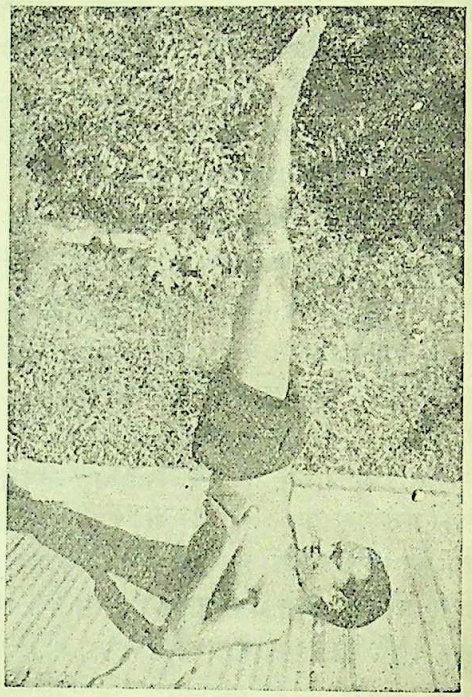

सर्वांगासन (पूर्णावस्था)

इस आसन को पहले दिन आधा मिनट से शुरू करना चाहिए और धीरे-धीरे प्रत्येक सप्ताह आधा मिनट का समय और बढ़ाते हुए छः मिनट तक ले जाया जा सकता है। जो अन्य आसन के साथ-साथ इस आसन को करते हैं उन्हें आसन अधिक देर तक करने क जरूरत नहीं है। लेकिन जो केवल एकइसी आसन को करना चाहते हैं वे इसको १२ मिनट तक कर सकते हैं। सर्वाङ्गासन का ठीक-ठीक अभ्यास हो जाने के बाद जितने समय के लिए यह किया जाय उसके चौथाई समय के लिए यह आसन धड़ को हाथ का बिना सहारा दिए भी किया जा सकता है।

वीर्यदोष की अगर कोई पुरअसर दवा है तो वह सर्वाङ्गासन ही है।

मन्दाग्नि के रोगी को सर्वाङ्गासन विशेष लाभ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुंचाता है। कब्ज की तो यह एक अक्सीर दवा है।

सावधानी—जिनका हृदय कमजोर हो, कान बहता हो और आँखों में रोहे हों अथवा आँखें लाल रहती हो वे यह आसन न करें। जिनका रक्त-चाप अधिक रहता हो उन्हें भी यह आसन न करना चाहिए।

मत्स्यासन

इस आसन से मनुष्य जल के ऊपर मछली की तरह तैरता रह सकता है। इसमें किसी प्रकार के परिश्रम की आवश्यकता नहीं होती और जितनी देर तक अभ्यासी पानी में रहना चाहे रह सकता है।

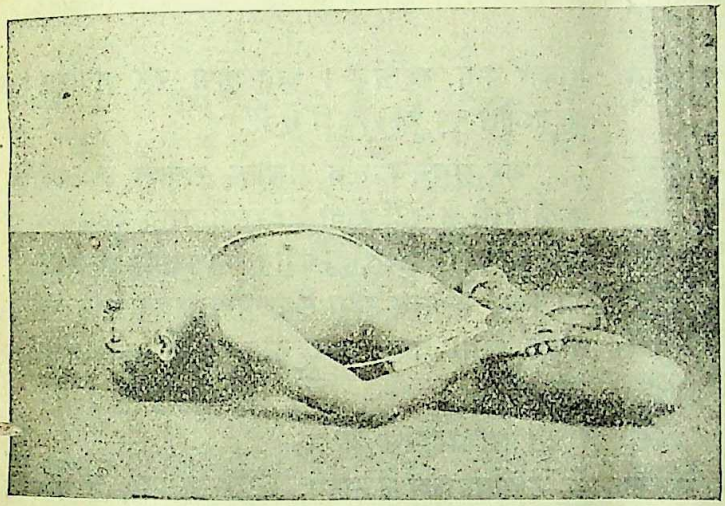

मत्स्यासन

विधि—पैरों को फैला कर बैठ जाइए। दोनों हाथ जमीन पर बगल में रहें। इसके बाद दोनों पैरों को मोड़ कर पद्मासन लगाइए। दोनों जाँघें जमीन से सटी रहेंगी। हाथों की कुहनी को पीछे की ओर जमीन पर बगल में लाइए। अब शरीर को पीछे की ओर झुकाइए, भार कुहनी पर होगा। ऐसा करने से सारा धड़ जमीन पर आ जायगा। दोनों तलहथियों को कान के पास जमीन पर लाइए। हाथ पर भार देकर सिर को पीठ की तरफ जितना पीछे ले जा सकें ले जाइए। अब समूचे धड़ का बोझ सिर पर होगा। इसके बाद दोनों हाथों से पैरों के अँगूठों को पकड़िए। अँगूठे पकड़ कर कुहनी जमीन पर ही रक्खें। यह मत्स्यासन की पूर्णावस्था हुई। मामूली हालत में आने के लिए धड़ का भार कुहनी पर देकर उठ जाइए और धीरे से सीधे बैठ जाइए। जितनी देर तक सर्वांगासन किया जाय उसका चौथाई समय ही इस आसन में देना चाहिए।

सर्वांगासन करने के बाद मत्स्यासन करने से पूरा-पूरा लाभ होता है। इससे पीठ, और पेट की मांसपेशियों के साथ-साथ गर्दन और जाँघों का सुन्दर व्यायाम हो जाता है।

ज्योतिष द्वारा स्वास्थ्य और भाग्य !

हस्तरेखा-विज्ञान-विशारद, सामुद्रिक शास्त्र विषयक ग्रंथ के प्रणेता पं० बलदेवप्रसाद, ज्योतिषी से संवत् फल, युग परिवर्तन, इत्यादि मालूम कीजिए। ५ प्रश्नों के उत्तर के लिए १।-) भेजें। साथ में प्रश्न लिखने का ठीक-ठीक समय, और तारीख भी लिखें। जन्म-कुण्डली, हस्तरेखा सम्बन्धी चिन्हों के फल, ग्रह-बाधा निवारक यंत्र, इनमें से प्रत्येक की फीस ३)। लेखक की 'मनुष्य का हाथ' नामक पुस्तक का मूल्य २) जिसमें (वी० पी० का खर्च भी) शामिल है।

पता—रमेश ज्योतिष कार्यालय,
लोहिया पांड़े का हाता
२४, बहादुरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सलाद'

[श्री० जानकी शरण वर्मा]

'सलाद' शब्द स्वास्थ्यार्थियों के बीच बहुत प्रचलित है, इसका हमें यहाँ पर अर्थ समझाने की आवश्यकता नहीं। किन्तु यहाँ पर लेखक ने जिस सलाद का उल्लेख किया है वह शारीरिक स्वास्थ्य की ही नहीं, मानसिक स्वास्थ्य की भी वस्तु है। जिस प्रकार शारीरिक स्वास्थ्य के लिए भोजन में सलाद का बड़ा महत्व बताया गया है, उसी प्रकार इस मानसिक 'सलाद' का भी महत्व है। साधारण सलाद पालक की कुछ पत्तियाँ, हरी धनिया, टमाटर, अदरख, गाजर, मूली, नीबू का रस आदि से तैयार होता है, लेकिन यह मानसिक 'सलाद' क्या है?—यह आप इस लेख से जान सकेंगे। —सं०

"डाक्टर साहब, यह बताइए कि क्या खाने से क़ब्ज़ दूर होगा?"

"यह सवाल ग़लत है, जिससे यह मालूम होता है कि आप के विचार ग़लत हैं। जब कि आप के विचार ग़लत रहेंगे आप को तनदुरुस्ती हासिल नहीं हो सकती, क्योंकि आप न तो रोग का असली कारण जान सकेंगे और न उस को दूर करने के लिए ठीक तरीक़े ही लगा सकेंगे।"

"अगर सब कुछ मालूम ही होता तो डाक्टर की क्या ज़रूरत थी।"

"लेकिन आप के सवाल से तो मालूम होता है कि आप बहुत कुछ जानते हैं; कम से कम इतना तो आप ज़रूर समझते हैं कि कुछ ख़ास चीज़ खाने से क़ब्ज़ दूर हो सकता है। ऐसा समझना ग़लत है। आप को पूछना चाहिए था कि क़ब्ज़ कैसे दूर हो सकता है न कि क्या खाने से वह दूर होगा।"

"तो क्या खाने से क़ब्ज़ का कुछ सरोकार नहीं है?"

"सरोकार है, पर ऐसा भी नहीं है कि आदमी कुछ ख़ास चीज़ें खाये लेकिन और कई तरह की ग़लतियां करें तो वह क़ब्ज़ से बचा रहेगा।"

"अब समझा। क्षमा कीजिए। मैं अब तक समझता था कि मुनक्का, अंजीर, आंवला इत्यादि खाने से क़ब्ज़ दूर हो जाता है। पर मैं हैरान था, क्योंकि इन चीज़ों को खाते हुए भी मैं क़ब्ज़ का शिकार बना रहता हूँ। अब कृपा कर बताइए कि क़ब्ज़ कैसे दूर हो सकता है।"

"यह सचमुच एक पेचीदा सवाल है, क्योंकि क़ब्ज़ उसी के नहीं होता जो सभी तरह तनदुरुस्त है और साथ ही यह भी है कि तनदुरुस्त वही हो सकता है जो क़ब्ज़ से बचा हुआ है। आप क़ब्ज़ से न लड़िये बल्कि सभी तरह तनदुरुस्त बनने की कोशिश कीजिए।"

"इसका उपाय?"

"खुली हवा में रहिए, सवेरे १० मिनट कसरत (ख़ास कर पेड़ और रीढ़ की) कीजिए और शाम को ३-४ मील तेज़ी से टहलिये या कोई खेल खेलिए, गहरी सांस लेने का अभ्यास कीजिए, बदन मल मल कर ठंडे पानी से नहाइए, समय बांध कर दिन में ज्यादा से ज्यादा खाइये, इतना कभी न खाइये कि पेट तन जाय, खूब चबा-चबा कर खाइए, नाश्ते में सिर्फ़ फल-दूध या फल या दूध या मठा लीजिए, दिन के खाने के साथ कुछ कच्ची सब्ज़ी जरूर खाइए, रात के खाने के साथ मुनक्का या अंजीर लीजिए, खाने के साथ पानी न पीजिए बल्कि खाने के आध घंटा पहले और दो घंटे बाद पानी चूस-चूस कर पीजिए, पूरी-पकवान-मिठाई की मात्रा बहुत कम कर दीजिए (छोड़ दीजिए तो और अच्छा हो), रात में सोने के कम से कम दो घंटे पहले शाम का खाना खा लीजिए, रात में ७-८ घंटे सोइए, शरीर में ज़रूरत से ज्यादा तनाव कभी न रहने दीजिए, हर हालत में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसन्न चित्त रहने की कोशिश कीजिए, ब्रह्मचर्य का पालन कीजिए, ठीक समय पर शौच के लिए जाइए, शौच के समय जोर न लगाइए बल्कि आंत को हुक्म दीजिए कि वह अपना काम ठीक ठीक करे, अपने बारे में कम दूसरों के हित की बात ज़्यादा सोचिए—बस, तनदुरुस्ती भी बन जायगी और क़ब्ज़ भी बिदा हो जायगा।"

"यह तो आप एक महाभारत ही कह गये। तनदुरुस्त होना बहुत मुश्किल बात है।"

"मुश्किल भी है और आसान भी। मुश्किल इसलिए है कि हम सीधे रास्ते से बहुत दूर हट गये हैं। आसान यों है कि जो कुछ मैं कह गया उसमें नया कुछ नहीं है। अपने खाने-पीने इत्यादि का एक क्रम बना लीजिए और दृढ़ता के साथ उसका पालन कीजिए। कुछ महीने (बिना चिन्ता के) लगे रहने से आपको लाभ मालूम होने लगेगा।"

× × ×

सोने का महत्व बहुत कम लोग जानते हैं। उन्हें यह मालूम नहीं कि नींद में ही शरीर हर रोज़ फिर से नया बनाया जाता है। सोने की हालत में ही टूटे रग-रेशों की मरम्मत होती है, जीवन भंडार से निकल कर जीवन-शक्ति शरीर में भरती है, जिस से दिन भर की छीजन पूरी हो जाती है, और शरीर अगले दिन की मेहनत के लिए तैयार हो जाता है। अगर भोजन शरीर के लिए ज़रूरी है तो अच्छी तरह और काफ़ी देर तक सोना और ज़्यादा ज़रूरी है।

सोना उसी का सफल होता है, नींद उसी को अच्छी तरह आती है, जिसने अपना दिन अच्छे कामों में बिताया है, जिसका शरीर अति भोजन के कारण भार-सा नहीं हो गया है, जो सदैव प्रसन्नचित्त रहता है, जो खुली जगह में सोता है, जिसका बिस्तर न बहुत कड़ा और न बहुत मुलायम और साथ ही साफ़ है, जिसके सोने की जगह अच्छी और बिल्कुल साफ़ है, जिसके मन में बुरे या चिन्ता के भाव नहीं हैं और जिसका सिर न बहुत ऊँचा और न नीचा है।

बिस्तर पर लेटने से पहले अच्छी तरह कुल्ला कर और चेहरा, नाक, आँख और पैर को मामूली ठंडे पानी से धोकर पोंछ लेना चाहिए। थोड़ा सा पानी पीना चाहिए, पेशाब कर लेना चाहिए और चिन्ता को मन से भगा देना चाहिए। चिन्ता को भगाने का एक सहज उपाय है चिन्ता के विषय के विपरीत विषय को सोचना। बहुतों को यह उपाय ठीक न मालूम होगा पर इसे करके देखना चाहिए। फिर जिसे प्रकृति के नियम और अपने पुरुषार्थ में विश्वास होता है उसे चिन्ता नहीं सताती, इस विश्वास को दृढ़ करना चाहिए।

बिस्तर पर लेट कर सारे शरीर को बिल्कुल ढीला कर देना चाहिये। इसे सीखिए, ढीला करने का उपाय है एक-एक अंग के बारे में सोचना कि वह ढीला हो रहा है। पहले नीचे से ऊपर जाइए—बायाँ पैर, दाहिना पैर, कमर, पेड़ू, पेट, पीठ, बाँया हाथ, दाहिना हाथ, बारी-बारी से दोनों कंधे, गर्दन, चेहरा, भीतरी मुँह और जीभ, सिर; फिर ऊपर से नीचे। इस तरह सोचने में साँस गहरी ली जाने लगेगी और आश्चर्य नहीं कि बीच ही में नींद आ जाय। लेकिन सभी अंगों में बारे के सोचना चाहिए। सोचते समय ढीलापन का अनुभव करना चाहिए। कुछ ही हफ़्तों के अभ्यास से नींद अच्छी हो जायगी और अच्छी नींद के साथ ही तनदुरुस्ती भी खिलने लगेगी।

× × ×

चिन्ता! चिन्ता किस बात की? संसार जँचे-तुले नियमों से संचालित है, सभी विषयों में कारण और कार्य का अटूट संबंध है, अगर कुछ कारणों से कुछ ख़राबी हुई है तो कुछ और कारणों से अच्छाई भी अवश्य होगी, जो हो चुका वह हो चुका, मैं सर्व-शक्तिमान ईश्वर का अंश हूं और इस लिए स्वयं भी सर्वशक्तिमान हो सकता हूं—फिर चिन्ता काहे की?

चिन्ता रचनात्मक विचार से भिन्न और क्रिया-शीलता को नष्ट करने वाली है। चिन्ता एक मानसिक रोग है, जो पुरुषार्थ के भावों को पुष्ट होने से रोकता है। चिन्ता से स्वास्थ्य ख़राब होता है और ख़राब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य वालों को चिन्ता अधिक सताती है। चिन्ता से मन्दाग्नि होती है। रक्त संचार में रुकावट पड़ती है, ज्ञान-तंतुओं की तीव्रता जाती रहती है और मनुष्य किंकर्त्तव्य विमूढ़ सा बना रहता है। पर सच पूछो तो चिन्ता सिर्फ़ एक बुरी आदत है, जो और बुरी आदतों की तरह छोड़ी जा सकती है।

जभी कोई समस्या आ जाय उससे भिड़ जाओ। सोचो कि वह कैसे हल हो सकती है। अपने ध्यान को उस पर केन्द्रित करो। सभी पहलुओं से विचार करो। पर उसे अपने आपको सताने मत दो। जितनी देर चाहो उससे लड़ लो। पर समय हो जाने पर उस दिन उसे अपने मन में आने मत दो। अगर आवश्यता हो तो दूसरे दिन या उसी दिन दूसरे समय उस विषय को फिर अपने सामने लाओ और उस पर सोचो। अभ्यास करके देखो—जीवन बदल जायगा।

प्राकृतिक चिकित्सा के रोगी बहुत चिन्ता करते हैं, क्योंकि दवा पीकर विस्मृति लाने का अवसर उन्हें नहीं मिलता। कितना खायें, किस समय क्या खायें, कौन काम किस तरह करें इत्यादि-इत्यादि बातें वे बेतरह सोचते हैं। सोचना ज़रूर चाहिए पर खिच-खिच में नहीं रहना चाहिये। एक बार अपना क्रम बनाकर उसका पालन करने लग जाना चाहिए और कुछ दिनों तक उन बातों के बारे में सोचना ही न चाहिए। चिन्ता करने वाले रोगी रोग में उलझे रह जाते हैं।

यह कैसा सलाद है? सलाद तो कच्ची साग भाजी या फलों का होता है यह मस्तिष्क के भोजन के लिए कई तरह के विचारों का सलाद है। पाठक इस से अपना मस्तिष्क-स्वास्थ्य सुधारिये—फिर तो शारीरिक स्वास्थ्य अनायास ही सुधर जायगा।

[८वें पृष्ठ का शेषांश]

प्रतिदिन के आहार में करना चाहिये। गेहूं के चोकर का एक उत्तम खाद्य बनाने की सरल विधि एक मित्र ने मुझे लिख भेजी है जो इस प्रकार है—इतना गेहूं मोटा-मोटा पीसो कि जिसमें आध सेर चोकर निकल आये। पीसने के बाद आटे को मझोली चलनी से चालने से चोकर अलग निकल आयेगा। इस चोकर में १० छटांक ठंढा पानी, आठ तोला अच्छे गुड़ का चूरा और छोटी चम्मच से आधी चम्मच साफ सेंधा नमक डाल कर भली प्रकार हिलाओ। तत्पश्चात् इस मिश्रण को किसी छिछले बर्तन में उँडेल दो और ढँक कर आधे घंटे तक यों हीं पड़ा रहने दो। ऐसे ढक्कन से उसे ढकना चाहिये जो बर्तन पर ख़ूब चिपक कर बैठ जाय। फिर उस बर्तन को ढक्कन समेत कोयले की आँच पर रख दो और ढक्कन के ऊपर भी कुछ जलते कोयले रख दो। इस प्रकार दोहरी आँच के बीच उस बर्तन को पाँच मिनट तक रहने दो। उसके बाद उस मिश्रण को लोहे की कढ़ाई में डालकर मंद आँच पर पकाओ। उसका पानी जब जल जाय तो चूल्हे पर से उसे उतार लो और चोकर का ठंढा होने दो। बाद उस चोकर को चलनी में रख कर और उसे दबाते हुये एक साफ़ कपड़े या बर्तन में चालो। महीन सेव या सेवई सी गिरेगी। इस सेव या सेवई को धूप में रख कर अच्छी तरह सुखा लो। बस खाद्य तैयार है। इसे दूध या छाँछ के साथ खाओ। एक छटाँक सेव का एक उत्तम कलेवा होगा। इस खाद्य से क़ब्ज़ कभी न होगा और यदि पहले से मौजूद होगा तो उसकी यह अचूक औषधि है।"*

*लेखक की अप्रकाशित पुस्तक 'प्राकृतिक आहार-विज्ञान' से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूढ़ों के लिए सरल व्यायाम

[श्री प्रकाशचन्द्र यादव, व्यायाम-विशारद, साहित्य-रत्न]

[व्यायाम करना लाभदायक है, लेकिन एक ही प्रकार का व्यायाम सभी के लिए समान रूप से हितकर हो सकता है, ऐसा कहना गलत ही होगा। वृद्ध लोगों के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है। अवस्था के कारण उनके शरीर दुर्बल और मांसपेशियाँ शिथिल हो जाते हैं। अतएव उनके लिए अधिक श्रम-साध्य व्यायाम लाभदायक होने के बजाय हानिकारक ही सिद्ध होता है। फिर उनके लिए किस तरह का व्यायाम होना चाहिए, इसकी व्यस्था एक अमेरिकन भुक्तभोगी ने की है। लेखक ने उसका विस्तार पूर्वक यहां पर वर्णन किया है। अवस्था के कारण जो लोग कोई कसरत करने में अपने को लाचार समझते हैं उनके लिए यह लेख विशेष उपयोगी होगा।—सं०]

यहाँ पर मैं जिस व्यायाम का वर्णन करने जा रहा हूँ उसके आविष्कर्त्ता एक भुक्तभोगी अमेरिकन सज्जन थे। उनका नाम था संड फोर्ट वेनेट। वह अमेरिका के एक प्रसिद्ध व्यापारी थे। अपने व्यवसाय में उन्होंने अतुल सम्पति और यश दोनों ही प्राप्त किए थे। वह हमेशा अपने व्यापार में ही लगे रहते। उन्होंने अपने शारीरिक स्वास्थ्य की ओर बिलकुल ही ध्यान नहीं दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि वह अभी पूरे ५० साल के भी न हो पाये थे कि उनमें शारीरिक शक्ति का सर्वथा लोप हो गया और उन्हें विवश होकर अपने व्यापार से अनिच्छा पूर्वक अवकाश ले लेना पड़ा।

शरीर से अशक्त हो जाने पर उन्होंने अन्त में व्यायाम शुरू करने का विचार किया। उन्होंने तरह तरह की कसरतों का प्रयोग किया, बड़ी बारीकी के साथ उनमें से प्रत्येक व्यायाम की जाँच की, अमुक व्यायाम का शरीर के अमुक अंग पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ता है, इस पर उन्होंने बड़े मनोयोगपूर्वक विचार किया। शरीर में बड़े-बड़े स्नायु कहाँ-कहाँ और किस आकार-प्रकार के हैं, उन पर किन-किन व्यायामों का असर पड़ता है, किस व्यायाम से किस स्नायु को लाभ पहुंचता है, सभी बड़े-बड़े स्नायुओं को समान-रूप के लाभ पहुंचाने के लिए कौन से व्यायाम ठीक होते हैं, ये व्यायाम कहाँ तक होने चाहिए, आदि महत्वपूर्ण बातों का अपने अनुभव के द्वारा निर्णय किया है और इस प्रकार उन्होंने वृद्धों के लिए उपयोगी २६ प्रकार के व्यायामों की व्यवस्था की है।

इन २६ व्यायामों का व्यवहार सारे शरीर के अंग-प्रत्यंग के लिए समान रूप से लाभकारी होता है। यह उनके अनुभव की बात है। इन्हीं व्यायामों की सहायता से उन्होंने अपने शरीर को पहलवानों के समान हृष्ट-पुष्ट कर लिया। उनके ७२ वर्ष के शरीर का फोटो किसी पहलवान का फोटो से कम नहीं। ढलती उम्र में इतना सुधार कर लेना आश्चर्य की बात है। ५० वर्ष की उम्र में जिनका शरीर बिलकुल जीर्ण-शीर्ण हो रहा था उन्हीं का शरीर ७२ वें वर्ष में युवकों का-सा बन गया। अस्तु, उन्होंने बूढ़ों के लिए जो व्यायाम बनाए हैं वे यहाँ दिये जाते हैं:—

पेट का व्यायाम

सीधे लेट जाइए। बायाँ पैर सीधा फैलाइए। बाएँ पैर को छोड़ कर दाहिने पैर को घुटने के बल मोड़िए और फिर उसे ऊपर उठा कर तरेट की तरफ लाइए जिससे तरेट दबे। इस प्रकार पहले सप्ताह में एक से प्रारंभ करें और दूसरे सप्ताह दो बार और तीसरे सप्ताह में तीन बार प्रति दिन करें। दुर्बल शरीर वाले ५-१० से अधिक न करें। इसी प्रकार दाहिना पैर पसार कर बाएँ पैर को घुटने के बल मोड़ कर उपरोक्त प्रकार का व्यायाम करें। प्रति सप्ताह क्रमशः बढ़ाते जायँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस व्यायाम के करने से बद्धकोष्टता दूर होती है और तरेट के स्नायु सबल होते हैं।

कमर के स्नायु का व्यायाम

पीठ के बल लेट जायँ। दहिने हाथ से बाएँ दंड और बाएँ हाथ से दाहिने दंड को पकड़ें। फिर जितना उठ सकें उतना सिर, कंधे और पीठ को उठावें। फिर कमर की तरफ़ के शरीर को एकबार बाँयी तरफ़ तो दूसरी बार दाहिनीं तरफ़ यथाशक्ति घुमावें।

प्रारंभ में एक बार से शुरू करके प्रति संप्ताह एक एक बढ़ाते जायँ। ५-१० तक बढ़ावें। अधिक नहीं। इस व्यायाम से कमर और पेट को भी लाभ पहुंचता है।

पेट के स्नायु का व्यायाम

पीठ के बल लेट जायँ। सिर ऊँचा उठावें फिर नीचे रखें। दाहिनीं तरफ़ गोल पेट पर हाथ फेरें अथवा हाथ से पेट पर आघात करें। सिर ऊपर उठाने से पेट के स्नायु तन जाते हैं और नीचे झुकने से वे ढीले पढ़ जाते हैं।

यह व्यायाम पेट के स्नायुओं को मज़बूत करता है और पाचन-क्रिया को प्रबल बनाता है। एक बार से प्रारंभ करके एक एक बढ़ाते जायँ। दस से अधिक न बढ़ावें।

कंधों का व्यायाम

पीठ के बल लेट जाँय। दोनों हाथ से परस्पर की कोहनियों को मज़बूती के साथ पकड़े रहें और फिर एक बार दाहिने कंधे को ऊपर उठाकर नीचे ले जायँ और दूसरी बार बाएँ कंधे को। यह व्यायाम कंधों के स्नायुओं को बलिष्ट करता है, एक से शुरू करके दस तक करें।

पखो के स्नायुओं का व्यायाम

पीठ के बल लेट जायँ दोनों पखों को कोहनी के बल मोड़ें। मुट्ठी बांध लें। एकबार दाहिनी, दूसरी बार बाई कोहनी को जोर से उठावें जिससे हाथ की मुट्ठी छाती तक आय परन्तु छाती से छू न पावे।

इस व्यायाम से बाहों के स्नायु दृढ़ होते हैं। एक से प्रारंभ करके प्रति सप्ताह एक एक बढ़ाते हुए १० तक पहुंचा दें।

गर्दन व तरेट का व्यायाम

पीठ के बल लेट जायँ। सिर जितना उठा सकें उतना ऊपर उठावें फिर धीरे धीरे नीचे लाकर तकिये पर रख दें। ध्यान रखें कि अपनी जगह से सिर के उठने के न साथ पीठ हटने पावे। पीठ, कंधे आदि अपनी ही जगह बिना हिले जमें रहें। इस व्यायाम से गर्दन के पिछले भाग के स्नायु पर जोर पड़ता है और उसकी काफी कसरत हो जाती है। इसी प्रकार तरेट के भी स्नायु पर खूब जोर पड़ता है।

एक बार से प्रारम्भ करके प्रति सप्ताह एक एक बढ़ाते हुए १० तक पहुंचा दें।

गर्दन और पीठ की पेशियों का विशेष व्यायाम

पीठ के बल लेट जायँ। सिर ऊपर उठाकर दोनों हाथ की उंगलियाँ एक दूसरे में फँसाकर सिर के पीछे के भाग के सहारे सिर को पकड़ें और हाथों की अंगुली के सहारे ऊपर एक क्षणभर के लिए उठावें और फिर ढीला छोड़ दें और सिर को तकिए पर ले आवें।

इस व्यायाम से गर्दन की शिराओं को अच्छा लाभ होता है। गर्दन मजबूत और मोटी होती है। एक से प्रारम्भ करके १० तक पहुँचा दें।

गले के स्नायु का व्यायाम

तकिए को पखे के नीचे रखें। गरदन को ऊपर उठाकर सिर को छाती की तरफ़ जितना मोड़ सकें मोड़ें। फिर जितना दूर हटा सकें हटावें।

इस व्यायाम से गर्दन की पेशियाँ मोटी होती हैं। बुढ़ापे के कारण गर्दन की ढीली पड़ी हुई खाल फिर कड़ी पड़ जाती है।

एक से प्रारंभ करके प्रति सप्ताह १० तक पहुँचा दें।

हाथ की पेशियों का व्यायाम

पीठ के बल लेट जायँ। दोनों हाथों को दोनों बगल में सीधा फैलावें। अब दोनों हाथों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

078767

कोहनी के बल मोड़िए। मोड़ने से पहले हाथों की मुट्ठी बाँध लें। बाँया हाथ इसी दशा में रख दाहिने हाथ को ऊँचा खड़ाकर दें। इसके बाद फिर इसे नीचे ले जायं। इसी तरह बायाँ हाथ खड़ा करें। एक बार से प्रारंभ कर प्रति सप्ताह एक-एक बढ़ाते हुए १० तक पहुँचा दें।

भुजदंड की पेशियों का व्यायाम

पीठ के बल लेट जायँ। दहिना हाथ लंबा सीधा फैला कर मुट्ठी बाँधिए। फिर बाँया हाथ लाकर दहिनी भुजा का दंड मजबूती से पकड़िए। बाद में दाहिने हाथ को कोहनी के बल मोड़िए और मुट्ठी को धीरे-धीरे कंधे के पास लाइए। इसके बाद फिर इसी तरह धीरे-धीरे वापस ले जाकर भुजा को सीधा कर लीजिए।

यही प्रक्रिया अब बाईं भुजा के साथ करें। इस व्यायाम से भुजदंड की पेशियाँ मजबूत और मोटी होती हैं। अन्य किसी भी व्यायाम से इतना लाभ नहीं होता। एक से प्रारंभ करके प्रति सप्ताह बढ़ाते हुए १० तक पहुंचा दें।

यकृत को उंगलियों से दबाने का व्यायाम

यकृत यानी पित्ताशय पेट में दाहिनी ओर पसलियों के नीचे होता है। बड़ी उम्र में मनुष्य के यकृत का बजन दो सेर होता है और पौन फुट या एक फुट तक लम्बाई में होता है। निचली पसलियों के सिरे और कमर की हड्डी के बीच में हाथ लगाने से यह टटोला जा सकता है। उस जगह उंगलियों से दबायें और दाहिनी पसली के ऊपर धीरे-धीरे ठोंकें। इससे यकृत का व्यायाम होगा। इस व्यायाम को करते कमय दोनों पैर घुटनों के बल मोड़कर पैर के तलुवों बिछौने पर टिका लें। एक बार दबाने से प्रारंभ कर १० पहुंचा दें। इसी प्रकार पसलियाँ दबाने की क्रिया को भी एक बार से लेकर १० तक करने लगें।

ठुड्ढी के नीचे की पेशी का व्यायाम

दहिनी करवट लेटें। दहिने हाथ का अँगूठा ठुड्ढी के निचले हिस्से को दबा कर पकड़ें और सिर को पीछे की ओर झुकावें। अँगूठे को अपने स्थान से हटने न दें।

इसी प्रकार बाईं करवट लेट कर बाएँ हाथसे भी करें। एक से प्रारंभ करके प्रति सप्ताह बढ़ाते हुए १० तक पहुंचा दें।

गर्दन की अगल बगल की पेशियों का व्यायाम

दाहिनी करवट लेटकर गर्दन फिरायें और मुँह को जितना ऊपर उठा सकें उठावें। फिर यथास्थान पहुंचा दें। फिर करवट बदलें और इसी प्रकार उस तरफ भी करें। एक से प्रारंभ करके प्रति सप्ताह क्रमशः बढ़ाते हुए १० तक ले जायँ।

शरीर की समस्त छोटी-मोटी पेशियों के व्यायाम

दाहिनी करवट लेट जायँ। दोनों हाथों से एक दूसरे की कुहनी को मजबूती से पकड़ें। सिर को जरा पीछे हटावें और सारे शरीर को कड़ा करें और २-४ क्षण के बाद शरीर को ढीला छोड़ दें। इसी प्रकार बायीं करवट लेकर दोनों हाथों से परस्पर की कोहनी दबा कर पकड़ने के बाद दोनों हाथों से परस्पर की कोहनी दबाकर पकड़ने ने बाद सिर को जरा पीछे की तरफ शरीर को २-४ क्षण के लिए कर के ढीला छोड़ दे।

इस व्यायाम से सभी सूक्ष्म पेशियों का व्यायाम हो जाता है। इस व्यायाम को ५ से अधिक बार नहीं करना चाहिए।

बगल व कमर की पेशियों का व्यायाम.

बायीं करवट लेट कर बाएँ हाथ से दाहिना भुजदंड और दाहिने हाथ से बायाँ भुजदंड मजबूती के साथ पकड़ गर्दन और दोनों पखे ऊपर जितने उठाए जा सके उठावें और फिर यथास्थान रखें। इसी प्रकार दाहिनी करवट लेट कर करें एक बार से प्रारंभ कर प्रति सप्ताह बढ़ाते हुए एक मास में ५ से अधिक न करें।

कंधों की अगली पिछली पेशियों के व्यायाम

पीठ के बल लेटें। दोनों हाथों से दोनों भुजदंड पकड़ें। एक बार दाहिना कंधा और दंड ऊपर की ओर उठावें। दूसरी बार बाएँ कंधे और दंड को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपर लावें। प्रारंभ में एक से बढ़ाते हुए १० तक करें।

कूल्हे व कमर का व्यायाम

दाहिनी करवट लेटें। बाएँ पैर को घुटने के बल मोड़ें। इस घुटने को अपने सामने बिछौने पर टेक दें। दायाँ हाथ कोहनी के बल मोड़ कर उसे छाती की बायीं तरफ गर्दन और मुख के पीछे की ओर जितना झुका सकें झुकावें। बाद में पहिले अंग-प्रत्यंग का यथास्थान कर लें। अब बायीं करवट लेटें दाहिने पैर व दाहिने हाथ की प्रक्रिया उपरोक्त रीति से करें। एक से प्रारंभ करके बढ़ाते हुए १० तक करें।

कलाई का व्यायाम

दाहिनी करवट लेट जायँ। बाएँ हाथ से दाहिने हाथ को पकड़ कर दबावें और दाहिने हाथ की कलाई को ऊपर उठाने का प्रयत्न करें। इसी प्रकार बायीं करवट लेट कर दाहिने हाथ की कलाई का व्यायाम करें। एक से प्रारंभ करके प्रति सप्ताह क्रमशः बढ़ाते हुए १० तक पहुंचा दें।

भुजदंड व हाथ के पंजे की पेशियों का व्यायाम

दाहिनी करवट लेट जायँ। दाहिने हाथ से बायें हाथ का दंड पकड़ कर नीचे की ओर झुकाइए और बायें हाथ के दंड को ऊपर लेजाइए। इस व्यायाम से दंड, कलाई और पंजे मजबूत बनते हैं। एक से प्रारंभ करके १० तक पहुँचा दें।

एक हाथ से पैर को खींचकर पीठ की पेशी का व्यायाम

दाहिनी करवट लेटें। बाएँ हाथ से बाएँ पैर को घुटने के ऊपर हाथ रखकर तानें और फिर छोड़ दें। इसी प्रकार बाईं करवट लेटकर दाहिने हाथ व दाहिने पैर के सहारे कसरत कीजिए। इस व्यायाम से पीठ, कंधे, और पैर की पेशियों का व्यायाम हो जाता है। एक से प्रारंभ करके बढ़ाते हुए १० तक पहुँचा दें।

हाथ की पेशियों व संधियों का व्यायाम

बाईं करवट लेट जायँ। दाहिना हाथ लंबा करें। मजबूती से मुट्ठी बाँधें और आगे की तरफ बढ़ाकर मुरका दें। फिर दाहिनी करवट बदल कर इसी प्रकार करें। एक से क्रमशः बढ़ाते हुए १० तक पहुंचा दें।

कलाई की पेशी का दूसरा व्यायाम

दाहिनी करवट लेटें। दाहिने हाथ से बाईं कलाई पकड़ें और नीचे झुकावें। बायाँ हाथ ऊपर उठाने का प्रयत्न करें। और फिर ढीला छोड़ दें। इसी प्रकार बाईं करवट लेट कर बाएँ हाथ से दाहिनी कलाई का व्यायाम करें।

एक से प्रारंभ करके क्रमशः बढ़ाते हुए १० तक पहुंचा दें।

पैर की पेशियों का व्यायाम

पीठ के बल सीधे लेट जायँ। पैर सीधे फैला दें। फिर दाहिना पैर उठावें और बाएँ पैर के पंजे पर इस पैर का तलवा रख कर बाएँ पैर की उँगलियों से दबा दें। फिर ढीला छोड़ दें। इसी प्रकार बाएँ पैर से करें। एक से प्रारंभ करके १० तक पहुँचा दें।

यकृत के व्यायाम का दूसरा प्रकार

बाईं करवट लेट जायं। इससे यकृत सामने की ओर झुका रहेगा। तब दाहिने हाथ की मुट्ठी बाँध उससे हलके हाथ मुक्के लगाइए। इससे यकृति प्रगतिशील होगा। एक से प्रारंभ करके १० तक पहुंचा दें।

पिंडुरी व कंधे की पेशियों का व्यायाम

दाहिनी करवट लेटें। दोनों हाथों की उँगलियाँ एक दूसरे से अटका दीजिए और अंजली बना कर बाएं पैर के घुटने के नीचे की जगह को उसमें फंसा लें। फिर खींचें। बाद में ढीला छोड़ दें। इस तरह बाईं करवट लेकर दाहिने पैर से करें। एक से प्रारंभ कर प्रति सप्ताह क्रमशः बढ़ाते हुए १० तक ले जायँ।

यकृत का व्यायाम

दाहिनी करवट लेट जायँ। सिर को जरा पीछे की तरफ झुकाइए। घुटने कुछ मोड़ लें। इससे पेट कुछ ढीला पड़ेगा और यकृत कुछ सामने झुकेगा। इसके बाद बाएँ हाथ से यकृत पर थोड़ा हाथ फेरें अथवा दबाएँ। इस तरह कई बार करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्त्व-चिकित्सा का आदि इतिहास

[श्री गंगाप्रसाद गौड़, 'नाहर', तत्व-चिकित्सक]

[यूरोप अथवा अमेरिका के निवासियों के लिए यह प्राकृतिक चिकित्सा भले ही कोई नया विज्ञान जान पड़े किन्तु भारतीय चिकित्सा प्रणाली के इतिहास में तो इसका समावेश बहुत प्राचीन समय से पाया जाता है। हमारे यहाँ छांदोग्य उपनिषद् और आयुर्वेद जैसे प्राचीन चिकित्सा ग्रंथों में इसका उल्लेख मिलता है। पाठकों को यह जानकर उत्सुकता होगी कि अहिन्सा के अवतार महात्मा गांधी की भाँति भगवान बुद्ध भी भिक्षुओं को प्रायः प्राकृतिक रोगोपचार की सलाह देते थे। यहाँ पर विद्वान लेखक ने भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली के इतिहास की इसी प्राचीनता पर प्रकाश डाला है।

यह बड़े हर्ष की बात है कि विद्वान लेखक ने प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी कई पुस्तकें तैयार की हैं जो शीघ्र प्रकाशित हो जायंगी। उनकी सब से नयी कृति तत्व-चिकित्सा विज्ञान है, जिसका पहला अध्याय यहाँ पर दिया गया है। आशा है, हम उनके इस विशद और प्रामाणिक ग्रंथ को धारावाहिक लेख-माला के रूप में प्रस्तुत कर सकेंगे—सं०]

तत्त्व-चिकित्सा-विज्ञान, या प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली उतनी ही पुरानी है जितनी कि प्रकृति स्वयं, वा उसके आधार पञ्चमहाभूत—आकाश वायु, तेज या अग्नि, जल, पृथ्वी। यह प्रणाली संसार में प्रचलित सभी प्रणालियों से पुरानी है। वेदों में, जो संसार के सबसे प्राचीनग्रन्थ हैं, इस विज्ञान की सभी मोटी-मोटी बातें, जैसे जल-चिकित्सा, उपवास-चिकित्सा आदि, पायी जाती हैं। तत्त्व-चिकित्सा का जितना अच्छा वर्णन वेदों, तथा उनके उपांग आयुर्वेद में है, वैसा संसार के किसी भी चिकित्सा-सम्बन्धी ग्रन्थ में मिलना दुर्लभ है। यह समझना कि, प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति के अविष्कारक जर्मन विद्वान लूईकूने या कोई और था, बड़ी भूल है। लूईकूने आदि विद्वान इस विज्ञान के प्रवर्त्तक या प्रचारक भले ही माने जा सकते हैं, किन्तु आविष्कारक कभी नहीं कहला सकते।

अथर्व वेद १।१।५।४ में आया है—'अप्वन्तरमृतमप्सु भेषजम्' जिसका अर्थ है, 'जल में अमृत है, जल में औषधियाँ हैं।' ऋग्वेद १०।९।४ का यह मन्त्र 'ईशाना वार्याणां क्षयन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो-याचामि भेषजम्।' अर्थात्, हे परमेश्वर! हम तुमसे अन्नादिक वरणीय पदार्थों के स्वामी, मनुष्यों का रक्षक, और रोग मात्र की औषधि जल माँगते हैं,' इस बात को सिद्ध करता है कि हमारे वेद कालीन पूर्वज जल-चिकित्सा के महत्त्व से अनजान नहीं थे।

वेद-काल के बाद, पुराण-काल में भी तत्त्व-चिकित्सा-पद्धति प्रचलित थी। उदाहरण के लिये आयुर्वेद के प्रसिद्ध और प्राचीन ग्रन्थ चरक को ही लीजिये, जिसका निर्माण-काल ईस्वी सन् १ कहा जाता है। इसमें रोगों की निवृत्ति के लिये एक-दो नहीं, अपितु, शंकर-स्वेद, प्रस्तर स्वेद तथा नाड़ी-स्वेदादि १३ प्रकार के वाष्प-स्नानों का उल्लेख है, जबकि आधुनिक प्राकृतिक चिकित्सकों ने वाष्प-स्नान के केवल दो ही तीन तरीक़ों का वर्णन किया है। दूसरा प्रामाणिक वैद्यक-ग्रन्थ 'वाग्भट' के अध्ययन से पता चलता है कि यह जो रोग निवारण के लिये आजकल प्राकृतिक स्नानों का सहारा लिया जाता है, सो कोई नयी चिकित्सा नहीं है।

'महावग्ग' नामक बौद्ध ग्रन्थ में एक जगह लिखा है कि एक बार भगवान् बुद्ध श्रावस्ती नगरी से राजगृह जाते समय 'कलंद-निवाय' नामक संघ में ठहरे हुये थे। वहाँ एक दिन एक बौद्ध भिक्षु को साँप ने काट खाया। लोगों ने उसको सूचना भग-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वान बुद्ध को दी। भगवान बुद्ध ने कहा—"हे भिक्षुओ! मैं तुम्हें आज्ञा देता हूं कि विष नाश के लिये चिकनी मिट्टी, गोबर, मूत्र, और राख का उपयोग करो।" भिक्षुओं के प्रश्न करने पर कि उपरोक्त वस्तुओं में से एक का या सब का एक साथ उपयोग होना चाहिये, भगवान ने कहा—'जो मिले, उसीका'। तो क्या ढाई हज़ार वर्ष पुरानी इस घटना से इस बात का पता नहीं चलता कि रोग-नाश के लिये मिट्टी का प्रयोग, भारतवासी अति प्राचीन काल से करते चले आ रहे हैं? इसी प्रकार भगवान बुद्ध ने 'पिलिंदवक्क' नामक भिक्षु के बीमार पड़ने पर वाष्प-स्नान, जल-स्नान, तथा उष्ण जल-स्नान के भी प्रयोग की आज्ञा दी थी।

तात्पर्य यह कि जिन-जिन स्वास्थ्य-सम्बन्धी प्राकृतिक-क्रियाओं का हम आजकल प्रयोग कर रहे हैं, वे सभी अपनी पूर्णावस्था में प्राचीन भारत में विद्यमान थीं। यह बात दूसरी है कि उनमें से बहुतों के नाम, आधुनिक चिकित्सा-विधियों के नाम से भिन्न थे। जैसे, इस ज़माने के 'वाटर-सिपिंग', 'सिट्ज़ बाथ', 'एनिमा', तथा 'स्टीम-बाथ', को पुराने ज़माने में क्रम से—'आचमन', 'जलस्पर्श', 'वस्ति', तथा 'स्वेद-स्नान' कहते थे। इसी प्रकार 'सन्-बाथ' से आजकल जो काम लिया जाता है, वही काम प्राचीन-काल में 'सूर्य्य-नमस्कार'-पद्धति से लाभ के साथ लिया जाता था। नेत्र-रोग आजकल Sun gazing से अच्छे किये जाते हैं, प्राचीन काल में इसी क्रिया को 'त्राटक' कहते थे। आज का Air-cure, पुराने ज़माने का 'प्राणायाम' है। 'उपवास-चिकित्सा' भी नयी नहीं है। छान्दोग्य उपनिषद् में लिखा है कि मनुष्य १५ दिनों तक आसानी से और लाभ के साथ उपवास कर सकता है, यदि वह उपवास काल में खूब जल का सेवन करता रहे। उपनिषद् में यह भी बताया गया है कि उपवास-चिकित्सा किन-किन रोगों में लाभदायक है तथा उपवास तोड़ने के नियम क्या हैं।

यह बात नहीं कि केवल प्राचीन भारत ही रोग निवारणार्थ प्राकृतिक उपचारों का उपयोग करता था, बल्कि प्राचीन समय में, संसार के अन्य देश भी, इस विद्या से काफ़ी परिचित थे।

प्राचीन 'असूरी' और 'मिसिरी' जातियों की पुस्तकों में पानी के इलाज पर अनेक लेख मिलते हैं। इसके अतिरिक्त प्राचीन इबरानी, यहूदी, युनानी, ईरानी, चीनी, आदि जातियों द्वारा, पानी को दवा के रूप में व्यवहार किये जाने के भी प्रमाण मिले हैं।

आज से लगभग दो हज़ार वर्ष पूर्व युनान देश में विख्यात युनानी चिकित्सक बुक़रात हो गया है, जो पानी के इलाज का अच्छा जानकार था। वह ज्वर, चर्म, रोग तथा रक्त-विकार आदि में पानी का इलाज सफलता के साथ किया करता था। उसकी राय से ठंढे स्नान थोड़ी देर तक ही करने चाहियें, और इस सम्बन्ध में यह ज़रूरी है कि ठंढे स्नानों से प्रथम तथा अंत में सारे शरीर को हाथों से ज़ोरों के साथ मसल-मसल कर उसमें गरमी लाई जाय। उसका कहना है कि ठंढे स्नानों के बाद शरीर में उष्णता बढ़ जाती है, और गर्म स्नानों के बाद शीतलता।❀

(क्रमशः)

❀ सर्वाधिकार लेखक के आधीन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असाध्य रोग साध्य कैसे बनते हैं ?

[डा० पूचा]

प्राकृतिक चिकित्सा की सार्थकता विशेष रूप से उन रोगियों के सम्बन्ध में लोगों को दिखाई पड़ती है जिन्हें सारी चिकित्सा प्रणालियाँ प्रायः निराश कर चुकी रहती हैं। अक्सर लोग अंतिम अवलम्ब के ही रूप में प्राकृतिक चिकित्सा का सहारा लेते हैं। पर ऐसे असाध्य रोगियों पर भी प्राकृतिक चिकित्सा अपना नैसर्गिक चमत्कार दिखाये बिना नहीं रहती। और इसी लिए प्राकृतिक चिकित्सा का यह दावा है कि अगर रोगी में कुछ भी प्राण-शक्ति अवशेष है तो उसे वह अवश्य लाभ पहुँचा सकती है। इसका एक सुन्दर उदाहरण यहाँ पर लेखक ने, जो प्राकृतिक चिकित्सा के एक अच्छे विशेषज्ञ है, प्रस्तुत किया है। आशा है, इस लेख के द्वारा बहुत से निराशान्धकार में पड़े हुए व्यक्तियों को आशा की अरुणिमा दीख पड़ेगी। —सं०]

हमारे यहाँ चिकित्सा के लिए प्रायः ऐसे ही रोगी आते हैं जिन्हें सब ओर से जवाब मिल चुका रहता है, जिनके रोग को प्रायः सभी प्रचलित चिकित्सा प्रणालियाँ असाध्य घोषित कर चुकी होती हैं। किन्तु ऐसे असाध्य रोगी भी प्राकृतिक चिकित्सा की शरण लेने पर कुछ महीने बाद न केवल रोग से छुटकारा पा जाते हैं बल्कि वे प्रकृति से नए जीवन, नए स्वास्थ्य और आरोग्य का वरदान भी प्राप्त कर लेते हैं !

असाध्य समझा जाने वाला रोग साध्य कैसे बन जाता है, इसका जवाब हमें कुछ विस्तार के साथ देना होगा। लेकिन इतना तो हम अवश्य कहेंगे कि जब तक रोगी तथाकथित औषधि-प्रणाली का आश्रय ढूंढ़ता रहेगा तब तक उसका रोग सचमुच असाध्य ही है। डाक्टरी उपचारगृहों में उपचार का नतीजा यदि मृत्यु के सिवाय और कुछ नहीं होता है तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं।

प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली के अन्तर्गत हम रोगोपचार का जो क्रम निर्धारित और कार्यान्वित करते हैं वह एलोपैथी चिकित्सा-प्रणाली से भिन्न ही नहीं, उसके सर्वथा प्रतिकूल भी होती है। उदाहरण के लिए, हम रोगी के उपवास कराते हैं, जब कि एलोपैथ डाक्टर उसे हर तरह का भोजन—हालां कि वह पोषण तत्वों से भरा होता है—करने की सलाह देते हैं; हम रोगी से व्यायाम करने को कहते हैं जब कि एलोपैथ डाक्टर रोगी के चुपचाप चारपाई पर पड़े रहने के ही लिए कहेंगे; हम रोगी की स्नायु-प्रणाली को विश्राम देना चाहते हैं जब कि एलोपैथ डाक्टर चाहेंगे कि उसे Strichnine जैसे उत्तेजक पदार्थ दिए जायँ ! अब आप समझ सकते हैं कि इन दोनों चिकित्सा-प्रणालियों में पूर्व और पश्चिम का-सा अन्तर है ! अतः इन दोनों प्रणालियों के अन्तर्गत रोगोपचार के परिणामों में भी आकाश-पाताल का-सा अन्तर होना स्वाभाविक ही है।

अब हम यहाँ पर एक उदाहरण देकर यह बता-देंगे कि प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली के अनुसार असाध्य रोगों को साध्य कैसे कर लिया जाता है।

एक चालीस वर्षीया महिला के पीठ में फोड़ा हो गया था। मेरुदण्ड के दाहिने और बाएँ दोनों तरफ सूजन आ गई थी। कुछ दिनों तक आयुर्वेदीय उपचार होने के बाद वह महिला एलोपैथ डाक्टरों के पास ले जायी गई। कई डाक्टरों ने उसकी परीक्षा की और यह घोषित किया कि इसके लिए ६ इंच लम्बा और ६ इंच गहरा अपरेशन होना अनिवार्य है। लेकिन इस पर भी वे यह गारन्टी करने के लिए तैयार नहीं थे कि अपरेशन से उसका रोग अच्छा हो जायगा क्योंकि वह फोड़ा बहुत बुरे किस्म का था और इसके साथ ही उसे बहुमूत्र की भी शिकायत थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस महिला के पति मेरे मित्रों में थे। वह जानते थे कि प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली में असाध्य रोग किस प्रकार सहज साध्य बना लिए जाते हैं। अतः वह अपनी पत्नी को मेरे पास लाए।

मैंने उन्हें बताया कि 'डायाबिटीज़' (बहुमूत्र) होने का कारण क्या है और यह कि उनकी स्त्री को गलत और ऋणात्मक आहार (Negative diet) दिया जाना इस रोग का मुख्य कारण है।

अब मैंने उस महिला का उपचार इस प्रकार आरम्भ किया—सुबह को उबाली हुई शाक-भाजी और दूसरे वक्त फल। जिस समय वह महिला हमारे यहाँ भर्ती हुई उस समय उसके घाव के चारों ओर जलन थी। इसलिए मैंने उसके घाव पर ठण्डे पानी में भिगो कर रुई की सादी पट्टी बाँधने को बताया और कहा कि यह पट्टी कई बार बदली जाय। शीतल जल की पट्टी बांधने पर हर बार उसे कुछ आराम मालूम होने लगा। जब कभी जलन बढ़ती तो पट्टी बदल दी जाती। यह क्रम कई दिनों तक चला और अन्त में दर्द मिट गया और फोड़े का आकार बढ़ गया और समूची पीठ (Dorsal area) में सूजन आ गई। मैं सोचने लगा कि शाक-भाजी भी रोगिणी के अनुकूल नहीं पड़ रही है इसलिए मैंने उसे केवल शन्तरा, अंगूर और अनार पर रहने की सलाह दी। इस प्रकार एक और सप्ताह के बाद वह फोड़ा फिर फूटा लेकिन इस बार भी बहुत थोड़ा पीब निकला।

मैंने आरम्भ से ही उसके घाव पर हलके कासनी रंग के शीशे से सूर्य किरण का प्रयोग (Mild violet-disc applications) शुरू कर दिया था। इस बार हमने उस प्रयोग की शक्ति और उसके समय को और बढ़ा दिया। इस तरह के प्रयोग से कुछ ही दिनों के बाद उस घाव में से बहुत अधिक मात्रा में पीब निकला। इसके अनन्तर उसमें इतनी शक्ति नहीं रह गई कि वह उतनी तेज सूर्य किरण के प्रयोग को सहन कर सकें, इसलिए मैंने उसकी शक्ति और उसके प्रयोग के समय में कमी कर दी और शीशे का रंग भी कासनी से बदल कर नीला कर दिया। वह घाव अब और चौड़ा हो गया था और उसकी आकृति ६"×९" हो गई थी।

फलाहार पर रहने के कारण वह रोगिणी सूखकर अस्थि-पंजर मात्र रह गई थी। मैंने अनुभव किया केवल फलाहार उसके लिए पर्याप्त नहीं है। इसलिए मैंने उससे फिर सवेरे के पहर उबाली हुई शाक-भाजी फलाहार के साथ-साथ फिर शुरू कर देने के लिए कहा। इधर अब उसका घाव भरने लगा और एक महीने में उसका घाव पूरी तौर से भर गया। इस उपचार के बीच उसे हर रोज निमयित रूप के कुनकुने पानी से एनिमा भी दिया जाता था। वह सवेरे और शाम को मेहन-स्नान (Sitz bath) लेती। उनका यह क्रम महीने भर तक जारी रहा और उसके बाद शाम को यह मेहन-स्नान की जगह कटि-स्नान (Hip bath) लेने लगी।

जब उसका घाव अच्छी तरह भर गया तो उसे चोकर सहित आटे की रोटी और उबली हुई शाक-भाजी सुबह दी जाने लगी। कुछ दिनों के बाद उसे शाम को भी यही भोजन दिया जाने लगा। मैंने इस बात के सम्बन्ध में विशेष सावधानी रक्खी थी कि उसके भोजन में शाक-भाजी और रोटी का अनुपात क्रम से ३ और १ का रहे। तीसरे पहर को उसे फलों का खूब सेवन कराया जाता।

वह हर रोज गरम पानी से सर्वाङ्ग स्नान भी करती और सप्ताह में उसे एक दिन तैल-स्नान भी कराया जाता था। इसमें कोई सन्देह नहीं अगर कोई चिकित्सा-प्रणाली रोग के मूल कारण का पता लगाने का प्रयत्न न करके केवल रोग को दूर करने का प्रयत्न करेगी तो यह निश्चय है कि उसे किसी रोग को अच्छा कर देने में सफलता नहीं मिल सकती। आहार-विज्ञान सम्बन्धी नियमों की उपेक्षा करके कोई भी चिकित्सा-प्रणाली रोगोपचार में सफलीभूत नहीं हो सकती—आगे चलकर उसका असफल होना अनिवार्य होगा। जिस महिला का मैंने यहाँ उदाहरण दिया है उसका आहार बदल दिए जाने के कारण

(शेष ३२वें पृष्ठ पर देखिए)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्री-व्यायाम पर एक दृष्टि

[चरकतीर्थ श्री दिगम्बर बक्षी, स्वर्गाश्रम, राजकोट]

अपने पिछले लेख में, जो अगस्त' ४३ के 'जीवन सखा' में प्रकाशित हो चुका है, बक्षी जी बता चुके हैं कि जिस प्रकार स्त्री और पुरुष की प्रकृति में अन्तर है उसके अनुसार उनके रहन-सहन और व्यायाम में भी अन्तर होना अनिवार्य है। प्रस्तुत लेख में आपने स्त्रियों के स्वास्थ्य के लिए तथा विभिन्न प्रकार के रोगों के निवारण और निराकरण के हेतु यौगिक-व्यायाम की उपयोगिता पर अपने विचार प्रकट किए हैं। —सं०]

पिछले लेख में हम देख चुके कि गर्भ संगोपन ही स्त्रियों का प्रधान और पवित्र कर्त्तव्य है और यह कि उनके लिए जो व्यायाम चुना जाय वह इस तरह का हो जो उनके इस पुनीत कर्त्तव्य के पालन में व्याघात उत्पन्न करने वाला न हो। दौड़ना, कूदना आदि व्यायामों का परिणाम विशेषतः शाखा, संवर्धन ही होता है। इस तरह के व्यायाम का असर शरीर के भीतरी अवयवों पर कम पड़ता है। पुरुषों को अपने जीवन में शारीरिक श्रम-प्रधान कार्य करने होते हैं, अतः उनके हाथ-पैर खूब मजबूत होना आवश्यक है। और यही उनका प्रधान कर्त्तव्य भी है। लेकिन स्त्रियों के लिए इस तरह का व्यायाम अनावश्यक ही है।

आज हम देखते हैं कि स्त्रियों के लिए प्रसव-काल उत्तरोत्तर आतंककारी बनता चला जा रहा है। इसका मुख्य कारण जनन-सम्बन्धी अवयवों की कमजोरी ही है। उनमें यह कमजोरी भी बहुत से कारणों से उत्पन्न होती है जिनमें कृत्रिम व्यवहार, कृत्रिम आहार, उचित व्यायाम का अभाव आदि प्रधान कारण हैं। इन कारणों से गर्भाशय का शैथिल्य तथा उसका स्खलन हो जाता है जिसका फल कष्ट-प्रसूति, अपपक्व प्रसूति और प्रसूति के बाद क्षयादि रोगों के प्रादुर्भाव के रूप में प्रकट होता है।

आजकल गर्भाशय सम्बन्धी अधोलिखित विकार प्रधान रूप से पाये जाते हैं—

(१) गर्भाशय का स्खलन (Retroversion of uterus)

(२) गर्भाशय का भ्रंश (Prolapse of uterus)

(३) संकुचित गर्भ-शय्या (Narrow fundus)

(४) संकुचित गर्भाशय-मुख (Narrow os)

इन विकारों में एलोपैथिक तथा आयुर्वेदीय उपचार बहुत कुछ किए जाते हैं। परन्तु इनसे कोई विशेष लाभ होता बहुत कम देखने में आता है, इस बात को एलोपैथ डाक्टर लोग भी स्वीकार करते हैं। अतः इन विकृतियों को दूर करने के लिए वे मालिश, अंग-विन्यास (Postures) आदि प्रकार के उपचारों की सलाह देते हैं। इन सब बातों से कम से कम यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि इस तरह के विकारों में दवा की अपेक्षा कुछ और ही तरह के इलाज की जरूरत है।

गर्भाशय-स्खलन कभी तिर्यक, कभी अधो और कभी अन्तर-स्खलन के रूप में होता है। गर्भाशय जब अपने स्थान से च्युत होकर नीचे की ओर खिसकता है तब उसको भ्रंश कहते हैं। कभी गर्भाशय के अन्दर का भाग, जिसे गर्भ शय्या कहा जाता है, संकीर्ण होता है, तो कभी गर्भाशय का द्वार संकीर्ण होता है। इन सब विकृतियों से प्रसूति में गड़बड़ी होती है।

अब यदि इन विकृतियों पर शास्त्रीय ढंग से विचार किया जाय तो पता चलता है कि वहाँ की पेशियों की कमजोरी ही इन सब का कारण होती है। जिस प्रकार किसी तम्बू या खेमे को चारों तरफ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से रस्सियों से बाँध कर स्थिर रखते हैं उसी प्रकार यह गर्भाशय भी चारों तरफ के माँस-रज्जुओं से बँधा हुआ रहता है। उन माँस-रज्जुओं के दुर्बल अथवा शिथिल होने के कारण गर्भाशय का स्खलन होता है। जिस ओर के मांस-रज्जु शिथिल होते हैं उसी तरफ गर्भाशय खिसक कर चला जाता है। इसी प्रकार गर्भाशय का तंग या संकीर्ण होना भी अवयव के हीन विकास का सूचक है। अतः यह स्पष्ट है कि इन सब विकृतियों को दूर करने के लिए गर्भाशय की दीवार स्वस्थ और मजबूत होनी चाहिए। यह काम दवा के बूते के बाहर ही है, इसके लिए तो व्यायाम की ही अपेक्षा या आवश्यकता होती है।

दण्ड-बैठक से जैसे हम अपने हाथ-पैर आदि अंगों को मजबूत बनाते हैं उसी प्रकार गर्भाशय के उन भागों को व्यायाम के द्वारा बलिष्ठ बनाना, वहाँ के रुधिराभिसरण के प्रवाह को बढ़ाना—यही उन उपरोक्त विकृतियों के दूर करने का असली और शास्त्रीय उपचार है। किसी विकृत अवयव को ठीक करने के सम्बन्ध में आमतौर से दो बातें आवश्यक होती है—पहली तो यह कि उस भाग को पर्याप्त विश्रांति मिलनी चाहिए जिससे कि वहाँ की धातुपरिभवन (?) क्रिया ठीक तरह से हो सके और दूसरी यह कि वहाँ पर बराबर शुद्ध रक्त का संचार और उसी क्रम से अशुद्ध अथवा दूषित रक्त का निष्कासन होता रहे।

सर्वांगासन या विपरीतकरणी में यह बात बड़ी आसानी के साथ और उत्तम ढंग से होती है। इस आसन के द्वारा गर्भाशय तथा वहाँ के मांस-रज्जुओं को पूरी तौर से विश्रान्ति मिलती है और उनके ऊपर पड़ने वाला मल का दबाव हलका हो जाता है। वहाँ के अणुओं को फिर अच्छी तरह काम करने लग जाने की क्षमता और स्फूर्ति प्राप्त होती है और गर्भाशय अपने मूल स्थान पर आ जाता है। अश्विनी-क्रिया के द्वारा वहाँ पर विपुल मात्रा में रुधिर का संचार कराया जा सकता है। उसके द्वारा गर्भाशय के मांस-रज्जुओं के आकुंचन-प्रसरण का अभ्यास कराया जाता है जिसके फलस्वरूप उनकी ताकत बढ़ जाती है और वहाँ का प्रत्येक अणु विकसित और नए रुधिर से प्रफुल्लित हो जाता है। सर्वांगासन में गुरुत्वाकर्षण अनुकूल होने से मलापकर्षण तथा अशुद्ध रक्त का प्रवाह जारी होता है जो वहाँ के अणुओं के अधिक कार्यक्षम बनाने में सहायक होता है। इन सब क्रियाओं से वहाँ के अवयवों की शक्ति में वृद्धि होती है। यदि इन विकृतियों को दूर करने में उड्डियान तथा कपालभाति का भी यथायोग्य उपयोग किया जाय तो उसका फल और भी सुलभ तथा स्थायी होता है।

गर्भाशय सम्बन्धी इन विकृतियों के दूर करने में आसन और प्राणायाम का प्रयोग किया गया है और उनके अच्छे परिणाम भी स्पष्ट रूप से होते देखे गए हैं। हाँ, गर्भाशय तथा उसके द्वार के संकीर्ण होने की विकृति को दूर करने में इन क्रियाओं के द्वारा अधिक सफलता नहीं मिली है। परन्तु हमें इस बात का पूरा यकीन है कि अगर छोटी अवस्था से ही इन क्रियाओं का अभ्यास जारी रहे तो उनमें यह खराबियाँ बिलकुल ही नहीं होने पायेंगी। प्रौढ़ावस्था में, जब कि गर्भाशय की मांस-पेशी तथा मांस-रज्जु बहुत सख्त हो जाते हैं, इन क्रियाओं के सुपरिणाम मुश्किल से देखने को मिलते हैं। इसलिए यदि गर्भाशय की संकीर्णता की खराबी को दूर करना हो तो जिन यौगिक क्रियाओं के सुपरिणाम उन अवयवों पर स्पष्ट दिखायी पड़ते हैं उन क्रियाओं को बचपन से ही आरम्भ कर देना स्त्रियों के लिए बहुत आवश्यक है। स्कूलों तथा छात्रावासों में यौगिक क्रियाओं का अभ्यास शुरू कर देना चाहिए। क्या हमारे सभ्य समाज की महिलाएँ इस पर ध्यान देंगी, क्या तरह-तरह के अन्य व्यायामों की अपेक्षा इस व्यायाम को अपनायेंगी ?

मासिकधर्म की गड़बड़ी

प्रसूति के बारे में साधारणतः जो विकृतियाँ देखने में आती हैं उनका उल्लेख मोटे तौर पर किया जा चुका। इसके अलावा आजकल स्त्रियों में एक अन्य प्रकार की विकृति भी अक्सर देखने को मिलती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और वह है मासिकधर्म की गड़बड़ी। यह बीमारी शहर की स्त्रियों में अधिकतर पाई जाती है। अतः यह स्पष्ट है कि शहर की स्त्रियों का कृत्रिम जीवन और अनियमित रहन-सहन ही उनकी इस बीमारी का प्रधान कारण होता है। मासिकधर्म सम्बन्धी विकार कई प्रकार के होते हैं—जैसे कष्टार्तव (जिसमें रक्त का स्राव बड़ी पीड़ा अथवा कष्ट के साथ होता है), अत्यार्तव (जिसमें बहुत अधिक रक्त का स्राव होता है) अनार्तव अथवा अल्पार्तव (जिसमें मासिक धर्म ठीक समय से नहीं होता अथवा रक्त का स्राव बहुत कम और रजोदर्शन विलम्ब से होता है)। कभी कभी अठारह-बीस वर्ष की अवस्था हो जाने तक रजोदर्शन न होने की शिकायत पायी जाती है। अल्पार्तव में मासिक स्राव कम होता है और इस वजह से स्त्रियों को प्रतिमास मासिकधर्म के बाद उस भाग में जो हलकापन अनुभव होना चाहिए वह नहीं होता। इस प्रकार जब शरीर के अन्दर विकार जमा रहता है तो उसका स्वास्थ्य धीरे-धीरे नष्ट होता ही जाता है।

इन सब विकृतियों का प्रधान कारण मनःशोक होता है। इसके अलवा पाचन-क्रिया की गड़बड़ी तथा कोष्ठबद्धता भी इसके कारण बनते हैं। कुपचन अथवा पाचन-शक्ति की कमजोरी के कारण शरीर के भीतर वायु कुपित होती है जिसका दबाव गर्भाशय और उसके स्रोतसों पर पड़ता है। उस पर कोष्ठबद्धता का भी इसी तरह का दबाव पड़ता है। इसका परिणाम यह होता है कि वहाँ पर धीरे-धीरे मल संचय होने लगता है। वहाँ के स्रोतसों का मल, जिसे प्रतिक्षण रक्त-प्रवाह के साथ साथ निकलते रहना चाहिए, निकल नहीं पाता और वहाँ पर रुक जाता है। यदि यह हालत और बढ़ती रही तो वहाँ पर अशुद्ध रक्त का प्रवाह कुछ स्थगित-सा हो जाता है जिसके फलस्वरूप वहाँ के स्रोतस शिथिल तथा मलयुक्त बन जाते हैं।

यही अवस्था मनःक्षोभ से भी होती है। मनःक्षोभ से श्रोणी-प्रदेश में बारम्बार चेतना उत्पन्न होने के कारण वहाँ के अशुद्ध रक्त से वह श्रोतस ढीले पड़ जाते हैं जिसका परिणाम ठीक वैसा ही होता है जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं। प्रदर के और भी बहुत से कारण होते हैं जिनमें यह सांसर्गिक रोग प्रधान है। प्रदर स्त्रियों का बहुत बड़ा शत्रु है। इससे शरीर क्षीण हो जाता है, उत्साह-शक्ति बिलकुल नष्ट हो जाती है।

आर्तव-विकृति और प्रदर, इन दो प्रधान स्त्री-रोगों के चाहे जो भी कारण हों पर इनका विकृति-विज्ञान प्रायः एक ही है। श्रोणिस्थ स्रोतसों में अशुद्ध रक्त-प्रवाह स्थगित हो जाने या वहाँ पर जमा हो जाने के परिणामस्वरूप उपरोक्त विकृति उत्पन्न होती है। ऐसी अवस्था में आवश्यकता किसी दवा की नहीं बल्कि इस बात की होती है कि वहाँ पर शुद्ध रक्त का संचार फिर से होने लग जाय।

इस अवस्था में यौगिक क्रियाएँ निस्सन्देह बहुत लाभकारी सिद्ध हुई हैं और इनके सुपरिणाम भी देखने को मिल चुके हैं। इन विकृतियों को दूर करने में सर्वांगासन अश्विनी-क्रिया तथा अन्य यौगिक आसनों तथा प्राणायाम आदि क्रियाओं की आजमाइश की जा चुकी है। इन विकृतियों के साथ ही साथ कुपचन अथवा मल-बद्धता के दोष भी जाते रहते हैं; यह इन क्रियाओं की एक दूसरी विशेषता है। यदि शुद्ध सात्विक आहार और वस्ति-क्रिया करते हुए ये आसन किए जायँ तो इनके सुपरिणाम शीघ्र प्रकट होने लगते हैं।

यदि रोग बहुत पुराना हो गया है तो इन क्रियाओं के साथ-साथ टब-बाथ की भी आवश्यकता होती है। कष्ट के साथ होने वाले आर्तव अथवा अनार्तव में गरम जल के टब-बाथ का उपयोग ठीक होगा। अत्यार्तव अथवा प्रदर की हालत में सिट्ज बाथ का उपयोग अधिक अच्छा होता है।

इन विकारों के उपचार में मालिश की भी बहुत उपयोगिता पाई जाती है। खास करके मेरुदण्ड की मालिश अत्यन्त लाभदायी होती है। रीढ़ के दोनों बाजुओं पर दोनों हाथों के अंगूठे रखकर ऊपर से नीचे की तरफ आहिस्ते आहिस्ते मालिश करनी चाहिए। मालिश में तेल का उपयोग करना चाहिए। कमर के नीचे के भाग (Sacrum) अधिक मालिश होनी

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी बात

ये पिछले ८ वर्ष !

जनवरी से 'जीवन सखा' अपने जीवन के नवें वर्ष में पदार्पण करता है। इस अवसर पर हमें स्वभावतः उस समय का स्मरण हो रहा है जब कि हमने प्रयाग में प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह की स्थापना और प्राकृतिक स्वास्थ्य सम्बन्धी एक मासिक पत्र प्रकाशित करने की योजना तैयार की थी। किन्तु उस योजना को कार्यान्वित करने के पूर्व हमें एक ऐसा क्षेत्र तैयार करना था जो इसके लिए एक अनुकूल वातावरण प्रस्तुत करता, क्योंकि हम जानते थे प्रकृति के नैसर्गिक सन्देश को रोग-शोक सन्तप्त जन-समुदाय तक पहुँचाने में हमें अन्य प्रकार की कठिनाइयों के अलावा उन प्रतिकूल परिस्थितियों का भी सामना करना पड़ेगा, जो कि वर्तमान डाक्टरी औषधि-प्रणाली के प्रसार से हमारे देश में उत्पन्न होगई हैं। अतः इस योजना को कार्यान्वित करने से पहले हमने एक प्राकृतिक स्वास्थ्य संघ की स्थापना करना आवश्यक समझा। इसके अनुसार १९३३ में स्वनाम धन्य स्वर्गीय डा० लक्ष्मी नरायण चौधरी, रिटायर्ड सिविल सर्जन, श्री जानकी शरण वर्मा, प्रिन्सिपल केदारनाथ गुप्त, डा० आई० के० तैमिनी, श्री मूलराज मेहरोत्रा आदि प्रतिष्ठित व्यक्तियों के सक्रिय और उत्साहपूर्ण सहयोग से एक संघ की स्थापना हुई। इसके अनन्तर इन्हीं महारथियों के सतत प्रयत्न और सहकारिता के फलस्वरूप १७ अक्टूबर १९३४ को प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह का उद्घाटन और उसके कोई सवा साल बाद, अर्थात् जनवरी १९३६ से, 'जीवन सखा' का प्रकाशन आरम्भ हुआ।

इन पिछले ८वर्षों में हमारे स्वास्थ्य गृह तथा तत्सम्बन्धी मासिक पत्र 'जीवन सखा' ने पीड़ित मानवता के कल्याण के लिए अनेक विषम तथा विपरीत परिस्थितियों तथा अनेकानेक कठिनाइयों का सामना करते हुए भी जो उत्तरोत्तर सफलता प्राप्त की है वह निस्सन्देह स्पृहणीय है और इसके लिए हम अपने सहयोगियों और सहकर्मियों के सतत ऋणी हैं।

हम जिस मार्ग पर आरूढ़ हुए हैं उसके दो पहलू हैं। इनमें से एक तो आशा और उज्ज्वल भविष्य का पहलू है जो हमें निरन्तर आगे बढ़ते रहने के लिए अनुप्राणित करता रहता है। किन्तु इसका दूसरा पहलू विघ्न-बाधाओं से पूर्ण और क्षोभकारक है। यद्यपि हम इन विघ्न-बाधाओं से हतोत्साह नहीं हुए हैं और अपने हृदय में अकर्मण्यता अथवा निराशा का समावेश नहीं होने दिया है, किन्तु यह तो स्वीकार करना ही होगा कि हम जिस गति से इस पथ पर अग्रसर होना चाहते थे उसमें हम अब तक असमर्थ ही हुए हैं। और इसीलिए हमारे लिए यह दूसरा पहलू अबतक चिन्तनीय ही बना हुआ है।

हम जिस लक्ष्य की ओर अग्रसर हुए हैं उसकी पूर्ति के लिए यह आवश्यक है कि हम अपने स्वास्थ्य गृह को सुदृढ़ आधार पर कायम करलें और 'जीवन सखा' को आत्म-निर्भर और स्वावलम्बी बना लें। स्वास्थ्यगृह के सम्बन्ध में हमें सबसे अधिक चिन्ता गृह के उपयुक्त कोई स्थान प्राप्त करने की है। आजकल जिस स्थान में यह स्वास्थ्यगृह है उसे सर्वथा अनुकूल अथवा सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता। अब हमारे यहाँ इतने अधिक स्वास्थ्यार्थी आने लगे हैं कि उनके लिए समुचित प्रबन्ध करने में बड़ी दिक्कत होती है। इसलिए स्वास्थ्यगृह के लिए एक विस्तृत और प्रशस्त क्षेत्र प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है।

हमें आशा ही नहीं प्रबल विश्वास है कि इस पथ के समर्थ अनुरागियों और सहयोगियों की सहायता से शीघ्र या आगे चलकर अवश्य ही इस आवश्यकता की पूर्ति हो जायगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि वर्तमान युद्ध की परिस्थितियों के कारण 'जीवन सखा' के नियमित प्रकाशन में बड़ी बाधा पड़ी है। खास करके पिछले वर्ष तो हम कागज की महंगी तथा अन्य अनेक प्रकार की विघ्न-बाधाओं के कारण बहुत विलम्ब के साथ और अनियमित रूप से अपने पाठकों के सामने 'जीवन सखा'० के अंक प्रस्तुत करने के लिए बाध्य हुए। इस साल भी हम नव वर्ष के उपलक्ष्य में बराबर की भाँति एक वृहद् और सर्वांग सुन्दर विशेषांक प्रस्तुत करना चाहते थे। इसके लिए मैटर भी प्रेस में भेज दिया गया था, किन्तु पर्याप्त कागज न मिलने के कारण न केवल हम इसे वृहद् रूप में बल्कि ठीक समय से भी निकाल सकने में असमर्थ ही हुए हैं। इसके साथ ही हम इस बात का भी गम्भीरतापूर्वक अनुभव कर रहे हैं कि 'जीवन सखा' के नियमित और सुन्दर ढंग से प्रकाशन के लिए एक निजी प्रेस होना आवश्यक है।

जो भी हो, हमने जिस दिशा में कदम बढ़ाया है उससे हमे ये विघ्न-बाधाए कभी विमुख नहीं कर सकतीं। ये विघ्न-बाधाएं और कठिनाइयाँ ही मनुष्य के सच्चे लगन और कर्त्तव्यपरायणता की कसौटी हैं। इनसे हम कभी अधीर नहीं ही सकते। हमें इस बात का भी पूर्ण विश्वास है कि हमारी इन कठिनाइयों से 'जीवन सखा' के प्रेमी पाठक सहानुभूति रखते हुए अपना सक्रिय सहयोग सदैव प्रदान करते रहेंगे। 'जीवन सखा' के पाठक ही इसके सच्चे संरक्षक हैं। हमें अपने उन प्रतिष्ठित, विद्वान और अनुभवी लेखकों तथा सहयोगियों पर भी पूरा विश्वास है जिनका अमूल्य सहयोग और सहायता हमें प्राप्त होती रही है। और इसी आशा तथा विश्वास के साथ हम इस नए वर्ष का सहर्ष स्वागत करते हैं!

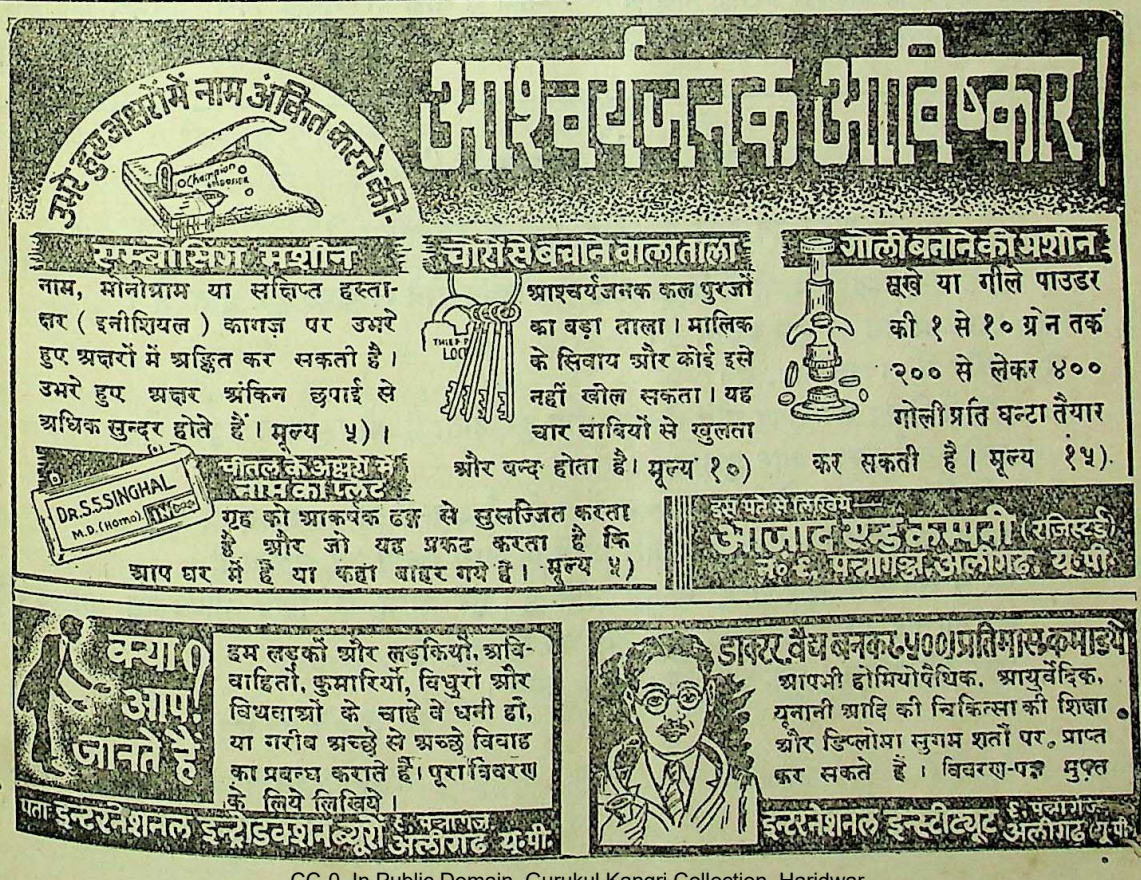

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२९वें पेज का शेषांश)

चाहिए। इसका वहाँ के स्नायुओं पर बड़ा शामक प्रभाव पड़ता है। इन रोगों में तो केवल मालिश ही बहुत कारगर होती है, यह अजमाया जा चुका है।

उपरोक्त विकारों में यौगिक व्यायाम, प्राकृतिक स्नान और मालिश इन तीनों उपचारों की विशेष उपयोगिता है। इनमें से प्रत्येक उपचार प्रभावकारी है। अतः आवश्यकता के अनुसार इनमें से प्रत्येक का प्रयोग निरापद किया जा सकता है। ये तीनों उपचार एक साथ भी चलाए जा सकते हैं।

गर्भाशय तथा मासिकधर्म सम्बन्धी विकृतियों के लिए योगासनों की इस उपयोगिता को देखते हुए महिलावर्ग को इनसे लाभ उठाना चाहिये। किन्तु इन क्रियाओं को एकाएक और बिना सोचे समझे न आरम्भ करना चाहिए। इन क्रियाओं को शुरू करने से पहले अपने हृदय की डाक्टरी परीक्षा करा लेनी चाहिए। यदि हृदय की गति सामान्य हो, उसमें कोई दुर्बलता के लक्षण न प्रकट होते हों। केवल तभी यौगिक क्रियाएं करनी चाहिएं।*

* कैवल्यधाम में यौगिक व्यायामों का क्रम निर्धारित किया गया है। उसमें आसनों का सिलसिलेवार क्रम और उनके प्रमाण आदि की जानकारी कराई गई है। अतः साधारण लोग भी उसकी सहायता से आसानी के साथ यौगिक आसन कर सकते हैं। उस पुस्तिका का मूल्य केवल २ आना है। चित्रपट का मूल्य ॥) है जिसमें मुख्य-मुख्य आसनों के चित्र आर्ट पेपर पर दिए गए हैं।—लेखक।

(२६वें पेज के आगे)

महीने भर में उसके पेशाब में शकर आना बिलकुल गायब हो गया। किसी अन्य चिकित्सा-प्रणाली के लिए, जिसमें रोगिणी को सर्वथा शाकाहार और फलाहार पर नहीं रक्खा जाता है, इतने कम समय में पेशाब में शकर आना बन्द कर देना असम्भव ही होता। वह महिला हमारे यहाँ से पूर्ण स्वस्थ होकर लौटी। आज ३ मास हो गए हैं उसे बहुमूत्र की कुछ भी शिकायत नहीं हुई है और वह बिलकुल स्वस्थ है।

क्या आप जानते हैं ?

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

१—एक छटांक शहद पानी में मिला कर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है।
२—इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है।
३—शरीर में ताकत आती है।
४—दूध में मिला कर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुंसत्व बढ़ता है।
५—शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है।
६—यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है।
७—शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है।

पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये जीवन-मधु का उपयोग कीजिए। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) २॥) ढाई रुपए।

मिलने का पता—
प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह,
११, लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिए

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (तृतीय संस्करण) : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए०		३)
(२) सरल शरीर विज्ञान : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए०	... ...	१॥)
(३) प्राकृतिक चिकित्सा : श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	... ...	२।)
(४) मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	...	॥)
(५) दूध ही अमृत है : श्री हनुमान प्रसाद गोयल	... ...	१॥)
(६) स्वास्थ्य से सुखी : 'जीवन सखा' कार्यालय	... ...	≡)
(७) क्या और कैसे खायें : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	... ...	।=)
(८) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : श्री स्वामी शिवानन्द	... ...	१)
(९) सचित्र हठयोग : श्री स्वामी शिवानन्द	... ...	१।)
(१०) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	... ...	॥।)
(११) फलाहार और फल-चिकित्सा : श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा	... ...	१।)
(१२) आँखों का अचूक इलाज : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	... ...	२)
(१३) आरोग्य साधन : महात्मा गाँधी	... ...	॥)
(१४) नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा) श्री लूई कूने	... ...	३॥)
(१५) बच्चों की रक्षा : श्री लूई कूने	... ...	।=)
(१६) मैं निरोग हूं या रोगी : श्री लूई कूने ...	... ...	।=)
(१७) उपवास-चिकित्सा : बरनर मैकफ़ेडन ...	... ...	१=)
(१८) स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियाँ : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	... ...	१॥)
(१९) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदार नाथ गुप्त, एम० ए०	... ...	१)
(२०) सूर्य-नमस्कार : श्री भगवती प्रसाद पांडे, बी० ए०	... ...	१)
(२१) शाक और उनके गुण : श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा	... ...	॥।)
(२२) स्वास्थ्य और जल चिकित्सा : प्रिन्सपल केदारनाथ जी गुप्त	... ...	१॥)
(२३) आहार ही औषध है : डा० एल० एन० रतरा	... ...	१।)
(२४) फलाहार चिकित्सा : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	... ...	२।)
(२५) Nature Cure by H. Lindlahr, M. D.	...	6 0
(२६) Practical Nature Cure by Dr. K.L. Sharma, N. D.	...	5 0
(२७) Fasting Cure by Dr. L. Sharma N. D.	...	0 6
(२८) Drugless Healing by L. Dr. Kameshwar Sharma, M.A., N.D.		0 8
(२९) Food-de-Medicine by Dr. L. N. Ratra, H.M.B.	...	2 0

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रन्थ-भंडार, लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

उत्तरी भारत में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रमुख केन्द्र

'प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह' प्रयाग

जहाँ अब तक न जाने कितने कथाकथित असाध्य रोगों से पीड़ित होने वाले रोगियों ने पहुँच कर अपने को नीरोग और स्वस्थ बना लिया। यही कारण है, जो यह चिकित्सा केन्द्र लगातार उन्नति करता जा रहा है।

यदि आप—किसी भयानक रोग से पीड़ित हो रहे हैं, डाक्टरों और वैद्यों की दवा से निराश हो चुके हैं, तो आप फौरन यहाँ पधारें या पत्र देकर चिकित्सा के सम्बन्ध में विवरण प्राप्त करें।

यहाँ इन रोगों की सफलता पूर्वक चिकित्सा होती है—साधारण दुर्बलता, स्नायु दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग रक्ताभाव पुराना जुकाम, खाँसी, कब्ज, प्लुरिसी, अनिद्रा, दमा, मृगी, रक्त-चाप, मधुमेह मुटापा, मंदाग्नि, संग्रहणी, गठिया, स्नायु-शूल (scitica) उदर-शूल (colic pain), पथरी (gallstone troubles), गुर्दे की बीमारी विषाक्त फोड़ा नासूर, भगंदर, तथा विभिन्न प्रकार के स्त्री रोग जैसे—मासिक स्राव न होना या बहुत अधिक होना, स्राव के समय दर्द होना, प्रदर—इत्यादि इत्यादि।

यहाँ जिस चिकित्सा विधि से रोगी का इलाज किया जाता है उनमें यौगिक क्रियायें, आसन, प्राणायाम, मालिश, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, जल-चिकित्सा, मिट्टी तथा वाष्प-चिकित्सा, आहार चिकित्सा, उपवास, मानसोपचार आदि सम्मिलित हैं।

स्वास्थ्य गृह में भरती होने के नियम—(१) इस स्वास्थ्य गृह में स्त्री और पुरुष दोनों तरह के रोगी भर्ती किये जाते हैं। किन्तु संक्रामक रोगों से पीड़ित होने वाले तथा चारपाई छोड़ने में असमर्थ रोगियों के रखने का प्रबन्ध नहीं है। (२) रोगियों के रहने उपचार तथा सेवा-शुश्रूषा का प्रबन्ध संस्था की ओर से किया गया है (३) रोगियों से चिकित्सा फीस ५०) प्रति मास ली जाती है, जिसमें मकान का किराया और इलाज की फीस दोनों शामिल हैं।

विशेष जानकारी के लिए नीचे लिखे पते से पत्र व्यवहार करें :—

संचालक

प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह

११, लूकरगंज, इलाहाबाद।

Printed at the Mission Press, Allahabad,
Published by Svt Baleshwar Prasad Sinha, 11, Lookerganj, Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by

जीवन ज्योति

शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का
पथ-प्रदर्शक

संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा बिहार के शिक्षा विभागों द्वारा स्वीकृत

इस अंक में पढ़िये

१—योगाभ्यासी के लिए ७ साधन—अवतरण ३
२—स्वास्थ्य और दीर्घायुष्य का रहस्य (संकलन) ३
३—अण्ड-वृद्धि—उसका कारण और निदान—श्री चन्द्रभूषण मिश्र, काशी ... ३
४ भावी माता—श्रीराम जी सहाय एन० डी० डी० वाई, प्रयाग ४
५—नीबू—श्री श्रीनाथदास अग्रवाल, काशी ४
६—प्रश्नोत्तर ५
७—सम्पादकीय ५
८—नई पुस्तकें ५

संपादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

वार्षिक मूल्य ४)

प्रति अंक का ।=)

फरवरी १९४४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रति मास इक्कीसवीं तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ४ तथा एक प्रति का ।=) है।

(३) सज्जन-गण जनवरी या जुलाई से ही ग्राहक बनें; यों किसी महीने से भी ग्राहक बनाया जा सकता है।

(४) मास के अन्त तक 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोस्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए। अन्यथा मुफ्त में वह अंक फिर न मिलेगा।

(५) पत्र भेजते समय अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ साफ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।=) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

अनुपम अवसर !

पाठकों को यह जान कर हर्ष होगा कि श्रीमान धर्मचन्द्र सरावगी की उदारता के फलस्वरूप १५० पुस्तकालयों के लिए १॥) वार्षिक चन्दे पर 'जीवन सखा' एक साल तक पहुंचाते रहने की योजना की गई है। अतः सार्वजनिक पुस्तकालयों को इस अनुपम अवसर से लाभ उठाना चाहिए। १॥) में 'जीवन-सखा' प्राप्त करने के लिए आज ही लिखें।

—मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

वर्ष ९ | फरवरी १९४४ | अङ्क २

योगाभ्यासी के लिए ७ साधन

शोधनं दृढ़ता चैव स्थैर्यं धैर्यं च लाघवम् ।
प्रत्यक्षं च निर्लिप्तिं च घटस्थसप्तसाधनम् ॥
षट्कर्मणा शोधनं च आसनेन भवेद्दृढ़म् ।
मुद्रया स्थिरता चैवप्रत्याहारेण धीरता ॥
प्राणायामाल्लाघवं च ध्यानात्प्रत्यक्षमात्मनि ।
समाधिना निर्लिप्तं च मुक्तिरेव न संशयः ॥

योगाभ्यासी के लिए ७ साधन हैं—(१) शोधन (देह को शुद्ध करना), (२) दृढ़ता, (३) स्थैर्य (देह को स्थिर-शान्त रखना), (४) धैर्य (कभी न घबड़ाना, बिना उकताए शान्त चित्त हो अभ्यास में लगे रहना), (५) लाघव (लघुता, हल्कापन), (६) प्रत्यक्ष (चक्षु आदि ज्ञानेन्द्रियों से देखना, छूना आदि क्रियाएँ), (७) निर्लिप्ति (सब वस्तुओं को उपयोग में लाते हुए भी सबसे असंग रहना, उन सबको अपने मन में नहीं बसाना। तात्पर्य यह कि साधक संसार में रहे तो ठीक है; पर संसार साधक के मन में न रहने लग जाय। जल में नौका रहे, पर नौका में जल घुसते ही वह उसे डुबा देता है)। शरीर को अभ्यस्त करने के लिए यही सात साधन हैं।

षट्कर्मों (धौति, वस्ति, नेति, नौलि, त्राटक, और कपालभाति) से शरीर की शुद्धि होती है। आसनों से शरीर में दृढ़ता आती है। यागमुद्राओं के अभ्यास से स्थिरता प्राप्त होती है। प्रत्याहार से धैर्य प्राप्त होता है। प्राणायाम से शरीर में लघुता (हल्कापन) अथवा स्फूर्ति आती है। ध्यान से अपने मन में ही सभी विषयों का प्रत्यक्ष होने लगता है। समाधि से असंगता प्राप्त होती है। इस भाँति इन साधनों से अवश्य मुक्ति मिलती है, इसमें संशय नहीं।

—घेरण्ड संहिता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य और दीर्घायुष्य का रहस्य

स्वस्थ और दीर्घजीवी होना कौन नहीं चाहता—कौन चाहता है कि हम जीवन भर नाना प्रकार की व्याधियों से पीड़ित होते रहें अथवा असमय में ही काल-कवलित हो जायं ? पर ऐसे भी कितने हैं जो स्वास्थ्य और आरोग्य को ही जीवन की सब से बड़ी निधि समझते और उसे प्राप्त करने के लिए सतत प्रयत्नशील और इच्छुक रहते हैं ?

स्वास्थ्य, आरोग्य एवं दीर्घायुष्य सतत साधना के पुण्यफल हैं। नियमपरायणता इस स्वास्थ्य-साधना की पहली सीढ़ी है। शारीरिक और मानसिक शुचिता स्वच्छता और पवित्रता—के मन्दिर के पुजारी ही इस पुण्यफल के अधिकारी होते हैं—संसार के दीर्घजीवी महापुरुषों के जीवन इसके साक्षी हैं। आप उनके वचनामृत को हृदयगम करें, उनके अनुभवों से लाभ उठावें, इसी आशा से हम यहाँ पर आप के समक्ष संसार के कतिपय दीर्घजीवियों के जीवन की झाँकी प्रस्तुत करते हैं।—सं०

प्राचीन समय में भारतवर्ष में लोगों की औसत आयु १०० वर्ष की होती थी। ६० साल के लोग 'पट्ठे' समझे जाते थे। लेकिन आज यहाँ के निवासियों की औसत आयु केवल २३ से लेकर २७ साल तक रह गयी है; तब और अब में आकाश-पाताल का-सा अन्तर आ गया है। बहुत से धर्म-शास्त्री इसे 'कलियुग का प्रभाव' बताते हैं। आज-कल हमारे समाज में जो भी अनाचार, अभिशाप और पाप देखने को मिलते हैं उनके लिए वे कलियुग को ही दोषी बताते हैं। लेकिन क्या हम उनसे यह पूछ सकते हैं कि कलियुग का यह अभिशाप केवल भारतीयों को ही क्यों भोगना पड़ रहा है ? संसार में सबसे अधिक अल्पायु यहीं के लोग क्यों हैं ? इस पर यदि हम विचार करें तो ज्ञात होगा कि यह कलियुग का नहीं बल्कि 'कलयुग' (मशीनों का युग का ही अभिशाप है। इस अभिशाप को संसार के अन्य देशों को भी वहन करना पड़ा है, लेकिन वहाँ पर स्वास्थ्य की दिशा में इतना सुधार हुआ है कि उसकी वजह से कलयुग का यह अभिशाप बहुत अधिक अंशों में न्यून हो गया है। दैनिक जीवन में कृत्रिमता, रहन-सहन में असंयमशीलता, खान-पान में गड़बड़ी, आदि अनेक कारणों से ही हमारी यह दुरवस्था हुई है और यदि हमने सुधार नहीं किया तो निश्चय ही यह हमें ऐसे गर्त में गिरादेगी जहाँ से कभी उद्धार होना सम्भव ही न होगा।

इसकी सचाई इस बात से जानी जा सकती है कि जो लोग आज भी शहरों के कृत्रिमतापूर्ण जीवन से सर्वथा रहित होकर दूर देहात में या जंगलों में रहते हैं, जिनका आहार-विहार अब भी बहुत कुछ अंशों में प्राकृतिक बना हुआ है, उनमें अकाल मृत्यु और नाना प्रकार के रोगों का इतना विकराल ताण्डव नहीं हो रहा है, जितना कि हमें शहरी क्षेत्रों में देखने को मिलता है।

स्वास्थ्य और आरोग्य की कुंजी आहार और व्यायाम है। आहार से हमें जीवन-रस मिलता है जिसका परिपाक व्यायाम के द्वारा होता है। आहार शरीर का पोषक है और व्यायाम उसका नियामक। इन दोनों का सम्बन्ध अटूट है। जीवन-रथ के यही दो पहिए हैं। इनमें से एक में भी खराबी आ जाने से जीवन-यान का आगे बढ़ना दूभर हो जाता है।

आहार अमृत भी है और विष भी; यह शरीर को जीवन भी देता है और मृत्यु का भी कारण बनता है। इसी प्रकार व्यायाम भी कहीं पर तो हमें वरदान के रूप में दिखायी पड़ता है और कहीं पर वही हमारे लिए भयानक अभिशाप का भी रूप धारण करता दीख पड़ता है। इसलिए आरोग्यवान स्वस्थ और दीर्घजीवी बनने के लिए हमें आहार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और व्यायाम का ठीक अर्थों में ही अपनाना होगा, और तभी हम इससे समुचित लाभ उठाने में समर्थ हो सकेंगे।

शारीरिक स्वास्थ्य के लिए युक्ताहार ही महौषधि है। मनुष्य की जठराग्नि जितने आहार को आसानी के साथ पचा सके, उतना आहार ग्रहण करना लाभदायक होता है। इसलिए हमारे यहाँ मिताहार की बड़ी महिमा बताई गई है। शरीर के लिए आवश्यक तत्वों का आवश्यक मात्रा में—न तो कम और न अधिक—ग्रहण करना ही युक्ताहार है। इसप्रकार व्यायाम भी वही आरोग्यवर्द्धक होता है जो शरीर में क्लान्ति या थकावट न उत्पन्न करके स्फूर्ति और शक्ति उत्पन्न करने वाला हो। व्यायाम का अर्थ परिश्रम कदापि नहीं है, इसे सदैव ध्यान में रखना होगा। शारीरिक श्रम करनेवाले व्यक्ति और मानसिक श्रम करने वाले व्यक्ति की पाचन-प्रणाली भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है, उनका आहार भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है और उनके लिए व्यायाम भी भिन्न-भिन्न प्रकार के बताए गए हैं। इसलिए उनमें से प्रत्येक को अपनी प्रकृति और रहन-सहन के अनुकूल ही आहार और व्यायाम स्वीकार करना चाहिए, क्योंकि कुछ भी हेर-फेर या गड़बड़ी होने पर लाभ के बदले हानि की ही सबसे अधिक सम्भावना रहती है। आहार के अन्तर्गत मिताहार और उपवास भी अत्यधिक महत्व रखते हैं। और इसी प्रकार व्यायाम की दिशा में आसन, प्राणायाम और यौगिक शिथिलीकरण के महत्व को भी न भूलना चाहिए। यहां पर हम मिताहार के सम्बन्ध में भी एक आवश्यक बात बता देना चाहते हैं। सादी से सादी रीति से तैयार किए गए भोजन के केवल एक ही पदार्थ को ग्रहण करने वाला मिताहारी कहा जाता है। मिताहार और सुस्वादुप्रियता में परस्पर ३६ का नाता है। मिताहार में ऐसे पदार्थों का सर्वथा अभाव होता है जो हमारी स्वादेन्द्रिय को उत्तेजित करके हमें आवश्यकता से अधिक भोजन करने के लिए लोलुप बनाते हैं। यौगिक आहार मिताहार ही होता है। नियमित और संयमित मिताहारी साधु दीर्घजीवी होते हैं। दीर्घ जीवन का सबसे प्रभावकारी साधन मिताहार ही है।

× × ×

स्वस्थ्य और दीर्घजीवी बनने के उपाय

संयुक्त राज्य अमेरिका में अन्य उपयोगी आविष्कारों और अनुसंधानों की भाँति स्वास्थ्य और आरोग्य के सम्बन्ध में भी बराबर अनुसंधान और प्रयोग होते रहते हैं। वहाँ के एक डाक्टर ने सौ दीर्घजीवियों के अनुभव इकट्ठे किए हैं जिनका सारांश इस प्रकार है :

(१) चरबी बढ़ाने वाले भोजन से परहेज करो।
(२) हरी साग भाजी और फलों का खूब सेवन करो।
(३) शाम के वक्त के भोजन में दूध और दूध के बने पदार्थ अधिक रक्खो।
(४) खूब चबा-चबाकर भोजन करो।
(५) हर हालत में प्रसन्न रहो।

इसीप्रकार अमेरिका के एक अन्य विशेषज्ञ, डा० शरमन, ने अपनी प्रयोगशाला में इस विषय पर अनुसंधान किया है। आपका कहना है—फल, दूध, और छिलके सहित अन्न खाने से मनुष्य की आयु १० साल बढ़ाई जा सकती है। मिल में पिसे हुए आटे या साफ किए हुए चावल से परहेज करने की आपने सलाह दी है। ६८ साल की अवस्था में भी उनमें नवयुवकों की-सी स्फूर्ति और शक्ति है। प्यास लगने पर वह दिन में थोड़ा-थोड़ा दूध पीते रहते और इस प्रकार वह दिन में कई ग्लास दूध पी जाते हैं।

× × ×

दीर्घ जीवियों के जीवन की झांकी

अब हम यहाँ पर कुछ दीर्घजीवियों के जीवन की झाँकी देते हैं। स्वास्थ्य के इन सिद्ध पुजारियों के व्यक्तिगत अनुभवों में लोक-कल्याणकारी उपदेश निहित हैं। हम उन पर विचार करें और उनके अनुभवों से लाभ उठावें, इसी में जीवन की सार्थकता है।

पीट्रस झोर्टन—हंगरी देश का निवासी। सन् १५२९ में पैदा हुआ और १८० वर्ष तक अपना जन्म-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमि में रहा। १८५ वर्ष की उम्र में उसका देहांत हुआ और उस समय भी उसमें इतनी शक्ति थी कि वह पथिकों से भिक्षा लेने के लिये चलकर जा सकता था। ग्रीक धर्म का माननेवाला होने के कारण वह खूब उपवास करता था और दूध-रोटी के सिवाय और कुछ कभी न खाता था।

मेलेटो—डाक्टर ने अपनी 'नवीन उपचार-शास्त्र' नामक विश्वविख्यात पुस्तक में लिखा है कि इस मिताहारी पुरुष की १८७ वर्ष की अवस्था में उत्तरी अमेरिका के फ्रेडरिक शहर में मृत्यु हुई। मिताहार के फल-स्वरूप जीवन के अंत समय तक इसकी सभी इन्द्रियाँ अपना काम बखूबी करती थीं।

हेनरी जेनकिंस—इस दीर्घजीवी व्यक्ति का देहांत १६९ वर्ष की अवस्था में ८-१२-१६७० को पार्कशायर में हुआ। वह अपना अधिक समय खुली हवा में बिताता था। सादा, आरोग्यकारक भोजन करता और मिताहारी रहता। नियमित समय पर सोता और खूब काम करता। कसरत भी करता और आनंदी जीवन बिताता; ईश्वरेच्छा में अपना कल्याण समझ मस्त रहता। १०० वर्ष की उम्र में भी तैरकर नदियाँ पार कर जाता। १६८ वर्ष की उम्र में भी अपने पुत्र-पौत्रों के साथ वह ९ मील पैदल चलकर गया था। अंत समय तक उसकी सारी इंद्रियाँ सशक्त रहीं और आँख की ज्योति जरा भी धीमी नहीं पड़ी।

श्रीमती जोसफ रींगटन—१६० वर्ष की उम्र में इनका देहांत हुआ। १५२ वर्ष की उम्र में भी इन्होंने गर्भाधान किया, इतनी यह सशक्त थीं! मृत्यु के समय इनके सबसे बड़े पुत्र की १०८ और सबसे छोटे की ८ वर्ष की उम्र थी। मिताहार इनके जीवन का मूलमंत्र था। यह कभी भी इतना आहार न करतीं जो पचा न सकती हों। जिह्वा इनके वश में थी। वह कभी भी हानिकारक पदार्थ खाने के लिये इन्हें ललचा न सकती थी। इन्होंने कभी भी चाय, तंबाकू या शराब नहीं पी।

थोमस पार—इस इतिहास प्रसिद्ध व्यक्ति का देहांत १५२ वर्ष की उम्र में हुआ और यह वेस्ट मिनिस्टर एबे में दफनाया गया। १४८३ सन् में इसका जन्म हुआ था। इंगलैंड के १० राजा इसके सामने गद्दी पर बैठे और मरे। यह गाँव में रोटी और फलों पर रहता था। इस मिताहारी के दीर्घजीवन का सूत्र था—'मिताहार से अपना मस्तिष्क ठंडा और व्यायाम से अपने पैर गरम रक्खो। रात को जल्दी सोओ, सबेरे जल्दी उठो।' १५२ वर्ष की उम्र में मरने पर डाक्टर ने परीक्षा करके कहा कि यदि यह शहर में आकर राजाओं के आग्रह से अपनी पाचनेंद्रिय न बिगाड़ लेता, तो अभी और अनेक वर्ष जीवित रह सकता था। १२० वर्षकी उम्र में इसने दूसरा विवाह किया। उस पत्नी के साथ यह २० वर्ष रहा। उसे कभी अनुभव न होने दिया कि मेरा पति बूढ़ा है। इसका पुत्र १०९ वर्ष, पौत्र १२० वर्ष और प्रपौत्र १२४ वर्ष जिये।

डाक्टर विलियम भीड—हरफर्ड शायर के वेर शहर में यह डाक्टर सन् १६५२ में १४८ वर्ष की उम्र में मरे। इनके दीर्घजीवी होने का कारण नियमित और मिताहारी जीवन था।

दीर्घजीवियों के वचनामृत

८४ वर्ष के एक कार्यकर्ता, पूना—'सादा आहार व्यायाम और निरन्तर कार्य करते रहना, यही दीर्घ जीवन की कुंजी है। दुग्धाहार ने मुझे मन्दाग्नि से बचाया। यदि मेरे घर में कोई बीमार पड़ता है तो मैं उसे लंघन, अल्पाहार तथा फलाहार से अच्छा कर लेता हूँ।'

प्रोफेसर कर्वे, उम्र ८१, वर्ष पूना—'खूब भ्रमण करो। नियमित रूप से सुबह-शाम को टहलो। चाय की आदत न डालो।'

रेट बोर्न अमरीका, उम्र ७२ साल—'पैरों से चलने-फिरने के कारण मुझ में जवानी का जोश अब तक कायम है। मैं अब भी प्रति सप्ताह पचास मील से अधिक चलता हूं। पैदल चलने के कारण ही मैं जिन्दगी का आनन्द लूट रहा हूं। घूमने से हाजमा सुधरता है, शरीर के विकार नष्ट होते हैं और फेफड़े अच्छी तरह कार्य करने लगते हैं। घूमना सबसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरल और प्राकृतिक व्यायाम है। चाल में फुर्ती होनी चाहिये। चाय, काफ़ी, शराब और सिगरेट से मुँह मोड़ लीजिये।'

बैंजमिन, उम्र ११४ वर्ष—'कम खाओ, ज्यादा चबाओ, सवारी पर कम बैठो, पैरों से ख़ूब चलो, गाली कम दो, हँसो ज्यादा और ख़ूब सोओ। चिन्ताओं को हँस-हँस कर टाल दो, पेट के साथ ज्यादती न करो। शाकाहारी बनो।'

लुई क्रेमर, ७० वर्ष—गत ५० वर्ष से मैं ख़ूब घूमता रहा हूं। पिछले २३ वर्ष से तो मैं रोज़ ३०-४० मीलें चला हूं। शराब पीना मैंने बहुत वर्षों से छोड़ दिया है और चाय, काफ़ी तथा तम्बाकू से मुझे नफ़रत है।

शाम को दूध, भाजी और फल मेरे लिये पर्याप्त होते हैं। बिना छाने आटे की रोटी मैं लेता हूं। पेय पदार्थों में पानी, दूध और फलों का रस मुझे प्रिय है।

जो जीवन से निराश हो चुके हैं उनको मेरी सलाह है, 'घूमना शुरू करो, पगडंडी पकड़ लो और स्वास्थ्य के उच्चतम शिखर पर चढ़ जाओ।'

डाक्टर मेंचनी कौफ, बलगेरिया—'दही और मट्ठे का प्रयोग बहुत लाभदायक है, क्योंकि ये अँतड़ियों में पहुँचकर उनको शुद्ध करते हैं।'

बलगेरिया में दीर्घ-जीवियों की संख्या अधिक है और उनके जीवन तथा आहार का अध्ययन करके डाक्टर साहब इस परिणाम पर पहुँचे हैं।

विक्टर डेन—'उत्तेजक मनोविकारों से दूर रहो। उनसे उम्र घटती है, चेहरे पर झुर्रियां पड़ जाती हैं और हमारे शरीर में तरह-तरह के विष पैदा हो जाते हैं। घृणा, कामुकता, क्रोध और द्वेष इत्यादि तीव्र मनोविकारों से अपने को बचाओ।'

डाक्टर बरमन मैकफैडन, अमरीका—'अपने दाँतों से अपनी क़ब्र मत खोदो। अत्यधिक खाने से आदमी कम जीता है।

कब्ज को दूर करो।

उत्तेजक पेय पदार्थों का पीना बन्द करो।

कमरे के अन्दर अधकि समय तक न रहो। सुबह-शाम घूमने जाओ।

भोजन में नियमितता लाओ।

रात का जागरण छोड़ो। शाम के भोजन और सोने में तीन घंटे का अन्तर रक्खो।

सोने के पूर्व एक ग्लास गर्म पानी पीओ और सबेरे उठकर एक ग्लास ठंडा जल।

जुलाब लाने वाली वस्तुओं का अधिक सेवन मत करो।,

डाक्टर शाहू, नागपुर—'पिण्डखजूर खाओ। इससे कब्ज दूर होगा। गरम मसाले, मिर्च, चाय, तम्बाकू और शराब से दूर रहो।'

श्री वासुदेवराव गणेश जोशी, पूना—'सुबह चार बजे से ६ बजे तक नित्यप्रति टहलो। जब मन में उदासी का अनुभव हो, अन्न छोड़कर केवल दूध का सेवन करो।'

लगमाण्णा कोकर्ण, बेलगाँव, उम्र ८० वर्ष—'खेतों की शुद्ध हवा में रहो, दूध पियो और ताजी शाक-भाजी का सेवन करो। भोजन करते समय पानी बिल्कुल न पियो। ठंढे जल से स्नान करो, दाँतों को शुद्ध रक्खो, रात को जल्दी सोओ और सुबह जल्दी उठो।'

शेख़ इस्माइल, नागापट्टम, उम्र २२६ वर्ष—'ख़ूब घूमो, चाय, सिगरेट, बीडी, तमाखू आदि से परहेज करो।'

एक ईरानी, उम्र १२६ वर्ष—'ख़ूब घूमिए, ख़ूब दूध पीजिये, ख़ूब खाइये और ख़ूब प्रसन्न रहिये। बेफिक्री और अलमस्ती दीर्घ-जीवन की कुंजी है।'

विश्राम के मानी है शरीर में जंग लगाना। परिश्रम को भार मत समझो। श्रम ही पूजा है।

सरदार फीरोज दस्तूर—'नियमित रूप से आहार करो। प्रातः काल उठो। सदा प्रसन्न रहो।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुःखों को भी हँसते हुये सहन करो। शराब और तमाखू हानिकारक हैं। खूब घूमो।'

जाहिद पाल, अवस्था ११५ वर्ष—'मैंने अपनी आयु के प्रथम ४० वर्ष केवल खजूर और पानी पर बिताये थे।'

सालाक ममोसा, अवस्था १०५ वर्ष—'मैने जीवन भर घास के अतिरिक्त और कुछ नहीं खाया है। अपने लिए मैं स्वयं घास उखाड़ता हूँ और स्वयं पकाता हूं। कभी-कभी परिवर्तन के लिए कच्ची घास भी खाता हूँ।'

सर दिनशावाचा, अवस्था ९० वर्ष—'मैं ५ बजे सबेरे उठता हूं और रात को नियमित समय पर सो जाता हूं। 'अति सर्वत्र वर्जयेत' का अनुयायी हूं। मेरे घूमने ने मेरे स्वास्थ्य को स्थाई बनाने में बड़ी सहायता पहुंचायी है। मैं खेलना भी प्रसन्द करता हूं।'

मिसेज केथराइन प्रकेट अवस्था ११२ वर्ष—'मैं अपनी रहन सहन में सदा से सादी रखती चली आ रही हूं और और कामों में काफी दिलचस्पी लेने की मेरी आदत है।'

सर तेमुल जी, अवस्था ८७ वर्ष—"मैं खान-पान में सदा से संयमी रहा हूं। मैं जानता हूं कि मुझे कितना खाना चाहिए, क्या खाना चाहिए, कब खाना चाहिए, और कैसे खाना चाहिए। मैं नियमित रूप से व्यायाम करता हूं। इस उम्र में भी मैं खूब घूमता हूं और डंड-बैठक लगाता हूं। ७५ वर्ष की उम्र तक दवा की एक बूँद की भी मुझे आवश्यकता नहीं मालूम हुई। मैं सबेरे उठ जाता हूं। हमें यह न भूल जाना चाहिये कि शरीर के साथ अन्याय करने से उसका पाप हमें भुगतना पड़ेगा। देर से या जल्दी ही।'

सर नसरवान जी, अवस्था ७३ वर्ष—'मैं तड़के उठता हूं और तभी से अथक परिश्रम आरम्भ कर देता हूं। शारीरिक व्यायाम मनुष्य को युवा बनाये रखने में बड़ी सहायता पहुंचाते हैं। मैंने जवानी में जो व्यायाम किये, उसका मजा इस बुढ़ापे में लूट रहा हूँ। व्यायाम अनेक रोगों की अव्यर्थ औषधि है। किन्तु जिस समय मन और शरीर दोनों थक जाते हैं उस समय व्यायाम कदापि न करना चाहिए। नियमित रहने की आदत अच्छी है।'

मिसेज पीटर डूमंड, अवस्था १०० वर्ष—'मेरा जन्म अच्छे वंश में हुआ है। मैंने अपने शरीर को सदैव काम में लगाये रक्खा है। जीवन में जो अच्छी वस्तुएं हैं मैंने उन सबका उपयोग किया है। मद्यपान से मैं घृणा करती हूं।'

सर होमी मेहता—दीर्घजीवी होना मेरे हाथ की बात है। खूब खेलना और मस्त रहना स्वास्थ्य-वर्धक है। मैं कहीं भी होऊँ, ५॥ बजे सुबह जरूर उठ जाता हूँ। मैं काम करने में सुख अनुभव करता हूं और पेंशन लेने की कल्पना भी नहीं करता। मैं कभी खतरनाक बीमारी का शिकार नहीं हुआ। मुझे दवाओं पर तनिक विश्वास नहीं है। जब कभी मुझे शरीर में कुछ खराबी मालूम होती है, मैं भोजन त्याग देता हूं और उपवास करने लगता हूं। उपवास में जल खूब पीता हूँ में रात अधिक जागना हानिकारक है। खुली हवा में अधिक रहो। दिल को हँसी-खुशी से उछालते रहो, मनहूसीयत से सदा दूर रहो। अधिक भोजन करने से उम्र घटती है।'

इस्तम्बोल का जारो आगा, अवस्था १६० वर्ष—'मेरी दीर्घायु का रहस्य मेरा संयमी जीवन है। मैंने केवल शाक-भाजी और फल खाकर इतनी लम्बी उम्र पाई है।'

जार्ज वर्नाड शा, अवस्था ८६ वर्ष—धूम्र-पान या मद्यपान न करने के कारण ही मुझ में एक युवक जैसा रक्त चाप है। मैं कट्टर शाकाहारी हूँ और डाक्टरों से सदा बचता रहता हूं।'

मिसेज एक स्टन्सन, अवस्था ११२ वर्ष—'मेरे दीर्घजीवन का रहस्य है—काम करना और सन्तुष्ट रहना।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अण्ड-वृद्धि—उसका कारण और निदान

श्री चन्द्रभूषण मिश्र, काशी

आजकल जन साधारण में यह अण्ड-वृद्धि का रोग बहुत फैला हुआ है। यद्यपि एलोपैथी में इसका एक मात्र इलाज शल्य-चिकित्सा या अपरेशन ही बताया जाता है, किन्तु यहाँ अनुभवी लेखक ने इस रोग के कारण और निदान का वर्णन करते हुए बताया है कि प्राकृतिक चिकित्सा से इस रोग में भी लाभ उठाया जा सकता है।—सं०

आधुनिक सभ्यता के विकास के साथ-साथ तरह-तरह के नए-नए रोगों का भी आविर्भाव और प्रसार होता जा रहा है। आजकल के कृत्रिम रहन-सहन, आहार-विहार और वातावरण ने इतने अधिक रोग उत्पन्न कर दिए हैं कि उनकी गणना करना प्रायः दुसाध्य ही है। इससे तो अच्छा हमारा अतीत ही था जब हम उन्मुक्त प्राकृतिक वातावरण में रोग-शोक से प्रायः अपरिचित और निर्द्वन्द होकर जीवन व्यतीत करते थे। लेकिन ज्यों-ज्यों हम 'सभ्यता' के सोपान पर आगे कदम बढ़ाते गए त्यों त्यों हमें नए-नए और बहुसंख्यक रोगों को भी अपनाना पड़ा। यही है आधुनिक सभ्यता का अभिशापमय वरदान!

आजकल मानव-समाज को उत्पीड़ित करने के लिए जो बहुत से रोग फैले हुए हैं उनमें 'अण्ड-वृद्धि' का रोग विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस रोग से मनुष्य का कितना अहित हो रहा है, इसका ठीक ठीक पता लगाना कठिन ही है। यह तो मनुष्य के जीवन की जड़ पर ही कुठाराघात कर रहा है। यद्यपि प्रकट रूप से हमें इसकी भयानकता दृष्टिगोचर नहीं होती किन्तु इसका परिणाम हमारे लिए बड़ा ही घातक सिद्ध होता है।

अण्ड-वृद्धि के कारण और लक्षण

मनुष्य के शरीर में जब अधोवायु कुपित होने पर अण्डकोष और जांघों की संधियों में पहुँचती है तो उनमें सूजन और प्रदाह उत्पन्न हो जाते हैं और इसके अनन्तर उन दोनों अण्डकोषों और उनकी थैली के स्नायुओं को वह पीड़ित कर देती है। फलस्वरूप वे दोनों ही बढ़ जाते हैं। वायु को कुपित करने वाली वस्तुओं के सेवन, तथा ठण्डे जल से स्नान करने, मल-मूत्र के वेग को रोकने, भारी वजन उठाने, बहुत अधिक चलने, अंगों को तोड़ने या अंगड़ाइयाँ लेने तथा अधिक मैथुन करने से वायु संकुचित होकर छोटी आँतों के अवयवों में अपने स्थान से नीचे की ओर पेडू और जाँघ की संधियों में अफरा कर देती है जिसके फलस्वरूप यह रोग हो जाता है।

यह रोग धीरे-धीरे बढ़ता है। आरम्भ में तो रोगी संकोचवश इसे प्रकट नहीं करता या इस पर ध्यान नहीं देता, लेकिन जब यह रोग बढ़ने लगता है और भोजन में अरुचि तथा कष्ट होने लगता है तब इसे और अधिक छिपाए रखना कठिन हो जाता है। अण्ड-वृद्धि से सारी नसें ढीली और कमजोर हो जाती हैं, उनमें शिथिलता आ जाती है। रोगी की मस्तिष्क-शक्ति क्षीण हो जाती है। कभी कभी कै या उल्टी होती है। इस रोग में कब्ज की शिकायत होना साधारण बात है, मानसिक एकाग्रता का लोप हो जाता है। इस रोग से पीड़ित होने वाला मनुष्य किसी कार्य को सफलतापूर्वक पूरा करने में असमर्थ हो जाता है, उसमें यह सोचने की शक्ति हो नहीं रह जाती कि कौन सा कार्य उसके लिए उचित अथवा उपयुक्त है और कौन सा अनुचित अथवा अनुपयुक्त।

लक्षण—वायु से भरी हुई लोहार की धौंकनी के समान यदि अण्ड-कोष फूल जाय, रूखा प्रतीत हो उसमें अकारण पीड़ा होने लगे और उसका रंग पके हुए गूलर के समान देख पड़े और उसमें प्रदाह होने लगे तो इसे अण्ड वृद्धि का लक्षण समझना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अण्ड (वृषण) वृद्धि के सात प्रकार

(१) वातवृद्धि—वायु से उत्पन्न वृषण की वृद्धि हवा से भरी हुई धौंकनी के स्पर्श के समान तथा सूखी प्रतीत होती और अकारण दुखती है।

(२) पित्त-वृद्धि—पित्त से होने वाली वृषण-वृद्धि पके गूलर के फल की तरह होती है और प्रदाह अनन्तर फोड़े जैसी पक जाती है।

(३) कफ-वृद्धि—कफ से बढ़े हुये अंडकोष में ठंढक, जड़ता, स्निग्धता, कुछ कुछ खुजली और कठोरता होती है और उसमें हल्का दर्द भी होता है।

(४) रक्त वृद्धि—रक्त से उत्पन्न हुई वृषण-वृद्धि में अंड-कोष काले फोड़े-फुंसियों से भर जाता है और पित्त के-से लक्षण प्रतीत होते हैं।

(५) मेद-वृद्धि—मेद के कारण बढ़े हुये अंडकोष कफ-वृद्धि जैसे ही लक्षणों से युक्त होते हैं। साथ ही वे नरम और पके हुए ताड़फल की तरह नीले और गोलाकार हो जाते हैं।

(६ मूत्र-वृद्धि—यह रोग पेशाब रोकने की आदत से होता है। जब वह मनुष्य चलने लगता है तो उसके अंडकोष पानी से भरा हुई थैली की तरह हिलने लगते हैं। पेशाब साफ नहीं होता। अंडकोष की थैली नीचे लटकती रहती है।

(७) अंत्रवृद्धि—वायु का प्रकोप बढ़ाने वाले पदार्थ भोजन करने, ठंढे पानी में डुबकी लगाने, मल-मूत्र के वेग को रोकने, बोझ उठाने अधिक पैदल चलने, शरीर टेढा-मेढ़ा करने, आदि कारणों से कुपित वायु आँतों के कुछ भाग को संकुचित कर अपने स्थान से जब नीचे उतार देती है, तब वह अंडकोष की संधि में रुक कर वहाँ गाँठ जैसी सूजन पैदा कर देती है। उस अंत्रवृद्धि की उपेक्षा करने से फूल जाने, टीस होने, या ऐंठ जाने के से चिन्ह दिखाई देते हैं और यदि उसे दबाया जाय तो कों-कों शब्द करता हुआ ऊपर चढ़ता है और छोड़ने पर फिर नीचे उतर कर कोष को फुला देता है।

इलाज—शुरू शुरू में इस रोग का इलाज होने पर इसमें बहुत फायदा होता है। परन्तु काफी बढ़ जाने पर तो लोग एक मात्र उपाय यही बतलाते हैं कि शल्य-चिकित्सा (Operation) ही उपयुक्त है। उससे फिर उभड़ने की आशंका नहीं रहती है। परन्तु बहुतों के विषय में प्रायः यह देखा जाता है कि फिर अंडकोषों में वृद्धि होने लगती है। ऐलोपैथिक डाक्टर फिर शल्य-चिकित्सा की ही सलाह देते हैं। इस प्रकार बार-बार शल्य-चिकित्सा कराते-कराते एक दिन प्राण-गँवना पड़ता है क्योंकि यहाँ का स्थान इतना कोमल है कि थोड़ी सी गलती होने पर ही काफी हानि उठाने की संभावना रहती है। इसके लिये सर्व प्रथम आवश्यक नियमों का पालन अत्यावश्यक है क्योंकि प्रकृति बिना नियमों के नहीं है और इस शरीर के कार्य भी नियमित तथा सीमित हैं।

प्राकृतिक इलाज—इस रोग में मनुष्य को सर्व प्रथम पेट साफ रखना होगा तथा यह ध्यान रखना होगा कि कोइ भारी, बादी आदि चीजों के खाने से बचें।

सूर्य-किरण चिकित्सा—नीली बोतल के पानी की पट्टी बाँधने और पहले एक घंटा लाल प्रकाश और फिर दो घंटे नीला प्रकाश देने और पीली बोतल का पानी हर रोज चार खुराक, २॥ तोला प्रति खुराक, पिलाने से अंड-वृद्ध का नाश होता है।

हम बाह्य वस्तुओं के कारण स्वतंत्र अथवा परतंत्र नहीं हैं। हमारे विचार हमें परतंत्र या स्वतंत्र बनाए हुए हैं। हम चाहें तो अपने विचारों से स्वर्ग को नर्क बना दें और चाहें तो नर्क को स्वर्ग कर दें। यही दुनिया हमें दुःख, भय और आपत्ति का घर मालूम होती है और चाहें तो यही दुनिया हमारे लिए सुख-सम्पति का धाम बन जाए।

यदि बुरा मनुष्य अपने बुरे विचारों की आदत छोड़ दे, तो वह भला हो सकता है। ऐसा करने से वह नियम को नहीं बदलता किन्तु अपने को बदलता है और नियम के अनुसार बनाता है। इन्द्रिय सुखों में लवलीन न होकर वह सदाचार के नियमों का पालन करता है। उच्च विचार करने से वह नीच और गंदे विचारों पर विजय प्राप्त कर लेता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावी माता

(श्री रामजी सहाय, एन० डी० डी० वाई, प्रयाग)

भारतीय महिलाओं के लिये प्रसूति-काल की समस्या बहुत विकराल रूप धारण कर रही है। प्रति वर्ष बहुसंख्यक माताएं या तो अपने जीवन को ही गवाँ बैठती हैं या उनका स्वास्थ्य इतना गिर जाता है कि फिर उसमें कोई सुधार होने की सम्भावना ही नहीं रहती। इस तरह के गिरे हुए स्वास्थ्य का परिणाम नाना प्रकार के भयानक रोगों और अकाल मृत्यु के रूप में प्रकट होता है। अतः हमारे देश की भावी माताओं का यह परम पुनीत कर्त्तव्य है कि वे प्रसव-काल को, जो उनकी अग्नि-परीक्षा का समय होता है, आसानी से पार कर जाने के लिए गर्भधारण की अवस्था में ही तैयारी करें। यहाँ पर लेखक ने बताया है कि भावी माता को यह तैयारी किस प्रकार करनी चाहिए।—सं०]

शारीरिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में साधारण स्त्रियों की अपेक्षा भावी माता Expectant Mother) का अधिक उत्तरदायित्व होता है। गर्भधारण की अवस्था में उसे केवल अपने ही लिए नहीं वरन् गर्भस्थ बच्चे (Foetus) के लिए भी ऊँचे दरजे का रखना स्वास्थ्य पड़ता है। क्योंकि यही अवस्था है जब कि आहार-विहार सम्बन्धी गड़बड़ी का कुपरिणाम प्रसूती और उसके पैदा होने वाली सन्तान दोनों पर पड़ता है। यह सदैव ध्यान रखना चाहिए कि गर्भावस्था एक साधारण स्थिति है, कोई बीमारी नहीं। इस अवस्था में किसी डाक्टर से औषधि लेने की आवश्यकता नहीं। निरुपद्रव प्रसव के लिए गर्भधारण की अवस्था में उत्तम स्वास्थ्य का होना आवश्यक है। इसके लिए भावी माताओं को चाहिए कि पहले से ही तैयारी करके अपने को इस योग्य बनालें कि वे हँसी-खुशी के साथ प्रसव-काल को पार कर जायँ। प्रसूति-काल भावी माता के लिए अग्नि-परीक्षा का समय होता है। अतः गर्भाधान के बाद ही भावी माताओं को नीचे बताई गई बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

भोजन—भावी माता केवल अपने ही लिए नहीं बल्कि गर्भस्थ बच्चे के लिने भोजन करती है। गर्भस्थ शिशु के निर्माण में शरीर की कुछ शक्ति अपने आप व्यय होती रहती है। ऐसी अवस्था में गर्भवती स्त्रियों के लिए अधिक भोजन पचाने की शक्ति प्राप्त करना कठिन ही होता है। इसलिए उनका भोजन ऐसा होना चाहिए जो बलकारक, शरीर में रक्त-संचार को बढ़ाने वाला और आसानी से पच जाने वाला हो। ऐसी अवस्था में फल, साग-सब्जी, सूखे मेवे तथा दूध का उपयोग अधिक होना चाहिए और अनाज का कम। अनाज के लिए रोटी और अच्छी दाल का सेवन पर्याप्त होना चाहिए। दालों में समूचे मूंग की दाल स्वाद और गुण दोनों की दृष्टि से सर्वोत्तम है। गर्भवती स्त्रियों के लिए अधिक पदार्थों और मिर्च-मसाले का उपयोग ठीक नहीं होता। चावल खाना भी अच्छा नहीं होता। इसकी जगह सूखे मेवे और गरी का उपयोग अच्छा होता है। यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि गर्भस्थ शिशु अपना भोजन अपनी माता से ही—चाहे वह स्वस्थ हो या अस्वस्थ—प्राप्त करता है। अधिकतर सगर्भा स्त्रियाँ पीली पड़ जाती हैं, उनमें रक्तहीनता की शिकायत हो जाती है। इसका कारण यही है कि गर्भस्थ शिशु के निर्माण में कमजोर माताओं का प्रायः सारा रक्त लग जाता है। ऐसी अवस्था में उनका भोजन उच्च कोटि का होना अत्यन्त आवश्यक है, जिससे कि उनके शरीर में अधिक से अधिक नया खून बने और उस भोजन को पचाने में कम से कम शक्ति खर्च करनी पड़े। अन्य उपयोगी प्राकृतिक लवणों के साथ ही साथ लौह की भी अधिकता सगर्भा स्त्रियों के भोजन में होनी चाहिए, क्योंकि गर्भस्थ शिशु अधिक से अधिक लौह (Iron) माता से प्राप्त करता है, जो तबतक उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम में आता है जबतक वह माता का दूध पीता है। क्योंकि दूध में लोहे (Iron) की कमी होती है, इसलिये भावी माता के भोजन में पत्तीदार भाजी, पालक, बथुआ, मेथी तथा अन्य कोमल पत्ती वाले शाक, अमरूद, टमाटर, पपीता, नाशपाती, आम, जामुन आदि मौसमी फल तथा किशमिश, मुनक्का, अंजीर आदि सूखे मेवे का संमिश्रण अवश्य होना चाहिये।

वस्त्र—वस्त्र ढीले पहिनने चाहियें, चुस्त वस्त्र न पहिनने चाहियें। चुस्त वस्त्र से रक्त के परिभ्रमण तथा गर्भस्थ शिशु के निर्माण-कार्य में बाधा पहुँचती है। श्वेत वस्त्र अच्छे हैं। प्रति दिन स्वच्छ करके धूप में सुखाया हुआ वस्त्र पहनना उत्तम होता है। वस्त्र इस प्रकार के हों जिनसे बाहर की सर्दी-गर्मी का प्रभाव त्वचा पर बराबर पड़ता रहे। अधिक शीत होने पर ऊपर से कोई ढीला वस्त्र, चद्दर की तरह का, डाल लेना अच्छा होता है।

व्यायाम—भावी सन्तति के स्वास्थ्य के लिये तथा असाधारण वेदनाहीन प्रसव और अपने स्वास्थ्य के लिये कुछ व्यायाम करना भी अति आवश्यक है। व्यायाम से शरीर का विकार निकलता और शरीर शुद्ध हो जाता है। व्यायाम से पाचन-क्रिया तथा रक्त-परिभ्रमण के कार्य में सहायता होती है। यह व्यायाम गृहस्थिनों को तो अपने घरेलू कामों से ही प्राप्त हो जाता है। जिनको गृहस्थी के कामों के द्वारा व्यायाम करने का सौभाग्य न प्राप्त होता हो उनके लिये प्रातःकाल घूमना अत्यन्त आवश्यक है, अथवा उन्हें किसी विशेषज्ञ से सलाह लेकर अपने स्वास्थ्य के अनुकूल ऐसे व्यायाम चुन लेना चाहिये जिनसे गर्भस्थ शिशु के निर्माण कार्य में कोई बाधा न उपस्थित होकर सहायता प्राप्त हो। सुस्त और बेकार रहने वाली तथा एक ही प्रकार का और थका देने वाला काम करने वाली भावी माताओं को प्रसव-काल में असाधारण कष्ट होता है और प्रसूती तथा नवजात शिशु दोनों के जीवन के लिए पैदा खतरा हो जाता है। अतः अधिक व्यायाम तथा ऐसे घरेलू कामों से जिन से थकावट अनुभव हो, बचना चाहिए। ऊंचे नीचे पैर रखना, कोई भारी वस्तु लेकर सीढ़ियों पर चढ़ना, घोड़े, हाथी, ऊँट आदि की सवारी करना कूदने-फांदने अथवा भागने वाले खेल, इन सब से हानि की ही सम्भावना रहती है।

त्वचा—भावी माता को अपने शरीर की त्वचा स्वच्छ रखनी चाहिये। तेल की मालिश करके धूप में बैठना तथा स्वास्थ्य के अनुकूल कम से कम एक तौलिये से रगड़ रगड़ कर स्नान करना आवश्यक है। स्नान के पहले हाथ से सारे शरीर की धीरे मालिश करना भी अच्छा होता है।

स्तन—इसे स्वच्छ तथा मुलायम होना चाहिए। चूचुकों (Nipples) को तौलिये से धीरे २ रगड़ कर स्वच्छ रखना चाहिये। चूचुकों को काफी बढ़ा हुआ तथा आगे को उभड़ा हुआ होना चाहिये जिससे कि आगे चलकर शिशु की नाक दुग्ध-पान करते समय स्तन से छू न जाय। ऐसा होने से बच्चों को साँस लेने में कठिनता होती है और दम घुटने का डर रहता है। इसलिये चूचुकों को धीरे और या हलके हाथों से मालिश करके बड़ा करना चाहिये और उन पर चिरौंजी, नारियल का तेल, मक्खन, आदि चिकनी वस्तुओं की मालिश करनी चाहिये।

आँते—आँते साफ रखनी चाहिये। कब्ज की शिकायत होने से अधिकतर सिर, कमर तथा जाँघों में पीड़ा हुआ करती है। कभी कभी ऐसा होता है कि कब्ज तो रहता है लेकिन उसका पता नहीं चलता। ऐसी दशा में उपरोक्त लक्षण प्रकट होते ही समझ जाना चाहिये कि आँतें ठीक काम नहीं कर रहीं हैं। ऐसी हालत में रेचक (Pergative) न लेकर एनिमा से ही पेट साफ करना चाहिये। पेट यथोचित रूप से साफ रहने पर गर्भाशय के काम में सुविधा होती है। आँतों में मल एकत्र होने से अन्य बुराइयों के अलावा गर्भाशय के कार्य में बाधा उपस्थित होती है। पेट साफ रखने के लिये काफी जल पीना आवश्यक है। भावी माता के शरीर में गर्भाधान के पश्चात् का विकार तथा गर्भस्थ बच्चे के शरीर का विकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकालने के लिये जल का बड़ा महत्व होता है। पत्तीदार भाजी, टमाटर, आदि तरकारियां से पेट साफ रहता है।

गुर्दे :—गुर्दे साफ रखने चाहियें। मूत्राशय में मूत्र इकट्ठा होने से गर्भाशय पर दबाव पड़ता है। गर्भाशय के नीचे ही मूत्राशय होता है। गर्भाशय के बढ़ने के साथ साथ मूत्राशय कुछ संकीर्ण हो जाता है। ऐसी अवस्था में मूत्राशय में अधिक देर तक मूत्र इकट्ठा रहने से कष्ट होता है। अतए व गुर्दे को साफ रखन के लिये जल काफी पीना चाहिये।

यात्रा :—गर्भावस्था में यात्रा करना अच्छा नहीं होता। विशेषतः प्रथम और अन्तिम तीन महीनों में कोई सफर न करना चाहिये। यदि पहिले किसी गर्भपात आदि से कष्ट पा चुकी हों तो सफर बिल्कुल न करें। धीरे धीरे बिना थके पैदल चलने में तो उतना हर्ज नहीं जितना कि ऊँट, बैलगाड़ी, लारी या दूर तक रेल के सफर से होता है। लम्बी यात्रा तथा घोड़ा तथा अन्य प्रकार के जानवरों की सवारी खतरे से खाली नहीं होती।

मनोरञ्जन :—खेल, तमाशा तथा सिनेमा आदि में जहाँ मनुष्यों की काफी भीड़ होती है, गर्भावस्था में जाना खतरे से खाली नहीं होता। रात में अधिक जागना और प्रातःकाल देर तक सोना बुरा होता है। सनसनी पैदा करने वाले तथा उजत्तेना दिलाने वाले दृश्यों का गर्भस्थ शिशु पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

भावी माताओं को सदैव प्रसन्न चित्त रहना चाहिये। दुःख, क्रोध तथा भय आदि का बुरा असर होता है। मनोरञ्जन तथा शिक्षाप्रद कहानियाँ पढ़नी चाहियें। रोमांचकारी और भूत-प्रेतों की कहानियां सुनना-सुनाना हानिकारक है। गर्भिणी के कमरे में देवताओं तथा महापुरुषों के चित्र टंगे रहने चाहियें। सुन्दर चित्रों से गर्भस्थ शिशु का संस्कार अच्छा होता है। गर्भावस्था में सुन्दर शिक्षा का गर्भस्थ शिशु पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। अभिमन्यु ने गर्भ में ही व्यूह-विध्वंस सीख लिया था तथा श्रीशुकदेव जी की गणना पैदा होते ही उच्च कोटि के ऋषियों में होने लगी। अकेलापन महसूस न होना चाहिये। साथ ही साथ अकेले चारपाई पर सोना चाहिये जिससे गर्भस्थ शिशु के विकास में कोई बाधा न हो।

ब्रह्मचर्य :—ब्रह्मचर्य से भावी माता के साधारण स्वास्थ्य तथा गर्भस्थ शिशु का संस्कार उत्तम होता है। तथा विकार राहित रक्त के लिये तथा गर्भस्थ शिशु के निर्माण के लिये शक्ति का अपव्यय न होना अति आवश्यक है। कभी कभी ब्रह्मचर्य के नियमों का उल्लंघन करने से गर्भपात जैसे भयङ्कर कष्टों का सामना करना पड़ जाता है।

ज्योतिष द्वारा स्वास्थ्य और भाग्य !

हस्तरेखा-विज्ञान-विशारद, सामुद्रिक शास्त्र विषयक ग्रंथ के प्रणेता पं० बलदेवप्रसाद, ज्योतषी से संवत् फल, युग परिवर्तन इत्यादि मालूम कीजिये। ५ प्रश्नों के उत्तर के लिये १।-) भेजें। साथ में प्रश्न लिखने का ठीक-ठीक समय और तारीख भी लिखें। जन्म-कुण्डली, हस्तरेखा सम्बन्धी चिन्हों के फल, ग्रह-बाधा निवारक यंत्र, इनमें से प्रत्येक की फीस ३) है। लेखक की 'मनुष्य का हाथ' नामक पुस्तक का मूल्य २) जिसमें बी० पी० का खर्च भी शामिल है।

पता—रमेश ज्योतिष कार्यालय,
लोहिया पाँड़े का हाता
२४, बहादुरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीबू

(श्री श्रीनाथदास अग्रवाल, काशी)

प्रायः सभी प्रचलित चिकित्सा पद्धतियों में नीबू की बड़ी उपयोगिता बताई गई है। इस बात से सभी सहमत हैं कि औषधिगुण के अलावा नीबू में कुछ ऐसे आहार-तत्व भी पाए जाते हैं जो स्वास्थ्य और आरोग्य के लिये बहुत आवश्यक हैं। यहाँ पर लेखक ने नीबू के विविध गुणों और उपयोगिताओं का बड़े अच्छे ढंग से वर्णन किया है।—सं०

"अम्माँ! आज तो तरकारी बड़ी खट्टी है, इतनी अधिक खट्टी हो गयी है कि मुझसे तो खाया ही नहीं जाता, मैं तो नहीं खाऊँगा।" उपरोक्त शिकायत करता हुआ मुन्नू ने तरकारी की कटोरी को एक किनारे रख दिया।

"हाँ बेटा! आज कमला ने गलती से नीबू अधिक डाल दिया है। फिर भी कोई हर्ज नहीं! तुम खा लो। नीबू नुकसान नहीं करेगा। यह बड़े फायदे की चीज है।" माँ ने बेटे को समझाया परन्तु उसने एक न सुनी। वह कह रहा था कि मास्टर साहब ने अधिक खट्टा-तीता खाने को मना किया है। उन्होंने यह भी बताया है कि इन चीजों के इस्तेमाल से शरीर को हानि पहुंचती है।

पिता के आने पर लड़के ने कहा—"पिता जी, आज तरकारी खट्टी अधिक हो गई है। गुरु जी का आदेश है कि खट्टा-तीता अधिक न खाना चाहिए, इसलिए मैंने तो तरकारी नहीं खाई है। आप भी तरकारी न खाइएगा।"

"नहीं बेटा! नीबू तो बड़े लाभ की चीज है। मास्टर साहब ने नीबू के लिए न कहा होगा, बल्कि इमली एवं अन्य खटाइयों के लिए कहा होगा। इमली की खटाई वास्तव में बड़ी नुकसानदेह है, लेकिन नीबू नहीं। बरसात के दिन में तो नीबू का इस्तेमाल अधिकता से किया जाना चाहिए। इसके इस्तेमाल से शरीर की रक्षा बहुत से ऐसे रोगों से होती है जिनके कीटाणु प्रतिदिन तुम्हारे शरीर में पहुँचा करते हैं और तुम उन्हें देख या जान नहीं पाते।"

"क्या सचमुच नीबू इतना लाभप्रद है? क्या आप इसके सम्बन्ध में मुझे भी कुछ बतलाने की कृपा करेंगे।"

"हाँ-हाँ बेटा! इसके गुण-दोष सभी मैं तुम्हें बताता हूँ, ध्यानपूर्वक सुनो। सुनती हो मुन्नू की माँ! तुम भी आ जाओ। मुन्नू को तुम नीबू का कुछ भी गुण न बता सकीं, इसलिए तुम भी ध्यानपूर्वक सुनो। इसके भिन्न-भिन्न प्रयोग, भिन्न-भिन्न प्रकार के इस्तेमाल से कठिन से कठिन रोग भी शीघ्र ही दूर हो जाते हैं। तुम्हें भी अपनी गृहस्थी चलाने में उससे बड़ी सुविधा होगी।"

"अच्छा आती हूँ", कहकर मुन्नू की माँ भी वहीं आकर बैठ गयीं।

× × ×

"हाँ तो, मैंने तुमसे कहा था कि नीबू बड़ा लाभदायक है। यह संसार के श्रेष्ठ फलों में से एक है। इसका पेड़ कलम और बीज से लगाया जाता है। कलम से लगे हुए पेड़ को कलमी और बीज से लगे हुए पेड़ को बीजू कहते हैं। फल भी उसी के अनुरूप कलमी और बीजू कहलाता है। पेड़ पंद्रह से बीस फुट तक ऊँचा होता है। पत्तियाँ मोटी और नुकीली होती हैं। उनका रंग ऊपर की तरफ गहरा हरा और नीचे की तरफ हलका हरा होता है। पत्तियों की लंबाई चार से पांच अंगुल तक होती है। यह तीन चार वर्ष में ही फलने लगता है। इसके फूल छोटे और सफेद होते हैं। सुगंध बड़ी मनोहर और मन को लुभानेवाली होती है। नीबू आकार में गोल होता है।

आकार-प्रकार एवं किस्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी-किसी किस्म का कुछ लम्बा भी होता है। इसका रंग पीला होता है। स्वाद एक दम खट्टा होता है। ये कई किस्म के होते हैं, जैसे कागदी, जंबीरी, बिजौरा चकोतरा आदि-आदि। अधिकतर कागदी नीबू ही काम में लाया जाता है, और यही उत्तम भी होता है। कागदी नीबू का छिलका एकदम पतला होता है। कच्चा नीबू हरे रंग का होता है। पक्का नीबू ही उत्तम और गुणकारी होता है। प्रायः दूकानदार हरे नीबू ही लाकर रखते हैं जिसमें वे सड़ न जांय और अधिक दिन तक अच्छे बने रहें। दूकानदारों के यहाँ ये हरे नीबू धीरे-धीरे पक जाते हैं। लेकिन पेड़ का पका नीबू ही विशेष लाभदायक होता है। हमारे आयुर्वेदीय ग्रंथों में नीबू के नाम इस प्रकार दिए गए हैं :—

नाम
निम्बूकं स्यादम्ल जंबीर काख्यं
वह्निर्दीप्यो वह्नि बीजोऽम्लसारः।
दन्ताघातः शोधनो जन्तुमारी
निम्बूकः स्याद्रोचतो रुद्र संज्ञः॥

अर्थात्, निम्बूक, अम्ल, जंबीर, वह्निदीप्य, वह्निबीज, अम्लसार, दन्तघात, शोधन, जन्तुमारी और रोचन आदि नीबू के नाम हैं।

उपरोक्त नाम तो आयुर्वेदीय ग्रंथों में पाए जाते हैं। अब भिन्न-भिन्न भाषाओं के प्रचलित नाम सुनो—

संस्कृत—निम्बूक, जम्बीर। हिन्दी—नीबू, कागदी नीबू, बिहारी नीबू, कन्ना नीबू, मीठा नीबू। बंगला—कमलालिंबु, पाती लेबु जामारी लेबु, कागजी लेबु। महाराष्ट्र—ईड लिम्बू, मीठे ईड लिम्बू, खारा लिंबु। गुजराती—दो डिंगा लिम्बू, मीठा लिंबू। करनाटकी काचिले, कानिले। तैलंगी—निम्मपंडु, जभिरम। अंग्रेजी—लेमन (Lemon) लैटिन—लेमोनम एसिडम (Lemonum Acidum) साइट्रस एसिडा (Citrus-Acida)। फारसी—लेमुने तुर्श, लेमुने शीरी। अरबी—लिमुने हाजिम।

विश्लेषण

नीबू में जलीय अंश ६२·५, खाद्योज (Protein) ०·७, स्नेह (Fat) ०·५, खनिज लवण ०·४ और श्वेतसार शर्करा जातीय पदार्थ (Corbohydrate) ५·९ प्रतिशत होता है। नीबू में कैलशियम (Calcium) पोटाशियम (Potassium) मैगनेशियम (Magnesium), क्लोरिन (Chlorin) आदि शरीर के पोषक खनिज तत्व अधिक परिमाण में पाए जाते हैं। इसमें विटामिन 'ए', 'बी', 'सी' की भी प्रचुरता है। इसलिए शरीर के सभी अंगों को पोषण करने वाले तत्व इस एक अकेले नीबू में ही पाए जाते हैं। हमारे आयुर्वेदीय ग्रंथों में नीबू के गुण इस प्रकार बताए गए हैं:—

गुण
निम्बूकमम्लं वातघ्नं दीपनं पाचनं लघु।
निम्बूकं कृमिसमूहनाशनं तीक्ष्णमम्लमुदरश्रमापहम्॥
वातपित्त कफ शूलिनं हितं कष्टनष्टं
रुचिरोचनं परम्॥

अर्थात्, नीबू खट्टा, वातनाशक, दीपन, पाचन, हल्का, कृमिसमूह नाशक, तीक्ष्ण, उदररोग नाशक, श्रमहारक, तथा वात, पित्त, कफ और शूल में हितकारी, अरुचिनिवारक और रोचन है।

निम्बूफलं रोचनमग्नि वृद्धिं करोति पित्तंचस वातरक्तम्।
आचाक्षुकंश्लेष्मकरं विशेषाद्भुक्तस्य पाकंकुरुते चसद्यः॥

अर्थात् नीबू का फल रोचक, अग्निदीपक, पित्तजनक, वातरक्तकारक, नेत्रों को अहितकर, कफ कारक, विशेषकर के खाए हुए भोजन को पचाने वाला है।

त्रिदोष वह्निक्षय वातरोग निपीड़तानां विषवह्वलानां।
मन्दानले वद्धगुदे च देयं विषूचिकायां मुनयो वदन्ति॥

अर्थात् नीबू त्रिदोष, वह्निक्षय, वातरोग, विष से विकल, मंदाग्नि, कोष्ठरोध, विसूचिका, आदिरोगों में देना चाहिए।

निम्बूषणं पाचकंचाम्ल दीपनं नेत्रयोर्हितं।
अतिरुच्यं च कटुकं तुवरं च मतं लघु॥
कफंवातंवमिंकासं कंठरोगं क्षयं तथा।
पित्तशूलंत्रिदोषं च मलस्तम्भं विषूचिकाम्॥
वद्धोदरंचामवातं गुल्मं चैव कृमिंजयेत।
तत्पक्वंच गुणैः श्रेष्ठं प्रोक्तं वैद्य विशारदैः॥

अर्थात्, नीबू गर्म, पाचक, खट्टा, दीपन, नेत्र को हितकारी, अतिशय रुचिकारक, कड़ुआ, कसैला, हलका कफ, वात, वमन, खाँसी, कंठरोग, क्षय, पित्त, शूल, त्रिदोष, मलस्तम्भ, विषूचिका, वद्धगुदोदर, आम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वात, गुल्म एवं कृमि को दूर करता है। वृक्ष में पके हुए नीबू के उपरोक्त गुण हैं।

पाश्चात्य विद्वानों ने भी नीबू के गुणों की प्रशंसा की है। विटामिन तत्व के अनुसंधानकर्ता एवं रसायन शास्त्र में नोबुल पुरस्कार के विजेता प्रोफेसर फान मूलर साहब का कथन है कि नीबू में निमोनिया के कीटाणु को नाश करने की अपूर्व शक्ति है। सर्दी और इन्फ्लुएंजा में भी इसके सेवन से आशातीत लाभ होता पाया गया है। एक दूसरे प्रसिद्ध अंग्रेज डाक्टर का कथन है कि नीबू प्रबल कीटाणुनाशक (Powerful Anticeptic) है। हम ऊपर बता आए हैं कि नीबू में तीनों प्रकार के विटामिन प्राप्य हैं। विटामिन 'ए' शरीर की वृद्धि और पोषण में सहायता देता है। इसके अभाव में शरीर की वृद्धि रुक जाती है और तरह तरह के रोग पैदा होने लगते हैं। इस लिए विटामिन 'ए' का शरीर में। होना अत्यावश्यक है। नीबू में विटामिन 'ए'. कम मात्रा में अर्थात एक ही प्रतिशत पाया जाता है।

विटामिन 'बी' का कार्य शरीर के पोषण तत्वों को सहायता देना है। स्वस्थ और आरोग्य रहने के लिए विटामिन 'बी' की बड़ी आवश्यकता है। इसके अभाव में मंदाग्नि, अजीर्ण, मरोड़, मलावरोध, बेरी-बेरी आदि रोगों का प्रादुर्भाव होता है। नीबू में विटामिन 'बी' २ प्रतिशत पाया जाता है!

विटामिन 'सी' की आवश्यकता पाचन-क्रिया को ठीक रखने में पड़ती है। इसके अभाव में पेट और आंत में छाले पड़ जाते हैं। तरह तरह के रक्तरोग होने लगते हैं। दांतों में पायरिया हो जाता है। शरीर के यंत्र ठीक तरह से काम नहीं करते। शरीर दुर्बल और बेकाम हो जाता है। नीबू में विटामिन 'सी' अधिक मात्रा में अर्थात तीन प्रतिशत पाया जाता है।

नीबू के रस में एक प्रकार का तेज तेजाबी अंश होता है। किसी भी धातु के बर्तन में रखते ही उस पर रसायनिक (Chemical Action) क्रिया होने लगती है। इसलिये नीबू के रस को साधारणतः मिट्टी, चीनी मिट्टी, शीशा, पत्थर आदि के बर्तनों ही में रखना चाहिए। नीबू के रस को (पेड़ के पके हुए ही नीबू के ही) किसी अन्य फल के रस के साथ इस्तेमाल करना चाहिए। नीबू और नारंगी का रस एक साथ मिलाकर पीया जाय तो बड़ा ही स्वादिष्ट लगता है। यदि फल का रस न मिल सके तो फिर नीबू के रस को पानी में मिलाकर पीना चाहिए। पानी या फल का रस मिलाए बिना नीबू का रस इस्तेमाल करने से गले और छाती में जलन पैदा हो जाती है। नीबू का रस प्रातः सायं लेना अधिक लाभदायक है। दोपहर के भोजन के साथ अधिक नीबू इस्तेमाल न करना चाहिए। सर्दी में कम नीबू इस्तेमाल किया जाय तो अच्छा रहता है; लेकिन गरमी और खास कर बरसात में इसका अधिक उपयोग करना चाहिए।

नीबू के सेवन में सावधानी

नीबू का प्रयोग २ नीबू से शुरू करना चाहिए और धीरे धीरे १२ नीबू तक मात्रा कर के फिर घटाना शुरू करना चाहिए और घटाते घटाते फिर २ नीबू कर देना चाहिये। बिना खाए खाली पेट नीबू का इस्तेमाल करना चाहिए। नीबू को आग पर गरम न करना चाहिए, क्योंकि गरम करने से उसके विटामिन उड़ जाते हैं, गोकि रस अधिक निकलता है। नीबू के रस को हमेशा छानकर इस्तेमाल करना चाहिए, क्योंकि इनके बीज के पेट में जाने से अपेंडिसाइटिस (Appendicitis) जैसा भयंकर रोग होने का डर रहता है।

आशा है, तुम लोगों ने यहां तक तो सभी बातें अच्छी तरह समझ ली होगी। अब इसके भिन्न भिन्न प्रयोग बतलाता हूं। ध्यानपूर्वक सुनो।

प्रयोग

मुँह सुंदर बनाने के लिये—प्रातःकाल मुंह धोने से पूर्व एक नीबू लेकर दो टुकड़े कर लें। उन टुकड़ों को साबुन पर रगड़ लें और फिर चेहरे पर अच्छी तरह मल दें। १० मिनट बाद गरम पानी से मुँह धो डालें। कुछ दिनों के इस्तेमाल से चेहरे के धब्बे आदि दूर हो जायेंगे और मुंह सुंदर हो जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालों की सफाई—(१) सिर में नीबू का रस और चीनी लगा कर ५-६ घंटे तक छोड़ दें। फिर सिर मल मल कर धो डालें। रूसी आदि नष्ट होकर सिर खूब साफ हो जाता है।

(२)—नीबू के रस में अरहर की दाल पीस कर धोने से सिर के बाल साफ होते हैं।

चेहरे की झाईं व दाग दूर करने के लिए एक नीबू के दो टुकड़े कर लें और उस पर थोड़ा-सा नौसादर छिड़क कर कुछ देर के लिए छोड़ दें। जब नौसादर गलकर मिल जाय तब चेहरे पर मलें और फिर धो डालें। दो सप्ताह तक लगातार इस प्रयोग के करने से चेहरे की झाईं व दाग आदि दूर हो जाते हैं।

बालों का गिरना रोकने के लिए—(१) नीबू के रस में आंवला पीसकर बालों में लगाने से बालों का गिरना बन्द होता है, बाल लम्बे और काले भी होते जाते हैं।

(२) नीबू का टुकड़ा सिर पर रगड़ने से बालों का गिरना बन्द हो जाता है।

खेल्वाट के लिए—नीबू के बीजों को पानी में खूब महीन पीसकर उस स्थान पर लेप कर दें। कुछ समय तक बराबर लेप करने से वहां बाल जमने लगेंगे। बालबढ़ाने के लिए—नीबू के रस में बट वृक्ष की जटा पीसकर सिर पर मल दें। फिर धोकर नारियल का तेल लगावें। कुछ दिनों के इस्तेमाल से बालों का गिरना बंद हो जाता है और बाल लंबे हो जाते हैं।

सिर की जूं दूर करने के लिए—लहसुन और नीबू का रस बराबर लेकर मिला लें और उस रस को सिर में मलें, दो-चार बार के मलने से सिर की जूं नष्ट हो जाती है।

चेहरे की सुंदरता के लिए—दूध और नीबू का रस मिलाकर चेहरे पर मल दें। १० मिनट बाद पानी से धो डालें। इससे कील, मुहाँसे आदि दूर होते हैं और मुंह की रंगत साफ होती है।

झाईं पर—कागजी नीबू के रस में खड़ी मसूर पीसकर चेहरे पर उबटन की भाँति लगाने से झाईं दूर होती है।

चेचक के दाग दूर करने की दवा—माता के दाग पर मुरदासंख को नीबू के रस में घिसकर लेप करें। कुछ दिनों के इस्तेमाल से दाग छूट जाते हैं।

सिर-दर्द पर—एक नीबू के दो टुकड़े कर धीरे धीरे आग पर गरम करें। जब थोड़ा थोड़ा गरम हो जाय तो एक टुकड़ा सिर पर मलें। सिर में हवा न लगने दें। गरमी से पैदा हुआ सिर दर्द फौरन आराम हो जायगा।

अधकपारी के दर्द पर—(१) नीबू के छिलके को खूब महीन चंदन की तरह पीसकर माथे पर लेप करें।

(२) मस्तक के जिस भाग में दर्द होता हो उसके दूसरी ओर के नथुने में चार बूंद नीबू के रस की नास लेने से तुरन्त फायदा होता है।

चक्कर के लिए—जिसको चक्कर आता हो उसे एक नीबू डेढ़ पाव पानी में गार कर एवं शहद मिला कर पिलाना चाहिए।

आँख आने पर—(१) चाकसू एक तोला लेकर किसी फूल के बरतन में नीबू के रस में जस्ते के छड़ से खूब घोंटे। ८-१० नीबू का रस घोंट कर उसमें सुखा डालें। फिर उसे खूब महीन कपड़े से छान कर शीशी में रख लें। यह गीलागील अंजन की तरह तैयार होगा। इसे सलाई से रात के रोगी की आँख में लगावें। तुरन्त फायदा होगा।

(२) लोहे के किसी बरतन में लोहे के ही घोंटने से एक नीबू का रस खूब घोटें। घोटते घोंटते जब काला काला मरहम की तरह नीबू का रस तैयार हो जाय तब उसे किसी कांच या चीनी मिट्टी के बरतन में रख लें। आँख आए हुए रोगी की पलकों पर इसका लेप करें। इससे दर्द, जलन, लाली आदि शीघ्र ही आराम होती है। यदि यह दवा सुरमे की तरह आँख के भीतर इस्तेमाल की जाय तो जल्दी और अधिक फायदा होता है लेकिन यह ख्याल रक्खें कि कुछ समय तक बहुत ही अधिक लगेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाला व फूली के लिए—बारहसिंघे के सींग का चूर लेकर नीबू के रस में खूब घोटें। जब सुरमें जैसा बारीक हो जाय तब छोटी छोटी गोलियाँ बना डालें। रोगी की आँखों में एक गोली पानी में घिसकर लगावें।

मोतियाबिन्द का पानी उतरना रोकने के लिये—चार तोला शुद्ध गाय के दूध का मक्खन दो तोले नीबू के रस में खूब घोटें। २ दिन बाद उस मक्खन में पानी डालकर हाथ से मलें और खूब फेंटें। इसी तरह २५-३० बार पानी से मक्खन क धोएँ और किसी शीशे या चीनी मिट्टी के बरतन में रख लें। रात को सोते समय दो पोस्ते के दाने के बराबर आँख में लगा दें।

रतौंधी की दवा—पाव भर बकरी के दूध को गरम करें। जब उबाल आ जाय तब एक पका नीबू उसमें गार दें। और उतार कर ठंढा होने के लिए रख दें। जब ठंढा हो जाय तब उसे छानकर (छाने हुए पानी को) रोगी को पिला दें। एक सप्ताह के इस्तेमाल से रतौंधी आराम हो जायगी।

प्रति दिन दो बूँद नीबू का रस आँखों में डालने से आशातीत लाभ होता है।

नकसीर की दवा—नकसीर के रोगी की नाक में नीबू का रस किसी पिचकारी द्वारा या वैसे ही डाल दें। खून का बहना तुरन्त ही बंद हो जायगा।

कान के दर्द के लिए—(१) पीली कौड़ियों को जलाकर राख कर लें। इस राख को शीशी में भर कर रक्खें। जब किसी के कान में दर्द हो तो २ रत्ती राख कान में छोड़ कर ऊपर से ८-१० बूँद नीबू गार दें। रोगी को १०-१५ मिनट तक लेटा रहने दें। फिर कान से दवा गिरवा दें। दर्द तुरंत ही आराम होगा।

(२) बिजौरा नीबू, आम और अदरख का रस गरम करके कान में डालें।

कान बहने पर—(१) बिजौरा नीब, (बिजौरा न मिलने पर कागजी ही) के रस में सज्जीखार मिलाकर कान में डालें।

(२) समुद्रफेन खूब बारीक पीसकर रख लें। रोगी के कान में एक रत्ती समुद्रफेन डालकर ऊपर से चार बूँद नीबू का रस डाल दें। तीन चार दिन के प्रयोग से काफी लाभ नजर आयेगा।

मुँह की दुर्गन्ध दूर करने के लिए—नीबू के रस में उसका दूना गुलाबजल मिलाकर कुल्ला करें। कुछ दिनों में बदबू दूर हो जायगी। यदि नीबू का शरबत इस्तेमाल किया जाय तो आमाशय के दोष से उत्पन्न मुँह की दुर्गंध दूर होती है।

मुख शुद्धि के लिए—नीबू का रस पानी में मिला कर कुल्ला करने से दाँत और जीभ का मैल साफ हो जाता है तथा मुंह के छाले और मसूड़े के सूजन दूर होती है। नीबू के रस के साथ पानी में नमक मिलाकर गरारे करने से गला भी खूब अच्छी तरह साफ हो जाता है।

दाँत का मंजन—बादाम या सुपारी का छिलका जलाकर कोयला बना लें। उसको खूब बारीक पीसकर नीबू का रस मिला दें। इस मंजन से दाँत साफ करने से खूब मजबूत और चमकीले होते हैं।

गले के दर्द पर—थोड़ा सा नीबू का रस लेकर उसे गरम कर लें फिर। उसमें थोड़ी सी शहद मिला दें। रोगी को दिन में ३-४ बार चटाने से आशातीत लाभ होता है। यह गले के प्रायः सभी बीमारियों में लाभदायक है।

हैजा होने पर—(१) नीबू के रस में चीनी छोड़ कर शर्बत बना लें। यदि उसमें प्याज का रस भी मिला दिया जाय तो और भी अच्छा है। आवश्यकतानुसार रोगी को थोड़ा थोड़ा चटावें।

(२) हैजे के दिनों में दो नीबुओं का रस प्रति दिन इस्तेमाल करने से हैजा होने का डर नहीं रहता।

(३) अवस्थानुसार आधी छँटाक से एक छँटाक तक नीबू का रस पिलाने से हैजा में काफी लाभ होता है।

(४) शुद्ध कपूर एक तोला, अजवाइन ३० तोला, इन सब को कूट पीसकर नीबू के रस में सान कर मिर्च के बराबर गोलियाँ बना लें। आवश्यकतानुसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक एक घंटे के अंतर से एक एक गोली, खट्टे अनार का शर्बत, नीबू की शिकंजवी या रूह केवड़ा के साथ खिलाने से आशातीत लाभ होता है।

(५) बिजौरा नीबू के १५ बीज दो-तीन तोला पानी में पीसकर पिलाना चाहिए।

(६) अजवाइन सौंफ, सोंठ, छोटी, हर्रे, पीपल, पांचो प्रकार के नमक एवं मदार की कली, इन सब चीजों को ८-८ तोला लेकर नीबू के रस में पीसकर गोलियाँ बना लें। आवश्यकतानुसार एक-एक दो-दो गोली रोगी को देना चाहिए।

वमन और मचली के लिए—नीबू की फांकें बना कर उस पर नमक और काली मिर्च खूब बारीक पीसकर भुरभुरा दें। फिर उसे चूसें। इससे तबीयत शांत हो जायगी और जी प्रसन्न होगा।

नीबू के टुकड़ों पर खांड डालकर गरम करें फिर चूसें।

(३) बिजौरा नीबू की जड़ जल में घिसकर शहद मिला कर पिलाना चाहिये।

(४) चायके एक चम्मच भर नीबू का रस, दो चम्मच पानी में दो चम्मच शक्कर मिलाकर चाटना चाहिए।

(५) नीबू की छाल की राख शहद में मिलाकर चाटना चाहिए।

(६) नीबू के रस में सफेद जीरा (भुना हुआ) लौंग और काली मिर्च पीस कर पीना लाभदायक है।

(७) सूखे चकोतरा की राख शहद में मिलाकर चाटना चाहिए।

(८) बिजौरा नीबू का रस एक माशा, शहद एक माशा, पीपल एक माशा, सब को मिलाकर चाटना चाहिए।

(९) कै और दस्त साथ साथ होने पर बिजौरा नीबू की जड़ और केशर जल में पीसकर पिलाना चाहिए।

(१०) पित्त की कै में ६ माशे नीबू का बीज खूब महीन पीसकर पीना लाभदायक है।

श्लेष्मा (जुकाम) में—पके हुए नीबू को गीले कपड़े में लपेटें। फिर उस पर मिट्टी चढ़ा दें और उसे गरम राख में ढक दें। जब नीबू भुनकर भरता की तरह हो जाय तब उसे निकाल कर उसका रस गार लें उस रस में थोड़ा सा शहद मिलाकर रोगी को गरम गरम ही पिला दें। इसके सवन से जुकाम जल्द अच्छा हो जाता है।

हैजा में प्यास लगने पर—२ तोले सेंधा नमक चार सेर पानी में पकावे। दो सेर पानी रह जाने पर उतार कर छान ले। ठंढा करके तीन माशा कागजी नीबू का रस उसमें मिलावे और मिट्टी के बरतन में रख ले। हैजा में इसके पीने से प्यास मिटती है।

विसूचिका से रक्षा का उपाय—प्रतिदिन भोजन के साथ अथवा चीनी के साथ शर्बत बनाकर दो नीबुओं का रस सेवन करें।

विसूचिका में—खड़ा नीबू में छिलके और बीज के सहित खूब घोंटें। अच्छी तरह महीन हो जाने पर थोड़ा सा सेंधा नमक मिला दें। रोगी को थोड़ा थोड़ा चटावें। इससे प्यास कम हो जायगी, वमन बंद हो जायगा और दस्त भी कम हो जायँगे।

(२) नीबू का छिलका साए में सुखा डालें। फी एक तोले पर एक माशा कपूर मिलाकर सातबार नीबू के रस में खूब घोंटें। फिर एक एक रत्ती की गोलियाँ बना लें। पुदीना, सौंफ या अजवाइन के अर्क के साथ दो दो गोलियाँ घंटे घंटे भर के अंतर से खिलावें यदि रोगी की हालत अधिक खराब हो तो दवा १५-१५ मिनट के अंतर से दें। इस दवा से रोगी को लाभ अवश्य होता है।

कब्जियत के लिए—सुबह पाखाना से फारिग होने पर, दोपहर को भोजन के बाद, एवं शाम का दो दो नीबू का रस पाव भर पानी के साथ पीएँ।

(२) नीबू का पतला छिलका इस तरीके से उतारें कि अन्दर की सफेदी जरा भी छिलके साथ न आने पावे। नीबू का छिलका और रस (बीज के साथ ही) एक गिलास में ठंढा पानी भर कर उसमें छोड़कर रातभर ओस में रख दें। सुबह पानी को अच्छी तरह हिलाकर छानकर पीजिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) गरम पानी में नीबू का रस और शहद मिलाकर पीएँ।

अजीर्ण के लिए—भोजन करने से पहले नीबू अदरख और सेंधा नमक इस्तेमाल करें।

(२) नीबू और सेंधा नमक किसी चीनी मिट्टी के बर्तन में नीचे ऊपर करके भर दें। फिर उसका मुँह ढककर रख दें। जब नीबू गल जाय तब थोड़ा थोड़ा रोज इस्तेमाल करें। इससे अजीर्ण दूर होकर अग्नि प्रदीप्त होती है और मुख का स्वाद बन जाता है।

अतिसार में—नीबू का रस पानी में मिलाकर एनिमा लेना चाहिए।

चौथिया तिजारी या प्रति दिन के ज्वर पर—एक नीबू की दो फाँके कर लें। भुनी हुई फिटकिरी सेंधा नमक, गोल मिर्च, बराबर लेकर बारीक पीस लें। नीबू के टुकड़ों पर एक-एक माशा चूर्ण डाल कर बुखार आने के दो घंटे पूर्व एक टुकड़ा एक एक घंटे पूर्व दूसरा टुकड़ा चूस लें।

बुखार के सिर दर्द पर—नीबू का रस, अदरख का रस, सेंधा नमक-तीनों चीजों को बराबर लेकर गरम करें। फिर इसकी नास लें। नास लेने से छींक आयेगी और सिर दर्द दूर हो जायगा।

बुखार के प्यास पर—नीबू का शर्बत थोड़ा थोड़ा देने से प्यास और ज्वर का वेग कम होता है।

बरवट की दवा—छः माशे प्याज के रस में छः माशा नीबू का रस मिलाकर रोगी को प्रातःकाल पिलावें। एक-दो सप्ताह के अंदर बरवट आराम हो जायगा।

बदन की खुजली पर—(१) नीबू का रस एक तोला, नारियल का तेल दो तोला—दोनों को एक में मिलाकर बदन में मालिश करें। फिर गरम पानी से नहा डालें।

(२) हल्दी और सरसों का उबटन नीबू के रस में पीसकर लगाने से बदन की सभी प्रकार की खुजली दूर होती है।

(३) एक छंटाक चमेली के तेल में दो तोले नीबू का रस मिलावें। फिर उस तेल को बदन पर मालिश करें एवं एक घंटे बाद स्नान करें।

(४) मुलतानी मिट्टी में दो तोले नीबू का रस मिलाकर बदन पर लेप करें। कुछ देर बाद नहा डालें। फिर चमेली का तेल मलें और फिर स्नान करें। कुछ समय के प्रयोग से बदन की खुजलाहट दूर हो जायगी।

खाज के लिए—हरताल और गंधक नीबू के रस में घोंट कर लगावें।

(२) करौंदा की जड़ नीबू के रस में घिसकर लगावें।

दाद के लिए—(१) दाद को खूब खुजलाकर नीबू का रस दिन में ३-४ बार लगावें।

(२) नीबू के रस में नौसादर या सोहागा खूब बारीक पीसकर लेप करें।

(३) चुकन्दर के पत्ते का रस नीबू के रस में मिला कर लगावें।

(४) कत्था, आँवला, सुहागा, गंधक-चारों चीजें समान भाग में बारीक पीसकर नीबू के रस में मिला कर लगावें।

मस्सा दूर करने के लिए—नीबू का रस ५ माशा, जवाखार ५ माशा, नीला थोथा ३ माशा, सुहागा ४ माशा—सबको खूब बारीक पीसकर मस्सेपर लेप करने से मस्से कट जाते हैं।

उपदंश के घाव पर—जंगी हर्रे (छोटी हर्रे) को नीबू के रस में घिस कर घावों पर लेप करें। इससे जलन मिट जाता है और घाव अच्छे हो जाते हैं।

उपदंश में—ताजा नीबू का रस दिन में कई बार लेना चाहिए।

सांप का विष दूर करने का सुरमा—पांच तोला धतूरे का बीज नीबू के रस में तीन दिन तक घोटें। फिर शीशी में भरकर रखलें। साँप के काटे हुए रोगी की आँखों में सलाई से लगादें।

बिच्छू के विषपर—नीबू का बीज और सेंधा नमक पीसकर पिलाने से बिच्छू का विष शांत होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निमोनिया में—दो-दो तोले नीबू का रस पांवभर जल के साथ दिन भर में चार-पाँच बार पीना चाहिए।

शरीर की दुर्गन्ध दूर करने का उपाय—स्नान करने के जल में २ नीबू का रस और जरा-सा नमक मिलाकर स्नान करें। प्रतिदिन इसी नमक नीबू युक्त जल से स्नान करने से शरीर की दुर्गन्धि चर्मरोग आदि दूर होते हैं और शरीर की रंगत खिल उठती है।

स्थूलता दूर करने के लिए—(१) स्थूल शरीर वाले मनुष्य को दिन में ३ बार एक-एक नीबू आध सेर या तीन पाव पानी के साथ पीना चाहिए।

(२) एक तोला नीबू का रस १० तोले गरम पानी के साथ पीने से अनावश्यक मोटापा दूर होकर शरीर की चर्बी घटती है और शरीर अपनी स्वाभाविक अवस्था में आ जाता है।

शीघ्र प्रसव के लिए—बिजौरा नीबू की जड़ कमर में बाँधना चाहिए।

बच्चों के सूखा रोगपर—नारंगी और अंगूर का रस मिलाकर पिलाना चाहिए।

प्लेग में—नीम की पत्ती का चूर्ण एक तोला, काली मिर्च एक तोला, कुटकी एक तोला मदार के जड़ की छाल एक एक तोला, तुलसी की पत्ती २ तोला, कुचला आधा तोला—इन सब चीजों को एक साथ खरल कर डालें। फिर आधा तोला कपूर, एकतोला नीबू का रस डालकर खरल करें और २-२ रत्ती की गोलियाँ बना लें। गरम जल के साथ रोगी को एक-एक गोली इस्तेमाल करावें।

बवासीर में—नीबू को आड़ा चीरकर सेंधा नमक डालकर चूसने से बवासीर में खून जाना बन्द हो जाता है।

शक्ति-वृद्धि के लिए—दो तोले किशमिश लेकर साफ कर ले। उन्हें एक गिलास में रखकर एक नीबू का रस और पानी भर दें गिलास को रात में ओस में रख दे। प्रातःकाल गिलास को हिलाकर रस को पी जाय और किशमिश एक एक कर खाजाय। इस शक्ति में अपूर्व वृद्धि होती है।

अपूर्व सलाद—टामाटर, पतली-पतली मूली एवं उसके हरे पत्ते, ककड़ी, गाजर, पालक सोआ, पुदीना धनियाँ हरी, चने का साग हरा मिरचा आदि-आदि खूब महीन-महीन काटकर किसी शीशे या पत्थर के बरतन में रखलें ऊपर से नमक और नीबू का रस गार लें और फिर मिलाकर इस्तेमाल करें। प्याज खाने वाले लोग थोड़ा प्याज भी डाल लें तो वह और भी स्वादिष्ट हो जाता है। भोजन के पूर्व इस सलाद के इस्तेमाल से कब्ज दूर होता है।

नीबू का क्रीम—बढ़िया साफ नारियल का तेल ऽ=, धोई तिल्ली का बढ़िया तेल ऽ-, निथारा हुआ चूने का पानी ऽ≡, नीबू का तेल (लेमन आयल) ढाई तोला लेलें। नारियल का तेल जमा हुआ हो तो साधारण आग पर गरम करके पिघला दें फिर उसमें तिल्ली का तेल, नीबू का तेल मिलादें। इन सब मिले हुए तेलों को किसी खद्दर या फलालीन के टुकड़े से छान डालें। किसी शीशे के बरतन में रखकर धीरे चूने के पानी को डालता जाय और किसी लकड़ी के टुकड़े से बराबर चलाता जाय। दूध की भाँति सफेद क्रीम तैयार हो जायगा। यह गरमी के दिन के लिए अधिक लाभदायक होती है।

रेशमी कपड़े के दाग छुड़ाने का उपाय—१ औंस तारपीन का तेल और दो औंस नीबू का रस मिला कर रक्खें। जहाँ कहीं रेशमी कपड़े में दाग किसी चीज का लग जाय वहाँ थोड़ा सा उक्त तेल लगाकर किसी फलालीन के टुकड़े या नरम कपड़े के टुकड़े से रगड़ दे दाग छूट जायगा।

अपूर्व लाभ—पेड़ का पका हुआ नीबू लेकर उसकी चार फाँकें कर लें। गाय का आधसेर तुरत दुहा हुआ दूध लेकर चार मिट्टी के बर्तनों में आध-आध पाव रख लें। एक टुकड़ा नीबू एक बर्तन के दूध में गारकर तुरत पी जाय। फिर दस मिनट बाद दूसरे बर्तन का। इसी प्रकार दस-दस मिनट के अंतर से चारो बर्तनों का दूध रस गारकर पी जाँय। इस बात का ख्याल रक्खें की नीबू भी ताजा हो एवं दूध भी ताजा हो और गारने के साथ ही दूध पीएँ जिसमें दूध फटने न पावे। इस प्रयोग के ४५ दिन तक नियमित रूप से सेवन करने से अपूर्व लाभ होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्नोत्तर

[इस स्तम्भ में जिज्ञासु के पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिये कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार न पूछें और जहाँ तक हो सके अपने प्रश्न संक्षेप में लिखें। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर कूपन आने पर ही जवाब दिया जायगा जो कवर के तीसरे पेज पर छपा है।—सं०]

प्रश्न—मेरे एक परिचित सज्जन के केवल एक ही (आयु २० वर्ष) का लड़का है जो हमेशा बीमार रहता है। वह बहुत ही दुबला पतला है और उसके इलाज में हज़ारों रुपये ख़र्च किये जा चुके हैं। वह सदा कोई न कोई दवा खाता रहता है। कई दफ़ा उसका पेशाब, पाख़ाना टेस्ट कराया जा चुका है परन्तु फल कुछ नहीं होता। कभी कभी तो इसके पीछे घर में कलह हो जाता है। नतीजा यही होता है कि लड़के के पेट में कभी यूनानी, कभी एलोपैथिक और कभी वैद्यों की विष-रूपी औषधियाँ पहुंचती रहती हैं। मैंने उन्हें प्राकृतिक चिकित्सा के लिये तैयार किया है परन्तु वह इसमें आपकी सहायता चाहते हैं।

लड़के की संक्षिप्त हिस्ट्री इस प्रकार है :—

लगभग तीन वर्ष से बुख़ार आता है। इस बीच में कभी कभी एक या दो महीने तक नहीं आया लेकिन आमतौर पर ८वें-१०वें दिन सर्दी लग कर आता रहा है। कभी कभी दो, तीन दिन तक रहता है और कभी कभी दस बारह घंटे में ही पसीना आकर उतर जाता है। खांसी, जुकाम व नज़ले का शिकार लड़का प्रायः जल्दी जल्दी होता रहता है। बुख़ार होने से पहले पेशाब जल्दी जल्दी व अधिक आने लगता है और सीधे गुर्दे में दर्द हो जाता है। पेशाब बदबूदार होता है और उसमें कुछ डिपाज़िट भी मालूम होता है। भूख बहुत कम लगती है। गले में अक्सर टान्सिल बढ़ने की शिकायत रहती है। नाक में 'पालीपस' है जिससे आवाज़ में भी कुछ फ़र्क़ है। दांतों में पायरिया है और सिर व कानों में ख़ुश्की रहती है। ५ वर्ष की आयु में टायफ़ाइड हुआ था और ९वें वर्ष में गनोरिया। अब भी कभी कभी पेशाब चिनक के साथ होता है। १६वें वर्ष में हैज़ा और १८वें में पेचिश होकर फ़िस्चुला हो गया था। २०वें के आरम्भ में ज़बरदस्त निमोनिया हुआ और ६ माह बाद फिर भयंकर पेचिश हुई।

अब लड़का साधारणतया ठीक है मगर बीमारियों का दौर लगा ही रहता है। प्रातः भ्रमण को जाने से बुख़ार आने का डर रहता है। उसके पिता बड़े दुखी हैं और कभी कभी बड़े निराश हो जाते हैं। मैंने आपके बल पर उन्हें ढाढ़स दिया है। अतएव प्रार्थना है कि आप इस लड़के के लिये उचित खान-पान सहित कुछ उपचार तजवीज करें।

—कान्ति प्रकाश रस्तोगी, मेरठ।

उत्तर—आपने अपने मित्र के रोग-ग्रस्त लड़के का जो विवरण दिया है, उस पर विचार करने पर मेरी राय तो यही है कि उसे अगर कोई स्थायी लाभ पहुँचाया जा सकता है तो वह केवल प्राकृतिक चिकित्सा के ही द्वारा सम्भव है। उपचार के सम्बन्ध में आपको सब से पहले ध्यान इस बात पर देना होगा कि उसे सरदी या नजला बार बार न होता रहे, क्योंकि यही सब रोगों की जड़ है। इसके लिए आप उसे जलनेति और सूतनेति करने की सलाह दें। भोजन उसे ऐसा दिया जाय जो क्षारमय तथा पौष्टिक हों। कुछ समय का अन्तर देकर यदि उसे दूध-कल्प कराया जाय तो उससे विशेष लाभ पहुंचने की आशा की जा सकती है। फिर भी उस बालक को सर्वथा नीरोग और स्वस्थ बनाने के लिए डेढ़ दो साल तक बड़ी लगन और सावधानी के साथ प्रयत्न करने की आवश्यकता होगी, किन्तु प्राकृतिक चिकित्सा से लाभ निश्चित है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न—मैं कोई ३ साल से अपने सिर पर घी लगाती रही हूं, परन्तु अब चाहती हूं कि मैं तेल लगाऊँ। आप कृपा करके बतावें कि मेरे लिए नारियल का तेल अच्छा होगा या सरसों का। तेल ऐसा हो जिससे आँखों पर कोई बुरा प्रभाव भी न पड़े और न उसके उपयोग से बालों के झड़ने का कोई अन्देशा ही रहे।

—शकुन्तला, लायलपुर।

उत्तर—आपके लिए नारियल का तेल तो उपयुक्त हो सकता है, लेकिन सरसों का तेल लगाना उतना अच्छा नहीं होगा। सरसों के तेल की उपयोगिता तो बदन में मालिश के ही लिए सबसे अधिक पाई जाती है। सिर में लगाने पर इसका आँखों पर कोई अच्छा प्रभाव नहीं पड़ेगा। लेकिन मेरी राय तो यह है कि आप शुद्ध तिल के तेल का प्रयोग क्यों नहीं करतीं? यदि आप नीली बोतल में तिल का तेल धूप में रखकर उसे तैयार कर लें तो वह आंखों की ज्योति, मस्तिष्क और बालों के लिये भी विशेष लाभकारी सिद्ध होगा। आप इसकी आजमाइश कर सकती हैं।

प्रश्न—(१) मेरे छोटे भाई की अवस्था अभी ८ महीने की है, उसके सिर में गरमी के कारण सुर्ख दाने पड़ जाते हैं, जो बाद में फैलने लगते हैं और पक से जाते हैं और उनमें चिपचिपा-सा तरल पदार्थ निकलने लगता है, खुरट बन जाते हैं और सिर का हिस्सा कुछ पिलपिला-सा मालूम होता है। सिर से कुछ बदबू भी मालूम होती है। खुजली बहुत होती है और खुजलाने से घाव हो जाते हैं। कृपया कोई उपचार बतावें।

(२) मेरी चाची जी के चेहरे पर, जिनकी अवस्था ३५ साल की है, पिछले ९ वर्षों से झाइयां पड़ गई हैं। कृपा करके बतावें वे किस तरह शीघ्र मिट सकती है।

—ओमप्रकाश, चन्दौसी

उत्तर—(१) आप उस बच्चे के सिर पर प्रतिदिन नियमित रूप से कम से कम १५ मिनट और अधिक से अधिक आध घन्टे तक धूप में रख कर हर रंग का प्रकाश दें, बच्चे को आप चाहें तो नारंगी या अन्य किसी फल का रस पीने को दे सकते हैं। उसके घावों पर नीबू और नारियल के तेल का प्रयोग करें। बच्चे की माता के भोजन पर ध्यान दिया जाय। उसका भोजन क्षारमय हो और उसे कब्ज न रहने पावे। माता का जैसा भोजन होगा, उसी के अनुसार उसके दूध में भी गुण होगा जिसका बच्चे के स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ना अनिवार्य है। मेरा ख्याल है इतने उपचार से बच्चे को विशेष लाभ होगा और यह शिकायत जाती रहेगी।

(२) आपकी चाची को कब्ज की शिकायत अवश्य होगी। कब्ज की शिकायत से ही चेहरे पर झाइयां पड़ती हैं। इसलिए पहले तो आप उनके भोजन में सुधार करें, जिससे कब्ज की शिकायत न रहने पाये। कब्ज दूर करने के लिये स्फोक प्रधान भोजन, शाक-भाजी और फल तथा एनिमा का प्रयोग करें। इतने से ही यह शिकायत मिट जायेगी। अगर आप कोई बाहरी उपचार करना चाहते हैं तो उसके लिए आप हींग और नीबू का उपयोग करें। वह रात में सोने के समय पानी में ही भिगो कर चेहरे पर मल दें और सुबह उठने पर नीबू से चेहरे को धो डालें। इससे झाइयां जल्द मिट जायँगी।

प्रश्न—मेरी माता की उम्र इस समय ३५ वर्ष की है। वह ग्राम्य-जीवन व्यतीत करने वाली महिला हैं। आज ३-४ साल से उन्हें जोर से दम फूलने की शिकायत हो गई है। कभी कभी सांस जोरों से चलने लगती है और छाती फूल जाती है। १०-१५ मिनट तक सांस रुकती ही नहीं। कृपया कोई उपचार बतावें।

—गुमानाराम, विद्यार्थी, जोधपुर।

उत्तर—इस रोग के उपचार के लिए सबसे पहले पेट की सफाई होनी चाहिये। आप अपनी माता को आरम्भ में २-३ दिन तक रसाहार करावें। उसके साथ ही उन्हें साधारण जल का एनिमा दें। उसके

[पृष्ठ ५६ पर देखिए]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋतु-परिवर्तन

कहते हैं, प्रकृति अंधी है; अंधे की भाँति एक लकीर पकड़ कर चलती है। इसके नियमों में एक अजीब एकरूपता पाई जाती है, कहीं पर तिल मात्र का अन्तर नहीं। पल, क्षण, दिवस, मास, वर्ष, सब एक से बँधे हुए ! सूर्योदय और सूर्यास्त, अँधियारी और उजियाली रात, ऋतुओं का बारीबारी से नर्तन, इन सब में कहीं क्या कोई व्यक्तिक्रम कभी देखने को मिलता है ?—सारे कार्य जैसे अपने आप परिचालित हो रहे हों। इसी से कहते हैं, प्रकृति अंधी है। लेकिन उसका यह अंधापन इंसाफ के अंधेपन के ही समान है। अंधी होकर भी यह लक्ष्यहीन नहीं, इसका मार्ग सुनिश्चित, काय सुनिश्चित और लक्ष्य सुनिश्चित !

वाह्य का और अंतस्—इसके दो स्वरूप हैं; कार्य और कारण की भाँति एक दूसरे से जुड़े हुए। दोनों एक दूसरे पर आश्रित। वाह्य का अन्तस् पर प्रभाव पड़ना अनिवार्य है, अनुपेक्षणीय। मनुष्य के तन, मन, प्राण और जीवन पर वाह्य प्रकृति का प्रभाव पड़ना भी निश्चित है। प्रकट रूप से हम जो कुछ भी देखते हैं वह उसका प्रतीक है जिसे हम अपनी आंखों से देख नहीं सकते। इस प्रकार यह हमारे लिए एक प्रकार का संकेत भी है। हम वाह्य परिवर्तन को देखकर आन्तरिक परिवर्तन का अनुमान और अनुभव कर सकते हैं।

× × ×

जाड़ा बीत चला। शिशिर की सर्द वायु में गुलाबी गर्मी आने लगी, वृक्षोंने पीले पत्रों का त्याग करके नया परिधान धारण करना आरम्भ किया, सूर्य की किरणों में प्रखरता आने लगी; हमने समझ लिया ऋतु परिवर्तन की वेला आ गई। पर हमारी दृष्टि प्रकृति के इस वाह्य परिवतन की ओर तो पड़ती है, पर वह शरीर के भीतर होने वाले परिवतन की ओर बहुत कम जाती है। वाह्य-परिवर्तन को देखने में ही हम भूल जाते हैं। लेकिन प्रकृति 'अंधी' है, उसके सारे कार्य व्यापार में एकरूपता है, यह भूलने की बात नहीं है।

ऋतु-परिवर्तन के साथ-साथ हमारे शरीर में भी परिवर्तन होता है। भीतरी सफाई होती है; मल का विसर्जन, नए जीवन का निर्माण, शरीर में संचित मल अथवा विकार में उद्वेग होता है, प्रकृति उनको बाहर निकाल फेकना चाहती है, जिससे उसके स्थान पर शरीर को नया खून, नया जीवन मिले। शरीर का यह संचित विकार निकलता है रोगों के रूप में। मल में उद्वेग या उभाड़ होने पर रोगों का प्रादुर्भाव होना स्वाभविक ही है। हमें इस उभाड़ से अधीर होने या तरह-तरह की जहरीली दवाइयों से उसे दबाने का प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं; हमें तो इस मल-विसर्जन क्रिया में, इस अन्दरूनी सफाई में और मदद पहुंचानी चाहिए। प्रकृति का अनुसरण करके ही हम अपने को स्वस्थ और सुखी बना सकते हैं।

× × ×

भारतीय चिकित्सा-ग्रंथों में ऋतु-परिवर्तन का बड़ा महत्व बताया गया है। ऋतु-परिवर्तन काल में यदि हम थोड़ी सी सावधानी से काम लें तो साल भर के लिए हम नाना प्रकार की रोग-व्याधियां से उन्मुक्त और निश्चिन्त हो सकते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा तो प्रकृति के नियम से ही परिचालित है। वह हमें प्रकृति के नियमों का पालन करने का आदेश करती है। उसके अनुसार हमें वाह्य प्रकृति के साथ साथ अन्दरूनी सफाई के कार्य में मदद पहुंचानी चाहिए। इसकी विधि बहुत सरल है! दो-तीन का उपवास या रसाहार, नियमित रूप से एनिमा, कुछ दिनों तक केवल फल, दूध और तरकारी पर ही रह जाना, बस और कुछ नहीं! साधारण भोजन में नवान्न, हरी शाक-भाजियाँ, हरा चना, रुचिकारक और आरोग्यवर्धक दोनों होते हैं। कुछ दिनों तक प्रातः काल यदि नीम की कोंपलें भी नियमित रूप से खा ली जायं तो अति उत्तम। पुराने का विसर्जन, नए का आह्वान, हमारे लिए ऋतु-परिवर्तन का यही नैसर्गिक सन्देश है। इस पर ध्यान दें, इसको कार्य में लावें, इसी में हमारी भलाई है और प्रकृति के साथ एकरूपता स्थापित करना हमारा परम पुनीत कर्त्तव्य। किंमधिकम्।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नई पुस्तकें

जुकाम—लेखक, कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेद-विशारद; प्रकाशक, महेन्द्र रसायनशाला, कटरा, इलाहाबाद; मूल्य १॥)

कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय की कृतियों की लोकप्रियता निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुकी है। इनकी रचनाओं में प्राकृतिक चिकित्सा और आयुर्वेद, दोनों का युक्तियुक्त सामंजस्य पाण्डेय जी की एक खास विशेषता है। अबतक आपकी जितनी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं उनसे साफ प्रकट होता है कि आपका चिकित्सा-शास्त्र, विशेषतः आहार-चिकित्सा, का अध्ययन बहुत गम्भीर, विचारों की अभिव्यंजना सुस्पष्ट और वर्णनशैली सरल एवं आकर्षक है। चिकित्सा-शास्त्र सम्बन्धी गम्भीर एवं दुरूह विषय को सरल तथा सुबोध भाषा में पाठकों को हृदयंगम कराने की कला में आप विशेष प्रवीण हैं। 'आंखों का अचूक इलाज', 'मठा—उसके गुण तथा उपयोग', 'स्वास्थ्य के लिये शाक-तरकारियाँ' आदि पुस्तकों का जिन्होंने अवलोकन किया है वे इस कथन की यथार्थता के समर्थक होंगे, यह मेरा ध्रुव विश्वास है।

'जुकाम' आपकी सबसे नई पुस्तक है। इसमें सभी तरह के जुकाम, दमा, खाँसी, ब्रोंकाइटिस, निमोनिया, इन्फ्लुएंजा, आदि रोगों के कारण, निदान और उपचार का विशद वर्णन। जुकाम और उससे सम्बन्ध रखने वाले रोगों के उपचार के लिए आपने यदि एक ओर प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार उपवास, भोजन-सुधार, वाष्प-स्नान, एनिमा, जल-नेति, जल-धौति आदि अनुभूत प्रयोग बताए हैं तो दूसरी ओर आयुर्वेदीय मतानुसार कुछ सात्विक, सही और निर्दोष उपचारों का भी उल्लेख किया है। अतः जो लोग दवाओं में विशेष आस्था और विश्वास रखते हैं उनके लिए भी यह पुस्तक विशेष उपयोगी होगी।

× × ×

फलाहार-चिकित्सा—पाण्डेय जी की यह एक दूसरी कृति है। आहार तथा रोगोपचार के रूप में इसमें फलों के अनुभूत प्रयोग दिए गए हैं। फलों के गुण-दोष का वैज्ञानिक विवेचन, फलाहार चिकित्सा का महत्व और उपयोगिता, आदि अनेक ज्ञातव्य विषयों की जानकारी इस पुस्तक को पढ़ कर सहज प्राप्त की जा जा सकती है। विविध अवस्थाओं के भोजन में फलों का स्थान, फलों के कल्प की विधि, फलों का मेल, गूदेदार तथा रसदार फलों का विस्तृत विवरण तथा उनके विविध प्रयोग बताने के साथ ही साथ लेखक ने फलों के छोटे छोटे घरलू नुसखे भी बताए हैं जो स्वास्थ्यार्थियों के लिए विशेष उपयोगी होंगे। इसमें लेखक ने फलों के आहार-तत्व सम्बन्धी वैज्ञानिक विश्लेषण-तालिका भी प्रस्तुत की है, जिससे यह जाना जा सकता है कि किन-किन फलों में शरीर के लिए आवश्यक कौन-कौन से तत्व पाए जाते हैं। इस पुस्तक में विषय की जो विस्तृत जानकारी करायी गई है, रोगोपचार सम्बन्धी जो विधियां बताई गई हैं उनको दृष्टि में रखते हुए यह २०९ पृष्ठों की सजिल्द पुस्तक १॥ रु० में सस्ती ही जान पड़ती है।

'अरविन्द'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मासिक साहित्य

अग्रवाल सन्देश—(डा० भगवानदास अंक); सम्पादक सर्वश्री परमेश्वरी लाल गुप्त तथा अशोक जी, एम० ए०, अग्रवाल-सन्देश कार्यालय, २१ बुनानाला, बनारस। वार्षिक मूल्य ३) विशेषांक का मूल्य ॥)

'अग्रवाल-सन्देश' पिछले ३ वर्षों से काशी से प्रकाशित हो रहा है। यह अग्रवाल जाति का प्रतिनिधि पत्र है। इसका जनवरी-फरवरी का संयुक्त अंक श्रद्धेय डा० भगवानदास की ७५ वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में उपर्युक्त विशेषांक के रूप में प्रकाशित हुआ है। इस अंक को आरम्भ से लेकर अन्त तक पढ़ जाने पर भारत की इस महान विभूति के जीवन की पूरी झांकी सामने आ जाती है। इतने थोड़े पृष्ठों में किन्तु इतना सुन्दर विशेषांक निकालने के लिए हार्दिक बधाई।

प्रश्नोत्तर

[पृष्ठ ५३ से आगे]

बाद उन्हें हर रोज गुनगुना पानी करके उसमें थोड़ा सा नमक मिलाकर उसे उन्हें पिलाकर कै करावें। इसके बाद वह जलनेति करें। जलनेति के लिए वह पानी को धीरे धीरे नाक से खींचे और मुँह से बाहर निकाल दें। आहार के सम्बन्ध में मेरी राय है कि उन्हें एक वक्त रोटी, सब्जी और मक्खन दिया जाय और शाम को वह फलाहार करें। इस क्रम को कुछ समय तक जारी रखने के बाद उनसे धौति और सूतनेति करवाइए। आशा है, इस उपचार से उनका रोग चला जायगा। यहाँ पर बताई गई विधियों की पूरी जानकारी के लिए अक्टूबर १९४३ में प्रकाशित 'दमा' शीर्षक लेख पढ़िए।

—बालेश्वरप्रसाद सिंह

क्या आप जानते हैं ?

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है

१—एक छटांक शहद पानी में मिला कर रोज सवेरे पीने से कब्ज दूर होता है।
२—इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है।
३—शरीर में ताकत आती है।
४—दूध में मिला कर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुंसत्व बढ़ता है।
५—त्वचा सुन्दर और मुलायम होती है।
६—यदि दिल को कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है।
७—शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है।

पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये (जीवन-मधु) का उपयोग कीजिये। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) २॥) ढाई रुपए। आज ही आर्डर दें।

मैनेजर
प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह
११, लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिए

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (तृतीय संस्करण) : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ३)
(२) सरल शरीर विज्ञान : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ... ... १॥)
(३) प्राकृतिक चिकित्सा : श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए० ... ... २।)
(४) मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ॥)
(५) दूध ही अमृत है : श्री हनुमान प्रसाद गोयल ... ... १॥)
(६) स्वास्थ्य से नुस्खे : 'जीवन सखा' कार्यालय ... ... ≡)
(७) क्या और कैसे खायें : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... ।=)
(८) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १)
(९) सचित्र हठयोग : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १।)
(१०) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... ॥।)
(११) फलाहार और फल-चिकित्सा : श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा ... ... १।)
(१२) आँखों का अचूक इलाज : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २)
(१३) आरोग्य साधन : महात्मा गाँधी ... ... ॥)
(१४) नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा) श्री लूई कूने ... ... ३॥)
(१५) बच्चों की रक्षा : श्री लूई कूने ... ... ।=)
(१६) मैं निरोग हूं या रोगी : श्री लूई कूने ... ... ।=)
(१७) उपवास-चिकित्सा : बरनर मैकफ़ेडन ... ... १=)
(१८) स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियाँ : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... १॥)
(१९) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदार नाथ गुप्त, एम० ए० ... ... १)
(२०) सूर्य-नमस्कार : श्री भगवती प्रसाद पांडे, बी० ए० ... ... १)
(२१) शाक और उनके गुण : श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा ... ... ॥।)
(२२) स्वास्थ्य और जल चिकित्सा : प्रिन्सपल केदारनाथ जी गुप्त ... ... १॥)
(२३) आहार ही औषध है : डा० एल० एन० रतरा ... ... १।)
(२४) फलाहार चिकित्सा : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २।)
(२५) Nature Cure by H. Lindlahr, M. D. ... 6 0
(२६) Practical Nature Cure by Dr. K.L. Sharma, N. D. ... 5 0
(२७) Fasting Cure by Dr. L. Sharma N. D. ... 0 6
(२८) Drugless Healing by L. Dr. Kameshwar Sharma, M.A., N.D. 0 8
(२९) Food-de-Medicine by Dr. L. N. Ratra, H.M.B. ... 2 0

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रन्थ-भंडार, लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

उत्तरी भारत में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रमुख केन्द्र

'प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह' प्रयाग

जहाँ अब तक न जाने कितने कथाकथित असाध्य रोगों से पीड़ित होने वाले रोगियों ने पहुँच कर अपने को नीरोग और स्वस्थ बना लिया। यही कारण है, जो यह चिकित्सा केन्द्र लगातार उन्नति करता जा रहा है।

यदि आप किसी भयानक रोग से पीड़ित हो रहे हैं, डाक्टरों और वैद्यों की दवा से निराश हो चुके हैं, तो आप फौरन यहाँ पधारें या पत्र देकर चिकित्सा के सम्बन्ध में विवरण प्राप्त करें।

यहाँ इन रोगों की सफलता पूर्वक चिकित्सा होती है—साधारण दुर्बलता, स्नायु दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग रक्ताभाव पुराना जुकाम, खाँसी, कब्ज, प्लुरिसी, अनिद्रा, दमा, मृगी, रक्त-चाप, मधुमेह मुटापा, मंदाग्नि, संग्रहणी, गठिया, स्नायु-शूल (scitica) उदर-शूल (colic pain), पथरी (gallstone troubles), गुर्दे की बीमारी विषाक्त फोड़ा नासूर, भगंदर, तथा विभिन्न प्रकार के स्त्री रोग जैसे—मासिक स्राव न होना या बहुत अधिक होना, स्राव के समय दर्द होना, प्रदर—इत्यादि इत्यादि।

यहाँ जिस चिकित्सा विधि से रोगी का इलाज किया जाता है उनमें यौगिक क्रियाएं, आसन, प्राणायाम, मालिश, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, जल-चिकित्सा, मिट्टी तथा वाष्प-चिकित्सा, आहार चिकित्सा, उपवास, मानसोपचार आदि सम्मिलित हैं।

स्वास्थ्य गृह में भरती होने के नियम—(१) इस स्वास्थ्य गृह में स्त्री और पुरुष दोनों तरह के रोगी भर्ती किये जाते हैं। किन्तु संक्रामक रोगों से पीड़ित होने वाले तथा चारपाई छोड़ने में असमर्थ रोगियों के रखने का प्रबन्ध नहीं है। (२) रोगियों के रहने उपचार तथा सेवा-शुश्रूषा का प्रबन्ध संस्था की ओर से किया गया है (३) रोगियों से चिकित्सा फीस ५०) प्रति मास ली जाती है, जिसमें मकान का किराया और इलाज की फीस दोनों शामिल हैं।

विशेष जानकारी के लिए नीचे लिखे पते से पत्र व्यवहार करें :—

संचालक

प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह

११, लूकरगंज, इलाहाबाद।

Printed at the Mission Press, Allahabad,
Published by Dr. Baleshwar Prasad Sinha, 11, Lookerganj, Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन ज्योति

शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा बिहार के शिक्षा विभागों द्वारा स्वीकृत

इस अंक में पढ़िये

१—'कृपा कर बताइए ?'—श्रीयुत जानकीसरण वर्मा ५
२—भोजन सबंधी मेरे अनुभव ड० बालेश्वर प्रसाद सिंह ५
३—स्त्रियां और व्यायाम—श्रीयुत व्रजमोहन मिहर ६
४—तत्व-चिकित्सा का आदि इतिहास—श्रीयुत गंगा प्रसाद गौड़ 'नाहर' ६
५—सूर्य रश्मि-चिकित्सा बानम प्राकृतिक चिकित्सा—श्रीकृष्ण शर्मा ६
६—मनुष्य का आहार—श्री प्रो० भवानी प्रसाद स्वाभाविक स्वास्थ्य शास्त्रोपाध्याय, कांगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय ७
७—प्रश्नोत्तर ७
८—सब रोगों पर प्राकृतिक कल्प ८
९—वीर्य रक्षा ही जीवन है—श्रीयुत शशि ८
१०—चेचक या महामारी—गणेश प्रसाद द्विवेदी, एम० ए० एल० एल० बी० ... ८
११—सम्पादकीय ८

संपादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह :

वार्षिक मूल्य ४) गुरुकुल कांगड़ी में १०) रु० १९४४ से प्राप्त प्रति अंक ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रति मास इक्कीसवीं तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ४) तथा एक प्रति का ।=) है।

(३) सज्जन-गण जनवरी या जुलाई से ही ग्राहक बनें; यों किसी महीने से भी ग्राहक बनाया जा सकता है।

(४) मास के अन्त तक 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोस्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए। अन्यथा मुफ्त में वह अंक फिर न मिलेगा।

(५) पत्र भेजते समय अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ साफ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।=) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

अनुपम अवसर !

पाठकों को यह जान कर हर्ष होगा कि श्रीमान धर्मचन्द्र सरावगी की उदारता के फलस्वरूप १५० पुस्तकालयों के लिए १॥) वार्षिक चन्दे पर 'जीवन सखा' एक साल तक पहुंचाते रहने की योजना की गई है। अतः सार्वजनिक पुस्तकालयों को इस अनुपम अवसर से लाभ उठाना चाहिए। १॥) में 'जीवन-सखा' प्राप्त करने के लिए आज ही लिखें।

—मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

वर्ष ९ | मार्च-अप्रैल, १९४४ | अङ्क ३-४

'कृपा कर बताइए ?'

[श्रीयुत जानकीशरण वर्मा]

श्रीयुत वर्मा जी से जीवन सखा के पाठक पूर्ण परिचित हैं। उनके विचार, गम्भीर, सुष्ठ साथ ही सरल हैं। इस लेख में श्री वर्मा जी ने पाठकों के सामने रोगों को दूर करने के सरल परन्तु अचूक इलाज बताये हैं साथ ही ढिलमिल यकीन प्रकृति-प्रेमियों को सरल रास्ता भी बताया है। —सं०

"महाशय जी, मैं १० साल से बीमार हूँ, जीवन भार हो रहा है, भूख नहीं लगती। बहुत हल्का खाना सिर्फ़ चावल, दाल रोटी, तरकारी, दही—खाता हूँ, पर यह भी नहीं पचता। मुझे प्राकृतिक चिकित्सा में पूरा विश्वास है, सात साल पहले आपकी पुस्तक, 'अचूक चिकित्सा,' पढ़ी थी, तभी से मैं प्रकृति का भक्त हूँ। कृपाकर बताइए कि मैं क्या करूँ, जिससे अपने दुखों से छुटकारा पा जाऊँ। मुझे तीन साल पहले बवासीर हुआ, सभी तरह की चिकित्साएं कीं, फिर चीरा लगवाया—तो भी बवासीर अब तक नहीं गया है। उसके बाद गठिया की शिकायत शुरू हुई। इसके लिये भी १० इन्जेक्शन लिये, पर अभी भी जोड़ों में सूजन बनी रहती है। मुझ पर दया कीजिए और बताइए कि मैं जल्दी से जल्दी स्वस्थ हो जाऊँ। एक बात और, मैं बहुत ग़रीब आदमी हूँ। फलों पर पैसा ख़र्च नहीं कर सकता। मामूली रोटी-दाल खाने भर ही मेरी औकात है—इसका भी ख़याल रखिएगा। कृपाकर रोग को दूर भगाने का उपाय बताइए।"

ऊपर की पंक्तियाँ उन कई विचित्र पत्रों में से एक है, जो हर रोज़ मेरे पास आते हैं और जिनका उत्तर देना समय खराब करना है। सोचिएं तो सही, सात साल पहले पत्र-लेखक ने 'अचूक चिकित्सा' पढ़ी, जिसके प्रत्येक पृष्ठ में यह बताने की चेष्टा की गई है कि (१) रोग आहार-विहार की गड़बड़ी से, मुख्यतया खान-पान की ख़राबी से, होते हैं; (२) किसी कष्ट के आरंभ होते ही उपवास, रसाहार और फलाहार का सहारा लेना चाहिए; (३) प्रति दिन के भोजन में क्षारमय पदार्थों का आधिक्य होना चाहिए; (४) औषधियों का व्यवहार बहुत सी हालतों में अनावश्यक और कुछ हालतों में हानिकर है; (५) चीरा लगाने से रोग जड़ से नहीं जाता बल्कि बाहरी लक्षण ही दबते हैं; (६) शरीर में वह शक्ति है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिससे वह अपनी ख़राबी आपही दूर कर सकता है, अगर उसकी राह में अड़चनें न डाली जायँ, इत्यादि इत्यादि। इन सिद्धान्तों को पढ़ने के बाद अगर पत्र-लेखक महोदय चीरा लगवाते हैं, इन्जेक्शन लेते हैं, बवासीर और गठिया जैसी बीमारी में भी दाल खाते हैं, और फिर भी अपने आपको 'प्रकृतिभक्त' बताते हैं, तो इसमें आश्चर्य ही क्या कि वह दुःख भोग रहे हैं। मैंने पत्र के उत्तर में यह निवेदन किया, 'कृपाकर आपही बताइए कि मैं किस तरह आपका दुःख दूर कर सकता हूँ?' आपने जान-बूझ कर अपना कष्ट बढ़ाया है और जो लक्षण ३-४ महीने में चले जाते उन्हें पुष्ट कर साल डेढ साल का मेहमान बना लिया है और कई नये लक्षण भी खड़े कर लिये हैं। कृपाकर अब भी बताइए कि आप उन सिद्धान्तों का पालन करने को तैयार हैं या नहीं। अगर तैयार हैं तो ३ दिन रसाहार करके रहिए, उसके बाद १० से १५ दिन सिर्फ फल खाइए—दिन में तीन बार और एक बार एक ही तरह का फल—शुरू से दस दिनों तक लगातार एनीमा (पानी न गर्म न ठंडा) लीजिए, फलों की अवधि के बाद सुबह-शाम फल और दोपहर में रोटी-तरकारी (सादी पकी) खाकर तीन हफ़्ते और तब मुझसे फिर पूछिए कि आगे क्या करना चाहिए। यह सारी बातें मेरी पुस्तक में आपको मिलेंगी। अगर आप ऊपर के क्रम का पालन करेंगे तो उतने दिनों में ही आपकी तकलीफ़ आधी से ज्यादा दूर हो जायगी। बवासीर और गठिया दोनों हठी रोग हैं, पर लगे रहने से दोनों निर्मूल हो जायँगे। आपने अपने शरीर में जो विषैली औषधियाँ पैसे ख़र्च करके भरी हैं उनके निकलने में भी समय लगेगा। इस धैर्य के साथ अपनी चिकित्सा कीजिए। आप फलों के लिए ग़रीब हो जाते हैं, पर क्या इन्जेक्शन मुफ़्त में ही दिया गया होगा? क्या अमरूद, गाजर, खरबूजा, जामुन, ककड़ी, खीरा, नीबू बहुत महँगे फल हैं?

जब इन महाशय से साक्षात हुआ तो मालूम हुआ कि इन्जेक्शन की दवा और फ़ीस के लिए इन्होंने क़र्ज़ लिया था। यही महाशय फलों के लिए अपनी विवशता प्रकट कर रहे थे।

खेद की बात है कि बीमारी होते ही लोगों का सीधे-सादे प्राकृतिक उपचारों की तरफ़ ध्यान ही नहीं जाता। इससे भी ज्यादा खेद की बात है कि लोग यह जानते ही नहीं कि किस तरह रहने खाने-पीने कसरत और आराम करने से रोग होता ही नहीं। सबसे अधिक खेद की बात यह है कि आज-कल के वातावरण में अस्वाभाविकता ने स्वाभाविकता का रूप ग्रहण कर लिया है और अगर स्वाभाविकता की ओर हमारा ध्यान खींचा जाता है तो हम नाक-भौं सिकोड़ते हैं और सैकड़ों दलीलें पेश करते हैं। यह जानते हुए भी कि हमारे पूर्वज बहुत कम बीमार होते थे, आज भी गाँव वाले हम शहर वालों से कम बीमार होते हैं, पशु-पक्षियों में भी रोगों की वैसी भरमार नहीं है जैसी कि हम मनुष्यों में है हम अपनी समझ में ताला-कुंजी भरे रहते हैं और शारीरिक और मानसिक रोगों की ओर अपने क़दम बढ़ाते जा रहे हैं। समझ में नहीं आता कि हमारी शरीर-सम्पत्ति की रक्षा और वृद्धि कैसे होगी।

स्वास्थ्य रक्षा के सिद्धान्त बहुत ही सरल हैं। शरीर की आवश्यकता से कम खाना हानिकर है। पर यह उतना हानिकर नहीं है, जितनी कि आवश्यता से अधिक खाना है। जो पर्याप्त मात्रा में किसी तरह का व्यायाम नियमित रूप से नित्यप्रति नहीं करता उसे बहुत ही कम खाना चाहिए। व्यायाम के साथ ही साथ आराम भी—रात में अच्छी तरह सोना—नितान्त आवश्यक है। अपने आपको विचारों का केन्द्र न बनाकर दूसरों के—जो कहने के लिए दूसरे पर वास्तव में अपने ही हैं—हित-साधन में लग जाना दिव्य स्वास्थ्य की कुंजी है।

(शेष ८३वें पेज पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन संबंधी मेरे अनुभव

[डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह]

भोजन ही स्वास्थ्य का मूल है। कितना ही सुपच और उपयोगी भोजन हो यदि उसका समय ठीक न हो तो भोजन लाभ के बदले हानिकर हो जाता है। कुछ प्रसिद्ध चिकित्सकों ने इसका समय निर्धारित करने की गलत चेष्टा की है। इस लेख में भोजन का समय निश्चित किया गया है जो पाठकों के लिए बहुत ही उपयोगी है—सं०

क्या खाना चाहिए? क्या नहीं खाना चाहिए? इस विषय को हमारे कितने विद्वान लेखकों ने बहुत ही गम्भीरता पूर्वक लिखा है। अभी हम इस विषय को इस लेख में नहीं लाना चाहते। इस लेख का अभिप्राय भोजन के समय से है।

हम जीवन में बहुत सी गल्तियाँ करते हैं। और एक गल्ती असमय भोजन की भी करते हैं। पहली बात तो यह जानने की है कि भोजन हमको कब करना चाहिए, कितना करना चाहिए और कैसे क्या खाना चाहिए।

शरीर-शास्त्र का यह नियम है कि जिस अंग से काम लिया जाता है वहाँ पर रक्त का संचार अधिक होता है। जब हम भोजन करते हैं तो रक्त का संचार पेट की ओर बड़ी तेजी के साथ होने लगता है। और यदि हम कोई कसरत करते हैं तो रक्त का संचार मांस-पेशियों की ओर होने लगता है। ऐसा देखा गया है कि यदि ऐच्छिक (Voluntary) और अनैच्छिक (involuntary) मांसपेशियाँ दोनों एक साथ काम करती हैं तो ऐच्छिक मांसपेशियों की ओर अनैच्छिक मांस-पेशियों से ज्यादा खून का दौरान होता है पेट और पाचन-यन्त्र की मांसपेशियां अनैच्छिक हैं इसलिए यदि हम खाना खाने के बाद तुरन्त ही काम करने लगते हैं तो जो रक्त पेट की ओर जाना चाहिए था वह पेट की ओर न जाकर मांसपेशियों की ओर जाने लगता है। इसलिए पेट में अन्न बहुत देर तक बिना हज़म हुए रखा रह जाता है। यह आदत यदि काफी दिनों तक रखी जाय तो आगे चलकर मंदाग्नि की शिकायत होती है और यहीं से अनेक बीमारियों की शुरुआत होती है। इस विषय के बड़े-बड़े डाक्टरों के अनेक अनुभव शरीर-शास्त्रों में मिलेंगे। यह तो निर्विवाद सिद्ध है कि दो काम एक साथ नहीं करना चाहिए।

हम जब के० एल० शर्मा पुद्दूकोटा की पुस्तक 'प्रैक्टिकल नेचर क्योर' और श्री जानकीशरण वर्म्मा, इलाहाबाद की पुस्तक 'रोगों की अचूक चिकित्सा' पढ़ते हैं तो तबियत खुश हो जाती है। इनकी भाषा अति ही रोचक है और पुस्तकें भी बड़ी महत्त्व की हैं। सचमुच ये पुस्तकें प्राकृतिक चिकित्सा जगत को बड़ा ही कल्याणकारी सिद्ध हो रही हैं। पर, हम जब सूक्ष्म दृष्टि से देखते हैं तो हम को कुछ त्रुटियां भी मिलती हैं। ऊपर के कहे गये अनुभव के आधार पर डा० के० एल० शर्म्मा ने अपनी पुस्तक प्रैक्टिकल नेचर क्योर में लिखा है—दो काम एक साथ नहीं करना चाहिए। और साथ-साथ यह भी लिखा है कि दिन के काम के खत्म होने के बाद ही मुख्य भोजन किया जाय। (The principal meal of the day should be postponed till the day's work is done, and the worker fully rested. (Vide Practical Nature cure, Page 132, sixth edition.)

डा० शर्म्मा ने डा० डीवी (Dewi) का उदाहरण दिया है। उन्होंने लिखा है कि १२ बजे तक उपवास करना चाहिए (Fast till noon) इसी मत को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री जानकी शरण जी वर्म्मा ने जीवन सखा में किसी पिछले साल समर्थन किया था। अब यह देखना है कि डा० डीवी, डा० शर्मा, और श्री जानकीशरण जी वर्म्मा के सिद्धांत कहाँ तक प्राकृतिक नियमों के आधार पर अवलम्बित हैं।

जल-चिकित्सा के प्रवर्तक और एक अनुभवी प्राकृतिक चिकित्सक जिन्होंने प्रकृति के नियमों को अच्छी तरह अध्ययन किया है लूई कूने साहब ने अपनी पुस्तक 'मुखाकृति-विज्ञान' (Science of Facial Expression) में इस प्रकार लिखा है—"The day is divided into two parts, an animating and tranquillizing period. The period of animation commences with the rising sun, which awakens the whole of nature to renewed activity" दिन को दो हिस्सों में बाँट सकते हैं। पहला हिस्सा—जागृति अवस्था है। इस हिस्से में प्रकृति की सारी चीजों में एक नया जीवन संचारित होता है। चिड़ियाँ चहकती हैं। सारा जगत चहल-पहल से भर जाता है। मनुष्य को इस जागृत अवस्था के साथ चलना चाहिए चाहे वह कितनी ही कोशिश करे पर उसे इस जागृत अवस्था के साथ चलना ही पड़ेगा। सुबह होते ही मनुष्य चार-पाई छोड़कर बाहर मैदान में जाता है और आनन्द का अनुभव प्राप्त करता है।

दूसरा सुसुप्ति अवस्था है। यह दोपहर से शुरू होता है और मनुष्य को इस अवस्था के साथ चलना चाहिए। इस अवस्था में प्रकृति की सारी चीजों में शिथिलता आती जाती है और सूर्य्यास्त के होते होते सभी चीजों में शान्ति आ जाती है। शरीर में स्वभावतः थकावट आ जाती है और आराम करने की इच्छा होती है। इसका असर भोजन प्रणाली पर भी पड़ता है। सुबह भूख अच्छी लगती है और शाम को धीरे-धीरे भूख कमजोर पड़ती जाती है (During the period of animation, therefore, we are excited to activity, the body is strengthened invigorated. The tranquillizing period relaxes, the body becomes fatigued and there is a desire for rest. This extends also to the organs of digestion. In the morning digestion is better than in the afternoon, and towards evening it will become still weaker.)

इस नियम के अनुसार कूने साहब लिखते हैं—दिन का मुख्य भोजन सुबह ही करना चाहिये, या दिन के पहले भाग में। और दोपहर को या दोपहर के बाद हलका भोजन करना चाहिये जिसमें आसानी से हजम हो सके। इससे शक्ति को अपने काम में ला सकते हैं और अनेक बीमारियों से बच सकते हैं। और पुनः शक्ति प्राप्त कर सकते हैं (From this it follows that food should principally be eaten in the morning and early part of the day, and that in the afternoon only small quantities should be consumed. Invalids especially must observe this, for here they have a means of utilising their vitality as far as possible and of restoring it to the normal.)। डा० हौवर्ड हे भी इसी मत के समर्थक हैं। उनका कहना है कि पाचन क्रिया (Digestion) और समीकरण (Assimilation) दो भिन्न क्रियाएं हैं। पाचन क्रिया द्वारा भोजन पच कर भोजन से रस तैयार होता है। और भोजन का शेष भाग फुजला बन कर बाहर निकलने को तैयार हो जाता है। समीकरण से यह मतलब हुआ कि जो रस पच कर तैयार होता है वह यकृत से होकर हृदय में पहुंचता है और यहाँ आकर खून में मिल जाता है। फिर हृदय द्वारा अर्थात् धमनियों द्वारा शरीर के अन्य भागों में पहुंच जाता है। इससे सेल्स (Cells जिससे शरीर बना है) को भोजन मिलता है और ये पुष्ट होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० हे कहते हैं – समीकरण जभी होने लगता है जब पाचन क्रिया का काम खतम होता है। समीकरण शिथिलता के समय जब मनुष्य आराम करता है तभी होता है अर्थात रात को सोते समय। यदि पाचन क्रिया भी रात को सोते समय होती रहे तो समीकरण में दिक्कत होगी। और ऊपर कहे गये शरीर शास्त्र के नियम द्वारा दो में से एक या दोनों कमजोर होंगे। इस कथन से यह सिद्ध हुआ कि मनुष्य का मुख्य भोजन शाम को नहीं होना चाहिए। कारण, पाचन-क्रिया में समय काफी लग जायगा और समीकरण के लिये समय नहीं रहेगा।

जो लोग रात को ठूस-ठूस कर भोजन करते हैं अकसर उन्हीं को रात के पिछले पहर में अजीर्ण होता है और कभी कभी वह हैजे का रूप धारण कर लेता है, अगर रात का भोजन बन्द रखा जाय तो यह रोग ही न हो।

इस नियम को बड़े-बड़े धर्म के प्रवर्तकों ने भी समझा है। खास कर बौद्ध धर्म्म और जैन धर्मावलम्बियों ने, बौद्ध भिक्षुओं का अभी भी यह नियम है कि वे १२ बजे के पहले ही भोजन करते हैं। १२ बजे के बाद कुछ लेते भी हैं तो पेय पदार्थ इसी तरह जैन धर्मावलम्बी भी सूर्यास्त के बाद भोजन नहीं करते हैं।

भोजन पचने में कुछ समय लगता है। भोजन जब पेट में जाता है तभी पेट का रस (Gastric juice) बनता है या बनना चाहिये। यदि पेट का रस भोजन नहीं रहने पर बनता है तो यह बीमारी का लक्षण है, और एसिड डिसपेप्सिया (मंदाग्नि) में यह शिकायत लोग खास कर अनुभव करते हैं। जब तक भोजन पेट में रहता है तब तक तो ज्यादा पित्त के रहने के कारण कोई तकलीफ नहीं मालूम होती है पर जब पेट में भोजन नहीं रहता है तो इसी कारण पेट में दर्द होता है और मिचली मालूम होती है और वह बहुत कष्ट भोगता है। यह देखा गया है कि शाम को भोजन ज्यादा कर लेते हैं तो सुबह पेट में पित्त जमा मिलता है। यह उनको अनुभव होता है जो धौती क्रिया करते हैं। यह योग की क्रिया है जिसके द्वारा पेट की सफाई की जाती है। यह अनेक प्रकार की होती है पर हम जल धौती और वस्त्र धौती की ही चर्चा यहां करते हैं। इस क्रिया से हमें पित्त का अनुभव हो जाता है। जब भोजन ठीक से पच जाता है तो पेट से पित्त नहीं निकलता और निकलना भी नहीं चाहिये। यह अपना अनुभव है। जब भोजन रात में अधिक कर लिया जाता है या देरी से किया जाता है तो प्रायः पेट से पित्त निकलता है। इसका अर्थ यह हुआ कि रात में खाने से या ज्यादा खाने से पाचन-क्रिया ठीक से नहीं होती है। इस अनुभव के आधार पर और शारीरिक नियमों को मद्दे नजर रख कर या पृथ्वी की चाल को ध्यान में रखकर जैसा कि लूई कूने साहब ने बतलाया है यह हर्गिज भी नहीं कहा जा सकता कि शाम का भोजन किसी भी हालत में लाभप्रद है। हाँ, एक बात और शर्म्मा जी बतलाते हैं कि सुबह भूख नहीं लगनी चाहिये और सुबह का भूख लगना अप्राकृतिक है। यह सिर्फ उन्हीं लोगों के लिये कहा जा सकता है जो शाम को खाना ठूँस-ठूँस कर खाते हैं। पर जो प्राकृतिक नियमों के अनुसार रहता है अर्थात् सुबह ही जिसका प्रधान भोजन होता है और शाम को नाम मात्र को होता है वह सुबह अवश्य भूख का अनुभव करेगा। हां, यह कहना ठीक है कि काम और भोजन एक साथ नहीं होना चाहिये। हमारे स्कूल या कालेज या दफ्तर का समय बेवक्त होता है जिसके कारण भोजन और काम में अंतर नहीं मिलता। इसके लिये हमें भोजन का समय बदलन से काम नहीं चलेगा। इससे धीरे-धीरे करके मनुष्य की जीवनी शक्ति कम होगी और कुछ दिनों के बाद आदमी कमजोर और दुर्बल नजर आएँगे। इस नियम का उल्लंघन करने से यह जरूरी बात है कि मनुष्य आगे चल कर मंदाग्नि के शिकार बनेंगे। इन परिस्थितियों में दफ्तर और स्कूल का समय बदलने के लिये बहुत जोरों का आंदोलन करना चाहिये जिससे मनुष्य मात्र का कल्याण हो। पर गलत रास्ते पर जाने से कल्याण के बजाय दुख ही होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्रियाँ और व्यायाम

[श्रीयुत व्रजमोहन मिहिर]

स्त्रियों की शिक्षा के साथ साथ उनके व्यायाम का प्रश्न भी इस समय साधारण चर्चा की चीज हो गया है। विचार-शील लेखक ने इस पहलू पर बड़ी बड़ी गम्भीरता और विवेक से विचार किया है। लेख की उपयोगिता पढ़ कर ही जानी जा सकती है। —सं०

स्त्रियों के लिये व्यायाम आज लोगों को कुछ नई बात मालूम हो रही है आधुनिक समय में लोगों का जीवन एक परिवर्तन से होकर गुजर रहा है। परिवर्तन काल में विचारों का असामंजस्य और जीवन का विशृङ्खल दशा में हो जाना कुछ अनहोनी बात नहीं है। प्राचीन इतिहास का अनुशीलन करने से मालूम होता है कि स्त्रियों की दशा उस समय आज जैसी नहीं थी। उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त थी। साधारणतः स्त्रियाँ विदुषी होती थीं और नीरोग शरीर वाली, स्वस्थ होती थीं। अस्त्र-शस्त्र धारण करना और व्यायाम की प्रथा उनमें और बातों की ही तरह प्रचलित थी। पर इस समय उनके सम्बन्ध में समाज में आज विभिन्न अभिमत पाये जाते हैं।

व्यायाम के सम्बन्ध में एकमत होकर संसार के मनीषी पुरुष भी उनके लिये उन्नति की सामान्य बातें नहीं कह रहे हैं। शिक्षा के सम्बन्ध में कोई अपना मत यह प्रकट करता है कि पाश्चात्य प्रणाली पर शिक्षा क्रम उनके लिये हानिकर है, कोई कहता है आधुनिक सभ्यता के अनुसार ही उनकी शिक्षा का क्रम होना चाहिये। स्त्रियाँ भी अपने सम्बन्ध में एक होकर कुछ नहीं कह रही हैं। किसी को प्राचीन पद्धति, आज भी भली मालूम हो रही है और कोई उस प्रकार के जीवन के नितान्त विरुद्ध हैं।

यह बात तो स्पष्ट सत्य मालूम होती है कि स्त्रियों का समाज में आज वह स्थान नहीं है जो कि प्राचीन भारत में था। पहले भी सभी स्त्रियाँ कुछ असाधारण विदुषी नहीं होती थीं। पर इस बात को वे भली प्रकार जानती थीं कि कौन कौन से गुण स्त्रियों में होने चाहिये जिससे जीवन की जिम्मेदारी को हाथ में लिया जा सके। उन्हें साधारणतः कई प्रकार की शिक्षा भी दी जाती थी जिसमें पढ़ने-लिखने का क्रम, स्वास्थ्य की बातें, कई प्रकार की कलायें आदि शामिल थीं। इन शिक्षाओं के ऊपर उस समय स्त्रियों का समाज में पुरुष के समान ही स्थान था। आधुनिक समय में उन्नति को लक्ष्य करके उनके और पुरुषों के बीच कुछ स्पर्द्धा सी मालूम होती है! स्त्रियाँ अपने मन में यह समझने लगी हैं कि समाज में उनका स्थान पुरुषों की भाँति नहीं है। बाहरी शोर गुल ने उनकी इस इच्छा को और बलवती बना दिया है। सही बात तो इस समय यही मालूम हो रही है कि स्त्रियों को क्या होना चाहिये। यह अभी निश्चित रूप में न पुरुषों द्वारा और न स्त्रियों ही द्वारा कुछ निश्चय हो सका है।

मानसिक विकास और शारीरिक स्वास्थ्य—इन दोनों बातों में जीवन की पूर्णता है। इन दोनों के द्वारा ही स्त्रियों की उन्नति और उनके द्वारा समाज की उन्नति सम्भव है। शरीर और मन दोनों को सम दशा में रहने से जीवन स्वस्थ रहता है और उसकी पूर्णता सम्पादन होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ वर्ष पहले स्त्रियों को व्यायाम करना चाहिये यह सुनकर ही लोग चिढ़ जाया करते थे। सबों के मन में तो आज भी यह बात नहीं आई है कि मानसिक विकास के लिये जैसे गम्भीर विचार, उचित प्रयास और सतत जागरण आवश्यक है वैसे ही शारीरिक स्वास्थ्य के लिये पोषण तत्वों से युक्त मित भोजन और साधारण व्यायाम आवश्यक है। कहीं कहीं से कानों में आज यह आवाज आने लगी है कि नहीं व्यायाम भी जैसे पुरुषों के लिये आवश्यक है वैसे ही स्त्रियों के लिये भी आवश्यक है। यही विषय विचारणीय है। शरीर रचना को देखते हुए मालूम होता है कि उनके लिये कठिन व्यायाम अनावश्यक है।

प्राचीन इतिहास पर गौर करने से हम सुगमता पूर्वक यह जान लेते हैं कि शिकार के समय स्त्रियाँ पुरुषों के साथ जङ्गल को जाती थीं, युद्ध में शामिल होती थीं और कई कठिन अवसरों पर वीरता का कार्य्य करके पुरुषों की सहायता की है। कई अवसरों पर तो उन्होंने स्वयं रण-क्षेत्र में जाकर नेतृत्व ग्रहण किया था। पर यह सब कार्य्य उनके अति व्यायाम पर अवलंबित नहीं थे। इसके अन्दर उनका साहस और मनोयोग हा अधिक कार्य्य करता था। यह तो निर्विवाद सिद्ध है कि पुरुषों की भांति स्त्रियों को भी अपने स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिये व्यायाम के रूप में कुछ शारीरिक परिश्रम करना चाहिये। अलबत्ता प्रश्न यह हो सकता है कि स्त्रियाँ किस प्रकार का व्यायाम करें। चाहे पुरुष हो या स्त्री व्यायाम उतना ही करना चाहिये जिससे उनका स्वास्थ्य सदा ठीक रहे पर साथ ही शरीर की कोमलता भी नष्ट न होने पावे। किसी भी शारीरिक अभ्यास द्वारा मांसपेशियों को गठीला कर के कड़ा बना लेना व्यायाम का उद्देश्य कदापि नहीं हो सकता बल्कि अच्छा व्यायाम तो वह है जिससे शरीर का लोच अधिक से अधिक समय तक कायम रह सके। शरीर में लोच के कायम रहने से किसी अंग में विजातीय द्रव्य एकत्रित नहीं होने पाता व्यायाम का यही उद्देश्य है। अंग में विजातीय द्रव्य के एकत्रित न होने पर सारे शरीर में स्फूर्ति बनी रहती है और वृद्धावस्था शीघ्र आरंभ नहीं होती। स्वस्थ शरीर तो वह है जो जीवन के अन्तिम दिन तक स्वाभाविक रह कर अपना कार्य्य करता रहे। अतः स्वाभाविक प्रश्न यह है कि इस प्रकार का स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये स्त्री को या पुरुष को क्या करना चाहिये। आहार विहार में सचेत रहते हुये सब प्रकार का यदि थोड़ा व्यायाम किया जाय तो स्वस्थ शरीर रखना कोई मुश्किल बात नहीं है। मुख्य उद्देश्य के हेतु व्यायाम भी कई प्रकार का होता है और उनमें भी कुछ व्यायाम केवल पुरुषों के लिये ही विशेष हितकर हैं और कुछ स्त्रियों के लिये। इसलिये व्यायाम के सम्बन्ध में स्त्री और पुरुष दोनों को विशेष सावधान रहने की जरूरत है वर्ना लाभ के स्थान पर उससे हानि अधिक हो सकती है।

अनियमित जीवन होने से आज कल व्यायाम के ऊपर अधिक जोर दिया जा रहा है जोकि परिस्थिति को देखते हुए आवश्यक भी है। अब से कुछ समय पूर्व जब कि यन्त्र का युग नहीं था और लोगों को अपने सब कामों के लिये शारीरिक परिश्रम पर निर्भर करना पड़ता था तो रोज के कामों में ही उनका इतना व्यायाम हो जाता था कि उन्हें अलग से कोई व्यायाम करने की आवश्यकता नहीं होती थी। शरीर रचना के अनुसार पुरुष गृहस्थी का कठिन काम करते थे और स्त्रियां कोमलाङ्गी होने से कुछ कम कठिन काम करती थीं। लेकिन दोनों का काम इस प्रकार का था और ऐसे बँटा था कि दोनों को अपना अपना काम करने में काफी परिश्रम कर लेना पड़ता था। घर का कुल काम करना, गायों को दुहना, घर के खर्च के लिये नित्य दो चार सेर आटा पीस लेना सूत कातना इत्यादि उनका साधारण कार्य था। इन कामों को करते हुए स्त्रियों के सन्मुख कभी यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न नहीं आता था कि अपने काम के अतिरिक्त उन्हें कुछ व्यायाम भी करना चाहिये। आज कल की सभ्यता में जैसा ऊंच नीच का भेदभाव है वैसा पहले कभी नहीं था। सभी स्त्रियों को यह सब काम करने पड़ते थे। आज दिन भी स्त्रियाँ अगर उन कामों को अपना लें तो उनके सामने यह प्रश्न नहीं आ सकता कि वे कौन कौन से व्यायाम करें।

यह तो हुई प्राचीन भारत की बातें किन्तु अब तो हमें स्त्रियों के व्यायाम के सम्बन्ध में आधुनिक परिस्थिति के अनुसार ही कुछ विचार करना है। आजकल का परिवार तीन भागों में विभक्त है। अमीर परिवार, औसत दर्जे का परिवार और गरीब परिवार। आधुनिक सभ्यता का प्रभाव तो इन तीनों परिवारों पर पड़ा है पर गरीब परिवार की स्त्रियों को फिर भी इतना काफी काम कर लेना पड़ता है कि उन्हें किसी और व्यायाम की आवश्यकता नहीं होती। शहर के इस विभाग की स्त्रियों से ग्रामीण स्त्रियों का स्वास्थ्य अच्छा होता है। उन्हें प्रायः अब भी उतना ही काम काज करना पड़ता है जितना कि प्राचीन भारत की स्त्रियों को करना पड़ता था। अपने यहां उत्पन्न की हुई चीजों को बेचने के लिये जैसे कच्चा चना, मटर की छीमी, दही, दूध, कंडा, साग घास इत्यादि उन्हें कई मील पैदल चलना पड़ता है। घर का काम करना पांच सात मील पैदल चलना इतना अधिक काम उनके लिये हो जाता है कि व्यायाम के तौर पर वे कुछ और करें इसकी उन्हें तनिक भी आवश्यकता नहीं होती। उनका भोजन भी शहर की स्त्रियों के भोजन की अपेक्षा कम कीमती होता है आज दिन भी जिस प्रकार उनका जीवन है यदि शहर की स्त्रियां उनका अनुकरण करें तो उन्हें भी किसी प्रकार के व्यायाम की आवश्यकता नहीं पड़ सकती। इस समय लड़कियों के लिये जितने स्कूल हैं उनमें, शारीरिक व्यायाम, वाद्य शिक्षा और गान विद्या का ज्ञान जरूर कराया जाता है। यह लड़कियाँ जब शिक्षा काल समाप्त करके बाहर आयेंगी तो उन्हें व्यायाम के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त कराने की आवश्यकता न रह जायगी। इस समय तो समाज में ऐसी स्त्रियाँ भी मौजूद हैं जिन्हें इस ढङ्ग की बातें कभी नहीं बताई गई हैं और शिक्षित स्त्रियाँ भी। स्त्रियों की दशा तो जो कुछ है सो हई है बहुत से पुरुष भी ऐसे हैं जो स्त्रियों के व्यायाम के पक्ष में नहीं हैं। उनका भी यही कहना है कि व्यायाम स्त्रियों के लिये नहीं है पर इस विचार के स्त्री पुरुषों की संख्या अब कम हो रही है।

जो स्त्रियाँ अपने हाथों घर का सब काम करती हैं। उन्हें और किसी प्रकार के व्यायाम की आवश्यकता नहीं है। घर के कामों में आटा पीसना और घर का सफाई का सब काम आ जाता है। पर बिगड़े हुए समाज में जिनके पास धन काफी है और वे इन कामों को पसन्द नहीं करती उनको अतिरिक्त व्यायाम बहुत ही आवश्यक है।

स्वास्थ्य के विचार से मुझे आवश्यक मालूम हो रहा है कि स्त्रियों के व्यायाम के बारे में कुछ बातें लिखी जायँ। आजकल पुरुष जितने प्रकार के व्यायाम करते हैं और खेल खेलते हैं उतने प्रकार के व्यायाम और खेलों का स्त्रियों को आवश्यकता नहीं है। पुरुषों के बीच आकर स्त्रियों को उनके साथ स्पर्द्धा करने की भी कोई बात नहीं है। उनको अपनी उन्नति अपने ही समाज में देखना है। शारीरिक रचना के हिसाब से स्त्रियाँ पुरुषों से कुछ भिन्न प्रकार की हैं अतएव उनका व्यायाम भी कुछ भिन्न प्रकार का ही होना चाहिये। साधारणतः पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की टांगे कुछ छोटी होती हैं, और कम गठीली भी। उनके अन्दर चर्बी एकत्र करने वाले टिशू अधिक होते हैं, उनके हृदय, और फेफड़े भी पुरुषों की अपेक्षा छोटे छोटे हैं, और उनके रक्त में कम आकसीजन ग्रहण करने वाले जीवाणु होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीरिक रचना के अनुसार पुरुषों की भाँति स्त्रियाँ कठिन व्यायाम करने में समर्थ नहीं होती हैं। उनका चलने का ढंग भी कुछ यन्त्रवत और मन के साथ सम्बन्ध रखने वाला होता है। उनके चलने की गति कुछ सीमित सी है। स्त्रियों के अन्दर पुरुष की अपेक्षा सहन शक्ति अधिक होती है। तैरने की कसरत स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अच्छी कर सकती हैं।

व्यायाम दो प्रकार का होता है। शारीरिक व्यायाम और मानसिक व्यायाम। दोनों में से किसी की अवहेलना नहीं की जा सकती। शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों में हरकत पैदा करने, उसके लोच को स्थायी बनाये रखने में शरीर का व्यायाम होता है। शरीर का जब कोई अंग कड़ा हो जाता है तो उस स्थान से लोच जाता रहता है। लोच के चले जाने से उसमें जड़ता आजाती है और वह अंग किसी भी बीमारी का केन्द्र बन सकता है। इसलिये व्यायाम इस प्रकार का करना चाहिये कि शरीर को मन चाहे ढंग से सब तरफ आसानी के साथ मोड़ा जा सके और वह किसी प्रकार से कड़ा भी न हो जाय। भिन्न भिन्न प्रकार के आसन इसके लिये अच्छे व्यायाम हैं जिनका जिक्र प्रायः जीवन सखा में किया जाता है। सांस की कसरतें मानसिक व्यायाम में आती हैं पर इससे शारीरिक स्वास्थ्य भी अच्छी दशा में रहता है। प्राणायाम का प्राचीन क्रम इस व्यायाम के लिये सब से अच्छा क्रम है। सब प्रकार की कसरत चाहे वे शरीर से सम्बन्ध रखने वाली हों या मन से, अच्छा यही है कि वे खुली हुई हवा में और सूर्य्य प्रकाश के सामने प्रातःकाल आठ बजे के अन्दर करली जायं इससे वायु स्नान और सूर्य्य स्नान भी हो जायगा।

प्राणायाम करने से मन को स्थिर, शान्त और एकाग्र करने में सहायता मिलती है। उचित प्रकार से किया गया प्राणायाम कई प्रकार की व्याधियों को भी हरण करता है। फेफड़े की बीमारी में यह विशेष रूप से हितकर है। प्राणायाम करने से चित्त प्रसन्न होता है।

प्राणायाम के अतिरिक्त हमारा नित्य का कार्य्य ऐसा होना चाहिये कि उसकी कोई प्रतिक्रिया उत्पन्न होकर हमारे मन को उदास उद्विग्न और अशान्त न कर दे। इसके लिये मनुष्य को जागरित रह कर अपने छोटे छोटे कार्य्यों पर पूर्ण ध्यान देना चाहिये। जब हम अपने प्रत्येक कार्य्य पर ध्यान देंगे तो सम्भव है कि उचित प्रयास द्वारा हमसे ऐसा काम न बन पड़े? जिससे कि बाद में पछताना पड़े और उससे चित्त में क्षोभ का उद्रेक हो। स्वस्थ शरीर और प्रसन्न मन द्वारा ही जीवन का सभी और स्वाभाविक कार्य्य सम्पादन होता है। अतः उचित जीवन व्यतीत करने के लिये संयमित आहार, थोड़ा व्यायाम और मन की निराबलम्ब प्रसन्नता आवश्यक है। अतः स्त्रियों को इस प्रकार से मानसिक और हलके शारीरिक व्यायाम की आवश्यकता है।

स्त्रियों को कठिन शारीरिक व्यायाम जैसे दंड बैठक, फुटबाल, कुश्ती और बहुत चलना इत्यादि नहीं करना चाहिये। बल्कि व्यायाम में उनकी यह चेष्टा भी नहीं होनी चाहिये कि वे अद्वितीय निकलें। पहलवान बनना स्त्रियों का जीवन नहीं है। कूदना, दो चार मील प्रातःकाल या सायंकाल खुली हवा में घूमना, बैड मिंटन खेलना, टेनिस, थोड़ा दौड़ना या कूदना इत्यादि उनके लिये स्वाभाविक व्यायाम है। जिन स्त्रियों को क्षय रोग है उन्हें तो बहुत ही हलके ढंग का कोई व्यायाम करना चाहिये। साधारण गहरी सांस उनके लिये लाभदायक होगी।

स्त्रियों के लिये शरीर-विज्ञान और मनो विज्ञान की शिक्षा आवश्यक है। इनके जानने से उन्हें विशेष लाभ होगा क्योंकि स्त्रियाँ जगदम्बा रूपिणी हैं। प्रसन्न मन और स्वस्थ शरीर से वे ऐसी सन्तान प्रसव करेंगी जो संसार के लिये सब प्रकार से मंगलकारी होगी। उनका व्यायाम और रहन-सहन इस उद्देश्यपूर्ति का एक साधन मात्र है। शारीरिक और मानसिक व्यायाम युक्त ऐसा जीवन व्यतीत करने से वे सब प्रकार से प्रसन्न रहेंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्त्व-चिकित्सा का आदि इतिहास

[श्रीयुत गंगा प्रसाद गौड 'नाहर']

[गताङ्क से आगे]

नाहर जी का इसी विषय का पहला लेख जनवरी के अंक में प्रकाशित हो चुका है। यह लेख तत्व चिकित्सा का प्राचीन इतिहास बताता है जो पाठकों को मनोरंजक होगा। लेखक का यह प्रयत्न सफल है। —सं०

हिपोक्रेट्स (Hippocrates) यद्यपि पश्चिमीय संसार का सर्व प्रथम औषधि-चिकित्सक माना जाता है, और कोई-कोई तो उसे ही औषधि-चिकित्सा-प्रणाली का जनक ख़्याल करते हैं। किन्तु औषधियों में विश्वास रखते हुए भी यह व्यक्ति प्राकृतिक नियमों के अनुसार रोगो प्रचार करने का ही पक्षपाती था। और सच पूछिये तो उसे जीवन पर्यन्त प्राकृतिक-पद्धतियों का अनुसरण करते रहने के ही कारण ख्याति मिली थी। इसका जन्म ईसा के जन्म से लगभग ४०० वर्ष पूर्व ग्रीस में हुआ था। हिपोक्रेट्स ही पहला व्यक्ति था जिसने रोग उपशम सङ्कट वा रोग की उभाड़ क्रिया (Law of curativce crisis) का अनुसन्धान किया था, जिसको प्राकृतिक चिकित्सकगण एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, साथ-ही-साथ, नाज़ुक अवस्था समझते हैं। हिपोक्रेट्स एवं उसके अनुयायी चिकित्सकों को इस बात का सम्यक् ज्ञान था कि प्रकृति में ही रोग निवारण करने की शक्ति है, और यह भी कि, नये रोग स्वयं ही शरीर में प्राकृतिक तरीके से उभड़ कर, शरीर के उत्सर्ग मार्गों में से एक या एक से अधिक मार्गों द्वारा, रोग के कारणों (विजातीय द्रव्यों) को बाहर निकाल फेंकने में सफल होते हैं। हिपोक्रेट्स की लिखी पुस्तकों से पता चलता है कि यद्यपि वह और उसके शिष्य, रोग के लक्षणादि अन्य वैद्यक सम्बन्धी बातें भली-भाँति न जानते थे, तो भी उन्हें प्राकृतिक उपचारों द्वारा, रोगों को अच्छा करने में तनिक भी अड़चन न होती थी। इसका एक कारण यह भी था कि वे, रोग के उभाड़ के समय का भविष्य-ज्ञान ठीक-ठीक करना जानते थे, और इस तरह से वे पहले ही से सतर्क हो जाते थे कि किस प्रकार प्राकृतिक युक्तियों का प्रयोग कर वे, रोग के कारणों के दूर करने में प्रकृति को सहायता पहुँचा सकेंगे।

उसी यूनान देश में कभी इस्पार्टन नाम की एक जाति बसी थी, जिनमें ठंडे स्नान क़ानूनी तौर पर जारी थे।

प्राचीन रोमियों में स्नान का बड़ा रिवाज था। रोम के राजे-महाराजे ऐसे सैकड़ों-स्नानागार बनवाये थे जिनमें हज़ारों मनुष्य एक साथ स्नान कर सकते थे। उनके खंडरात रोम और पोम्पियाई में आज भी देखे जा सकते हैं। उन स्नानागारों से ठंडे स्नान, गरम स्नान वाष्प-स्नान, उष्ण वायु-स्नान आदि सभी प्रकार के स्नान किये जाते थे। चिकित्सक इस्तलापेलास और उसका एक शिष्य वान्टोनीन मूसा इन स्नानों के अच्छे जानकार थे। वान्टोनीन मूसा ने क़ैसर आगस्टस का, जो नज़ला रोग से आक्रान्त थे, स्नानों द्वारा इलाज करके बड़ी ख्याति पायी थी जिसके बदले में खुश होकर उक्त क़ैसर ने एक मन्दिर में उसके पूरे क़द की एक प्रतिमा का निर्माण करवायी थी। इसी चिकित्सक ने उस ज़माने के विख्यात कवि होरेस को भी एक बड़ी जटिल बीमारी से मुक्त किया था। प्रसिद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोमन इतिहास लेखक पलाबीनी लिखता है कि रोम में पाँच शताब्दियों तक जल-चिकित्सा की प्रधानता थी। सिलसस तथा अन्य रोमन वैद्यों ने अपनी पुस्तकों में स्नानों का अत्यधिक गुणगान किया है। इटालियन चिकित्सक ततराई ने अठारहवीं शताब्दि के आरम्भ में ज्वर के लिये पानी का इलाज लाभदायक बताया था। उस समय का हकीम अब्राबरनार्ड जल-चिकित्सा का एक अच्छा चिकित्सक हो चुका है, जो सभी रोगों में ठंढे जल का प्रयोग लाभ के साथ दिया करता था।

अरबी वैद्यों द्वारा करूं और सत्ता में कभी ठंढे स्नानों का अत्यधिक प्रचार था। हकीम राज़ी ने लिखा है कि ज्वर की गर्मी कम करने के लिये रोगी को आध घंटा के अन्दर एक या डेढ़ बोतल बर्फ़ का पानी पीना चाहिये।

अमेरिका के शहर लाइन्स में एक डाक्टर बर् नामी हो गया है, जिसने सन् १६७५ ई० में बर्फ़ ओस, तथा जल के औषधि गुणों पर एक पत्र प्रकाशित कराया था, जिसमें इन मसलों पर काफ़ी चर्चा हुई थी। उस पत्र में वह एक जगह पर लिखता है कि इबरानी, पिघली हुई बर्फ़ को पीते थे और हवा में रखकर पानी सर्द किया करते थे। उक्त डाक्टर ने ज्वर के लिये ठंढ़े जल को सर्वोत्तम औषधि कहा है।

चीनियों की एक पुरानी पुस्तक में लिखा है कि एक चीनी चिकित्सक ने एक स्त्री को, जो असह्य वेदना से मछली की भाँति तड़प रही थी, बर्फ़ के पानी के सौ स्नान दिये, और प्रत्येक स्नान के बाद उसे कपड़ों में अच्छी तरह लपेट दिया जाता था। इस तरकीब से वह स्त्री पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गयी।

जापान देश में तो आठ शताब्दियों से सर्द स्नानों का रिवाज जारी है। वहाँ की देहातों में चिकित्सक, रोगियों को स्नान प्रायः देते हैं। लगभग तीन शताब्दी पूर्व, वहाँ के नाकागामी नाम के एक डाक्टर ने ठंढे स्नानों की उपयोगिता पर एक पत्रिका ही निकाल रखी थी, जिसमें विशेष कर इस बात का प्रचार किया जाता था कि पागलपन, अपस्मार, दमा, और बच्चों के रोगों में ठढे स्नानों का प्रयोग लाभ के साथ किया जा सकता है।

इन सब बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राचीन काल में न केवल भारत में ही, बल्कि संसार के कोने-कोने में, प्राकृतिक-चिकित्सा का, किसी-न-किसी रूप में, प्रचार था, और अच्छा प्रचार था। किन्तु हमें अब यह देखना है कि उसके बाद किस प्रकार लोग चिकित्सा की इस उत्तम प्रणाली को एक दम भूल गये। (क्रमशः)

(सर्वाधिकार लेखक के अधीन)

स्वास्थ्य और आसन

लेखक :—डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह।

यह पुस्तक छप रही है और बहुत जल्द प्रकाशित हो रही है।

इस पुस्तक में आसनों द्वारा रोगों से छुटकारा पाने की सरल तरकीबें बताई गई हैं। लग-भग ५० चित्रों से पुस्तक सुसज्जित है। हर एक स्वास्थ्य इच्छुकों को अपने साथ रखना आवश्य है। साथ-साथ आसन चार्ट भी प्रकाशित हो रहा है।

पुस्तक का मूल्य २।)

चार्ट का मूल्य ॥)

जीवन सखा के जो ग्राहक २।) ३० मई तक भेज देंगे उन्हें चार्ट मुफ़्त दिया जायगा।

पता :—मैनेजर जीवन सखा,
लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य-रश्मि-चिकित्सा बनाम प्राकृतिक चिकित्सा

[श्रीकृष्ण शर्मा]

सूर्य-रश्मि-चिकित्सा की ओर लोगों का ध्यान अधिकाधिक आकृष्ट हो रहा है। इसका प्रभाव भी प्रत्यक्ष दिखाई पड़ता है। प्राकृतिक-चिकित्सा के साथ सूर्य-रश्मि-चिकित्सा की तुलना करके इस चिकित्सा की सार्थकता और उपयोगिता सिद्ध करके लेखक ने इसकी प्रामाणिकता सिद्ध की है। लेख विवेक पूर्ण और उपयोगी है—सं०

मुझे उन दिनों रंगों की ही धुन सवार थी; मैं प्रकाश और रंग की ही दुनिया में रहा करता था। रात-दिन रंगों की चर्चा। एक दिन जब संयोग वश प्राकृतिक चिकित्सा के एक लब्ध-प्रतिष्ठ समर्थक से मेरा साक्षात्कार हुआ तो मैंने स्वभावतः उनसे सूर्य-रश्मि-चिकित्सा की चर्चा छेड़ दी। लेकिन उनके मुख से यह सुनकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि प्राकृतिक-चिकित्सा एक सर्वथा भिन्न और पृथक चिकित्सा पद्धति है। उसका प्राकृतिक चिकित्सा से कोई सम्बन्ध नहीं; यह तो जबर्दस्ती एक पच्चर-सा ठोंक दिया है। स्तब्ध रह गया मैं उनकी यह बात सुनकर! फिर भी मेरा जी न माना, मैंने उनसे पूछा, "क्या सूर्य-रश्मि चिकित्सा प्रकृति के सृजनात्मक सिद्धान्त (Constructive Principle) के अनुरूप नहीं है?"

"मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता इसका सिद्धान्त। वे कहते हैं कि गठिया की बीमारी में लाल रंग की बोतल में तैयार किया गया तेल मालिश करने से नसों की जकड़न दूर हो जायगी और वह अच्छा हो जायगा। किन्तु उनके इस कथन को कैसे स्वीकार किया जा सकता है। अगर शरीर में विकार बना हुआ है तो तेल के प्रयोग से ही रोग दूर हो जायगा, यह, कम से कम प्राकृतिक चिकित्सा के अनुयायी स्वीकार नहीं कर सकते।

"गठिया (Rheumatism) में मालिश विशेष लाभदायक है; यह तो प्राकृतिक चिकित्सक भी मानते हैं। रही लाल तेल की बात तो क्या लाल तेल गुणकारी नहीं होता? यह बात दूसरी है कि सिर्फ लाल तेल के ही प्रयोग से रोग दूर हो और अगर हो भी तो रोग को जड़ से दूर करने की समता न रखकर केवल अस्थायी लाभ पहुँचाने वाला ही सिद्ध हो। लेकिन सूर्य-रश्मि-चिकित्सा की परिमिति केवल लाल तेल के प्रयोग तक ही नहीं है इसमें भी शरीर के विकार को बाहर निकाल देने को उपयुक्त साधन विद्यमान हैं। रंगों के प्रयोग से त्वचा, गुर्दा, कोष्ठ आदि से शरीर की मल-विसर्जन क्रिया में प्रभावकारी सहायता प्राप्त होता है।"

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि गठिया एक दुःसाध्य रोग है, उसकी गणना प्रायः जीर्ण रोगों में ही होती है। लेकिन यह देखा गया है कि पुराने से पुराने गठिया-रोगों में भी सूर्य-रश्मि चिकित्सा आश्चर्य-जनक लाभकारी सिद्ध होती है। लेकिन इसका श्रेय केवल लाल तेल को ही नहीं है। लाल तेल के अलावा लाल या नारंगी रंग की रोशनी के प्रयोग से रोगी को स्वेद-स्नान (Sweat Bath) कराया जाता है। इसके द्वारा न केवल पसीने के रूप में शरीर के भीतर जमा हुआ विकार बाहर निकलता है बल्कि इसके प्रयोग से रक्ताभिसरण क्रिया भी तीव्र हो उठती है। रग-रग में खून दौड़ जाता है। और गठिया के कारण जकड़ी हुई नसों तथा जोड़ों में से विकार आसानी के साथ निकल जाता है। ऐसे रोगियों को नारंगी-रंग की बोतल में तैयार किया गया जल पीने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए और लाल तेल मालिश करने के लिए दिया जाता है। इसके अतिरिक्त गुर्दों में हरे-तेल की मालिश करायी जाती है जिससे (Uric Acid) पेशाब के रास्ते अधिक परिमाण में निकलता है। खाने के लिए रोगी को नारंगी का रस विशेष रूप से दिया जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि रोगोपचार के सम्बन्ध में सूर्य रश्मि-चिकित्सा का भी ठीक वही लक्ष्य है जो कि प्राकृतिक-चिकित्सा का होता है। दोनों ही शरीर से मल या विकार को बाहर निकालने का प्रयत्न करते हैं।

अच्छा अब हम प्राकृतिक चिकित्सा और सूर्य-रश्मि चिकित्सा के पारस्परिक सम्बन्ध पर विचार करें और यह देखें कि यह प्रकृति के नियमों के अनुरूप है या नहीं।

जल-चिकित्सा प्राकृतिक चिकित्सा का एक मुख्य अंग है। लेकिन अगर हम इसके तथा सूर्य-रश्मि-चिकित्सा के मूल सिद्धान्तों और साधनों पर विचार करें तो दोनों में बहुत अधिक अंशों में समानता देखने को मिलेगी। आज के प्रायः ६० वर्ष पूर्व जल-चिकित्सा के जनक लुई कुने उद्वेग के सिद्धान्त (Theory of Fermentation) का प्रतिपादन किया। उन्होंने रोग का कारण शरीर में विजातीय द्रव्य का संचय बताया है। लेकिन ये विजातीय द्रव्य ऐसे तत्वों से बने होते हैं जिनमें परिवर्तन या उद्वेग हो सकता है। ऐसी अवस्था में शरीर में कोई बाह्य जैसे ऋतु परिवर्तन आदि—अथवा मानसिक कारण—जैसे उत्तेजना—से यह उद्वेग क्रिया सतेज हो उठती है। यह क्रिया पेडू से आरम्भ होती है और कोई रुकावट होने से कमर की ओर या शरीर के किसी अन्य कमजोर भाग में फैल जाती है। और वह विजातीय द्रव्य की मात्रा तथा जीवन शक्ति के अपनी गति और मार्ग निश्चित करती है। उद्वेग से गरमी पैदा होती है। यह गरमी रक्त में पहुँच कर ज्वर की अवस्था उत्पन्न करती है। इस ताप से शरीर का जो अवयव ग्रसित होता है वहाँ पर प्रदाह उत्पन्न हो जाता है। इस प्रकार सब ज्वर युक्त अथवा प्रदाह युक्त (Febrile and inflammatary conditions) अवस्थाएं इस उद्वेग कारक पदार्थों के रूपान्तरित होने के कारण उत्पन्न होती है।

अब आप सूर्य-रश्मि चिकित्सा के रोग के सिद्धान्त (Theory of disease) पर भी विचार करें। रंग-विशेषज्ञों का यह कहना है कि रोग रंग विशेष के आधिक्य अथवा अभाव के कारण होता है, अर्थात् रंग-सन्तुलन अथवा सामंजस्य के दोष युक्त अथवा अव्यवस्थित हो जाने से ही रोग उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार इस प्रणाली में भी प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली की तरह रोग का कारण बाह्य नहीं वरन् आन्तरिक ही माना गया है। रोग कीटाणुओं के कारण नहीं बल्कि अन्दरूनी खराबी से ही पैदा होता है।

मूल रूप से रंग केवल दो ही हैं—लाल और नीला। लाल का गुण उष्ण (Thermal) और नीले का शीतल (Electric)। पहला उत्तेजक होता है-उष्णता की वृद्धि करता है। नीला शान्ति दायक (Soothing) होता है। और शीतलता पहुँचाता है। पहले को यदि हम मोटे तौर से अम्ल-कारक और दूसरे को क्षार-युक्त कहें तो इस में कोई अत्युक्ति नहीं होगी। यह सभी जानते हैं कि रोग इसी आन्तरिक सन्तुलन अथवा समता के न रह जाने के ही कारण उत्पन्न होता है। अर्थात् अम्लता अथवा क्षारता के अनुपात में व्यतिरेक अथवा न्यूनाधिक्य होने के ही कारण मनुष्य के स्वास्थ्य में परिवर्तन हो जाता है। लेकिन प्रायः सभी रोग अम्लता के आधिक्य के ही कारण उत्पन्न होते हैं, जिसके फलस्वरूप शरीर में इतनी गरमी बढ़ जाती है कि शरीर की प्राण-धारक प्रक्रियाओं (Vital processes) में बाधा पड़ने लगती है। स्वस्थ कोष अपना काम तभी ठीक कर सकते हैं जब कि शरीर का तापमान सामान्य रहे। अन्दर की गरमी बढ़ जाने से कोष्ठों के स्वाभाविक लचीले पन का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुण नष्ट हो जाता है और वे जीवन शक्ति धारण करने की शक्ति खो बैठते हैं। और वे निर्जीव बीज-कोष (Cell) उत्पन्न करने लगते हैं।

शरीर में गरमी होना बहुत आवश्यक है, लेकिन वही गरमी आवश्यकता से अधिक बढ़ जाने पर जीवन के लिये खतरा पैदा हो जाता है। इसी तरह अम्लता (Acidity) भी शरीर के लिए आवश्यक लेकिन वही जब सामान्य अनुपात से अधिक हो जाती है तो रोग का कारण बन जाती है। यही बात उद्वेग-क्रिया के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। इसी प्रकार लाल रंग भी शरीर में उपयुक्त ताप को बनाए रखता है जो शरीर की महत्त्वपूर्ण क्रियाओं के लिए आवश्यक है लेकिन जब उसकी अधिकता होती है तो शरीर में गरमी भी बढ़ जाती है और शरीर की वही दशा हो जाती है जो कि लुई कुने के मतानुसार उद्वेग-क्रिया के बढ़ जाने के फलस्वरूप होती है।

अच्छा, अब हम एक रोग विशेष को लें और उसके सम्बन्ध में इन दोनों चिकित्सा-पद्धतियों के अनुसार रोगोपचार के क्रम का अध्ययन करें।

दृष्टान्त के लिए यहाँ पर हम हैजा को लेंगे। लुई कुने ने इस रोग का निदान तीव्र आन्तरिक ज्वर बताया है। इसके साथ ही साथ यह भी देखा जाता है कि यह रोग विशेषतः उन्हीं को होता है जिनकी पाचन-शक्ति बहुत पहले से कमजोर हो गई रहती है और जिन्हें अकसर कब्ज की भी शिकायत रहा करती है। हैजा होने के पहले रोगी को शरीर में बेचैनी और भारीपन का अनुभव होने लगता है जो विकृत-पदार्थों में उद्वेग आरम्भ होने का परिचायक होता है। विजातीय द्रव्य में जब किसी बाहरी आफत या मौसम की तबदीली ठंडक, भय अथवा मानसिक उत्तेजना आदि से उद्वेग शुरू हो जाता है तब वह अपनी असली जगह (ग्रेड्) की तरफ को बड़े वेग के साथ वापस जाने लगता है, खास कर जब कि त्वचा अपना काम बिलकुल ठीक न कर रही हो। ताप-युक्त उद्वेग की दशा में, चाहे वह हैजा हो, या उससे कम घातक पेचिश हो, एक ऐसी विचित्र क्रिया होती है, जैसी और किसी रोग में उस शक्ल में नहीं देखी जाती भीतरी बुखार की सारी गरमी का जोर केवल हाजमें के अंगों में आजाता है। अतएव शरीर के भीतर अत्यन्त ताप होता है और बाहर ठण्ढ मालूम होती है।

भारतवर्ष के एक प्रमुख सूर्य-रश्मि-चिकित्सक (Chromopath) श्रीज्वालाप्रसादजी ने इसी विषय पर अच्छा प्रकाश डाला है। आप अपनी क्रोमोपैथी नामक पुस्तक में एक जगह लिखते हैं:—Cholera is the sudden increase of Red in the system, and this heat reaches the very source of life, the navel where Prana-Apana are knutted together to sustain life. By extraordinary heat this knot is atonce loosened and both these life currents are no longer controlled by each other and take their own course. The Prana tries to go up and produces vomitting and nausea, and the Apana tries to go down and produces purging. The pulse goes down atonce for the life point has been attacked by the the heat.

अर्थात् हैजे में शरीर के अन्दर एक दम लाल रंग की अधिकता हो जाती है और उसकी गरमी नाभि तक पहुँच जाती है, जो कि प्राण का केन्द्र स्थल है, जहाँ प्राण और अपान वायु की गाँठ जीवन को सुरक्षित रखती है। असाधारण गरमी से यह गाँठ टूट जाती है और ये दोनों प्राण धाराएं एक दूसरे को सम्हाल न सकने के कारण अपना स्वतंत्र मार्ग धारण कर लेती हैं। जब प्राण-वायु की ऊर्ध्व-गति हो जाती है तो वमन मचली पैदा करती है। और अपान-वायु की अधो-गति होने पर वह दस्त लाने लगती है। नाड़ी की गति अनायास मन्द पड़ जाती है क्योंकि प्राण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रोत पर ही गरमी का आघात पहुँचा है। सबल तथा सशक्त व्यक्ति के लिए इस रोग से ग्रसित होने का विशेष भय रहता है; क्योंकि उनके शरीर में लाल रंग स्वभावतः अधिक होता है।"

आपके समक्ष यहाँ पर दो अपनी अपनी प्रणाली के दो विशेषज्ञों के एक ही रोग के सम्बन्ध में अलग-अलग विचार उपस्थित किए गए हैं। हम देखते हैं कि दोनों ने ही इस रोग के जो कारण बताए हैं उनमें समानता है। दोनों ने ही यह स्वीकार किया है कि इस रोग का कारण शरीर के भीतर ताप की अधिकता है यदि लुई कुने इस बढ़ी हुई गरमी या ताप का कारण विजातीय द्रव्य-जनित उद्वेग का होना बताते हैं तो श्री ज्वालाप्रसाद इसका कारण लाल रंग की अधिकता, दोनों ही इस रोग का कारण आन्तरिक मानते हैं, उसे कीटाणु-जन्य नहीं मानते; रोग का मूल स्थान दोनों ही विशेषज्ञों ने पेड़ू को बताया है।

अतः यह स्पष्ट है कि इस रोग की वास्तविक चिकित्सा शरीर में असाधारण रूप से बढ़े हुए उस ताप को शमन करने के उद्देश्य से होनी चाहिए। इसका उपचार जल-चिकित्सा के अन्तर्गत शमनकारी (Alleviating) स्नानों, जैसे कटि-स्नान और मेहन-स्नान, के द्वारा बताया गया है जो उद्वेग-क्रिया का कम करके शरीर के भीतर बढ़ी हुई उष्णता को शान्त करता है। इसी लक्ष्य को सामने रखकर सूर्य-रश्मि चिकित्सा के अन्तर्गत भी रोग के उपचार की विधि बताई गई है। लाल रंग की गरमी को कम करने के लिए उसके विपरीत प्रभाव डालने वाले नीले रंग का प्रयोग किया जाता। नीले रंग का प्रयोग जल, प्रकाश और तेल के रूप में किया जाता है। हल्की नीली बोतल का पानी दस-दस मिनट के अन्तर से रोगी को दिया जाता है। उसी पानी की गीली पट्टी पेड़ू पर रक्खी जाती है और नीला प्रकाश नाभि पर केन्द्रित किया जाता है। इन उपचारों का प्रभाव शीतल स्नानों से किसी कदर कम नहीं होता। रोगी की तृष्णा शान्त हो जाती है. दस्त और वमन धीरे धीरे कम होकर बिलकुल बन्द हो जाते हैं, पेशाब खुलकर होने लगता है और जहाँ शरीर में रंग का सन्तुलन पुनः पूर्वावस्था पर आगया रोगी खतरे से बाहर हो जाता है और उसकी जान बच जाती है।

पथ्य

पथ्य के सम्बन्ध में भी इन दोनों प्रणालियों में कोई विशेष मतभेद नहीं मिलता। लुई कुने ने सादा स्वाभाविक और हलके पदार्थों का प्रयोग बताया है। श्री ज्वालाप्रसाद ने भी उत्तेजक, या उष्ण पदार्थों का निषेध किया है और तरकारी और फलों को उपयोगी बताया है।

वास्तव में अधिकांश तीव्र रोग लाल रंग की अधिकता से होते हैं और लाल रंग की अधिकता साधारणतः बालकों तथा युवकों में ही होती है, इसलिए उन्हें तीव्र रोगों का अधिक भय रहता है। उष्ण देशों में तीव्र व्याधियाँ पाई जाती है क्योंकि वहाँ के निवासियों में ठण्डे देश के निवासियों की अपेक्षा उद्वेग की अधिक सम्भावना रहती है जिसका प्रधान कारण उन देशों के निवासियों के ऊपर पड़नेवाली सूर्य की प्रखर किरणें ही होती है। लुई कुने साहब का भी कहना है कि उष्ण देशों के निवासियों में उद्वेग क्रिया शीघ्रता के साथ और उग्र रूप में होती है। हर प्रकार के ज्वर, दस्त, हैजा, सिर दर्द, प्लेग, चेचक, उन्माद, अनिद्रा इत्यादि लाल रंग की अधिकता और नीले रंग की कमी से पैदा होते हैं। इसीलिये सूर्य-रश्मि-चिकित्सा के एक प्रसिद्ध भारतीय प्रणेता श्री बापू जी टोंगू ने नीले रंग को प्रायः सभी रोगों में लाभकारी बताया है। लाल रंग का आन्तरिक प्रयोग बहुत कम होता है। जो कुछ इस का प्रयोग होता है वह केवल बाह्य उपचार के ही रूप में। प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली के अन्तर्गत तीव्र रोग का उपचार अधिकतर शोधक और शामक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Sedative) होता है। इसी प्रकार तीव्र रोगों में सूर्य-रश्मि चिकित्सा के भी अन्तर्गत शामक उपचारों का विधान किया गया है। जैसे, ज्वर, दर्द, तृषा आदि तीव्र रोगों में नीले रंग का अधिक प्रयोग होता है। लेकिन जीर्ण रोगों में प्राकृतिक चिकित्सा की भाँति सूर्य-रश्मि चिकित्सा में भी उपचार उत्तेजक (Stimulative) होता है। गठिया, दमा, अपच, कब्ज, कुष्ठ आदि रोगों में पीले या नारंगी रंग का उपयोग किया जाता है।

कुष्ठ रोग में सूर्य रश्मि-चिकित्सा तो अद्भुत चमत्कार दिखाती है। इसमें हलके नरंगी या पीले रंग की उपयोगिता विशेष रूप से सिद्ध हो चुकी है। श्री ज्वालाप्रसाद ने पीले रंग का इस रोग में बहुत महत्त्व बताया है। दो या तीन सप्ताह तक पीले रंग का प्रयोग होने पर वह कोष्ठों में संचारित हो उठता है। और इसके फलस्वरूप रोगी को साफ दस्त होने लगते हैं, भूख बढ़ जाती है और शरीर में शुद्ध रक्त काफी मात्रा में तैयार होने लगता है। लुई कुने ने भी इस रोग का कारण पाचन-शक्ति का कमजोर होना बताया है। पीले रंग से पाचन-शक्ति बहुत सुधर जाती है और शरीर में संचित विकार गुदा-मार्ग से बाहर निकलने लगते हैं इसके साथ ही साथ रोगी के पथ्य में भी सुधार किया जाता है।

लेख लम्बा हो रहा है इसलिए अब मैं एक और उदाहरण देकर इसे समाप्त कर दूँगा। सूखी खाँसी, और कुकुर खाँसी (Whooping cough) में कफ फेफड़े में सूख जाता है और वह बहुत कष्टकारक बन जाता है। इस अवस्था में प्राकृतिक-चिकित्सक सीने पर ठण्ढी पट्टी (Chest Pack) का प्रयोग करते हैं जिससे कफ ढीला होकर निकल जाय। यही काम सूर्य-रश्मि चिकित्सा से बड़ी सुविधा के साथ गहरे नीले रंग की बोतल के जल के प्रयोग से हो जाता है।

इस लेख में सूर्य-रश्मि चिकित्सा का प्राकृतिक चिकित्सा और उसके अन्तर्गत विशेष रूप में जल-चिकित्सा का सादृश्य दिखाया गया है। सम्भव है कि कुछ लोग इसे लेखक की कल्पना मात्र समझें। लेकिन मैं उस समय को कल्पना की आँखों स्पष्ट देख रहा हूँ जब जल-चिकित्सा और सूर्य-रश्मि-चिकित्सा दोनों आपस में मिल कर एक नवीन, समुचित, एवं परिपूर्ण प्रणाली का प्रादुर्भाव करेंगी। पाश्चात्य देशों में तो इसका प्रादुर्भाव हो भी चुका है, जो आज 'हाइड्रो-क्रोमोपैथी Hydro-Chromopathy के नाम से विख्यात हो रही है। पानी के फव्वारों में रंगों का समावेश होने से यह विचित्र प्रभाव होता है जो प्रत्यक्ष प्रयोगों के ही द्वारा सिद्ध किया जा सकेगा।

जीवन मधु ! क्या आप जानते हैं ? जीवन मधु !!

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

(१) एक छटांक शहद पानी में मिला कर रोज सवेरे पीने से कब्ज दूर होता है। (२) इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है। (३) शरीर में ताकत आती है। (४) दूध में मिला कर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुंसत्व बढ़ता है। (५) शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है। (६) यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है। ७ शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है। पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये जीवन-मधु का उपयोग कीजिए। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) २॥) सेर। बोतल और पैकिंग अलग ५ सेर से कम शहद बाहर नहीं भेजा जा सकता है। आर्डर भेजते समय कम से कम ५) पेशगी अवश्य भेजें।

मिलने का पता—प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह,
११, लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य का आहार

फल, शाक और दूध

[श्री प्रो० भवानी प्रसाद, स्वाभाविक स्वास्थ्य शास्त्रोपाध्याय, काँगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय]

[प्रोफेसर भवानी प्रसाद जी स्वास्थ्य विद्या के चोटी के विद्वान हैं। आप के विद्वत्ता पूर्ण लेख जीवन सखा में प्रकाशित होते ही रहते हैं। अतः पाठक आप से पूर्ण परिचित हैं। आहार सम्बन्धी यह लेख दूध से सम्बन्धित है और प्राच्य और पाश्चात्य मतों के संयुक्त अध्ययन के फल स्वरूप लिखा गया है जो प्रत्येक पाठक के लिए जानने योग्य है – सं०]

आजकल मनुष्य के आहार के विषय में कई धारणाएँ विद्यमान हैं। अधिकांश मनुष्य तो जिह्वा के स्वाद को ही आहार का निर्णायक वा पथप्रदर्शक मानते हैं, उनकी समझ में जिस पदार्थ में मनुष्य की रुचि हो, वही उसका हितकर स्वास्थ्य-प्रद प्राकृतिक आहार है, उनकी बुद्धि में इस विचार का स्थान नहीं है कि मनुष्य का स्वाद अभ्यास जन्य दोष से कहाँ तक अप्राकृतिक वा विकृत दशा को पहुँच चुका है। इसके अतिरिक्त स्वाद और सौन्दर्य की भावनाएं मनोकल्पित वस्तुएं हैं। जो पदार्थ किसी एक मनुष्य की जिह्वा के लिए स्वादु और सरस है वही किसी अन्य मनुष्य के लिए स्वादरहित वा अरुचिकर हो सकता है। मजनू की दृष्टि में अन्धेरी रात की अन्वर्थ नाम धारिणी काली कलूटी लैला असीम ~~परम~~ सुन्दरी और उसकी परम प्रेयसी थी। मननशील मनुष्य ने तो अपनी मननशीलता के बल पर स्वाद और सौन्दर्य की विविध विलक्षण कल्पनाओं की सृष्टि कर रखी है। उन कल्पनाओं के वर्णन के लिए एक पृथक् निबंध चाहिए। इसलिए यहाँ इस प्रकरणान्तर प्रवेश के दोष से बचना ही अच्छा है। पर इस विषय में विधाता की सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ प्राणी मनुष्य से तो पशु ही अच्छे हैं। वे अपनी सहजबुद्धि से ही आहार के चुनाव की प्रेरणा प्राप्त करते हैं और प्रकृति के प्रकृष्ट नियत पथ से कभी विचलित वा भ्रष्ट नहीं होते हैं। वे स्वाभाविक आहार से ही अपनी जीवन-यात्रा करते हैं। यह दूसरी बात है कि मनुष्य महाराज आहार विषय में उनको भी कुपथ मार्ग गामी बनाते हैं और उनको भी अपने स्वास्थ्य के संहारक मादक आदि द्रव्यों के सेवन का अभ्यासी बना देते हैं।

यह तो जन साधारण की प्रवृत्ति की बात हुई। अब उनसे ऊँचे उठे हुए सुशिक्षितों तथा विचारकों के आहार विषय में विचार विमर्श की कथा सुनिए। द्रव्यों के गुण दोषों को वर्णन करनेवाले वैद्यक और यूनानी हिकमत के पुराने निघण्टुओं और मखजनों में तो आहार द्रव्यों की विवेचना पित्तप्रधान, कफकारक, वातकारी, सर्द, खुश्क और मातदिल के कथन मात्र से पूरी कर दी गई है, परन्तु आधुनिक पाश्चात्य आहार शास्त्रियों ने मानवदेह के वर्धन और पोषण की दृष्टि से आहारद्रव्यों का विश्लेषण किया है। किस आहारद्रव्य में कितना १ मांसपोषक (Protein), क्षारीय २ (Mineral Matter) ३ अल्पाग्निवर्धक (Carbohydrates) (कर्बोज-शर्करा-श्वेतसार) ४ महाग्निवर्धक (Hydrocarbonate) (घी, तेल वसारूप स्नेहद्रव्य) ५ भोज्यौज (Vitamins इत्यादि तत्त्व हैं, इसकी भले प्रकार विवेचना करके मनुष्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के आहार में क्या पदार्थ होने चाहिए, इस बात का निर्णय किया गया है।

यहाँ प्रधान पोषक तत्त्वों का कुछ संक्षिप्त विवरण दिया जाता है—

१ मांसपोषक तत्त्व—यह एक चिपचिपा लुआब (jelly) का पदार्थ होता है और सजीव द्रव्यों से प्राप्त होता है। यह जीवन के लिए बहुत आवश्यक है। इसका उदाहरण अंडे के श्वेतिमा और दूध के फुटक हैं। मांसपोषक तत्त्व वाले पदार्थों में नत्रजन (Netrogen) तत्त्व प्रधान होता है। नत्रजन उन लाखों नवीन कोष्ठकों (cells) के निर्माणार्थ अपेक्षित मुख्य सामग्री है, जो देह की वृद्धिकाल में बनते रहते हैं। वह क्षीयमाण कोष्ठों के सतत नवीकरण के लिए भी अपेक्षित है। मांसपोषक तत्व देह की रचना सामग्री होने के अतिरिक्त दैहिक क्रियाशीलता का भी उत्तेजक है। मांसपोषक तत्व सारे सजीव द्रव्यों में विद्यमान रहता है और इसलिए हमारे आहार में प्रयुक्त समस्त जान्तव और वानस्पतिक पदार्थों में पाया जाता है। हमारे आहार के जान्तव भागों में विद्यमान मांसपोषक तत्व जान्तव पोषक तत्व कहलाता है और वानस्पतिक आहार में वह वानस्पतिक पोषक तत्व के नाम से प्रसिद्ध है। जान्तव मांसपोषक तत्व और वानस्पतिक मांसपोषक तत्व भिन्न-भिन्न होते हैं और मानवदेह का मांसपोषक तत्व इन दोनों से भी भिन्न होता है। ये सारे मांसपोषक तत्व नत्रजनीय अम्ल (Aminoacids) नामक किन्हीं १८ घटकों से मिलकर बने हुए हैं और अपने भिन्न भिन्न संयोगों के अनुसार एक दूसरे से उसी प्रकार भिन्न हैं, जिस प्रकार कि भिन्न भिन्न शब्द अपने भिन्न-भिन्न अक्षरों के संयोग के कारण भेद रखते हैं।

अतः जान्तव और वानस्पतिक मांसतत्व मानवीय मांसपोषक तत्व से भिन्न हैं, इसलिए मनुष्य देह का अङ्ग बनने के लिए मनुष्य के खाए हुए मांसपोषक तत्वों को मानवीय मांसपोषक तत्व के रूप में परिवर्तित होना पड़ता है। कुछ आहार द्रव्यों के मांसपोषक तत्वों में यह परिवर्तन सुगमता से हो जाता है और कुछ में वह सुगमतापूर्वक नहीं हो सकता। सुगमतापूर्वक परिवर्तित मांसपोषक तत्वों को मानवदेह समुचित मांसपोषकतत्व की संज्ञा दी गई है। और सुगमता पूर्वक न परिवर्तित होने वाले मांसपोषक तत्व न्यूनतर समुचित वा असमुचित मांसपोषक तत्व कहलाते हैं।

अब मानवदेह के वर्धनकाल में हमारे आहारों में मांस पोषक तत्व और विशेषतः समुचित मांसपोषक तत्व की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए। समुचित मांसपोषक तत्व वाले आहार द्रव्य दूध, दही, तक्र (मट्ठा), पनीर, अंडे जंतुओं वृक्क और यकृत स्थानीय मांस, मछली, हरितपत्र शाक तथा पालक, सलाद, लेटूस (Lettuce), जलहालों (Watercress), और खट्टा पालक आदि हैं। न्यूनतर समुचित मांसपोषक तत्वीय आहार समग्र गेहूँ का आटा, जई (Oatmeal), जौ, मटर, लोबिया, चना और गाजर, शलजम आदि शाक हैं। असमुचित मांसपोषक तत्व वाले आहार पालिश किए हुए चावल, श्वेत मैदा और मकई और साबूदाना हैं।

इस सब का सारांश यह है कि मांसपोषक तत्व जांतव और वानस्पतिक दो प्रकार के आहारीय पदार्थों से पाये जाते हैं और दूध तथा मांस जांतवक मांसपोषक तत्व समुचित मांसपोषक तत्व श्रेणी के अंतर्गत हैं।

प्रस्तुत लेख में दुग्ध और मांस की मानव आहार के रूप में उपादेयता हमारा मुख्य समालोच्य विषय है। प्राकृतिक वा स्वाभाविक स्वास्थ्यशास्त्र की दृष्टि से मांस तो कदापि मनुष्य का आहार नहीं है। मनुष्य के पेषक (चर्वणक =grinder or molars) दाँतों की संख्या और रूप आमाशय और आँतों की रचना गोरीला शिम्पैंज़ी आदि वनस्पति आहारी अमांसभक्षक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंदरों की जाति से बिलकुल मिलती-जुलती है। मनुष्य की जीभ भी मुलायम और चिकनी होती है और मांस न खानेवाली बंदर जाति की सी है। उसकी उंगलियों और उनके नख भी बंदरों के ही समान हैं। यदि मनुष्य स्वभावतः मांसाहारी होता तो अपने आखेट को सिंह और अन्य मांसाहारी जन्तुओं के समान चीरने फाड़ने के लिए उसके भी पंजे होते। इस विषय के और भी बहुत से प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। वे विस्तार के भय से इस क्षुद्र लेख में यहाँ नहीं लिखे जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रकृति ने मनुष्य को मांसाहारी नहीं बनाया। इसके अतिरिक्त मांसाहार प्रायः समस्त रोगों के कारणीभूत मूत्राम्ल (Uric Acid) की उत्पत्ति का मुख्य उद्गम है। उसी से गठिया, बहुमूत्र, वृक्कप्रदाह (दर्द गुर्दा) आदि महा रोगों का आविर्भाव होता है। अतः स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से भी मांस मनुष्य का आहार नहीं होना चाहिए।

नैतिक दृष्टि से भी "एकस्य क्षणिका प्रीतिरेकः प्राणैर्वियुज्यते" अर्थात् खानेवाले की क्षणभर के लिए जिह्वा के स्वाद की तृप्ति होती है और एक खाए जाने वाले के प्राण चले जाते हैं। यह प्रसिद्ध वाक्य मांसाहार पर पूरा लागू होता है। इसलिए मांस तो कदापि मनुष्य का आहार नहीं है और न मनुष्य अपनी आदिम अवस्था में, जैसा कि बहुत से प्राणिशास्त्रियों और प्रागैतिहासिकों का भ्रम है, मांसाहारी था, प्रत्युत विकास सिद्धान्त के अनुसार वह भी अपनी पूर्वज बंदर जाति के समान फलों और उनकी गिरियों के आहार से ही अपना प्राकृतिक देह-पोषण करता था।

अब दूध और दूध से बने आहार के पदार्थों की बात विचारणीय है। दूध मानवदेह के मांसपोषक आदि तत्वों के विचार से मांसपोषक समुचित आहार की श्रेणी का संम्पूर्ण आहार कहा जा सकता और मनुष्य स्मरणातीत काल से उसका प्रयोग करता चला आ रहा है इसीलिए पुराने और आजकल के भी चिकित्साग्रंथों में उसकी गुण-गाथा मनोहर अतिशयोक्तिपूर्ण शब्दों में गाई गई है। दूध को 'सद्यः शुक्रकरः पयः' तुरंत वीर्योत्पादक कहा गया है और उसको भूलोक का अमृत माना गया है। परन्तु प्राकृतिक वा स्वाभाविक स्वास्थ्यशास्त्रियों का दृष्टिकोण उसके विषय में बहुत भिन्न है। वर्नर मेकफेडन को छोड़कर प्रायः सभी प्राकृतिक चिकित्सा शास्त्री दूध के प्रयोग को स्वास्थ्य के लिए हितकारक नहीं बतलाते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा के कुछ प्रसिद्ध प्रचंड पंडितों, प्रथम प्रसारकों तथा उन्नायकों की, स्वयं उनके अपने ऊपर अनुभव के आधार पर स्थापित कुछ सम्मतियाँ यहां उद्धृत की जाती हैं।

जर्मनी निवासी डाक्टर आर्नाल्ड एहरेट (Dr. Arnold Ehret) ने, जो अमरीका में प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचारक हुए हैं, बतलाया था कि केवल फलाहार में ही यह गुण है कि उससे शरीर में विकार की उत्पत्ति नहीं होती है। उनके शिर के बाल गिर गए थे। किन्तु दो वर्ष के लगातार फलाहार और बीच-बीच के उपवास से उन्होंने अपने सिर के न केवल बाल फिर से उगाए, प्रत्युत पूर्ण रूप से स्वास्थ्य लाभ भी किया। इनका कथन है कि दूध कफकारक (Mucus diet आहार है और उससे नाना रोग उत्पन्न होते हैं। इन्होंने अपने शरीर में चाकू से एक क्षत (घाव) उत्पन्न करके उसके अच्छा होने की अवधि में आहारों का अनुभव किया था और दूध के कफकारक आहार को उक्त क्षत के अच्छा होने में बाधक बतलाया था।

डा० ओटो कार्क (Dr. Otto Corqu) ने इस विषय में जो लिखा है और उनके लेख के आशय को डा० केलॉग ने (Dr. Kallog M. D., LL. D) ने अपने प्रसिद्ध पठनीय ग्रन्थ The Living Temple में दोहराया है, उसका भाव निम्न लिखित है।

गौ का दूध उसके बछड़े के लिए अच्छा आहार हो सकता है, किन्तु मनुष्यों के लिए वह बहुत-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुमोदनीय नहीं हो सकता। बछड़े के आमाशय की रचना बड़ी पेचीदा होती है। वस्तुतः वह चार आमाशयों से मिलकर बना होता है। इस रचना का उद्देश्य स्थूल और भारी पदार्थों, जैसे घास, भूसा और पत्तियों को पचाना है, गौ का दूध इस आमाशय के अनुकूल पड़ता है, क्योंकि बछड़े के आमाशय में पहुंचकर उसकी बड़ी बड़ी कठोर फुटक बन जाती हैं और वह बछड़े के आमाशय में पर्याप्त सुगमता से पच जाती हैं, किन्तु मनुष्य के आमाशय में उनसे बहुधा बहुत से विकार उत्पन्न हो जाते हैं, क्योंकि मनुष्य के आमाशय की रचना बाल्य और वृद्धावस्था में इस प्रकार की होती है कि वह अधिक सुगमता से घुल सकनेवाले पदार्थों को ही पचा सकती है। इस प्रकार मनुष्य के शिशु के लिए प्रकृति द्वारा सृजा हुआ माता का दूध ही उपयोगी है, क्योंकि माता के दूध की फुटक छोटी छोटी और मृदु होती हैं और वे पाचन रसों में शीघ्र घुल-मिल जाती हैं। प्रत्येक वर्ष हजारों शिशु गौ के दूध के अपच के कारण मर जाते हैं और हजारों ही मनुष्यों को, प्रायः आधे के लगभग प्रौढ़ पुरुषों को गौ के दूध से न्यूनाधिक हानि पहुँचती है, क्योंकि यह दुग्ध पित्तप्रकोप, शिरोवेदना, आँतों की क्रिया की मंदता और जीभ पर मैल के जमने को उत्पन्न करता है। इन सब रोगों का कारण आमाशय में दूध के फुटकों की कठोरता ही नहीं होती है किन्तु इनमें से बहुत से रोग पशु के दुग्ध में असंख्य कीटाणुओं के कारण भी होते हैं, जो आमाशय में पहुँचकर वृद्धि को प्राप्त होकर उफान और सड़ायंद उत्पन्न करते हैं और उससे तभी बचाव हो सकता है जब कि दूध देने वाला पशु सर्वथा स्वस्थ हो। दूध के दुहे जाने के ठीक पश्चात् उसमें ९०० प्रति शत कीटाणु होते हैं। एक घण्टा पश्चात् उन कीटाणुओं की संख्या ३१७५० प्रति शत हो जाती है। ९ घंटे के पश्चात् वह १२०००० बढ़ जाती है और २४ घंटे पीछे वह ५६००००० हो जाती है, किन्तु इन कीटाणुओं से बचने के लिये यदि दूध को ६० अंश के ताप पर भी उबाला जाय तो उसकी अण्डश्वेतिमा (Albumin) जम जाती है और आमाशय में उसके फुटक बनने में विलंब लगता है और इसीलिए उसका पाचन भी बहुत विलंब से होता है। उबाले हुए दूध में खटिक (Calcium) की मात्रा घटकर ८० से ६६ मिलीग्राम हो जाती है। १००-११० तापमान पर स्फुर (फासफोरस) नष्ट हो जाता है। १०० तापमान पर उबाले हुए दूध के कीटाणु भी नष्ट नहीं होते हैं किन्तु दूध के स्वास्थ्यप्रद अंश को अनावश्यक हानि अवश्य पहुँच जाती है (Milk and its hygienic Relations, Ganet E. Lane Cloypon, M. D., D. Sc., (Lond.)

डा० एच कारिंगटन (Dr. Karrington) The Natural food of man में लिखते हैं। अतः दुग्ध जन्तुओं से ही प्राप्त होता है—वह भी जान्तव पदार्थ है, इसलिए उसके विषय में भी वही आक्षेप कुछ न मात्रा में उठते हैं, जोकि मांसभक्षण के विषय में हैं।

डा० डब्ल्यू डी० ईवैन्स (Dr. Chas W. D. Evans.) ने अपने ग्रन्थ How to prolong life में गौ के दुग्ध पर इस कारण आक्षेप किया है कि उसके प्रयोग से धमनियों में खटिक की मात्रा बढ़ जाने के समय से पूर्व बुढ़ापा आ जाता है, क्योंकि मानुषी के दुग्ध में खनिज द्रव्य की मात्रा ०.९ है और गौ के दुग्ध में वह १.०७ है। अपनी माता के गौ का दूध पीने वाला बछड़ा बड़ी जल्दी बढ़ता है और उसको अपनी बढ़वार २० वर्षों में पूरी करनी होती है। इस सवेग बढ़वार के लिए खटिक और दूसरे खनिज द्रव्यों की अधिकतर मात्रा अपेक्षित है और वह गौ के दुग्ध में विद्यमान रहती है। अतः मानव-शिशु को गौ के बछड़े से ५ वा ६ गुनी मंद गति से बढ़ना पड़ता है और वह प्रायः २० वा २५ वर्ष की आयु में प्रौढ़ता को पहुँचता है और १०० वा १२० वर्ष में स्वमानव जीवन की अवधि को पूर्ण करता है और इस मंदता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्धन के लिए उसको खनिज द्रव्यों की न्यूनतर मात्रा अपेक्षित है और मानवी माता के दुग्ध में गोदुग्ध की अपेक्षा यह मात्रा न्यूनतर ही होती है, इसलिये संभव है कि माता के दुग्ध से पले हुए बच्चों की अस्थियाँ और पेशियाँ उतनी द्रुत गति से न बढ़ें, जितनी कि गौ के दूध से पले हुए बच्चे की बढ़ती हैं। गौ के दूध से पला हुआ बच्चा आकार में बड़ा होता है और शीघ्र बढ़ कर समय से पूर्व ही मर जाता है। कहा जाता है कि कोई जन्तु प्रौढ़ता को प्राप्त होने में जितनी अवधि लेता है, उससे ६ गुना वह जीवित रह सकता है। इसलिए द्रुतगति से बढ़वार का अर्थ नियत अवधि से पूर्व प्रौढ़ता की प्राप्ति और समय से पूर्व देह-त्याग है (Man's Food Unvealed By M. K. Pandu-raugam) इस लेख का कलेवर और अधिक उद्धरणों की आज्ञा नहीं देता है। इसलिए इतने ही पर बस किया जाता है।

एक ओर दुग्ध को अमृत बतलाने वाले उसके अति प्रशंसकों की पंक्ति खड़ी है और दूसरी ओर उसको विगर्हित करने वालों की भी कमी नहीं है। इस अवस्था में हमको भगवान् बुद्ध की "मध्यम-संपदा" का आश्रय लेकर समन्वय का मध्यमार्ग निकालने के अतिरिक्त कोई अन्य गति नहीं है। जैनों के स्याद्वाद सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक वस्तु के बहुपक्ष होते हैं और उनको विचार वा विमर्ष की दृष्टि से ओझल (तिरोहित) नहीं किया जा सकता। चन्डकौशिकम् की उक्ति "दृष्टं किमापि लोकेऽस्मिन्नानर्दोषं न निर्गुणम्।" के अनुसार इस संसार का कोई भी पदार्थ भी निर्गुण वा निर्दोष नहीं है। दूध में भी गुण और दोष दोनों ही विद्यमान हैं। इसमें संदेह नहीं कि मनुष्य को प्राकृतिक वा स्वाभाविक स्वास्थ्यकर आहार फल और उनकी गिरियाँ ही हैं। जैसा कि ऊपर वर्णित है, मनुष्य अपनी आदिम अवस्था में इन्हीं से निर्वाह करता था।' अन्नों का आहार भी उसका पीछे का संप्राप्त अभ्यास है। स्वास्थ्य को अक्षुण्ण (स्थिर) रखने के लिये आहारों का जो विश्लेषण करके देखा गया है उसकी दृष्टि से उसका क्षारमय आहारों की आवश्यकता अम्लोत्पादक आहारों की अपेक्षा कहीं अधिक है और क्षारों की अनिवार्य आवश्यकता की पूर्ति फलाहार से ही हो सकती है। पत्रमय शाकों से भी इस उद्देश्य की सिद्धि होती है। इसलिए जहाँ तक भी बन पड़े मनुष्य फलाहार और शाकाहार द्वारा अपनी जीवन यात्रा कर सके तो स्वास्थ्य के लिए सर्वोत्तम है। किन्तु यहाँ अर्थ-शास्त्रियों की प्राप्ति और माँग (Supply and Dmaond) का प्रश्न आड़े आता है। अर्थात् फलों और गिरियों की पर्याप्त मांग हो भी—मनुष्यों की वर्तमान आहार प्रवृत्ति बदल कर, उनकी मनोवृत्ति इतनी प्रर्याप्त सुधर जाय कि वे फलों को ही एक मात्र वा अधिकांश अपना आहार बनाने के लिए फलों की बहुत प्रर्याप्त माँग करने भी लग जायं—तो क्या यह संभव है कि भारत में फलोद्यानों की यथेष्ट विद्यमानता की न्यूनता की अवस्था में उसकी प्राप्ति वा पूर्ति हो सके और फल मर्यादित मूल्य में मिलने लगे। जहाँ हमको प्रचार आदि साधनों द्वारा मनुष्यों में फलाहार की प्रवृत्ति को बहुत बढ़ाना होगा, वहाँ साथ ही फलोद्यानों के आरोपण द्वारा फल प्राप्ति को भी बढ़ाना और सुलभ करना होगा। "आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है।" क्या मनुष्य की शर्करा आदि मीठे की असीम माँग ने आदि में सरकंडे मात्र के जंगली रूप में रही हुई, ईख की लखोखा बीघे खेती और शकर बनाने के सहस्रों कारखानों को इतना अधिक नहीं बढ़ा दिया है कि एक लेखक को अमरीका वासियों के अति बढ़े हुए शर्करा के आहार को देखकर यह लिखना पड़ा था कि हम तो "शर्कराहारी शूकर" (Sugarhogs) बन गए हैं। ईश्वर वह दिन लाये जब कि हम शर्कराहारी शूकर के बदले में सात्विक फलाहारी स्वस्थ श्रेष्ठ मानव बन जायँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब रही दुग्ध की बात। मनुष्य स्मरणातीत काल से दुग्ध का सेवन करता चला आ रहा है। वह उसका इतना अभ्यासी बन गया है कि उससे उसको छुड़ाना असंभवप्राय वा अति दुस्तर अवश्य है, किन्तु आजकल निकृष्ट दूध के सेवन की जो दुर्दशा है, उससे बचाने के लिए तो मन में यही भाव बलपूर्वक उदय होता है कि दूध के नाम से बाज़ारों और घोसियों से प्राप्तव्य स्वास्थ्य संहारक सफ़ेद पानी के पान को जनता त्याग ही देवे तो उनकी स्वास्थ्यसंरक्षा की दृष्टि से यही श्रेयस्कर है।

प्राचीन भारत में दूध के विक्रय की प्रथा न थी और "क्षीरविक्रय" महानिन्दित कर्म माना जाता था। घर-घर गोमाताएं विराजती थीं। कोई अभागा घर ही उनसे वंचित रहता था। प्रत्येक नगर के अभ्याश (Suburb) में गोचरभूमियों के वन होते थे। शूरसेन देश की राजधानी विख्यात महानगरी मथुरा के चारों ओर वृन्दावन विद्यमान था गोपाधिप श्रीनन्द के गोकुल के कारण ही मथुरा के आसपास के देश का नाम अन्वर्थ व्रजमंडल (गौओं की निवासभूमि को संस्कृत में व्रज कहते हैं) पड़ गया था। प्राचीन भारत में घी दूध की नदियाँ बहने का जो वर्णन पुराने भारत पर्यटकों ने किया है, वह आलंकारिक भाषा में बिल्कुल ठीक था। सेमेटिक मतावलम्बियों के स्वर्ग (बहिश्त) की दूध की नदियाँ तो लोकोत्तर अदृष्ट की बातें हैं। विशुद्ध दूध और घृत का सेवन करने वाले भारतवासी दूध के सेवन के कुछ ऐसे अभ्यासी बन गए हैं कि उनको दूध के नाम से प्रचलित निकृष्ट से निकृष्ट पेय को पीने में कुछ भी आनाकानी नहीं रही है। उनमें बहुत से महोदय को प्रातःकाल खुलकर शौच आने के लिए रात को सोते समय किसी न किसी रूप में दूध अवश्य पीना चाहिये। शयन समय पृथक दूध पीने की यह प्रथा स्वास्थ्यरक्षा की दृष्टि से अतीव हानिकारक है।

इस सारे लेख का उपसंहार यही है कि मनुष्य स्वभावतः प्राकृतिक रूपेण फलों, उनकी गिरियों और शाकों का आहार करने वाला प्राणी है। उसके आमाशयादि दृढ़ांगों की रचना इस बात को पूर्ण रूप से प्रमाणित कर रही है। सात्विक-सुपच विविध फल (सन्तरे, सेब, अनार आदि) उनकी गिरियाँ (बादाम अखरोट नारियल आदि उसका सर्व श्रेष्ठ तथा स्वास्थ्यावह आहार है शाक (टमाटर आदि) मध्य कोटि के आहार हैं। दुग्ध तथा अन्न उसका संप्राप्त अभ्यास जन्य आहार है। इस समय यह इससे छूटना असंभव सा है। दुग्ध पीना हो तो जंगल में चरने वाली पूर्ण स्वस्थ गौ, बकरी आदि घरेलू पशुओं वा श्रेष्ठ प्रबंध युक्त तथा सत्य व्यवहार वाली डेरियों से प्राप्त करके पीना चाहिए। निकृष्ट स्वास्थ्यसंहारक दूध के नाम से प्रचलित सफ़ेद पानी का सेवन तो तुरंत छोड़ देना चाहिए। उसके स्थान में फलों गिरियों और शाकों के प्राकृतिक सात्विक आहार को प्रबल प्रोत्साहन मिलना चाहिए और उनकी माँग के अनुसार उनके उद्यानों के आरोपण को भी प्रेरणा मिलनी चाहिए। इन उद्यानों में मधुमक्षिकापालन का भी आयोजन और प्रचार किया जाय, तो उससे उत्तम फलों की वृद्धि में सहायता के साथ-साथ विशुद्ध और अहिंसा से प्राप्त मधु (शहद) की प्राप्ति के रूप में संप्रति अति महँगी और दुर्लभ श्वेत विषसमान शक्कर के बदले में प्राकृतिक मिष्ठ प्रदार्थ की प्राप्ति की समस्या भी सुलझ सकती है। परम पिता जनता को सुबुद्धि दे कि वह अपने प्राकृतिक, शुद्धसात्विक और स्वास्थ्यकर आहार को पहचानकर उसकी अभ्यासी बने। तथा पूर्ण स्वस्थ, सबल शरीर और मन को प्राप्त करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्नोत्तर

प्रश्न—यह प्रायः देखा गया है कि सूजाक (Gonorrhoea) के रोगी अनेक प्रकार के उपचार करके थक जाते हैं फिर भी उनको स्थायी लाभ नहीं होता। इलाज करवाने के बाद वह फिर ज्यों का त्यों उभड़ आता है। रोगी जब फिर डाक्टरों की शरण में जाता है तो वे उसे असाध्य कह कर निराश कर देते हैं। क्या यह रोग वास्तव में असाध्य है? क्या इस रोग में प्राकृतिक चिकित्सा से लाभ हो सकता है? किन प्राकृतिक उपचारों से यह समूल नष्ट हो सकता है? क्या इसको भी आप छूत की बीमारी मानते हैं और इसकी उत्पत्ति कीटाणुओं ही से मानते हैं? कृपया इन प्रश्नों का उत्तर देकर कृतज्ञ कीजिये और मुझे आशा है कि आप की सलाह से जन-साधारण को भी लाभ होगा।

चतुर्भुज टोशनीवाल

उत्तर—आप का प्रश्न सुन्दर और गम्भीर है। यह रोग बहुत भयंकर और जटिल है। यह मानव जाति की तीन मूल बीमारियों में से एक है। वे महाव्याधियाँ है दाद-खाज (Psora), सूजाक (Gorrhoea), और गर्मी (Syphilis) इनमें से अधिकांश बीमारियाँ मनुष्य अपने पूर्वजों से परम्परागत लेता चला आया है। एक बात और विचारणीय है कि इनमें से दो मुख्य बीमारियाँ मनुष्य को छोड़ कर अन्य किसी श्रेणी के प्राणी में नहीं पाई जाती।

सूजाक भी शरीर के अंदर तीव्र शुद्धिक्रिया का—भीतर विद्यमान विष का बहिष्कार करना चाहती है और उसी का परिचायक है। अन्य रोगों की तरह यह रोगभी अपना समय लेकर चला जाता है। यह समय प्रदाह (Inflamaton) की पाँच स्वाभाविक अवस्थाओं के अंतरर्गत लगता है जिसके दरमियान जीवन शक्ति शरीर में से दूषित द्रव्य निकाल कर शरीर को स्वच्छ कर देती है। उपरोक्त क्रिया की उपमा सिरके के रासायनिक परिवर्तन से दी जा सकती है। प्रदाह एक तरह का उद्वेग है जो एक निश्चित समय लेकर शांत हो जाता है।

शरीर के अन्दर अगर यह सफाई की क्रिया स्वाभाविक रूप से निर्विघ्नता से हो जाती है तो अन्त में मनुष्य नीरोग हो जाता है। सूजाक भी अगर अपने स्वतंत्र प्राकृतिक चिकित्सा मार्ग पर चलने दिया जाय और प्राकृतिक उपचारों से सफाई के काम में सहायता पहुंचाई जाय तो वह अच्छा हो सकता है। कोई रोग भी असाध्य नहीं है अगर शरीर की जीवनी शक्ति को अपने काम में बाधा न पहुंचा कर और सहायता दी जाय। रोग को दवाओं में दबाने में जीवनी शक्ति कमजोर हो जाती है जिससे शरीर की रोग निवारक शक्ति क्षीण हो जाती है और रोग जड़ पकड़ लेता है।

साधारणतः यह रोग ६ महीने से ९ महीने समय लेता है अगर वह प्राकृति के नियमों के अनुकूल बर्ता गया। इसके उपचार में व्यापक रूप से ऐसे सार्वजनिक विधान (General Treatment) का उपयोग होता है जिससे रक्त शुद्ध हो और विकार त्वचा, गुर्दों, कोष्ठ, फेफड़े आदि के द्वारा निकल जाय। भोजन सुधार, जल-चिकित्सा आदि मुख्य साधन हैं। इस रोग में उपवास भी किया जा सकता है लेकिन बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है, बिना किसी अनुभवी चिकित्सक की सलाह और देख-रेख के उपवास कराना उचित नहीं।

प्रारम्भिक और तीव्र अवस्था में सूजाक साधारणतः बिना किसी कठिनाई के अच्छा हो जाता है। लेकिन पुराना सूजाक कुछ समय लेता है और उस में विशेष सावधानी की भी जरूरत होती है। ख़ास तौर से उस समय जब कि मूत्राशय की नली संकुचित या बन्द सी हो जाती है जिसे डाक्टर अंग्रेजी में Structure of urathra कहते हैं। यह अवस्था बहुत कष्टकारक होती है क्योंकि पेशाब करने में बहुत कठिनाई होती है और बूंद-बूंद गिरती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। ऐसी अवस्था जभी पैदा होती है जब रोग बहुत पुराना हो और तेज दवाओं से दबाया गया हो।

इस बात में जनता को उचित शिक्षा की जरूरत है क्योंकि इसके विषय में बहुत सी भ्रम-पूर्ण धारणाएं प्रचलित हैं। चूंकि यह रोग पोशीद (गुप्त) होता है इसलिये लोग इससे शीघ्र ही मुक्ति चाहते हैं। वे यही चाहते हैं कि दो दिन में अच्छे हो जायं। स्वभावतः वे पेटेंट दवाइयों की ओर झुकते हैं और बहुत तेज और हानिकारक औषधियों का प्रयोग कर अपने रोग को तुरन्त दबा देते हैं। डाक्टर लोग ऐसे रोगों में पारे से तैयार औषधियों का बहुत प्रयोग करते हैं जिनका दुष्परिणाम रोगी के शरीर और मन दोनों पर पड़ता है। पारे के हानिकारक प्रभाव का वर्णन डाक्टर हेनरी लिंडलार ने अपनी पुस्तक (Irisdiagnosis) 'चक्षुनिदान' में किया है।

जब इन दवाओं से रोगकीट तंतुओं और हड्डी में चला जाता है तो रोगी की जीवनी शक्ति बहुत कम होती जाती है और उसका जीवन बहुत दुखमय हो जाता है। ऐसी दशा बहुत दयनीय हो जाती है। जन साधारण को ऐसे धोखे से सजग होना चाहिए। ऐसा इलाज जिससे विष रक्त से तंतु में आजाय और अन्त में स्नायुओं और हड्डियों को नष्ट करने लगे सदैव बचना चाहिए। पहले ही से अगर प्राकृतिक चिकित्सा की जाय तो पूर्ण लाभ हो सकता है रोगी उस भयानक मृत्यु से बच सकता है जो इंच इंच करके गला कर मारती है।

इसे छूत की बीमारी कह सकते हैं क्यों आधुनिक युग के दूषित वातावरण में रहकर हम ने अपना वास्तविक शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य खो दिया है जिसके फलस्वरूप हम शीघ्र ही रोग के शिकार हो जाते हैं। लेकिन यह जरूर है कि बिना अंदरूनी विकार के इसके कीटाणु स्वयं रोग नहीं उत्पन्न कर सकते, हम कीटाणुओं के अस्तित्व से इनकार नहीं करते लेकिन यह अवश्य विश्वास करते हैं कि स्वस्थ शरीर में यह कीटाणु जिन्दा नहीं रह सकते।

प्रश्न—मेरी भांजी जिसकी आयु लगभग ९ या १० वर्ष की है पुराने ज्वर से पीड़ित है। उसको सदैव हरारत रहती है। दो महीने पीछे उसे मलेरिया था ज्वर तो उतर गया लेकिन हरारत नहीं गयी है। चेहरा पीला और सुस्त रहता है। कृपया इसका उपचार बताइये।

उत्तर—आप उसको केवल फल रोटी सब्जी पर रखें। बुखार जब तेज़ हो तो केवल फलों के रस ही पर रखें और केवल हरारत की हालत में रोटी सब्जी ही दें। सुबह शाम मिट्टी की पट्टी पेडू पर दें और एक वक्त एनीमा। उसको दोनों वक्त ५ मिनट तक मेहन स्नान करवाइये और हफ्ते में एक बार पूरा वाष्प स्नान दें। वाष्प स्नान न हो सके तो केले के पत्ते से ढक कर सूर्य स्नान (Sun bath) दे सकते हैं।

प्रश्न—मुझे गत १९४१ साल में पेट में दर्द शुरू हुआ था जो मार्च में शुरू होकर जुलाई माह में होमियोपैथिक दवा से आराम हो गया। फिर १९४२ में पेचिश का रंग लेकर पाखाना ढीला होने लगा। कभी कभी दर्द भी हो जाया करता था जो छः माह तक जारी रहा और आयुर्वेदिक दवा से आराम हुआ। फिर १९४३ के अप्रैल माह से पेट में दर्द शुरू हुआ जो अब चला आरहा है। आयुर्वेदिक एक मरतबे करके छोड़ दिया, बराबर होमियोपैथिक दवा करता आरहा हूँ पर लाभ नहीं हो रहा है। दर्द का कोई ठीक नहीं रहता है कि कब शुरू होता है। पेट के बीच में ढोंढ़ी के ऊपर होता है। मेरा बदन पहले की अपेक्षा दुबला पतला हो गया है तो भी मैं अपनी नौकरी करता आरहा हूँ परिवार के भरण-पोषण के लिए। बराबर घूमने का ही मेरा काम रहता है। मैं धूम्रपान मादक पदार्थ या चाय कभी सेवन नहीं करता हूं। मैं पूर्ण शाकाहारी हूँ। मैं भोजन करने के बाद गर्म जल पीता हूँ। विशेष कर रोटी ही खा लेता हूँ और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलू की तरकारी। मैं अपने रोग से एक तरह से ऊब गया हूँ ऐसा उपाय बतलाइये कि स्वास्थ्य सुधर जाय और रोग भी दूर हो जाय। उपचार करने को जो भी लिखें वह समझा कर लिखें।

गगनदेव प्रसाद श्रीवास्तव, मोतीहारी

आप की आँतों में रोग है। दवा खाने से काम चलना सम्भव नहीं है। दर्द के समय आप पेट पर बोतल में गरम पानी भरकर फेरें। थोड़ा सा खाने का नामक खाकर गरम पानी पीलें। इसको जड़ से दूर करने के लिए आप मठे का कल्प करें। कल्प की विधि यों है—

शुरू में एक दिन सन्तरे के रस पर रहें। दूसरे दिन एनिमा लेकर पेट साफ करें। और उसी दिन एनिमा लेने के दो घंटे बाद से हर आधे घंटे पर ३-३ छटाँक या आध पाव मठा पियें। बीच में दो सन्तरे का रस ले लिया करें। यह मठे का आहार एक महीने चलाइए। सुबह दोपहर शाम को दवा के रूप में नीली बोतल का पानी एक एक छटांक पीजिए। पानी बनाने की विधि इस प्रकार है-- नीले रंग की शीशी में आधे से कुछ ऊपर पानी भर दीजिए मुँह पर डाट लगाकर किसी लकड़ी के पीढ़े या स्टूल पर धूप में रख दें और २ घंटे धूप में पकने दें। शीशी जमीन पर न रखें लकड़ी पर रखें। जब मठे का कल्प तोड़ना हो तो ३ दिन तरकारियों का रस और फल वाली तरकारी दोपहर को खाइए। फिर तीन दिन तरकारी और मौसमी पके फल पर रहिए। बीच में मठा पीते रहिए। इसके बाद रोटी सब्जी पर आ जाइए। और कम से कम आध सेर मठा रोज़ लेते रहिए। कल्प के समय में ४-५ सेर दूध तक का मठा आप पी सकते हैं।

यदि मठे के कब्ज के समय का रहे तो एनिमा लीलिए। एनिमा लेने की विधि बहुत बार जीवन सखा में छापी गई है।

प्रश्न—मेरी बुढ़िया माता जिसकी आयु इस समय लगभग ६४ साल की है। जिसको बराबर जोड़-जोड़ में दर्द करता रहता है सूज भी जाता है। बाहरी दवाओं का प्रयोग बहुत किया परन्तु कोई लाभ न हो सका। उसको युवा अवस्था में गठिया भी हो गया था। पेट में भी वायु का विकार बराबर रहता है। पाखाना भी कभी-कभी गड़बड़ हो जाया करता है। ये भी कोई धूम्रपान या मादक पदार्थ सेवन नहीं करती हैं। ये पूरा शाकाहारी हैं। इसका भी कोई सुन्दर उपचार लिखिए कि जिस में ये भी दर्द से मुक्त हो जायँ। स्वास्थ्य इसका अच्छा है।

गगनदेव प्रसाद, श्रीवास्तव, मोती हारी

आप अपनी माता जी को प्रति दिन एनिमा देकर पेट साफ रखें। दर्द की जगह पर पानी की भाप पहुँचावें। भाप रोज कम से कम एक बार दी जाय। यह पुरानी बीमारी है। देर में जायगी। शुरू में इसमें १५ दिन तक सन्तरे के जूस पर रखिए। इसके बाद दूध कल्प शुरू कराइए। यह दूध का कल्प कम से कम ४० दिन चलाइए। इसके बाद धीरे-धीरे फलों पर आइए इससे बहुत लाभ होगा। परन्तु यदि लाभ कम मालूम पड़े तो काफी लम्बे अरसे तक दूध के कल्प की आवश्यकता पड़ेगी।

म० ना० पा०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब रोगों पर प्राकृतिक कल्प

[श्रीयुत जगदीश जी]

मनुष्य यदि प्रकृति के स्वाभाविक इशारों को समझने की योग्यता प्राप्त कर ले तो सन्देह नहीं कि वह अपने आपको सर्वथा रोग मुक्त रख सकता है। रोग विशेष के आ जाने पर उससे सहज में छुटकारा पा सकता है।

रोगों का कारण बताते हुए-महर्षि कहते हैं—मिथ्या-आहार से ही आमाशय विकृत हो जाता है तभी सभी रोग उत्पन्न होते हैं। तब किसी प्रकार के रोग में अपने चलते हुए खान-पान रहन-सहन के क्रम को बदल देना ही चिकित्सा का मूलमन्त्र है। कल्पना करें एक मट्टी का ढेर जो कि पानी की एक नाली द्वारा आने वाले जल से गीला हो रहा है, उसे सुखाने के लिए चारों ओर आग का प्रबन्ध करना केवल भूल होगी। पहला प्रयत्न होना चाहिए नाली के पानी का बन्द करना उसके बन्द होने पर तो स्वाभाविक ही वह ढेर सूखने लगेगा। और कोई उपाय करें या न करें। ठीक वैसे ही रोग रूपी ढेर को सुखाने के लिए पहले उसके कारण को हटाना होगा तब सफलता आपके हाथ में रक्खी है।

आयुर्वेद ग्रन्थों में बताए कल्पों के भी यही प्रकार है प्रचलित दूषित रहन-सहन से हटकर कुछ शोधक क्रियाएं करते हुए सारयुक्त जीवन दायिनी प्राकृति जड़ी-बूटियों का निश्चित अवधि तक सेवन कराना।

इसी आधार को लेकर आप कल्प की एक ऐसी रूप-रेखा तैयार कर सकते हैं जिसे समय पर आसानी के साथ किया जा सकता है। प्रकृति की ओर से मानवजाति के लिए सभी फल विशेष रोगों को हरने की शक्ति लेकर औषधि रूप में प्रदान किए गए हैं। किसी प्रकार अप्राकृतिक बनावटी औषधों के पचड़े में पड़े बिना ही मनुष्य समय-समय पर मिलनेवाले फलों का उपयोग कर स्वास्थ्य लाभ कर सकता है।

कुछ थोड़ी विधि जान लेने पर तो वह शरीर मन एवं मस्तिष्क (दिमाग़) में ख़ासा परिवर्तन ला सकता है। मेरी बुद्धि ने जो एक दिव्य कल्प की रूप रेखा तैयार की वह यह है—

किसी भी सारयुक्त सामयिक फल का आहार करते हुए २१ दिन या एक मास अवधि को विशेष प्रकार की दिनचर्या बना पूरा कर लेना। जैसे—

१—प्रातःकाल ईश प्रार्थना १५ मिन्ट लगभग तथा किसी पवित्र ग्रन्थ की भावना पढ़ना।

२—उदर शुद्धि के लिए एनिमा या वस्ति क्रिया।

३—छाती शुद्धि के लिए धौति क्रिया-या ब्रह्म-दातुन अथवा केवल नमक मिला गरम जल पी वमन करना।

४—कंधे से ऊपर के अंगों की शुद्धि के लिए नेति क्रिया, या जलनेति—नाक से जल खींच मुंह से निकालते जाना।

५—शरीर के अंग प्रत्यंग को लचीला दृढ़ एवं रोग रहित करने के लिए—सर्पासन, शलभासन, सर्वाङ्गासन, मत्स्यासन, पश्चिमोत्तानासनादि हठ-योग के आसनों का प्रातःसायं अभ्यास।

६—अग्नि प्रज्वलित कर रोगों को भस्म करने के निमित्त, तथा फेफेड़ा, छाती को बलशाली बनाने के लिए एवं शरीर को हल्का स्फूर्ति युक्त प्राण शक्ति से भरपूर करने के लिए प्रातः सायं भस्त्रिका प्राणायाम।

७—सायंकाल पुनः ईशध्यान प्रार्थना। दिन में उत्तम ग्रन्थों का स्वाध्याय वा अपने प्रिय मन्त्र का यथाशक्ति जाप।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस इन्हीं सात नियमों में मानव जीवन की पूर्णता भरी पड़ी है।

जैसे कल्पना करें कि आज कल संतरे का आहार करते हुए उक्त नियमानुसार कुछ समय बिता देना, शरीर मन दिमाग़ का कल्प कर लेना है।

सरल विषय है—इस प्रकार का हल्का आहार तो शरीर के पाचकादि मुख्य यन्त्रों को विश्राम देगा, एनिमा वस्ति-धौति नेति धोकर साफ़ करने का काम करेंगे। आसन उन्हें दृढ़ शक्ति शाली बनावेंगे प्राणायाम जीवन का सञ्चार करेगा।

मन्त्र जप वा ईश प्रार्थना से मानसिक शक्ति जागृत होगी उसका विकास होगा—कूपमण्डूकत्व दूर होगा-वसुधैव कुटम्बकम् सारा विश्व मेरा कुटुम्ब है का भाव उत्पन्न होगा।

इस प्रकार तीनों प्रकार की शुद्धि एवं उन्नति अनिवार्य है। शरीर मन संबन्धी सभी रोग दूर हो सकेंगे जो लोग धौति, नेति, प्राणायाम से परिचित न हों वे अन्य नियमों का यथा सम्भव पालन कर काफ़ी लाभ उठा सकते हैं।

यह फलों द्वारा होनेवाले प्राकृतिक कल्प की सामान्य रूप-रेखा है, फलों का विशेष उपयोग किन किन फलों में कौन कौन रोग नष्ट करने की शक्ति है, उसकी सेवन विधि, ये विशेष रूप हैं जो समय पर बताए जा सकते हैं। जैसे आगे खरबूजे की फसल आनेवाली है सस्ता फल है मीठे खरबूजे के सेवन से अनेक लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं। इस प्रकार मनुष्य फलों के सहारे रोग रहित हो सर्वाङ्गपूर्ण जीवन प्राप्त कर सकता है।

[पृष्ठ ८८ वें पेज से आगे]

रोग होते ही उपवास करना और शरीर को आराम देना न सिर्फ़ रोग को दूर करने का बल्कि शरीर को नये सिरे से सबल बनाने का श्रेष्ठ उपाय है। यह सिद्धान्त उतने ही पुराने हैं जितना कि अपना बुड्ढा हिमालय। यह उतने ही सरल भी हैं जितनी कि संसार की कोई भी सरल से सरल बात। पर, पाठकगण, कृपाकर आप ही बताइए कि जिस सरलता को हमने कठिन बना रखा है वह फिर से क्योंकर सरल होगी।

स्वास्थ्य के अर्थ सिर्फ़ यही नहीं है कि हम रोगों से बँचे रहें। स्वास्थ्य के अर्थ हैं शरीर और मस्तिष्क की पूरी पूरी शक्ति प्राप्त करना, भाव और विचार का सुन्दर होना और साथ ही साथ अलौकिक उत्साह, अदम्य साहस और उच्च कोटि की कार्य कुशलता। स्वास्थ्य के अर्थ हैं सजीला गठा हुआ शरीर, चमकता चेहरा, ज्योति से भरी आँखें, चमचमाते दाँत, स्वाभाविक मुसकान से खिले होंठ, लचीले जोड़, फुर्तीली चाल और पैनी छुरी की तरह तेज़ विचारों की धारा स्वास्थ्य का अर्थ है सभी तरह सुखमय जीवन। प्रिय पाठक महोदय कृपाकर बताइए कि क्या आप भी इस सुंदर स्वास्थ्य के रुचारु चित्र से आकर्षित होते हैं, क्या आप भी अपने शरीर को योग्यता की ऊँची से ऊँची चोटी पर पहुँचा कर दूसरों के लिए नमूना बनना चाहते हैं, क्या आप भी यह समझते हैं कि आदर्श स्वास्थ्य की प्राप्ति पर ही लोक और परलोक संबन्धी सफलताएँ निर्भर हैं? अगर आप भी ऐसा समझते हैं तो आइए हम-आप एक बार फिर से नई प्रतिज्ञाएँ करें और उनके पालन करने में दत्तचित्त हो जायँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीर्य रक्षा ही जीवन है

लेखक—श्रीयुत शशि

न तपस्तप इत्याहु ब्रह्मचर्य्यं तपोत्तमम्।
ऊर्ध्वरेता भवेद् यस्तु सदेवो न तु मानुषः। ११

भगवान् शंकर कहते है ब्रह्मचर्य अर्थात् वीर्य धारण यह उत्कृष्ट तप है इससे बढ़कर तपश्चर्या तीनों लोकों में दूसरी कोई भी नहीं हो सकती। ऊर्ध्वरेता पुरुष अर्थात् अखण्ड वीर्य का धारण करने वाला पुरुष इस लोक में मनुष्य के रूप में साक्षात् देवता है। ब्रह्मचर्य ही यज्ञ और इष्ट रूप है जिससे मनुष्य आत्मा को प्राप्त होता है। योग शास्त्र का सिद्धान्त है कि मन, वायु और वीर्य तीनों एक सम्बन्ध से युक्त है इनमें एक के वशीभूत होने से शेष दोनों आप ही वश में हो जाते हैं। जिसका वीर्य वशीभूत हो जाता उसका मन भी वश में हो जाता है।

ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभं

ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा से परम शक्ति की प्राप्ति होती है। ब्रह्मचर्य के द्वारा दैवी शक्ती प्राप्त होने का ही फल है। संसार में जो बड़े बड़े कर्मवीर धर्मवीर अपनी शक्ती प्रताप से अलौकिक कार्य कर गये और करते हैं। अब यह देखना है कि यह कहां रहता है और कैसे बनता जो इसकी इतनी महिमा गाई जाती है।

मनुष्य जो कुछ भोजन करता है वह प्रथम मुख द्वारा पेट में आकर पचने लगता है और उसका रस बनता है उस रस का पांच दिन और ६ घड़ी तक पाचन होकर उससे रक्त पैदा होता है; रक्त का भी इतने ही समय में पाचन होकर उससे मांस बनता है। मांस की यह क्रिया बिलकुल भी बन्द नहीं होती, बल्कि यह मशीन हमेशा काम करती है, एक को पचाकर दूसरा और दूसरे को पचाकर तीसरा और इसी तरह इससे सार पैदा होता है और प्रत्येक क्रिया में फिजूल चीज मल, मूत्र और इन सब द्वारों के जरिए निकलते रहते हैं। इसी तरह पांच दिन के बाद मेदा से अस्थि और अस्थि से मज्जा और इससे आखिरी सारवीर्य बनता है और यह आगे पाया जा नहीं सकता, यह वीर्य कोई खास जगत पर नहीं रहता, यह शास्त्रों का सिद्धान्त है कि यह सम्पूर्ण शरीर में निवास करता है और दूध में मक्खन की भाँति विद्यमान है, यह वैज्ञानिकों ने निश्चय किया है कि वे ४० सेर खूराक से एक सेर खून और एक सेर खून से २ तोले वीर्य चालीस दिन में बन कर शरीर में तेज दिखाता है।

प्रकृति के तीन गुण है उनके सम रहने से शरीर और मन की स्वास्थ्य रक्षा होती है इन तीनों गुणों के अनुसार शरीर में पित्त, वायु और कफ की समता से शरीर निरोग और अन्तःकरण में भी शान्ति बनी रहती है। वीर्य के साथ वायु का सम्बन्ध होने से वीर्य की स्थिरता से वायु भी शान्त रहता है अन्तःकरण के शान्त रहने से मनुष्य परम सुखी और आनन्दमय रहता है इससे सिद्ध हुआ कि वीर्य रक्षा न करनेवाला किसी भी साधन में सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता।

शरीर के भीतर मनोवह नाम की एक नाड़ी है जो मनुष्य के चित्त में कामभाव पैदा होते ही दूध को मथकर मक्खन निकालने की तरह शरीर और रक्त को मथकर वीर्य को निकालती है, मनोवहा नाड़ी के साथ शरीर की सब नाड़ियों का सम्बन्ध है इसलिये शुक्रनाश के समय शरीर की सब नाडियां कांप उठती हैं।

वीर्य नाश से मनुष्य की मृत्यु और वीर्य धारण से मनुष्य जीवन है। शरीर के समस्त यन्त्रों में से स्नायु, [illegible] को कठिन आघात पहुँचता है, काम का तुच्छ सुख करते इन्द्रियों की स्नायुओं को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंचलता से होता है, परन्तु बार बार चंचल होने से नसें दुर्बल हो जाती हैं और साथ ही शरीर के सब स्नायुओं में आघात लगने से वे सब भी दुर्बल हो जाते हैं। फल यह होता है कि उनके वीर्य धारण करने की शक्ति नष्ट हो जाती है, जिससे सामान्य काम संकल्प या चाञ्चल्य से ही वीर्य नष्ट होने लगता है और धातु दौर्बल्य, प्रमेह, स्वप्नमेह, मधुमेह आदि कठिन कठिन रोग हो जाते हैं शरीर के स्नायुओं पर अधिक धक्का लगने से मिर्गी और गठिया आदि कितने भीषण रोग हो जाते हैं।

दूसरी बात यह है कि प्राणवायु के साथ अपान वायु का और अपान वायु के साथ वीर्य का सम्बन्ध रहने से अपान वायु के खराब होने से वायु यन्त्र सम्बन्धी सब रोग हो जाते हैं जैसे समय पर शौच न आना, अधिक दस्त आना, दस्त बन्द होना, पेट में आंव होना आदि। जिस उष्णता के रहने से पेट में अन्न पचता है, वीर्य नाश से वह उष्णता जाती रहती है जिससे पित्त प्रकृति नष्ट होकर कफ प्रकृति होती है और पित्त दुर्बल होने से अजीर्ण होता है।

तीसरे वीर्य नाश के समय हृदय को बहुत धक्का पहुंचता है क्योंकि हृदय ही रक्त का मूलस्थान है जितनी बार वीर्य नष्ट होगा उतना ही वीर्य कमजोर होगा उतनी ही बार दुर्बल रक्त पुष्ट करने के लिये हृदय यन्त्र पर चोट लगेगी क्षय अथवा यक्ष्मा का होना अनिवार्य हो जाता है।

चौथी बात यह कि वीर्य नाश से मस्तिष्क को बहुत धक्का लगता है शरीर का सर्वोत्तम अंग यही है और मस्तिष्क ही समस्त स्नायुओं का भी केन्द्र स्थान है इसलिये वीर्य नाश से मस्तिष्क भी दुर्बल हो जाता है जिससे स्मृति, बुद्धि, प्रतिभा सब नष्ट हो जाती है, प्रकृति क्रोधी, रूखी, तथा भीरू हो जाती है आंख तथा अन्य इन्द्रियां भी दुर्बल पड़ जाती है वीर्य ही शरीर का राजा है इसे संभाल कर बड़ी सावधानी रखना चाहिए।

[८७ पृष्ट से आगे]

ही सीधा कुठाराघात करता है। और इसमें खर्च जो कुछ भी है वह फलों का, मिट्टी की पट्टी और ठण्डा जल बस यही दो दवा हैं जिन्हें प्रकृति ने सर्वत्र ही सुलभ बनाया है। और इसके चिकित्सक भी मानवता के कल्याण से प्रेरित हो कर ही व्याकुल से होकर जहाँ खबर पाते हैं पहुँच कर यथा शक्ति उद्योग करते हैं। दया और सहानुभूति ही है इसकी नीति न कि द्रव्योपार्जन।

पर लोग मुझसे पूछ सकते हैं कि तुम्हारा यह सब ज्ञान कहाँ चला गया था? जानते तो सब हो पर—?। मैं लज्जानत मुख से सिर्फ एक उत्तर दे सकता हूँ—'नियति से पूछो। जब कुछ होना होता है तो ऐसा ही होता है अंग्रेज़ी में एक प्रसिद्ध कहावत है—'Live and learn.'*

* इन तीन शब्दों के ज़रा से वाक्य का ठीक अनुवाद मेरे लिये साध्य नहीं है।

[८८ पृष्ट से आगे]

शकरकन्द आदि का भोग लगाया जाता है तब तो रही सही जीवन शक्ति का ही अपमान किया जाता है और नीरोगता के बदले रोग को निमंत्रण दिया जाता है।

बसन्त सुखमय है सुख और आनन्द और नव जीवन का ही सन्देश सुनाने वह पदार्पण करता है हमको अपनी जड़ता त्यागकर उसके सन्देश का आशय समझकर अपने जीवन को सुखमय बनाना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेचक या 'महारानी'

[श्री गणेश प्रसाद द्विवेदी, एम० ए०, एल-एल० बी०]

अगर मुझसे अब कोई पूछे कि दुनिया में सब से ख़ौफ़नाक बीमारी कौन सी है तो मैं तुरत कह दूँगा चेचक या 'महारानी'। कैसे मनुष्य इसके भयानक कष्ट, भीषण गर्मी, असह्य वेदना को बर्दाश्त करता है यह वर्णनातीत है। लोग कहते हैं इसका कोई इलाज नहीं। ठीक है। और अगर कोई इलाज इसमें कुछ काम कर सकता तो वह है प्राकृतिक चिकित्सा यानी पानी, भाप वगैरह का इलाज। इसका मुझे पिछले महीने में व्यक्तिगत अनुभव हो गया। लोग आमतौर से इस महामारी को एक धार्मिक रूप देते हैं। और दाने निकलते ही कहने लगते हैं, महारानी ने कृपा की है'। और फिर तरह-तरह उपचार के पूजा, पाठ यंत्र मंत्र, टोटके, धार, दँहेड़ी, माली, सेवकिया, बस यही होता है। हमने भी यही किया, आंख मूद कर, और मेरा सबसे छोटा, सब से प्यारा डेढ़ बरस का बच्चा इसी मूर्खता में बलिदान हो गया। मैं अपनी इसी मूर्खता की कहानी इन पंक्तियों में कहना चाहता हूँ। उद्देश्य है और लोगों को सतर्क कर देना। हिन्दुस्तान अब भी अंधविश्वास और दकियानूसी संस्कारों की खान है। मुझे अपने ही को 'पढ़ा लिखा' आदमी कहने में लज्जा बोध होता है। मैं कैसे इस चक्कर में पड़ गया यह आश्चर्य है। पर पड़ तो गया ही, और कैसे सो सुनिए--

उस दिन दफ़्तर से लौटा तो सीधे बच्चे के कमरे में घुस रहा था कि बड़ी लड़की ने रोक दिया। बोली, उस कमरे में जाइये, अभी यहाँ न आइये, खूकू को महारानी निकल आई हैं। हम लोग उस बच्चे को खूकू' कहते थे, अच्छा नाम था विजय कुमार। खैर मैं दूसरे कमरे में चला गया। थोड़ी देर बाद, कपड़े बदले, हाथ पैर धो शुद्ध हो उस कमरे में गया। इसके पहले दो दिन उसे बुखार था, जोरों का, १०४,१०५। उन्होंने कहा, कोई बात नहीं, अब तो महारानी आ ही गई हैं, अब जबतक पूजा न हो जाय तबतक 'नियम' से रहना चाहिये। नियम माने जबतक महारानी विदा न हो जायँ तबतक छौंक बघार बंद, कड़ाही चढ़नी बन्द, मसाले बन्द, आना जाना बन्द, दाढ़ी हजामत, तेल, साबुन, धुले कपड़े पहनना, पान खाना वगैरह सब बन्द। खैर यह सब तो हुआ। कलस स्थापित हुआ, 'माली' आया। श्रीमती जी ने कहा, हमने कभी माली नहीं बुलवाया, हमारे यहाँ 'सहता' नहीं। पर खैर अब तो वह आ ही पड़ा था उसे वापस कर देने से कहीं महारानी नाराज हो जायँ तो और भी आफत। ये माली, शीतला के पूजक होते हैं, डाली लगाते हैं। खैर तो महादेव माली ने दोनों वक्त आना शुरू किया। उसने यह भी कह दिया कि कोई घबराने का काम नहीं है, सब ठीक हो जायगा, इसमें कोई दवा नहीं होती। खाने के लिये उसने कहा कि जो महारानी माँगे से दीजिए, रोटी भात, मिठाई, बिस्कुट, जो उनकी इच्छा हो।

तीन दिन ही चला। चौथे दिन से लड़के की हालत खराब हो चली। दाने सब भर गये, आँख बन्द, कफ सूख गया, बुखार १०६. माली ने संतरा या नीबू का पानी भी मना कर दिया। मैं एक वैद्य को भी बुला लाया। उन्होंने भी कहा, सब बहुत अच्छा है, कोई दवा मत दीजिये। मेरी भी मति कुछ ऐसी मारी गई थी कि सब के पास तो गया पर मेरे परम मित्र, देश प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक तथा 'जीवन सखा' के संपादक बाबू बालेश्वर प्रसाद जी को खबर न दी। इसका एक मात्र कारण यही हो सकता है कि वह आते ही 'स्टीम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाथ' हिपबाथ, एनीमा वगैरह शुरू करा देते और माली वाली को धता बताते। पर इसमें माली शायद अपना अपमान समझ कर महारानी को बिगाड़ देता। क्योंकि वे महारानी के प्रतिनिधि माने जाते हैं और इनको रुष्ट करना महारानी को ही रुष्ट करना था। बस यही हमारा काल हो गया। वह अबोध शिशु देखते देखते हमारी आँखों के सामने से निकल गया और हम बस देखते ही रहे। क्योंकि यह तो बड़ी भयानक परिस्थिति है। बिलबिला कर बच्चा दम तोड़ता जा रहा है और हम कुछ कर नहीं सकते। यह विज्ञान का युग है। चिकित्सा के अनेक मत और पथ प्रचलित हैं। और प्राकृतिक चिकित्सा का मैं स्वयं विश्वासी। घर के सब लड़के मेरी स्त्री और मैं स्वयं इस पद्धति से कई बार कठिन बीमारियों से छुटकारा पा चुका हूँ। मुझे अपने और अपने परिवार के स्वास्थ्य पर गर्व है। हम लोग कभी कोई दवा नहीं खाते। पर मेरे सब दावे और अनुभव पर मानों किसी ने पर्दा डाल दिया था। 'नियति का विधान' इसी को कहते हैं। (Fatalism) फैटलिज्म यही है।

अस्तु वह बालक हम लोगों को अथाह दुख समुद्र में डाल चल बसा, उसके जाने के तीन दिन बाद मेरे शेष तीनों बच्चों को भी बुखार आ गया। २० फरवरी ४४ को वह गया और २३ से २६ तक के अन्दर मुझे और मेरे ज्येष्ठ पुत्र को छोड़ शेष सब को बुखार और दाने निकल आये। यह आपत्ति का पहाड़ मानों फट पड़ा। मेरी गृहिणी को भी दाने निकल आये। पर मेरा हृदय अब काफी कठिन हो चुका था। बालेश्वर बाबू की अनुपस्थिति में उनके सहयोगी श्री व्रजबिहारी दीक्षित को लाया। आप एक यशस्वी और होनहार प्राकृतिक चिकित्सक हैं। तुरत सबको स्टीम बाथ और एनीमा द्वारा पेट की सफाई और संतरे के रस पर रखना शुरू हुआ। संतरे के आलावा बेदाना अनार, किसमिस का रस दूध फाड़कर बस यही दिया जा रहा है। आज करीब १५ दिन से यह क्रम चल रहा है। आठ रुपया १० रुपया रोज का फल लग रहा है पर कोई बात नहीं। दोनों लड़कियाँ करीब करीब अच्छी हो चुकी हैं। लड़का भी अच्छा हो रहा है। तीन दिन बाद बालेश्वर बाबू भी आये और नित्यप्रति सब व्यवस्था स्वयं देख जाते हैं। सब को दो-दो बार फुल स्टीम (भाप) दी गई और रोज दो दो हिप बाथ दो सिट्ज बाथ दे रहे हैं। बड़ी लड़की को खांसी भी थी, और गला सूख जाता था, अचेत पड़ी रहती थी। ब्रांकोनिमोनिया के पूरे लक्षण थे। पर स्टीम बाथ से ये उपसर्ग दूर हो गये और सब दाने साफ बाहर निकल आये। लड़के को संतरे के रस से चिढ़ है, उबाले हुये किसमिस के रस को वह महुए की शराब बतलाता है। सिर्फ पके हुये दूध का पानी ही ज्यादातर लेता है। इसी से उसे देर लग रही है।

फलों का रस ही अमृत तुल्य दवा है इस पद्धति में। क्योंकि इस पद्धति का मौलिक उद्देश्य है शरीर में अर्से से एकत्रित विजातीय द्रव्य या दूषित मल को बाहर निकाल फेंकना। सारी बीमारियाँ इसी से होती हैं और जब सब रोगों की जड़ एक है तो सभों की चिकित्सा भी एक होगी। बस इसी सिद्धान्त के अनुसार ही प्राकृतिक चिकित्सक सब उपचार करता है। एनीमा, चारों प्रकार के स्नान, उपवास फलाहार ये सभी शरीर में एकत्रित विष को दूर करने में सहायता देते हैं।

इसमें कोई केस शायद ही कभी बिगड़ता हो, यों भवितव्यता की बात दूसरी है। यदि शरीर में जीवनीशक्ति शेष है तो रोग निश्चय ही दूर हो जायगा, हां समय अधिक लग सकता है, कठोर संयम खाने पीने का परहेज, रहन सहन बदलना पड़ता है, पर आराम भी होता है। और cure यानी 'रोगमुक्ति' वास्तव में इसी पद्धति द्वारा संभव है। उपसर्ग या Symptom को दबाना ही इस पद्धति का उद्देश नहीं। यह तो सारे रोगों के मूल पर

[शेष ८५ पृष्ठ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

वसन्त की सफाई

वसन्त का आगमन शुष्क वृक्ष और लताओं में नवपल्लव विकसित करके होता है। प्रकृति में सब कहीं उल्लास और आनन्द की मनभावनी झलक दृष्टिगत होती है। फूलों में सुन्दर पंखड़ियों के साथ-साथ सुवास का संचार होकर वसन्त के शुभागमन की सूचना मिलती है। प्रायः प्रत्येक प्राणधारी में नया उल्लास, नई उमंग, नया जोश देखाई देता है।

इधर तो यह परिवर्तन होता है उधर शिशर के अन्त के साथ ग्रीष्म का आगमन होता है। वसन्त को शीत और ग्रीष्म का सन्धि-काल समझना चाहिए। इसमें न तो बहुत गरमी ही रहती है और न शीतलता ही, इसी लिए यह समय यों ही सुहावना होता है परन्तु कमजोर स्वास्थ्य वालों के लिए आनन्द और सुख की जगह जुकाम, निमोनिया ब्रोकाइटिस जैसे रोग उत्पन्न करनेवाला बनकर उनके उल्लास और सुख का अपहरण-कर्त्ता बन जाता है। इसमें ऋतु का उतना दोष नहीं है जितना अपने आचरण, खान-पान और रहन-सहन का। जिनका रक्त बलशाली होता है, जिनका आहार शरद और शीत ऋतु में उचित रूप का रहता है, उनके लिए बसन्त नवजीवन का सन्देश लाता है।

वसन्त ऋतु हमें यह सूचना भी देता है कि आगे बहुत खराब मौसिम—गरमी का मौसिम आने वाला है, उसमें मच्छड़ों का आक्रमण और गरमी का प्रकोप रात को नींद भर सोने न देगा। आप लोग सावधान हो जायँ। उसका सन्देश होता है कि जरा अपने अन्दर की सफाई कर लीजिए जिसमें आप को ऐसी शक्ति मिल जाय कि सुख पूर्वक आगे आनेवाले मौसिम में जीवन बिताया जा सके। कुछ असावधान लोगों में वह सफाई का काम स्वयं करके सावधान लोगों को अन्दरूनी सफाई के लिए सावधान कर देता है। प्रकृति की ओर से जो सफाई का काम होता है उसमें कुछ रोग या दुख झेलना ही पड़ता है। यदि मनुष्य चैतन्य हो जाय और अन्दर की सफाई अपने आप कर दे तो जीवन में आनन्द रहता है और सफाई के काम में भी कुछ कष्ट नहीं होता।

हमारे पुराने रीति-रिवाज और धार्मिक कृत्य भी स्वास्थ्य का ही सन्देश लेकर आते हैं और हमें अन्दरूनी सफाई का पाठ पढ़ा जाते हैं। वसन्त में नवरात्रि यही शुभ-सन्देश लाता है। नवरात्रि में नव दिन के व्रत का विधान है। यह नव-जीवन दायक विधान है। इस नवरात्र में शुरू में ३ दिनों का सन्तरे का रस जल और नीबू पर रह कर व्रत रख लिया जाय। प्रति दूसरे घंटे एक एक गिलास हलका गरम जल दिया जाय और प्रति दिन एनीमा ले लिया जाय उसके बाद ३ दिन तरकारियाँ ली जाय और शेष तीन दिन कुछ सूखे मेवे जैसे खजूर किशमिश और कुछ दूध तथा सन्तरे पर बितावे। कुछ तरकारिया जैसे लौकी, पालक सलगम आदि उबाल कर ले। एनिमा प्रति दिन लेता रहे। इस व्रत में कोई कष्ट नहीं होता। हलका शारीरिक और मानसिक परिश्रम बराबर किया जा सकता है। व्रत काल में भी आनन्द रहता है, चित को शान्ति और प्रसन्नता मिलती है व्रत के बाद रक्त सबल और शक्ति शाली हो जाता है, शरीर की रोग निवारक शक्ति बढ़ जाती है। कम से कम छ मास तक तो इस सफाई का असर शरीर में अवश्य ही रह जाता है और ग्रीष्म की गरमी और बरसात की बरसाती हवा दुखदायक नहीं होती बल्कि एक मौसिम चीज बन जाती है। मस्तिक की जड़ता दूर होती है और चेतन्यता बढ़ती है।

इसी व्रत का जब नाटक किया जाता है अर्थात् दिखाया तो यह जाता है कि हम उपवास कर रहे है और ठूस ठूस कर सिंघाड़े का हलुआ, आलू

[शेष ८५वें पृष्ठ में]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिए

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (तृतीय संस्करण) : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए०		३)
(२) सरल शरीर विज्ञान : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए०	... ...	१॥)
(३) प्राकृतिक चिकित्सा : श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	... ...	२।)
(४) मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	...	॥)
(५) दूध ही अमृत है : श्री हनुमान प्रसाद गोयल	... ...	१॥)
(६) स्वास्थ्य से नुस्खे : 'जीवन सखा' कार्यालय	... ...	≡)
(७) क्या और कैसे खायें : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	... ...	।=)
(८) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : श्री स्वामी शिवानन्द	... ...	१)
(९) सचित्र हठयोग : श्री स्वामी शिवानन्द	... ...	१।)
(१०) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	... ...	॥।)
(११) फलाहार और फल-चिकित्सा : श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा	... ...	१।)
(१२) आँखों का अचूक इलाज : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	... ...	२)
(१३) आरोग्य साधन : महात्मा गाँधी	... ...	॥)
(१४) नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा) श्री लूई कूने	... ...	३॥)
(१५) बच्चों की रक्षा : श्री लूई कूने	... ...	।=)
(१६) मैं निरोग हूं या रोगी : श्री लूई कूने ...	... ...	।=)
(१७) उपवास-चिकित्सा : बरनर मैकफ़ेडन ...	... ...	१=)
(१८) स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियाँ : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	... ...	१॥)
(१९) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदार नाथ गुप्त, एम० ए०	... ...	१)
(२०) सूर्य-नमस्कार : श्री भगवती प्रसाद पांडे, बी० ए०	... ...	१)
(२१) शाक और उनके गुण : श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा	... ...	॥।)
(२२) स्वास्थ्य और जल चिकित्सा : प्रिन्सपल केदारनाथ जी गुप्त	... ...	१॥)
(२३) आहार ही औषध है : डा० एल० एन० रतरा	... ...	१।)
(२४) फलाहार चिकित्सा : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	... ...	२।)
(२५) Nature Cure by H. Lindlahr, M. D.	...	6 0
(२६) Practical Nature Cure by Dr. K.L. Sharma, N. D.	...	5 0
(२७) Fasting Cure by Dr. L. Sharma N. D.	...	0 6
(२८) Drugless Healing by L. Dr. Kameshwar Sharma, M.A., N.D.		0 8
(२९) Food-de-Medicine by Dr. L. N. Ratra, H.M.B.	...	2 0

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रन्थ-भंडार, लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

उत्तरी भारत में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रमुख केन्द्र

'प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह' प्रयाग

जहाँ अब तक न जाने कितने कथाकथित असाध्य रोगों से पीड़ित होने वाले रोगियों ने पहुँच कर अपने को नीरोग और स्वस्थ बना लिया। यही कारण है, जो यह चिकित्सा केन्द्र लगातार उन्नति करता जा रहा है।

यदि आप किसी भयानक रोग से पीड़ित हो रहे हैं, डाक्टरों और वैद्यों की दवा से निराश हो चुके हैं, तो आप फौरन यहाँ पधारें या पत्र देकर चिकित्सा के सम्बन्ध में विवरण प्राप्त करें।

यहाँ इन रोगों की सफलता पूर्वक चिकित्सा होती है—साधारण दुर्बलता, स्नायु दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग रक्ताभाव पुराना जुकाम, खाँसी, कब्ज, प्लुरिसी, अनिद्रा, दमा, मृगी, रक्त-चाप, मधुमेह मुटापा, मंदाग्नि, संग्रहणी, गठिया, स्नायु-शूल (scitica) उदर-शूल (colic pain), पथरी (gallstone troubles), गुर्दे की बीमारी विषाक्त फोड़ा नासूर, भगंदर, तथा विभिन्न प्रकार के स्त्री रोग जैसे—मासिक स्राव न होना या बहुत अधिक होना, स्राव के समय दर्द होना, प्रदर—इत्यादि इत्यादि।

यहाँ जिस चिकित्सा विधि से रोगी का इलाज किया जाता है उनमें यौगिक क्रियायें, आसन, प्राणायाम, मालिश, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, जल-चिकित्सा, मिट्टी तथा वाष्प-चिकित्सा, आहार चिकित्सा, उपवास, मानसोपचार आदि सम्मिलित हैं।

स्वास्थ्य गृह में भरती होने के नियम—(१) इस स्वास्थ्य गृह में स्त्री और पुरुष दोनों तरह के रोगी भर्ती किये जाते हैं। किन्तु संक्रामक रोगों से पीड़ित होने वाले तथा चारपाई छोड़ने में असमर्थ रोगियों के रखने का प्रबन्ध नहीं है। (२) रोगियों के रहने उपचार तथा सेवा-शुश्रूषा का प्रबन्ध सं[illegible]र से किया गया है (३) रोगियों से चिकित्सा फीस ५०) प्रति मास ली जाती है, जिसमें मकान का किराया और इलाज की फीस दोनों शामिल हैं।

विशेष जानकारी के लिए नीचे लिखे पते से पत्र व्यवहार करें :—

संचालक

प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह

११, लूकरगंज, इलाहाबाद।

Printed at the Mission Press, Allahabad,
Published by Dr. Baleshwar Prasad Sinha, 11, Lookerganj, Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized

जीवन सुधा

शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा बिहार के शिक्षा विभागों द्वारा स्वीकृत

इस अंक में पढ़िये

१—फलों का प्रयोग—[श्रीयुत जानकीशरण वर्मा] ८
२—हैजा—[डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह] ९
३—पीठ का व्यायाम—[श्रीयुत विशम्भर नाथ द्विवेदी] ९
४—प्ल्यूरिसी—उरस्तोय—[श्रीयुत गुलाबचन्द जैन] ९
५—हमारे रुधिर के सफेद कण—[जगेश्वर दयाल वैश्य, एम० ए०, बी० एस-सी०, चुरू] १०
६—प्रकृति चिकित्सा का एक चमत्कार—[श्री रामचरण, डी० यच-पी०, प्रकृति चिकित्सा-विद] १०
७—प्रश्नोत्तर १०
८—चिकित्सा में क्रान्ति—[श्री कृष्ण शर्मा] १०
९—सम्पादकीय ११

संपादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

महेन्द्र नाथ पाडेय

वार्षिक मूल्य ४) प्रति अंक ।=)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रति मास इक्कीसवीं तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ४) तथा एक प्रति का ।=) है।

(३) सज्जन-गण जनवरी या जुलाई से ही ग्राहक बनें; यों किसी महीने से भी ग्राहक बनाया जा सकता है।

(४) मास के अन्त तक 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोस्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए। अन्यथा मुफ्त में वह अंक फिर न मिलेगा।

(५) पत्र भेजते समय अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ साफ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।=) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

अनुपम अवसर !

पाठकों को यह जान कर हर्ष होगा कि श्रीमान धर्मचन्द्र सरावगी की उदारता के फलस्वरूप १५० पुस्तकालयों के लिए १॥) वार्षिक चन्दे पर 'जीवन सखा' एक साल तक पहुँचाते रहने की योजना की गई है। अतः सार्वजनिक पुस्तकालयों को इस अनुपम अवसर से लाभ उठाना चाहिए। १॥) में 'जीवन-सखा' प्राप्त करने के लिए आज ही लिखें।

—मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

वर्ष ९ | मई, १९४४ | अङ्क ५

फलों का प्रयोग

[श्री जानकीशरण वर्मा]

[श्री वर्मा जी से और उनके लेखों से जीवन सखा के पाठक इतने अधिक परिचित हो चुके हैं कि परिचय कराने की आवश्यकता नहीं। गंभीर अध्यन और प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर लिखे वर्मा जी के लेख प्रभावोत्पादक, मननशील और गम्भीर ही नहीं होते हैं बल्कि उनके बताये मार्ग पर चलनेवाले लोगों को जीवनदायक होते हैं। प्रस्तुत लेख वैसा ही है और प्रत्येक पाठक के मनन और आचरण करने की चीज है—सं०।]

"मैं सचमुच अभागा हूँ, आपकी बताई विधि का मैं अक्षरशः पालन कर रहा हूँ, फिर भी मुझे कुछ लाभ नहीं मालूम होता। आज दस दिन से सिर्फ फलों पर हूं, लेकिन वायु पीछा नहीं छोड़ती, खट्टी डकारें उसी तरह आती हैं, तबीयत बेचैन रहती है। समझ में नहीं आता कि क्या करूँ....."

डिप्टी साहब की गाड़ी न रुकती अगर मैं बीच ही में बात काट कर यह न पूछता, "आप दिन में कितनी बार फल खाते हैं?"

डिप्टी साहब ने कहा—"मैं ज्यादा थोड़े ही खाता हूँ दो दो घन्टे पर यानी कुल मिला कर दिन में छः बार खाता हूँ"

"छः बार?" मैंने आश्चर्य से पूछा।

"तब क्या और अधिक बार खाऊँ। आप जैसा कहें मैं करने को तैयार हूँ" डिप्टी साहब ने मुस्कराते हुए कहा।

मैंने भी हँसते हुए डाँटा, "आप अजीब आदमी हैं। मैंने तो सिर्फ तीन ही बार खाने को कहा था, फल तो फल हीं है अमृत से भी अजीर्ण हो सकता है। अच्छा यह तो बताइये कि आज आपने कौन सा फल खाया है।

"अभी तो मैंने एक ही बार खाया है, सिर्फ अंगूर, नाशपाती, सेब और मीठे नीबू लेकर आपके पास आ रहा हूँ। क्या करूँ आजकल फल तो मिलते ही नहीं।" डिप्टी साहब ने ज़रा कातर भाव से कहा।

मुझे हँसी भी आई और क्रोध भी मालूम हुआ। मैंने कहा, अब क्या हाथी-घोड़ा खाइएगा। मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो एक-बार एक ही प्रकार का फल खाने को कहा था, आपने तो अपने पेट को फलों की दूकान बना रक्खी है।"

डिप्टी साहब ने आश्चर्य से पूछा, "क्या ? एक बार एक ही प्रकार का फल ! तब तो पेट ही न भरेगा। फल तो हलकी चीज़ है, कई फलों के एक साथ खाने में क्या हानि है ?"

मैंने उत्तर दिया "मैं कई बार बता चुका हूँ कि अगर आप चाहते हैं कि आपका शरीर रोग को दूर भगावे तो आप उसे पचाने का थोड़ा ही काम दीजिए। जब उसकी थोड़ी शक्ति पचाने में लगेगी तो बाक़ी सारी शक्ति रोग को दूर करने लग जायगी। यही प्रकृति का नियम है। दूसरी बात यह है कि विविध फलों में विविध रासायनिक द्रव्य होते हैं और कुछ द्रव्य ऐसे हैं जो एक दूसरे के विरोधी हैं। ऐसे फलों को एक साथ खाने से पेट में गड़बड़ी होती है और शरीर पर उसकी प्रतिक्रिया अच्छी नहीं होती। इसलिए चिकित्सा के दिनों में, और वैसे भी यही अच्छा है कि एक बार में एक ही तरह का फल खाया जाय।"

डिप्टी साहब ने कहा, "यह बड़ी मुश्किल बात है। लेकिन करूँ तो क्या करूँ। वर्षों से तरह तरह के इलाज कर रहा हूँ और रुपये भी बहुत खर्च किए, अन्त में लाचार होकर आपके पास आया हूँ। अब से कोशिश करूँगा कि एक बार एक ही तरह का फल खाऊँ। अच्छा, यह तो बताएगा कि क्या दिन में तीन ही बार खाऊँ ?"

मैंने उत्तर दिया, "अगर आपने प्राकृतिक चिकित्सा की शरण ली है तो किसी पर एहसान थोड़े ही किया और अगर आप खाते-पीते अच्छे हो जायँ तो और अच्छी बात है। लेकिन अगर मेरे बताने पर भी आप मनमानी करते हैं तो आप यह न कहें कि प्राकृतिक चिकित्सा कर रहे हैं। मैंने तो आपको पहले बता दिया था कि दिन में तीन बार—आठ बजे सुबह एक बजे दिन और छः बजे शाम को—खायँ। अच्छा तो यह होता कि आप दो ही बार खाते। लेकिन आपकी कमज़ोर तबीयत का ख्याल करते हुए मैंने तीन बार खाने को कहा था। उम्मीद है कि आप एनीमा भी लेते होंगे।"

डिप्टी साहब गम्भीरता से मेरी बात सुनते रहे। ज्योंही मैंने बोलना बन्द किया वह एक-ब-एक उठे और 'नमस्कार' कह कर चलते हुए। मैं भी समझा कि चलो इनसे पिंड छूटा।

दस दिन के बाद डिप्टी साहब फिर आये। इस बार उनकी मुखाकृति से मालूम होता था कि वह पहले से अच्छे हैं। उन्होंने मुस्कराते हुए कहा, "अबकी बार आपके आदेश का अक्षरशः पालन किया। इन पिछले दस दिनों में आशातीत लाभ हुआ। वायु अब भी रहती है लेकिन पहले से बहुत कम। इसको कैसे भगाऊँ ?"

मैंने कहा, "ईश्वर को धन्यवाद ! अब आप दोपहर को रोटी और सादी पकी तरकारी खायँ और जब रोटी खाते दो दिन हो जायँ तो कमर नहान (पेड़ूनहान) लें। तीन हफ़्ते इस तरह रह कर दोपहर और शाम को रोटी तरकारी खायँ और सुबह के नाश्ते में पहले की तरह फल और लगातार डेढ़ महीने कमर नहान जारी रखिए।"

एक महीना खतम होने के पहले ही डिप्टी साहब ने आकर बताया कि उनके प्रायः सभी कष्ट दूर हो गए हैं। वह कुछ दुबले तो ज़रूर थे लेकिन उनका चेहरा अच्छे स्वास्थ्य के कारण चमक रहा था।

× × ×

फलों के बारे में लोगों की ग़लत धारणाएं हैं। उनमें से एक यह है कि लोग अंगूर और सेब को ही फल समझते हैं और कहते हैं कि फलाहार बहुत ख़र्चीला है। लेकिन फलों में अमरूद, रसभरी, जामुन, खरबूजा, ककड़ी, खीरा, और टमाटर भी हैं। आम भी बहुत जगहों में सस्ता ही रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्तरे इन लड़ाई के दिनों में भले ही मँहगे हों पर वैसे मामूली दामों पर ही मिलते हैं। फल भले ही मँहगे हों पर मँहगे से मँहगा फल दवा और इंजेक्शन से सस्ता है।

यह सच है कि सभी फल हर हालत में नहीं खाया जा सकता। पेट की ख़राबी में खीरा-ककड़ी जैसे फल अनुपयुक्त होंगे, अमरूद भी शायद ठीक न बैठे। पर साधारण अध्ययन से यह मालूम हो जाता है कि किस अवस्था में किस फल का प्रयोग करना चाहिए।

जीर्ण रोगों में फलाहार-चिकित्सा से बहुत लाभ होता है। मेरी राय में फ़ी सदी नब्बे जीर्ण रोग सिर्फ फलाहार से दूर किए जा सकते हैं। पहले तीन चार दिन फल का रस ही पीकर रहना चाहिये। सन्तरा, मीठे नींबू, टमाटर, जामुन इत्यादि फलों के रस आसानी से निकाले जा सकते हैं। कुछ न हो तो किशमिश भिगोकर उसका पानी पिया जा सकता है। किशमिश को छः-सात घन्टे पानी में भिगो देने से उसका रस पानी में खिंच आता है। चम्मच से अच्छी तरह चला कर पानी को निकाल लेना चाहिये। जाड़े के दिनों में इस पानी को थोड़ा गरम कर लिया जा सकता है। इन चार दिनों के रसाहार के समय सुबह-शाम एनीमा लेना चाहिए। कुछ कमज़ोरी हो सकती है। पर उसे सह जाना चाहिए। इसके बाद अपनी शक्ति के अनुसार पाँच से दस दिन तक दिन में तीन बार फल खाकर रहना ठीक होगा। इन दिनों भी हर रोज़ एक बार एनीमा लेना चाहिए। बहुत अच्छा हो अगर इस फलाहार की अवधि के बाद रोगी दस दिन और सिर्फ फल-दूध पर रहे। हर बार फल खाने के बाद तीन छटाँक या एक पाव दूध पीना चाहिए। दूध गाय का हो और जहाँ तक हो सके ताज़ा (बिना उबाला हुआ) दोपहर में शायद ताज़ा दूध न मिलेगा। ऐसी हालत में सवेरे ही दूध को गरम करके रख छोड़ना चाहिए। दूध में चीनी, मिश्री न मिलाई जाय। किसी किसी को दूध के बदले मठा पीने से लाभ होता है। यह दो तीन दिन के प्रयोग से मालूम किया जा सकता है कि दूध अनुकूल होता है या मठा, अगर फल मिलने में कठिनाई हो तो तीनों बार किशमिश ही खानी चाहिए। मात्रा अत्यधिक न हो। किशमिश भिगोई जा सकती है और तब वह अंगूर का मजा देगी। किशमिश में इतना ही पानी डाला जाय कि वह उसमें सोख जाय, अगर कुछ पानी बच रहे तो उसे पी जाना चाहिए। आशा है कि फल और दूध लेने के समय में एनीमा की आवश्यकता न होगी। लेकिन अगर लेने की ज़रूरत हो तो उससे हिचकना न चाहिए। इस फल और दूध की अवधि के बाद दो समय फल और दूध और दोपहर में रोटी और तरकारी का क्रम शुरू करना चाहिए। इस तरह के डेढ़ महीने के प्रोग्राम से स्वास्थ्य मिल ही जायगा। कुछ ख़ास ख़ास रोगों में मिट्टी, पानी, भाफ के प्रयोग की आवश्यकता हो सकती है। लेकिन, जैसा कि ऊपर कहा गया है, सैकड़े पीछे नब्बे रोगी सिर्फ इस तरह के रसाहार, फलाहार, फल-दुग्धाहार और भोजन-सुधार से चले जायेंगे।

स्वास्थ्य के दिनों में भी फलों का प्रयोग आवश्यक है। बहुत से लोग फल खाते हैं पर ग़लत तरीके से। भर पेट खाने के बाद फल खाना हानिकारक है। सच्ची बात तो यह है कि एक भोजन मौसम के फलों का ही होना चाहिए। सुबह में फल दूध या मठा, दोपहर में रोटी या चावल, छिलके दार साबुत दाल (रोग की अवस्था में दाल न खानी चाहिये) और तरकारी और रात में फिर फल-दूध या सादी पकी एक दो तरह की हरी तरकारियाँ और कुछ बादाम या अखरोट या काजू या मूँगफली या पिस्ता या नारियल की गिरी स्वास्थ्य के दिनों का बहुत अच्छा भोजन क्रम है। लेकिन अगर दोनों समय अनाज खाना हो तो एक समय में कम से कम आधी मात्रा फलों की होनी चाहिए। इस सम्बन्ध में यह याद रखना चाहिए,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि खट्टे फल रोटी या चावल के साथ ठीक नहीं बैठते। अगर खाना ही हो तो उन्हें पहले खाकर तब रोटी या चावल शुरू करना चाहिए। टमाटर बहुत गुणदायक है। लेकिन रोटी के साथ उसे नहीं खाना चाहिए। पहले टमाटर खाकर तब रोटी शुरू करनी चाहिए। मीठे फल जैसे मीठा सेब, केला, पपीता, आम, मुनक्का, छुहारा, खजूर अंजीर रोटी के पहले या बाद में या साथ-साथ खाए जा सकते हैं। मात्रा पर ज़रूर ध्यान रहे। उदाहरण के लिए अगर रोटी के साथ केला खाना हो और अगर छः रोटी खाते हों तो तीन ही रोटी और तीन केले खाने चाहिए।

वह असभ्यता का ज़माना, जो कि स्वास्थ्य का ज़माना था बहुत ही अच्छा था, जब कि लोग सिर्फ फल, कच्ची सागभाजी और कच्चे अनाज खाकर रहते थे। रोगों के प्रकार में वृद्धि तभी से हुई जब से मानव जाति ने आग के सहारे खाद्य पदार्थ तैयार करना सीखा। तभी से तरह-तरह की अहितकर चीजें बनने लगीं। उनसे शरीर में विजातीय द्रव्य इकट्ठा होने लगा और तरह तरह के रोग होने लगे। विद्वान डाक्टर समुदाय इन रोगों के लिए जर्म्स (कीड़ों) को अपराधी बताता है। पर समझनेवाले जानते हैं कि रोग किसी बाहरी शत्रु के आक्रमण से नहीं बल्कि अपनी भूल और ज्यादतियों से होते हैं। इस सभ्यता के ज़माने में किसी प्रचलित पद्धति के विरोध में आवाज़ उठाना बुरा समझा जाता है, लेकिन अपनी भूलों से सीखनेवाली मानव जाति यह अवश्य ही सीखेगी कि खाने पीने के मामले में असभ्य ही रहना अच्छा है और तब फलों का अधिक से अधिक समुचित प्रयोग हुआ करेगा।

[९४ पेज का शेष अंश]

मिला कर उसे पिलाना चाहिए। इससे शरीर में क्षार की मात्रा बढ़ जायगी और वह रक्त फिर हैजे के कीड़ों को हरा देगा।

३—पेड़ू पर गीली मिट्टी की पट्टी १०-१० मिनट के अन्तर पर देना चाहिए। फिर शीघ्र ही टब बाथ देना चाहिए।

४—यह क्रिया तब तक जारी रखनी चाहिए जब तक रोगी को बुखार न आ जाय। बुखार आ जाने पर उसका इलाज बुखार की तरह करना चाहिए। कुछ ही दिनों में मनुष्य स्वास्थ्य लाभ करके आनन्द उठाता है।

इस रोग से मुक्त हो जाने पर भी दो चार दिन तक भोजन नहीं करना चाहिये बल्कि फलों का रस और थोड़ा दूध ही लेते रहना चाहिए। अन्यथा हैजा के फिर से हो जाने का डर रहता है।

हमने ऊपर बताए गए ढंग से कई रोगियों का उपचार किया है। कलकत्ते में एक हैजा के रोगी को जब अन्य डाक्टरों ने जवाब दे दिया तो वह हमारी चिकित्सा में रक्खा गया। मरता क्या न करता। रोगी को दवा देने के लिए मुझसे बार-बार कहा गया। जिसपर मैंने एक शीशी में पानी और नींबू का रस मिलाकर रोगी को पीने के लिए रख दिया। और उपचार जारी रहा। रोगी दो दिन में ठीक हो गया।

इसी प्रकार से इलाज करते रहने से ९९% रोगी स्वास्थ्य लाभ करते हैं और कर रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैज़ा

[डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह]

जब हम किन्हीं समाचार पत्रों में छपे मौत के लेखे को देखते हैं, तब यह लिखा पाते हैं कि अमुक बीमारी में इतने आदमियों की मृत्यु हुई। इनमें हैजा की बीमारी मनुष्य मारण में सबसे आगे है। इसके द्वारा प्रति वर्ष हजारों मनुष्य की जानें 'अलूल जलूल' में चली जाती हैं। कहा जाता है कि हैजा एक प्रकार के कीड़ों से पैदा होता है। ये कीड़े भोजन पदार्थ में मिलकर शरीर में प्रवेश करते हैं। और शरीर में जाकर उसको नष्ट कर देते हैं। ऐसा कहनेवाले लोगों का विश्वास है कि यह कीड़े शरीर में प्रवेश करते हैं और थोड़े से समय में अपने को बहुत सी संख्या में बढ़ा लेते हैं, शरीर के नाश का कारण उनके मतानुसार यही होता है।

प्राकृतिक चिकित्सक कहते हैं कि कीड़े है लेकिन सिर्फ कीड़े की मौजूदगी से ही बीमारी नहीं होती। हैजे का असल कारण रक्त की खराबी ही है। ऐसा देखने में आता है कि किसी खास गाँव में जहाँ पर हैजे की कोई शिकायत नहीं होती और न किसी तरह यही सन्देह किया जा सकता है कि हैजे के कीड़े किसी दूसरी जगह से लाए गए हैं, उस अवस्था में भी किसी एक को हैजा हो जाता है और आगे चलकर और लोग भी उसका शिकार बनते हैं।

ऐसा कहा जा सकता है कि भोजन में खराबी होने के कारण अन्य प्रकार की चीजों के सड़ने और गलने के कारण विषैले कीड़े उत्पन्न होत हैं और वैसे भोजनों के व्यवहार में आने के कारण यह रोग हो जाता है। जो कुछ भी हो, पर हमारा विश्वास है कि समय और उपयुक्त वातावरण पाकर यह कीड़े अपने आप पैदा हो जाते हैं। इन कीड़ों से डरने की जरूरत नहीं। पर अगर हम चाहें कि यह कीड़े हमारे शरीर में पैदा न होने पाएँ तो हमें अपने शरीर को इस लायक बनाना होगा कि उसमें इन कीड़ों को अनुकूल वातावरण ही न मिले और न पनपने ही पावें। हमें एक बात यहाँ याद आती है कि गिद्ध वहीं दिखाई देते और मँडराते हैं जहाँ कोई जानवर मरा पाया जाता है। मुर्दों को देख कर गिद्ध न जाने कहाँ से आ जाते हैं। आस-पास के रहनेवालों को गिद्धों का आना अच्छा नहीं लगता। पर प्रश्न यह उठता है कि क्या इसके लिए आप उन गिद्धों को गोली मारने का प्रयत्न करेंगे या उस स्थान से उस मुर्दे को उठवाने की कोशिश करेंगे।

आजकल की औषधि चिकित्सा, प्रणाली भी कुछ ऐसी है। शरीर की सफाई करने के बजाय वह कीड़ों को मारने के लिये शरीर के अन्दर एक लड़ाई सी ठानती है। इस लड़ाई में कभी तो चिकित्सा करनेवाले सफल होते हैं और कभी कीड़े ही। बिचारा रोगी 'गेहूँ के साथ घुन' की तरह पीसा जाता है। बुद्धिमानी तो इस बात में थी कि शरीर के अन्दर इन कीड़ोंके टिकने का कारण ढूँढ़ कर उसको दूर करने का प्रयत्न किया जाता। जिससे कि हैजे के कीड़ों का शरीर के अन्दर प्रवेश करना ही नामुमकिन हो जाय। लेकिन ठीक उसका उलटा ही व्यवहार होता है।

कीड़ों का शरीर में आना ठीक नहीं पर यदि वे आ जायँ तो प्राकृतिक चिकित्सक उसे खराब नहीं समझते। जिस प्रकार गिद्ध मुर्दे को खाकर उस स्थान की सफाई कर जाते हैं और वहां के आस-पास के रहनेवालों को इन दुर्गन्ध और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीमारी से बचाते हैं। ठीक उसी तरह यह कीड़े भी शरीर के अन्दर प्रवेश करके शरीर की गन्दगी को साफ करके उसे स्वस्थ छोड़ जाते हैं। यदि प्राकृतिक चिकित्सा का सिद्धान्त और अभ्यास ठीक है तो किसी भी हैजा के रोगी को मरना नहीं चाहिए। यदि रोगी की मृत्यु होती है तो चिकित्साप्रणाली और चिकित्सक का दोष है।

सर्व प्रथम हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि हैजा अथवा हैजा जैसी अन्य प्रकार की बीमारी हमें होवे ही नहीं। इससे बचने के लिये हमें अपने शरीर को एक रूप में बद्धक्रम से ले चलना होगा। भोजन से हमारे शरीर का घनिष्ट संबंध है। हैजा होने का प्रधान कारण हमारा भोजन ही है। सड़ा गला और गंधयुक्त भोजन करने से हैजा के कीड़े पैदा हो जाते हैं। खराब भोजन से इसी रोग के ही नहीं वरन किसी भी रोग के कीड़े पैदा हो जाते हैं। हमारे शरीर का खून बहुत कुछ हमारे भोजन पर ही निर्भर है। अगर खून बलवान और शुद्ध है तो कोई रोग शरीर को नहीं सता सकता। जिसके शरीर के खून में खारापन है उसमें हैजे के कीड़े अपना विष नहीं फैला सकते खून में खार की मात्रा अधिक होने से हैजे के कीड़े अगर किसी तरह शरीर में प्रवेश कर जाते हैं तो तत्काल मर जाते हैं। और उनसे शरीर को कोई कष्ट नहीं होता। अन्त में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि पहले हमें शुद्ध साफ भोजन करके खून शुद्ध और क्षारमय बनाना चाहिए। यह तो रहा भोजन, परंतु इसके अलावा एक और चीज है। वह है हमारा 'रहन-सहन'। इसका भी हमारे शरीर पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। साफ खुली और हवादार जगह में रहने से रोगों के बढ़ने की कम संभावना रहती है। गन्दी जगह में रहने पर जहाँ पर अनेक प्रकार की दुर्गन्ध आती हो, सूर्य का प्रकाश थोड़ा ही या नहीं के बराबर पहुँचता है, जहाँ हवा खूब अधिक मात्रा में नहीं आती, घर की छतें नीची हैं, और घर की भली-भाँति सफाई और पुताई नहीं होती वहाँ हैजा क्या कोई भी रोग हो सकता है।

इसके अलावा हमें प्रति दिन यह सोचते रहना चाहिए कि हम स्वस्थ हैं या स्वस्थ हो जायेंगे। प्रत्येक दिन दोपहर शाम को नीबू का रस पानी के साथ या प्याज का रस जब कभी पीते रहना चाहिए।

यदि इतना करते रहने पर भी इस महारोग का आगमन हो ही जाय तो उनका स्वागत भली भाँति करना चाहिए। उचित स्थान देकर उचित पूजा की सामग्री इकट्ठा करके भली प्रकार से पूजा करनी चाहिये। सर्व प्रथम उनके आने का कारण ढूँढ़ निकालना चाहिए। कारण वही होगा जिसकी रूप-रेखा ऊपर खींची गई हैं। उसमें व्यतिक्रम होने से ही उनके आने की संभावना है। पर यदि आ ही गए तब देखना चाहिए कि इनमें क्या लक्षण हैं, जिस मनुष्य पर आपने कृपा दृष्टि की है। यह लक्षण सामूहिक रूप से सब पर होगा।

सर्व प्रथम हैजे के रोगी का शरीर ठण्डा हो जाता है। आँख गड्ढे में चली जाती है, रंग पीला हो जाता है, हाथ पैर में ऐंठन होने लगती है। पाखाना, कै साथ-साथ होने लगता है साथ ही पेशाब बन्द हो जाता है। इस प्रकार के हैजे के विपरीत एक प्रकार का और हैजा होता है जिसे ड्राई कालरा, सूखा हैजा कहते हैं। इसमें उपर्युक्त सभी बातें होती हैं परन्तु कै, दस्त, पेशाब तीनों बन्द रहते हैं। इसका इलाज उसी प्रकार से किया जायगा जिस प्रकार उस रोग का इलाज किया जायगा। दोनों का इलाज इस प्रकार से होगा—

१—रोगी का खाना बन्द कर देना चाहिए, जब तक रोग शरीर से न निकल जाय तब तक खाना उसे न देना चाहिए।

२—भोजन बन्द कर देने के बाद रोगी को जब जब और जितना वह चाहे पानी में नींबू का रस

[शेष ६२ पृष्ठ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीठ का व्यायाम

"मनुष्य उतना ही बुड्ढा है जितना कि उसकी रीढ़ की हड्डी कड़ी है"

[श्री विश्वम्भर नाथ द्विवेदी]

[वृद्धावस्था का रोकना अच्छे स्वास्थ्य की पहचान है। वस्तुतः हमारे शरीर को उतनी जल्दी बूढ़ा नहीं होना चाहिए जितनी जल्दी हम उसे बना लेते हैं। यह वृद्धावस्था कई तरह से रोकी जा सकती है। लेखक ने प्रस्तुत लेख में पीठ के व्यायाम बताकर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है। व्यायाम का स्थान स्वास्थ्य को उत्तम बनाने में सर्वोपरि है। यह लेख पाठकों के लिए विशेष उपयोगी हैं।—सं०।]

मनुष्य का स्वास्थ्य बहुत कुछ उसके स्नायु जाल पर निर्भर करता है। इसमें किसी प्रकार की गड़बड़ी होने की वजह से उसके स्वास्थ्य में गड़बड़ी होना निश्चय है। स्नायु का संबंध रीढ़ की हड्डी से है, रीढ़ की हड्डी से स्नायु निकल कर उसके दोनों ओर फैले हुए हैं। ये सुन्दर और स्वस्थ तभी तक हैं जब तक रीढ़ की हड्डी में लोच है। लोच व्यायाम से ही रहता है। लोच न रहने से रीढ़ की हड्डी कड़ी पड़ जाती है। स्नायु अपना काम सुचारु रूप से नहीं करते। मनुष्य की जीवन-शक्ति और आयु सब कम हो जाती है। बोझ होने वाला व्यक्ति जो प्रति दिन अपनी पीठ पर बोझा ढोता है, आगे-पीछे दाएँ-बाएँ अपनी पीठ को घूमने का अवसर ही नहीं देता, तो उसकी रीढ़ की हड्डी की दो कड़ी मिलकर एक हो जाती है। फिर धीरे-धीरे उसकी रीढ़ की हड्डी कड़ी हो जाती है और लोच जाती रहती है। जिससे वह अपना स्वास्थ्य-खो बैठता है और थोड़े ही दिनों में अपनी ऐहिक लीला समाप्त कर देता है। इसके विपरीत योगी सुन्दर स्वस्थ और दीर्घायु होता है। क्यों? इसलिए कि वह यम, नियम के पालन के साथ-साथ आसन जो करता है। अधिकांश आसन वह पीठ के ही करता है। इन आसनों को करके वह अपनी रीढ़ में कड़ापन नहीं आने देता। स्नायु ख़राब होने नहीं देता। वह उन्हें पीठ के व्यायाम के द्वारा विकार रहित रखता है, जिससे वह स्वस्थ और दीर्घायु होता है। अधिकांश आदमी भी पीठ का व्यायाम करके स्वास्थ्य-लाभ के साथ-साथ दीर्घायु बन सकते हैं। अन्यथा वे उपर्युक्त लाभों से वंचित रहेंगे। जो पूर्ण स्वस्थ, दीर्घायु और आनन्दित रहना चाहते हैं उन्हें पीठ का व्यायाम करना अनिवार्य है। साथ ही भोजन सुधार भी।

कुछ चिकित्सक जिनमें एक "कैरोप्रैक्टिक" के डाक्टर भी हैं पीठ का व्यायाम, मसाज करके शरीर के सभी रोगों को दूर करने का दम भरते हैं। कुछ इने-गिने लोग पीठ के व्यायाम करने का महत्त्व समझने लगे हैं और लोगों को समझना भी चाहिए। जो शेष रहे उन्हें भी इस लाभ से वंचित नहीं रहना चाहिए। हो सकता है कि वे इस विषय से अनभिज्ञ होने के कारण वंचित रहे हों। वैसे लोगों के लिए हमने इस छोटे से लेख में विशेष सामग्री दी है। यदि वे इसका मनन कर कार्य रूप में परिणत करेंगे तो अपने को बहुत कुछ सुधरा हुआ पाएँगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीठ के दो ही प्रकार के व्यायाम हो सकते हैं। एक योगासन; दूसरा, दूसरे प्रकार के व्यायाम। इनका विश्लेषण नीचे किया गया है। हर आदमी अपनी शक्ति के अनुसार उन व्यायामों से चुनकर कोई व्यायाम करके स्वास्थ्य-लाभ कर सकता है। योगासन और दूसरे प्रकार के व्यायामों में २½ घन्टे का अन्तर देना आवश्यक है। अथवा दोनों का श्रेणी बन्धन कर दिया जाय। एक सुबह दूसरा शाम को करना ही विशेष हित कर होगा।

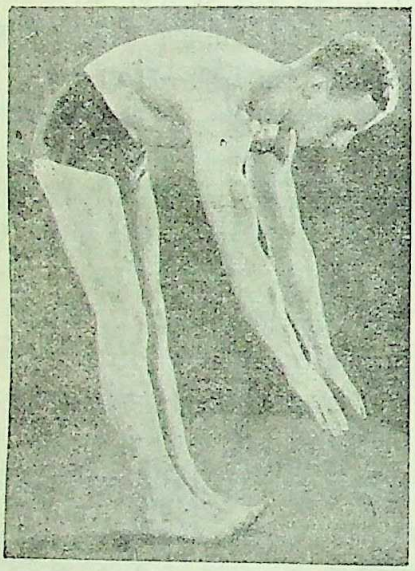

योगासन

सर्वाङ्ग आसन—सुन्दर साफ बिस्तरे पर पीठ के बल लेट जाइए। हाथ बग़ल में रहें और पैर सीधे। इस अवस्था में बदन को ढीला रखना चाहिए। अब दोनों पैरों को धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठाइए। जब पैर ज़मीन से ३०° का कोण बनाने लगे तो वहाँ पर पाँच सेकेंड के लिए रुकना चाहिए। अब पैरों को फिर ऊपर उठाइये और ५०° कोण बनाने लगे तो फिर पाँच सेकेन्ड के लिए रुकना चाहिए। इसी प्रकार जब ९०° का कोण बनाने लगे तो फिर पाँच सेकेन्ड के लिये रुकना चाहिए अब पैरों को सीधा रखते हुए सिर की ओर पैरों को लाना चाहिए। यहाँ तक कि वे १२०° का कोण बनाने लगेंगे। इस अवस्था में पैरों को ऊपर की ओर ले जाना चाहिए। जहां तक संभव हो पैर और धड़ एक सीधी रेखा बनानी चाहिए। इस अवस्था में धड़ को दोनों हाथों से सहारा देना चाहिए। यही सर्वाङ्गासन की पूर्ण अवस्था है। अब आप जिस क्रम से पैरों को बिना मोड़े ऊपर लाये हैं उसी क्रम से उन जगहों पर रुकते वापस चले जाइये। और अपनी पूर्ववत् दशा में आ जायँ।

हलासन—सर्वाङ्गासन की तैयारी में तैयार होकर क्रम से पैरों के एक साथ ३०°, ६०°, ९०°

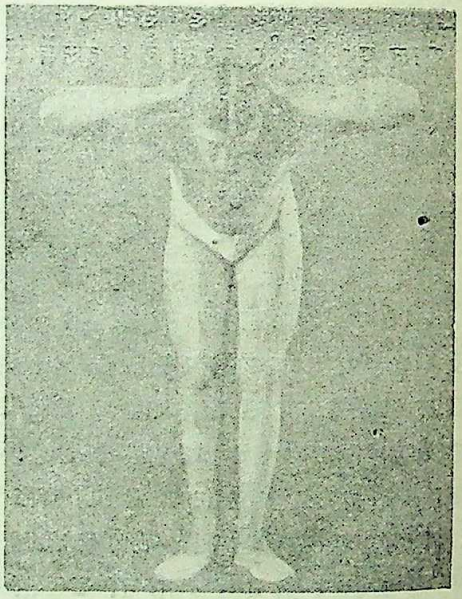

का कोण बनाते समय पाँच-पाँच सेकेन्ड रुकने के पश्चात् पैर सिर के पीछे चले जायेंगे और जमीन को छुवेंगे। फिर हाथ तकिए की तरह सिर के नीचे लग जायेगें। यही हलासन की पूर्ण अवस्था है। इस दशा में भी पाँच सेकेन्ड रुकने के पश्चात् उसी क्रम से वापस आ जाइए जिस क्रम से आप पहले चले थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

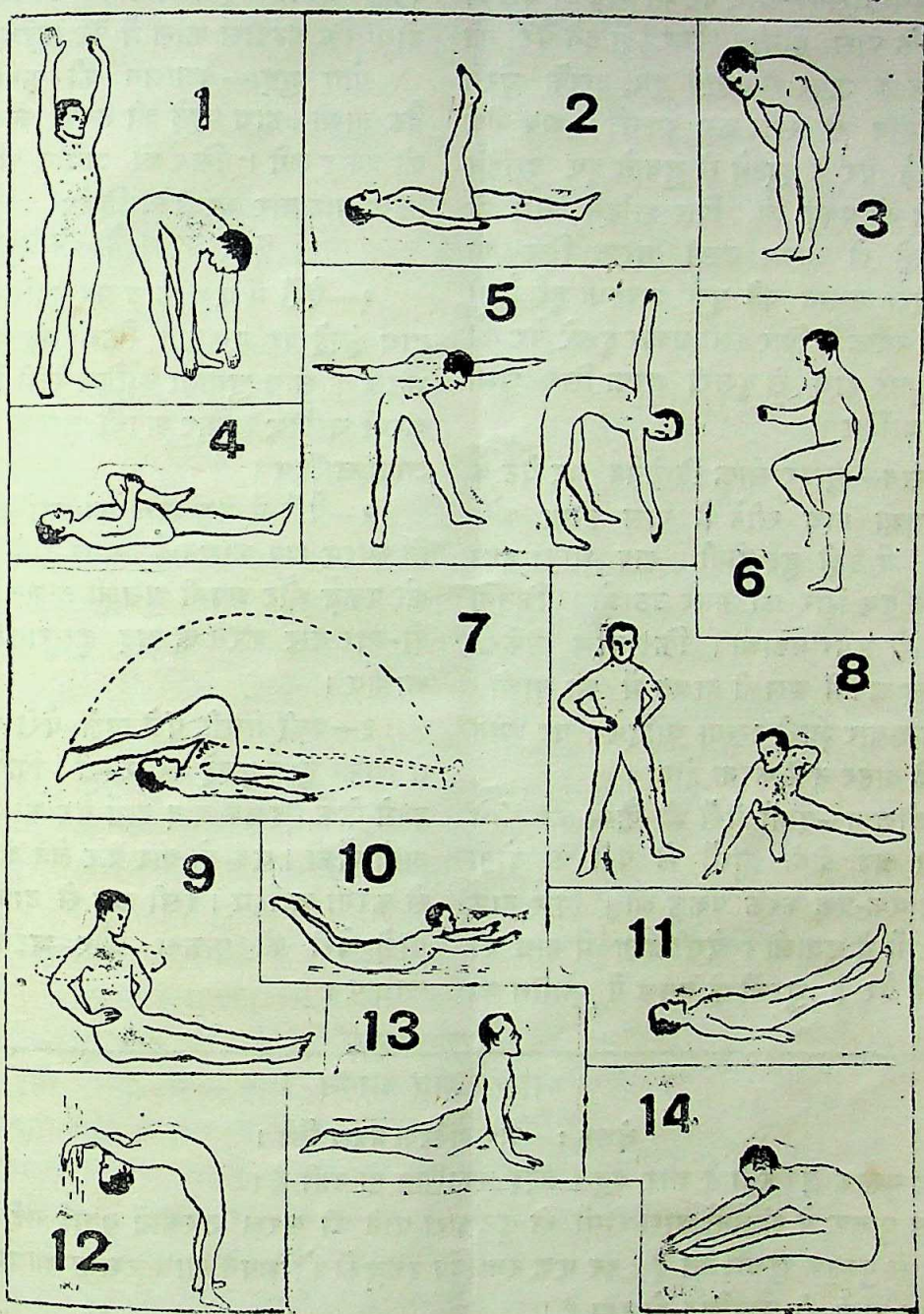

व्यायाम चित्रवली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्धमत्स्येन्द्रासन—बाएँ पैर को मोड़ दो उसकी एड़ी गुदा के पास होगी। फिर दाहिने पैर को गिरे हुए पैर के ऊपर से उठाते हुए, उसके घुटने के पास ज़मीन से सटा कर रक्खो। अब बाएँ हाथ को खड़े पैर के घुटने से छुवाते हुए दाहिने पैर के अंगूठे को पकड़ लो, फिर दाहिने हाथ को पीठ के पीछे ले जाकर उसी तरफ़ सिर को छुआओ। इस आसन की पूर्ण अवस्था हुई जैसा कि चित्र से स्पष्ट है फिर इसी प्रकार दूसरे पैर को मोड़ कर दूसरे हाथ से दूसरी तरफ सिर घुमा कर करना चाहिए।

भुजंगासन—सुन्दर साफ बिछावन पर पेट के बल लेट जाओ हाथ सीने के पास होगा और टिहुनी बगल में उठी हुई होगी। अब थोड़ा हाथ पर जोर देते हुए सिर को ऊपर उठाओ। जितना उठा सकते हो ऊपर उठाओ। फिर पाँच सेकेन्ड रुकने के बाद अपनी असली हालत में आ जाओ। यही क्रम बार-बार ज़ारी रखना चाहिए। पर ध्यान रहे शक्ति के बाहर नहीं करना होगा।

पश्चिमोत्तान—दोनों पैरों को फैला कर सीधे बैठ जाओ। अब दोनो हाथों से पैरों के दोनों अंगूठों को एक-एक करके पकड़ लो। फिर नाक पैरों के घुटनों में छुवाओ। ऐसी दशा में हाथ की टिहुनी दोनों पैर के घुटनों के बगल में ज़मीन का सपर्श करेगी। इस बात पर विशेष ध्यान रखना होगा कि अभ्यास काल में पैर मुड़ेंगे नहीं।

योग मुद्रा—पद्मासन की अवस्था में सीधे बैठ जाओ। हाथ पीछे की तरफ जाकर एक दूसरे को पकड़ लगे। सिर को ज़मीन में छुआओ यही क्रिया बार-बार करनी चाहिए।

दूसरे प्रकार के व्यायाम

१—पैरों में एक हाथ का फासिला करते हुए हाथ कूल्हे पर रखना। फिर धड़ को बाएँ, दाएँ झटके के साथ घुमाना चाहिए ऐसी क्रिया बार-बार करनी चाहिए। फिर अपनी असली हालत में आ जाना चाहिए।

२—पैरों में एक हाथ का फासिला करके खड़े हो जाइए अब काशन के साथ दोनों पैरों के टखने को पकड़ें और अपनी असली हालत में आते जायँ। दो-चार बार करने के बाद दूसरा व्यायाम करना चाहिए।

३—एड़ीं मिली, पंजे खुले पैरों को ऐसी दशा में लाकर हाथ कूल्हे पर रक्खें। फिर बाएँ पैर को आगे फेकें, इसके बाद दायें पैर को भी उसी प्रकार आगे फेंको। एक दो बार कर लेने के बाद से चटक से करना चाहिए। इसी क्रम से दाएँ, बाएँ आगे पीछे पैरों को फेंकना और चटक से करना चाहिए।

स्वास्थ्य और आसन

लेखक :—डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह।

यह पुस्तक छप रही है और बहुत जल्द प्रकाशित हो रही है।

इस पुस्तक में आसनों द्वारा रोगों से छुटकारा पाने की सरल तरकीबें बताई गई हैं। लग-भग ५० चित्रों से पुस्तक सुसज्जित है। हर एक स्वास्थ्य इच्छुकों को अपने साथ रखना आवश्यक है। साथ-साथ आसन चार्ट भी प्रकाशित हो रहा है।

पुस्तक का मूल्य २।)

चार्ट का मूल्य ।।)

जीवन सखा के जो ग्राहक २।) ३० मई तक भेज देंगे उन्हें चार्ट मुफ़्त दिया जायगा।

पताः—मैनेजर जीवन सखा, लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्ल्यूरिसी--उरस्तोय

[श्रीयुत गुलाब चन्द जैन]

[विद्वान लेखक ने प्रस्तुत लेख अध्ययन पूर्वक तैयार किया है। इससे पाठकों का मनोरंजन के साथ-साथ इस कठिन रोग का परिचय और सफल चिकित्सा का ज्ञान होगा—सं०।]

फुप्फुसावरण की शोथ जन्य दशाओं का नाम प्ल्यूरिसी या उरस्तोय है। फुप्फुसावरण उस कला को कहते हैं जो फुप्फुसों को चारों तरफ से आच्छादित करती है। इसके दो भाग होते हैं। एक भाग तो फुप्फुसों को चारों तरफ से आच्छादित रखता है तथा दूसरा भाग वक्ष की दीवार से चिपका रहता है। साधारणतया ये दोनों भाग आपस में मिले रहते हैं। इन दोनों के बीच लसीका पाई जाती है जो दोनों भागों को परस्पर घर्षण से बचाती है। इन्हीं में शोथ उत्पन्न होना शुष्क उरस्तोय है। शोथ की शीघ्र ही कोई चिकित्सा न होने से उन कलाओं के बीच में जल संचय होने लगता है। इसे हम आर्द्र उरस्तोय कहते हैं।

इन दो प्रकारों के उरस्तोयों में कोई विशेष अंतर नहीं है। ये बहुधा एक ही रोगी में पाये जा सकते हैं। शुष्क उरस्तोय भी जीर्ण होकर आर्द्र में परिवर्तित हो जाता है। शुष्क उरस्तोय में कलाएँ परस्पर रगड़ के कारण लाल, शुष्क, व शोथ युक्त हो जाती हैं। इनके घर्षण का शब्द फुप्फुस पर कान लगा कर सुना जा सकता है। श्वास प्रश्वास में कठिनाई तथा पीड़ा होती है। ऐसा मालूम होता है मानों फुप्फुसों को कोई फाड़ रहा हो या उनमें सुई चुभा रहा हो। कभी-कभी थोड़ी सूखी खाँसी भी उठा करती है। शुष्क उरस्तोय में चिकित्सा करने पर कुछ जल निकलता है। यह उसके स्वस्थ होने का एक लक्षण है। शुष्कावस्था में ही उसकी चिकित्सा कर लेना अच्छा है।

उरस्तोय रोग के निम्न प्रधान कारण हैं—

(१) फुप्फुसावरणों में किसी प्रकार की चोट लगना।

(२) फुप्फुसावरण से ढके अंगों में से किसी अंग में शोथ होना, वक्ष की भित्ति में उत्पन्न फोड़ा तथा अस्थि रोग आदि।

(३) निमोनिया के साथ कभी-कभी उरस्तोय हो जाता है। यह निमोनिया के अच्छे हो जाने के बाद भी बना रहता है।

(४) किसी वक्षोस्थि का टूट कर फुप्फुसावरण में छिद्र कर देना!

शुष्क उरस्तोय का प्रधान कारण फुप्फुसावरण में शोथ उत्पन्न होना ही है। उनके बीच की लसीका या तो बह कर निकल जाती है अथवा सूख जाती है। इस कारण उनकी ऊपरी सतह सूखी व कड़ी हो जाती है। वे आपस में एक दूसरे से रगड़ने लगते हैं। श्वास लेते समय बड़ा तेज दर्द होता है। कफ थोड़ा तथा सूखा सा कष्ट से निकलता है। इस घर्षण का शब्द चिकित्सक को रोगी के वक्ष पर कान लगाने से सुनाई पड़ता है। स्वतः रोगी भी उसका अनुभव करता है। शरीर का ताप मान साधारण ताप से कुछ अधिक रहता है।

लेकिन जल भरना शुरू होते ही रोगी आराम का अनुभव करता है। उसे श्वासोच्छ्वास में भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरलता जान पड़ती है। क्योंकि जल भर जाने के कारण शोथ युक्त भाग एक दूसरे से दूर हो जाते हैं तथा उनमें घर्षण न होने से रोगी को शान्ति मालूम पड़ती है। जल की मात्रा अधिक होते ही फिर वही हाल हो जाता है। श्वास प्रश्वास कष्ट कर हो जाता है। साँस जल्दी-जल्दी व धीमी चलती है। जल के बढ़ने के साथ-साथ कष्ट बढ़ता ही जाता है। यही आर्द्र उरस्तोय है। वृक्क तथा हृदय के जीर्ण रोगों के कारण भी कभी-कभी यह रोग हो जाता है। इन रोगों में जल संचय बहुत धीरे-धीरे तथा अनजाने में होता रहता है और तकलीफ की मात्रा भी उसकी वृद्धि के साथ-साथ बढ़ती जाती है। इसे अंग्रेजी में हाइड्रो थारेक्स (Hydro thorax) कहते हैं।

आर्द्र उरस्तोय में रोग के साथ-साथ पानी की मात्रा बढ़ती तथा दर्द की मात्रा कुछ कम होकर पुनः बढ़ने लगती है। चरक ने इसे 'वक्ष रोध' संज्ञा दी है। अत्यन्त जल संजय से जल का दबाव फेफड़ों पर पड़ने लगता है। वे लचीले होने के कारण जल के दबाव से सिकुड़ जाते हैं। सिकुड़ जाने से वे अपना कार्य ठीक तरह नहीं कर पाते हैं। हृदय पर भी इसका प्रभाव पड़ता है तथा वह अपने स्थान से कुछ हट जाता है। रोगी को उस करवट—जिस तरफ रोग है—लेटने में तकलीफ तथा दर्द होता है। राजयक्ष्मा से संबंधित उरस्तोय भी कई रोगियों में पाया जाता है।

रोग की प्रारंभिक अवस्था में छाती को ठोंकने से विशेष अंतर नहीं ज्ञात होता है। इस रोग के बढ़ जाने पर शब्द कुछ ठोस सा हो जाता है। जल की मात्रा अधिक होने पर छाती को हिलाने मात्र से ही कान लगाकर पानी का शब्द सुना जा सकता है। इस समय पसलियों का मध्य भाग कुछ उभरा सा दिखाई देता है। फुफ्फुस पर जल का अधिक दबाव पड़ने से वह अच्छी तरह संकोच विस्तार नहीं कर पाता है। यदि फेफड़ा बिलकुल संकोच विस्तार रहित हो जाय तो मृत्यु अवश्यम्भावी है।

जल के पीप में परिणत हो जाने पर रोगी को जाड़ा लगता तथा रात को पसीना अधिक आता है। इस दशा में छेदन कर जल निकाल देना अत्यावश्यक है।

कफ व शोथ नाशक तथा मूत्र व पसीना अधिक निकालनेवाली चिकित्सा इस रोग में लाभदायक है। छाती पर ठंडा गरम सेंक (गरम ३ मिनिट तथा ठंढा १ मिनिट—इस तरह ३-४ बार) या कपूर व सेंधा नमक तथा इनसे दूना गाय का घी लेकर मालिश करना चाहिए। रोगी को पूर्ण विश्राम करना चाहिए। दिन में सोना हानिकर है।

प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांत के अनुसार सब रोगों के उत्पन्न होने का कारण आमाशय व आंव के रूप में संचित कफ ही है। प्रत्येक रोग शरीर में बढ़े हुए कफ को निकाल कर दूर किया जा सकता है। तीव्रावस्था में रोगी को उपवास एनीमा व रसाहार का सहारा लेना चाहिए। कफकारक पदार्थों का प्रयोग बिलकुल बंद कर फलों के रस व तरकारी के जूस पर ही रोग निवृत्ति तक रहना चाहिए। सीने पर गहरे नीले शीशे का प्रकाश १० मिनट से लेकर क्रमशः १ मिनिट प्रति दिन बढ़ाते हुए ३० मिनट तक डालना चाहिए। गर्म ठंडा सेंक तथा दिन भर में ३-४ बार पेडू नहान लेना चाहिए। ताप मान घटाने के लिये मिट्टी की पट्टी का प्रयोग आवश्यक है।

रोग की जीर्णावस्था में रोगी को ७ दिन फलों के रस पर रहना चाहिए। विशेष कर संतरे के रस पर रहना उचित होगा। इस समय दोनों बार एनीमा लेना जरूरी है। सप्ताह में १ या २ बार सूर्य स्नान भी ले सकते हैं। इसके पश्चात् १ मास तक फल व तरकारियों पर रहना चाहिये। परिश्रम से बचना चाहिये। प्रातः व सायंकाल हिप बाथ लें। इसे ७ मिनट से बढ़ाकर ३० मिनट तक ले जावें।

[शेष १०४ पेज पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे रुधिर के सफ़ेद कण

[जगेश्वर दयाल वैश्य, एम० ए०, बी० एस-सी०, चुरू]

[एलोपैथी सिद्धान्त को लेकर लिखा हुआ यह लेख रक्त कणों पर अच्छा प्रकाश डालता है। पाठकों की इससे जानकारी बढ़ेगी होगा—सं० ।]

रुधिर—साधारणतया आँखों से देखने पर रुधिर लाल रंग का तरल दीख पड़ता है। यह पानी से गाढ़ा होता है। सूखने पर कालापन लिये हुए लाल रंग के धब्बे रह जाते हैं। हमारे शरीर के $\frac{1}{13}$ वें भार के बराबर रुधिर होता है। सूक्ष्म दर्शक-यंत्र द्वारा देखने पर रुधिर एक बिना रंग का तरल दीख पड़ता है जिसमें छोटे-छोटे कण पड़े हुए हैं। यह कण दो प्रकार के होते हैं एक लाल रंग के और दूसरे सफेद रंग के। लाल कणों की संख्या सफेद कणों के मुक़ाबले में कहीं अधिक होती है, इसलिए रुधिर का रंग लाल दिखाई देता है। प्रत्येक ५०० लाल कणों के पीछे प्रायः एक सफेद कण पाया जाता है। लाल कण पैसे की भाँति गोल होते हैं लेकिन किनारों के मुकाबले में बीच में से पतले होते हैं। लाल कण का व्यास लगभग $\frac{1}{3200}$ इंच होता है। लाल कण स्वयं पीले रंग के होते हैं लेकिन एक लाल रंग का पदार्थ होता है जिसको हिमोग्लोबिन (Haemoglobin) कहते हैं। हिमोग्लोबिन में ऑक्सिजन के साथ मिलने का एक विशेष गुण पाया जाता है। ऑक्सिजन से मिलने पर ऑक्सी-हिमोग्लोबिन बनता है उसका रंग सुर्ख लाल होता है। हिमोग्लोबिन फेफड़ों में से ऑक्सिजन लेकर शरीर के तमाम भागों में पहुँचाते हैं। लाल कणों के रुधिर में कम हो जाने पर शरीर सफेद वा पीला पड़ जाता है, इस रोग को एनीमिया (Anaemia) कहते हैं।

सफेद कण का आकार क्षण-क्षण में बदलता रहता हैं। लाल कण स्वयं नहीं चलते हैं लेकिन सफेद कण बहुत तेजी से इधर-उधर चलते फिरते हैं।

सफेद कण शरीर को निरोग और स्वच्छ रखने का कार्य्य करते हैं।

सफेद कणों का कार्य्य—हमारे शरीर रूपी राज्य की रक्षा के लिये सफेद कण सेना का काम करते हैं। जिस समय किसी रोग के कीटाणु हमारे शरीर पर आक्रमण करते हैं तो शरीर के कोषों के रक्षार्थ रुधिर के सफेद कण उनके आक्रमण का उत्तर देते हैं। इस युद्ध में सहस्रों कीटाणु, शरीर के कोष और रुधिर के सफेद कण मारे जाते हैं। कभी शरीर के कोषों की व सफेद कणों की विजय होती है और कभी रोग के कीटाणुओं की। जब शरीर की विजय होती है तो मनुष्य शीघ्र ही अपना पहिले का सा स्वास्थ्य बना लेता है; किन्तु जब कीटाणुओं की जीत होती है तो रोग प्रतिदिन बढ़ता जाता है।

जब रोग के कीटाणुओं की संख्या बहुत होती है और सफेद कणों की संख्या कम होती है तो सफेद कणों के हारने की सम्भावना रहती है। इस लिये जिन मनुष्यों के शरीर में किसी कारण से रुधिर कम हो जाता है वे रोगों के शिकार बहुत आसानी से हो जाते हैं।

जो मनुष्य शुद्ध सात्विक भोजन करता है और उसे अच्छी प्रकार पचा लेता है उसके सफेद कण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग के कीटाणुओं का मुकाबला अच्छी प्रकार कर सकते हैं। इसलिये ऐसे मनुष्यों को जो भोजन में बहुत बदपरहेज़ी करते हैं रोग बहुत आसानी से सता पाते हैं। निर्बल माता-पिता की सन्तान के भी सफेद कीटाणु निर्बल होते हैं इसलिये वे अक्सर रोग ग्रसित रहते हैं।

हमारे स्वास्थ्य पर आत्मिक बल का बहुत प्रभाव पड़ता है। जो शोक और चिन्ता को अपने पास नहीं ठहरने देते, जो ऐसा दृढ़ संकल्प रहते हैं कि हम स्वस्थ हैं और स्वस्थ रहेंगे, जो रोग व कीटाणुओं के नाम से भय नहीं खाते, उनके सफेद कण बहुत बलवान होते हैं।[1]

[1]नोट—उपर्युक्त विचार एलोपैथ डाक्टरों के हैं और भ्रमपूर्ण हैं। रक्त के सफेद कण वस्तुतः कफ के कण हैं। यदि रक्त में ये सफेद कण अधिक बढ़ जायँ तो शरीर निर्बल हो जाता है रोग निवारक शक्ति घटती है। जर्मनी के डाक्टर बी० कैम्प ने अपनी पुस्तक ब्लड में इस विषय को बहुत स्पष्ट किया है। अध्ययनशील पाठकों को उक्त पुस्तक पढ़नी चाहिए—सं०।

[१०६ पेज का शेष अंश]

प्रश्न—जब काफी पैखाना होता है तो Nature Cure वाले इसको बहुत अच्छा मानते हैं और सफाई कहते हैं। पर इस सफाई से लोग मर क्यों जाते हैं? इस सफाई से तो तबीयत अच्छी होनी चाहिये थी, परन्तु हम देखते हैं कि हैजा से हज़ारों आदमी मरते हैं।

श्री रामनाथ जी कपूर
Mechanical Engineer, Jamshedpur.

उत्तर—Aucte (तीव्र) बीमारियों से शरीर की ज़रूर सफाई होती है। गलत इलाज और प्रतिकूल वातावरण से ये बीमारियां घातक हो जाती हैं। जितनी भी तीव्र और नवीन बीमारियां हैं ये सब शरीर को शुद्ध और पवित्र करने को आती हैं, पर हम इन बीमारियों को दबाने की कोशिश करते हैं। पर इस लड़ाई में कभी-कभी शरीर स्वतः नष्ट हो जाता है। इससे बचने के लिए एक ही उपाय है। रोग को हटाने में प्रकृति को मदद करो। इससे रोग की भयंकरता कम हो जायगी। रोग अपना समय लेकर आप से आप खत्म हो जायेगा। हम प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्त को मानने वाले यह विश्वास करते हैं कि ये नवीन और तीव्र बीमारियाँ प्रायः शत प्रतिशत अच्छी होनी चाहिए। ९५ प्रतिशत रोग तो प्राकृतिक चिकित्सा से अवश्य ही अच्छे होते हैं, और स्वास्थ्य पहले से ज़रूर अच्छा होता है।

बा० प्र० सिं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृति चिकित्सा का एक चमत्कार

'पित्त की पथरी कैसे निकली ?'

[श्री रमाचरण, डी० यच-पी०, प्रकृति-चिकित्सा-विद्]

"आप शायद हमें भूले तो न होंगे ?" अपना झोला चौकी पर रखते हुए कुल एक नवागन्तुक सज्जन ने कहा।

मैंने सन्दिग्ध स्वर में जवाब दिया—"कुछ ठीक याद नहीं आ रहा है, माफ कीजियेगा।

"मैं १९४१ में ग्राम उद्योगों के सम्बन्ध में आप से आकर मिला था और उसी समय पित्तशूल के एक रोगी की चिकित्सा के सम्बन्ध में भी आप से कुछ सलाह ली थी। उससे आश्चर्यजनक फल हुआ।"

"भगवान् को धन्यवाद ! मेरी सलाह से कल्याण तो हुआ। पर ज़रा विस्तार से सुनना चाहूँगा। क्योंकि बीच में कुछ ऐसे बवंडर में पड़ गया था कि पूर्व के कितने विचार-सूत्र ही खो से गये हैं।"—मैंने अपने १६½ मास के डिटेन्शन (नज़रबन्दी) की ओर इशारा करते हुए कहा।

वे बमनगांमा (जिला भागलपुर) से आरहे थे, रात भर के जगे हुए; और बारह बजे दिन का समय हो रहा था। इसलिए जल्दी जल्दी नहाने खाने का प्रबन्ध कर मैं भी भोजन और विश्राम में लगा।

तीन बजे हम लोग रिक्शे पर सवार होकर ग्रामउद्योग कार्यालय को चले। उन्हें एक कोल्हू एवं कुछ वर्धा-चक्कियां लेनी थी और कोल्हू बनाने वाला एक मिस्त्री भी कुछ दिनों के लिए चाहिये था। खादी और ग्रामोद्योगों में आपको काफी रस है और एक सच्चे लगन वाले कार्यकर्त्ता हैं।

रिक्शे पर सवार होकर हमने उन्हें याद दिला दिया—"बाबू राजेन्द्र लाल दास जी, ज़रा उस पित्तशूल के रोगी का अनुभव अब सविस्तार सुनाइये। मुझे जरा भी ख्याल नहीं है कि मैंने क्या सलाह दी थी।

वे कहने लगे—'कहानी रोगी की नहीं रोगिणी की है और वह रोगिणी मेरी स्त्री है। १९४१ में जब मैं यहाँ आया था तब उसे पित्तशूल के दौरे हर दूसरे तीसरे दिन हुआ करते थे और बड़े ही सख्त हुआ करते थे। डाक्टर लोग कहने लगे थे कि कलकत्ते ले जाकर चीरा लगाये बिना निस्तार नहीं है, क्योंकि पित्त की थैली में काफी बड़ी पथरी बन गई है। उसके गलाने और निकालने का कोई दूसरा उपाय नहीं है। आप से पूछने पर आपने फल-रस, विशेष कर नारंगी-रस पर रखने और हिप-बाथ देने का आदेश दिया था और दौरा होने पर जैतून का तेल और नींबू का रस पिलाने का। यहाँ से आकर हमने वही किया। आरम्भ में तो दौरे एकदम बन्द हो गये और ताकत बढ़ने लगी पर एक महीने बाद बड़ा ही तेज दर्द उठा। उस समय एक बार में ही चार आन्डस जैतून का तेल और नींबू का रस पिला दिया गया जिससे कुछ देर बाद दस्त आये और उनमें कई रंगों के बहुत से छोटे-छोटे पत्थर गिरे। दर्द बन्द हो गया और रोगिणी बिलकुल अच्छी हो गई। डाक्टरों को वह पत्थर दिखाये गये तो वे आश्चर्य में पड़ गये और कहने लगे कि कलकत्ते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेजकर इन पत्थरों की जांच कराओ तब ठीक-ठीक इलाज हो सकेगा। रोगिणी ने अपना साधारण खानपान आरम्भ कर दिया और दो बरस तक वह बड़े मज़े में रही। पर इस साल फरवरी (१९४४) में फिर वैसा ही दर्द उठने लगा तो उसने फिर रसों फलों का आहार शुरू किया। हिप बाथ वगैरह तो लिया नहीं पर केवल आहार-नियंत्रण से ही एक महीने बाद फिर उसी रूप में हरे-हरे कितने ही पत्थर गिरे जिन्हें हमने एक बोतल में इकट्ठा कर रखा है। अब फिर वह अच्छी है। किन्तु दुबारा पत्थर न बने इसका क्या कोई उपाय नहीं है?"

"क्यों नहीं, जब थोड़े से आहार नियंत्रण से पथरी टूटकर निकल सकती है तो उससे भी थोड़े संयम से वह बनने ही नहीं पायेगी, इसमें सन्देह ही क्या है?"—कहते-कहते पुरानी बात याद आ गई। डा० एल० जे० सिंह ने अपने (medical talk journal) मेडिकल टॉक मासिक पत्र में एक रोगी का अनुभव देते हुए जो चिकित्सा-क्रम बताया था वही हमने श्री राजेन्द्र लाल दास जी को नोट करा दिया था और अपने एक निकटतम सम्बन्धी के पित्तशूल की चिकित्सा का अपना अनुभव भी बताया था। हमारे उन सम्बन्धी को भी पटने भेजकर चीरा लगाने की बात लगभग निश्चित हो चुकी थी। भगवान् की कृपा से हमारे आग्रह को मानकर उन्होंने आहार-नियंत्रण और हिप-बाथ के प्रयोग किये और चीरा लगाने से बच पाये। अब भी कुछ हद तक अपने को नियंत्रित आहार पर रखते हुए वे पित्त पथरी के शूल से बचे रहते हैं, कभी-कभी हिप-बाथ भी ले लिया करते हैं। यद्यपि इस बात की हमें बराबर शिकायत रहती है कि जिस ढंग से उन्हें रहना चाहिये उस ढंग से वे अपने को नहीं रखते हैं। परन्तु उदार प्रकृति ने उनके अधूरे प्रयोग का ही इतना अधिक सुफल उन्हें दिया है।

[१०० पेज का शेष अंश]

फलों में मकोय, खीरा, टमाटर, खरबूजा आदि का प्रयोग कर सकते हैं। केला कटहल व कंद आदि नहीं खाना चाहिये।

रात को सोते समय एक ग्लास पालक का रस पीना लाभकर है। पानी का बहुत कम प्रयोग करना चाहिये। पानी के स्थान पर संतरे का रस व दूध फाड़ कर निकाले गये पानी का प्रयोग करना अच्छा है।

डा० लोग इस रोग में भी टी० बी० की तरह अधिक व पौष्टिक चीजें खाने की सलाह देते हैं। शायद उनके सिद्धांत से मोटापन ही स्वास्थ्य की निशानी है। किन्तु मोटे आदमी दुबले पतले आदमियों की अपेक्षा अधिक बीमार पाये जाते हैं। अतएव हमें उक्त विचार त्याग कर कफ रहित सादा भोजन—फल व शाकाहार का सेवन कर रोग मुक्त हो जाना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्नोत्तर

प्रश्न १—जब कि दूध के पचने का समय कम से कम दो घंटे बतलाया गया है तो फिर कल्प में इसके लिए सिर्फ एक-दो घंटे के अंतर से ही लेने की क्यों आज्ञा दी गई है। इतने समय में न तो दूध का पाचन ही होता है, न पेट को विश्राम।

प्रश्न २—माता अपने बच्चे को दूध किस अंतर से पिलावे तथा दूध के समय में (अर्थात् जितने अर्से तक बच्चा दूध पीए) और क्या-क्या पदार्थ खिलाया जाए जिससे बच्चा हृष्ट-पुष्ट रहे और दाँत सुगमता से निकल आवें। बच्चों को दूध (मां का) कितने वर्ष तक पिलाना चाहिए।—मास्टर कन्हैयालाल सोनी, सिवाना (मारवाड़)।

उत्तर—१—मनुष्य की आँत मुँह से लेकर गुदा द्वार तक २४, २५ फीट लम्बी है। जब हम दूध लेते हैं तो पहले पेट में जाता है और इसके बाद छोटी और फिर बड़ी आँत में। इसकी पाचन-क्रिया मुँह में ही शुरू हो जाती है। पेट में आकर पानी और छेना अलग-अलग हो जाता है और इसके बाद सारी छोटी आंत में इसकी पाचन क्रिया जारी रहती है। दूध नहीं पचने पर पतली टट्टी के रूप में मलद्वार से बाहर निकल जाता है। कभी-कभी दूध कल्प में ऐसा भी हुआ है और होता है कि पहले तीन-चार दिनों तक पतला पैखाना हो, बाद में दूध का वज़न और समय की व्यवस्था से दूध पचने लगता है और फिर पैखाने में शुद्दे बन जाते हैं यहाँ तक होता है कि पैखाना आप से आप नहीं होता इस समय एनीमा लेने की ज़रूरत पड़ती है। धीरे-धीरे दूध की मात्रा बढ़ाई जाती है। यहाँ तक बढ़ाई जाती है जब टट्टी बंध कर ज्यादा कड़ी न हो, बिना कष्ट के गुदा द्वार से बाहर हो जाय। पैखाना बंध जाने के माने अर्थात् शुद्दे हो जाने के माने दूध के पचने से है। दूध हजम होने का माने ही यह है कि गिली टट्टी न हो। कल्प में दूध की पाचन क्रिया जरूर होती है। पाचन क्रिया न होती तो बराबर पतली टट्टी आती। यह कह सकते हैं कि पेट को आराम नहीं मिलता। पर कल्प के माने यह नहीं हैं कि हम पेट को आराम पहुँचाएं। कल्प का माने तो यह हुआ कि पेट को ताकत मिले और कल्प से यह होता है कि मुँह से लेकर गुदाद्वार तक सारी आंतों के अन्दर की दिवालों को साफ कर देता है और एक नया जीवन प्रदान करता है। (Changes the flora of ths inner intestines) कभी-कभी कल्प में कै होने की सम्भावना होती और कभी होती भी है। पर दूध लेने की मात्रा और समय में कमी नहीं की जाती है। कै के पांच मिनट बाद ही दूध लेने को कहा जाता है। दूध सिर्फ घंटे-घंटे पर ही नहीं बल्कि आधे-आधे घंटे पर भी दिया जाता है। इस कल्प में जिस मरीज़ को थोड़ा संतरे के रस से भी पेट में तकलीफ होती है उसको भी हम छः सात सेर दूध पिला देते हैं। धीरे-धीरे उसकी दूध पचाने की शक्ति बढ़ जाती है और बाद में रोटी तरकारी या और दूसरे अन्न पचाने लगता है। एक बार गया से इक्कीस साल का एक लड़का अपने यहाँ इलाज के लिये आया। उसका वज़न, केवल २९ सेर था उंचाई ५'-१०" वह केवल अस्थि पजंर ही रह गया था। थोड़ा सा संतरे का रस लेने से भी पेट में तकलीफ होती थी।

उसको यहाँ ४५ दिनों का दूध कल्प दिया गया। धीरे-धीरे ६॥ सेर दूध तक लेने लगा। यहाँ से वह तीन महीने के बाद गया। जाते समय उसका वज़न १ मन ७ सेर था। अब कल्प के चार साल के बाद भी १ मन १६ सेर है। मामूली भोजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता है। इससे पाठक समझ सकते हैं कि दूध कल्प से पाचन क्रिया कितनी बढ़ती है।

उत्तर २—माता को बच्चे को दूध पिलाना इस पर निर्भर करता है कि बच्चा एक बार में कितना दूध हजम कर सकता है। हज़म नहीं होने से पतली टट्टी होती है। अगर एक बार ज्यादा दूध पिलाने अर्थात् तीन-तीन घंटे पर ज्यादा दूध पिलाने से पतला पैखाना होता हो तो दूध की मात्रा कम करके दो-दो घंटे पर पिलाना चाहिए। जब दूध हजम होने लगे तो समय बढ़ा देना चाहिए। तीन-तीन चार-चार घंटा समय काफी होगा। बच्चे को कभी-कभी संतरे का रस भी चूसने के लिए देना चाहिए। माता का दूध ज्यादा समय तक भी पीने में कोई नुकसान नहीं होगा। हमारा तो कहना है कि पाँच सात साल तक बच्चे को केवल दूध और फल दिया जाय।

वा० प्र० सिं०

प्रश्न १—मुझे दूध गाय का गरम अथवा धारोष्ण हजम नहीं होता है। पाव भर दूध पीते ही पेट में गड़बड़ी होकर एक पतला दस्त हो जाता है। पहले मैंने "जीवन-सखा" में पढ़ा था कि जिसको दूध हजम नहीं होवे उसको दूध में नींबू का रस डाल कर पीना चाहिए। सोंठ गरम दूध में ही डालकर पीना चाहिये या धारोष्ण दूध में भी नींबू का रस डाकर पी सकते हैं। दूध में नींबू डालकर पीने से कितने दिनों बाद दूध बिना नींबू के हजम होने लगेगा या फिर बिना नींबू के दूध हजम नहीं हो सकेगा।

प्रश्न २—गर्भवती को दूध पीना चाहिए या नहीं इसके अलावा और क्या-क्या खाना लाभदायक है, गर्भवती को शहद का उपयोग किस तरह से करना चाहिए।

गणपतलाल कोठारी मु० सामानेर-जिला-जयपुर

उत्तर १—दूध का हजम होना भी आदत पर निर्भर करता है। कुछ लोगों को दूध पीते ही पेट में वायु भर जाती है, पेट में वायु के कारण कष्ट होता है या पतली टट्टी हो जाती है। इसलिए यदि ऐसे मनुष्य दूध लें उनको यह ध्यान रखना चाहिये कि दूध इस रूप में लें कि वह जल्दी हजम हो जाए और वायु कम बने। गरम दूध में नींबू डालने से दूध फट जायेगा। इसलिये ठण्ढा करके या ठण्ढे दूध में नींबू का रस डालें और धीरे-धीरे करके पिये। और दूध की मात्रा भी कम हो, ऐसे लोगों को छटांक दो छटांक से दूध शुरू करना चाहिए, जैसे जैसे दूध हजम होने लगे मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। यह कहना बहुत मुश्किल है कि दूध कितने दिनों में कितनी मात्रा में आसानी से हजम होने लगेगा।

उत्तर २—गर्भवती स्त्री को मांसवर्द्धक अर्थात् प्रोटीन वाले पदार्थ खाने को देना चाहिए। दाल दूध, बादाम और नारियल इत्यादि मेवे मांसवर्द्धक हैं। मांसवर्द्धक पदार्थों की कमी भोजन में रहने पर बच्चा गर्भ में ठीक से बढ़ नहीं सकता है गर्भिणी के रक्त से ही बच्चे को रक्त और मांस मिलते हैं। इसलिए गर्भिणी के भोजन में मांसवर्द्धक पदार्थों का होना अत्यन्त आवश्यक है। फिर यह भी जरूरी है कि गर्भिणी के शरीर में जो रक्त बने वह शुद्ध बने जिससे बच्चे का शरीर शुद्ध रूप से बन सके, शुद्ध रक्त के लिये क्षारमय भोजन जरूरी है। खट्टे मीठे सब प्रकार के फल, केला छोड़कर, लहू साफ करने में तेज है। फल के बाद तरकारी और दूध का स्थान है। धरती के नीचे पैदा होने वाली तरकारियां क्षारमय नहीं होती, अतः त्याज्य हैं। गर्भावस्था के आठवें और नवें महीने से दूध का सेवन बन्द कर देना चाहिए, क्योंकि दूध लेने से बच्चे का सिर बड़ा हो जाने की सम्भावना रहती है जिससे बच्चा जनने में गर्भवती को असहनीय पीड़ा होती है। शहद का प्रयोग दूध के साथ सर्वोत्तम है। इसका उपयोग नींबू के रस, पानी एवं रोटी इत्यादि के साथ भी कर सकते हैं।

[शेष १०२ पेज पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा में क्रान्ति

[श्री कृष्ण शर्मा]

क्या प्राचीन मनुष्य रोग से सर्वथा मुक्त था ? या यों समझिए कि वह पूर्ण सुखी या स्वस्थ था तो क्या वह उसकी आदर्श अवस्था थी ? कहते हैं कि प्रकृति के साम्राज्य में पशु पक्षी अत्यन्त सुखी और स्वस्थ हैं तो क्या यह आदर्श मनुष्य के लिए सराहनीय है ? कल्पना और सत्य एक नहीं। क्या पशु और पक्षियों में जीवन के लिये संघर्ष नहीं है। बलवान दुर्बल को खाता है और बड़ा छोटे को खाता है। जीवन का क्रम ऐसे ही चलता है। विशेष कर निम्नकोटि के प्राणियों में तो प्रत्यक्ष और भयानक रूप में ऐसा देखा जाता है वास्तव में विकास का रास्ता संघर्षमय है। क्या मानसिक अथवा आध्यात्मिक विकास में ऊँच नीच भावनाओं, विचारों और वृत्तियों में संघर्ष नहीं होता ? बिना इसके विकास असम्भव अथवा अपूर्ण है।

हम इतना अवश्य कह सकते हैं कि पहले रोग या व्याधियाँ कम थीं क्योंकि प्रकृति के निकट रहने से वे उसके नियम के धारा प्रवाह में बहते थे। रोग स्वयं कोई आपत्ति तो है नहीं। मगर ध्यान से देखा जाय तो वे हमारी भलाई के लिए ही आते हैं। उनका उद्देश्य रचनात्मक होता है अगर कोई उसे ठीक तरह पहचाने और समझे।

लेकिन सवाल यह उठता है कि क्या मनुष्य उस समय पशु-पक्षियों की भाँति अपने अंतर-प्रेरणाओं (Natural Instincts) से ही संचालित (Guided) था अथवा अपनी चेतन्य बुद्धि से ही संचालित था। पशुओं में स्वयं-रक्षा की एक प्रवृति (Instinct of Self preservation) होती हैं जो उनको हर एक संकट से बचाती रहती है। अरे किसी बिल्ली या कुत्ते को बीमार होने पर कोई यह थोड़े कहता है कि उपवास कर डालो। अपनी पाश्विक प्रवृति (animal instinct) ही उनको ऐसा करने पर बाध्य करती है।

अगर मान लिया जाय कि पुरातन काल में मनुष्य शरीर से पूर्ण स्वस्थ और बलवान होते थे तो क्या यह भी स्वास्थ्य की पराकाष्ठा है ? शरीर-स्वस्थ होना ही आरोग्यता की एकमात्र कुंजी या लक्षण नहीं है। क्या वह मनुष्य भय, काम, क्रोध आदि के मनोविकारों से रहित था ? क्या उसके अन्दर आन्तरिक शांति जो शरीर, मन और आत्मा के पारस्परिक सामंजस्य अथवा संकलन के फलस्वरूप होती है प्राप्त थी ? अगर नहीं तो वह स्वास्थ्य सच्चा और स्थायी कदापि नहीं था।

हम आज भी जंगली जातियों में (Spirit-doctors) या मानसिक-चिकित्सक पाते हैं जो रोगी के घर जाकर भाँति-भाँति के वस्त्र पहन कर भूत-प्रेत भगाते फिरते हैं। डाक्टर वर्तमान मानव समाज ही में नहीं पाये जाते वरन् बहुत प्राचीनकाल से चले आते हैं और उनकी उत्पत्ति का पता लगाना उतना ही कठिन है जितना समाज या स्टेट का।

वास्तव में स्वास्थ्य की कुंजी मन ही है। मन ही ऐसी कड़ी है जो एक तरफ तो स्थूल शरीर व बाह्य जगत से सम्बद्ध है तो दूसरी तरफ हृदय और आत्मा के टंकार के कम्पन भी स्पष्ट कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर में लय कर देती है। शरीर और आत्मा के रहस्य का पता तो मन ही से चल सकता है।

मैंने जो डाक्टरों के उत्पत्ति का प्रश्न का संकेत किया है तो उससे मेरा तात्पर्य उनके बारे में खोज करने का नहीं। मैं केवल चिकित्सा के विषय को लेकर आगे बढ़ूँगा।

प्राचीन से प्राचीन धर्म को अगर हम लें तो मालुम पड़ेगा कि अब धर्म जीवन के हित के लिए कोई न कोई स्वास्थ्य के लिए उपयोगी नियम का अवलोकन जरूर करते हैं। उपवास, स्वच्छता, सादगी, संयम पर सब ही जोर देते हैं। यहाँ तक कि आहार-विहार तक में कुछ नियम बना दिये गये हैं। इससे स्पष्ट है कि हमारे पूर्वजों ने शरीर के स्वास्थ्य अथवा आयुष्य की वृद्धि को महत्त्व-पूर्ण स्थान दिया है। लेकिन इसके साथ मानसिक अथवा नैतिक विकास पर भी उतना ज़ोर दिया है जो बिना शारीरिक स्वास्थ्य के सम्भव नहीं।

हमारे देश में आयुर्वेद एक अद्भुत ग्रंथ है जिसको पढ़कर विस्मय होता है कि हमारे पूर्वजों ने जीवन के एक मुख्य पहलू पर कितना अनुभव पूर्ण (cotribution) प्रकाश डाला है। उन्होंने स्वास्थ्य के अनमोल नियम अथवा प्राकृतिक साधनों ही पर नहीं बल्कि रोग के कारण और निदान पर भी निपुणता प्राप्त की है।

ऐसा प्रतीत होता है कि चिकित्सा पहले एक बड़ा पवित्र और महान् कार्य समझा जाता था और इसी लिए अनुभवी महानुभावों और ऋषियों के ही सुपुर्द था। वे निर्लोभ होकर इसका व्यवहार करते थे। यही कारण है कि निष्पक्ष होकर वे मूल प्राकृतिक साधन जैसे जल, रवि, वायु, पृथ्वी आकाश आदि का चिकित्सा के लिये उपयोग करते थे। और साथ ही जगत की सादी जड़ी बूटियों का व्यवहार करके मनुष्य को आरोग्यता प्रदान करते थे।

समय के परिवर्तन के साथ इस दैवी विद्या में भी दोष आ गये। मेरा तो अनुमान यह है कि आरोग्यता का पवित्र और परोपकारी कार्य महान् विद्वानों अथवा उदासीन ऋषियों के हाथ से निकल कर व्यवसायी (professional) चिकित्सकों के हाथ चला। स्वभावतः जब उनकी तादाद बढ़ी तो उनमें स्पर्धा (Competition) भी सजग हो गयी। अब उनमें इस विषय में द्वन्द्व छिड़ा कि जो जितना जल्दी चंगा कर दे उतना ही वह चतुर और विद्वान् है। तदनुसार अब वैद्य रोग के लक्षणों का शीघ्र ही शमन करने का उपाय ढूँढ़ने लगे। शरीर की सफाई और शोधन क्रिया की तरफ़ से उनका ध्यान हट गया। जब उन्होंने रोग के लक्षणों के शमन के उपाय का अध्ययन करने लगे तो उन्हें औषधियों का ही एकमात्र सहारा मिला। अब क्या था औषधियाँ भी जोरों से चलने लगीं। जहाँ पहले साधारण और हलकी औषधियों का प्रयोग होता था वहाँ एक साथ नई और तेज़ औषधियों का दौर चलने लगा।

जिस तरह हमारा मूल सरल पवित्र और पूर्ण वैदिक धर्म कालांतर में अनेक आडम्बरों अथवा मिथ्याभ्रम (Superstitions) से विक्षिप्त हो गया। उसी प्रकार मूल और सत्य आयुर्वेद समय के परिवर्तन से ऊपरी आडम्बरों और औषधि रूपी भाड़ झंकारों से भर गया।

समझ में नहीं आता कि आखिर कैसे त्रिकोण जैसा अद्भुत सिद्धान्त का उपयोग (Arpplication) ऐसे स्थूल रूप में होने लगा। सूर्य, वायु, जल, आकाश जैसे मूल प्राकृतिक शक्तियों का अब बिलकुल कोई स्थान ही नहीं रह गया। उपवास, वमन, विरेचन, वस्ति. स्वेदन आदि शोधक क्रियाओं की अवहेलना हो गयी। कितनी दीन और शोचनीय दशा हो गयी है हमारे आयु के विज्ञान (Science of life) की जो मनुष्य को रोग से मुक्ति ही नहीं बल्कि दीर्घायु प्रदान करता था। क्या वर्तमान जगत में हमारे प्राचीन १०० वर्ष की आयु की मर्यादा आज के वैद्य रख सके हैं।

औषधि प्रणाली भारतवर्ष ही में नहीं वरन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारे संसार की विख्यात प्रचलित चिकित्सा विधि थी (Universal Domination of Medicines) और अब भी है। लेकिन योरोपीय औषधि प्रणाली यहाँ की प्रणाली से भी गयी बीती थी। आयुर्वेद तो रोग का कारण आंतरिक ही मानता था और अन्दरूनी और बाहरी सफाई दोनों पर जोर देता था। लेकिन पश्चिमी औषधि विज्ञान तो बड़ा विचित्र था। वे बीमारी को कोई बाहरी व्याधा या 'Devil' समझ कर किसी दूसरे बलवान शक्ति की सहायता से भगाना चाहते थे। इस एलोपैथिक पद्धति ने पाश्चात्य देशों में अपनी जड़ मजबूत की और उसके पुजारियों ने सरकारी अनुमति और सहयोग प्राप्त भी कर लिया। अब क्या था भिन्न प्रकार के धातु, नशीले और विषैले पदार्थ जैसे विपरीत प्रभाव वाली औषधियों का उपयोग होने लगा। ये औषधियाँ स्थूल रूप में तत्काल फायदा तो जरूर पहुँचाती थीं परन्तु इनका बुरा प्रभाव शरीर में बाद में भयंकर रूप में होने लगा। यह रोग नाश करने में सर्वथा नपुंसक साबित हुई क्योंकि पुराने रोग तो दब जाते लेकिन फिर थोड़े समय में दूसरे रूप में प्रकट होने लगे। उधर जब योरप में भयंकर महामारी जैसे प्लेग इनफ्लुएंजा आदि फैली तो एलोपैथिक डाक्टरों के प्रयत्न सब निर्थक साबित हुए। लेकिन इन महामारियों से उन्होंने कुछ सबक जरूर सीखे।

सन् १६६५ में लंदन में प्लेग का बड़ा भारी प्रकोप हुआ। इसके बाद यानी सन् १६६६ ई० में भयंकर आग भी लगी। उस समय नये लंदन के निर्माण में शहर के फैल व मकान व सड़कों की सफाई का विचार हुआ। मकान स्वास्थ्य की दृष्टि से पहले की तरह सटे हुये वह गढ़े और अंधेरे न बन कर स्वच्छ व फैले हुये बनने लगे। अब लोगों का शहर की सफ़ाई पर ध्यान गया और उन्हें पता चला कि रोग का सम्बन्ध अपने दूषित वातावरण से क्या है।

उन्नीसवीं शताब्दी के पिछले भाग में (Last half of 19th centnry) डाक्टरी दुनिया में दो व्यक्तियों ने एक हलचल मचा दी। वह अनहोनी घटना थी कीटाणुओं की खोज। वह दो व्यक्तियों थे (1864) और (बी कैंप लुई पास्टियर) मेहनत दोनों की लेकिन श्रेय मिला भाग्यवान लूई पैस्टीयर को। उन अति सूक्ष्म जीव की खोज ने रोगों का दृष्टिकोण ही बदल दिया। रोग का कारण ये ही कीटाणु माने जाने लगे। रोग की सारी जिम्मेदारी बेचारे इन सूक्ष्म और अदृश्य कीटाणुओं पर ही पड़ी। चोर पकड़ा गया तो इसकी मरम्मत भी होनी आवश्यक थी। उनके मारने का उपाय भी बहुत जल्द निकल आया। ~~विकम्मा~~ बी. कैंप बेचारा चिल्लाता ही रह गया कि ये निर्दोष जीव गन्दगी की सफाई के लिए आते हैं। गन्दे शरीर की गन्दगी साफ़ कर दो तो वे स्वयं भाग जायेंगे। उसकी (microzyme theory) दबा दी गई। उन कीटाणुओं के मारने के लिये फिर वही स्थूल विष, (Vaccination Serum, anti toxin etc. भाँति के गन्दे उपाय काम में लाये गये और मनुष्य के रक्त को विषैला, कमज़ोर और शक्तिहीन बना दिया गया। अब तो जीवित जन्तु विष के रूप में शरीर के अन्दर पहुंचाये जाने लगे हैं। दवाओं और टीकों ने उग्र रूप धारण कर लिया। उसकी प्रतिक्रिया भी होना स्वाभाविक था। क्रांति के लिये जमीन तैयार हो रही थी।

एलोपैथी की उन्नति के साथ उसके विरोधी भी बढ़ते गये। हर समय कोई न कोई व्यक्ति ऐसे रहे हैं जो दवाओं के विरुद्ध अपनी आवाज़ उठाने का प्रयत्न करते रहे। अभी (Radical) मूल क्रांति बहुत दूर थी। लेकिन जर्मनी में आखिरकार एक एलोपैथी का विरोधी उठ खड़ा हुआ। उसका नाम था हनीमेन (Hahneman) उसने एक नई चिकित्सा प्रणाली होमियोपैथी का आविष्कार किया। आपका कहना है कि एलोपैथिक औषधियां विनाशकारी होती हैं। वे रोग को अच्छा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने के बजाय उनको केवल दबाती और अथवा जहर शरीर में फैलाकर उसे अस्वस्थ बनाती हैं। इस तरह यह रोग से भी कहीं अधिक घातक होती हैं। रोगी को अधिक मात्रा में विपरीत स्वभाव वाली औषधि देने से रोग दब जाता है। यदि विकार के विरुद्ध न देकर समान गुण वाली औषधि दी जाय तो विकार के निकालने में सहायता मिलेगी और रोग तेजी से निकल जायगा। "Similia Similibus Curantur" अर्थात् अनुकूल प्रभाव वाली औषधियों द्वारा चिकित्सा के सिद्धान्त के अनुसार इनकी औषधियाँ बहुत ही अल्प मात्रा में होती हैं तथा रोग के वृद्धि के साथ-साथ औषधि की मात्रा अल्पतर होती जाती है। इस पद्धति के चिकित्सक रोग के नाम के आधार पर नहीं वरन् रोग के लक्षणों को देखकर औषधि देते हैं। वह प्रत्येक रोग में वही दवा देता है जो रोग मनुष्य में उसी रोग के लक्षण उत्पन्न कर दे।

यह क्रान्ति औषधियों के ही क्षेत्र तक सीमित रही। इसका महत्व एलोपैथिक के विरोध में एक रचनात्मक, सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक औषधि प्रणाली को खड़ा करके जनता की आँखें खोलना था। भोजन में कुछ सुधार के अतिरिक्त और कोई विशेष प्राकृतिक नियम या सूक्ष्म शक्तियों का अनुकरण नहीं किया। अभी तक यह प्रणाली मनुष्य को दवाओं की गुलामी नहीं छुड़ा सकी और न कोई स्वास्थ्य का जीता जागता, निश्चित आदर्श मनुष्य के सामने रख सकी।

मनुष्य ने अब तक अनेक क्षेत्रों में स्वतंत्रता प्राप्त कर ली थी। रोग के क्षेत्र में वह अब भी स्वतंत्रता प्राप्त न कर सका। वह अब भी स्वयं अपने शरीर और मन का स्वामित्व न प्राप्त कर सका था। अभी तक वह स्वास्थ्य के रहस्य को ठीक तरह न समझ पाया था। प्राकृतिक साम्राज्य में रह कर भी इसी प्राकृतिक सुख व शान्त की अनेक विधियाँ दुर्लभ थीं।

जर्मनी ही में एलोपैथिक के विरुद्ध आन्दोलन उठा था। वहीं वह आन्दोलन अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचा। मनुष्य के बंधन टूटनेवाले थे। वह प्रकृति के साम्राज्य में बिलकुल निर्द्वन्द्व व पूर्ण स्वतंत्र होकर विचरना चाहता था। आखिरकार अठारहवीं शताब्दी में ग्रेफेनवर्ग निवासी प्रेसनीज़ नाम के किसान ने इस महान् सुधारक आन्दोलन का निर्माण किया। उसका चिकित्सा साधन था ठंडे झरनों व तालाबों में जल चिकित्सा ताजी और स्वच्छंद वायु, व्यायाम और सादा और प्राकृतिक भोजन इत्यादि यही प्राकृतिक साधन भावी प्राकृतिक चिकित्सा के विकसित रूप का मूल कारण अथवा केन्द्र बने। इसके बाद विविध सज्जनों द्वारा प्राकृतिक चिकित्सा में जल चिकित्सा के अतिरिक्त उपवास, एनीमा का उपयोग, भोजन को वैज्ञानिक ज्ञान, सूर्य, रंग, वायु, बिजली का प्रयोग, मालिश, व्यायाम आदि का भी विकास हुआ।

स्थूल शक्तियों के विनाशकारी प्रभाव स्पष्ट हो गए थे। तदापि अब सूक्ष्म शक्तियों के प्रति चिकित्सकों का ध्यान गया। अनुभव से सिद्ध हुआ कि सूक्ष्म शक्तियों का अगर ठीक तरह से प्रयोग हो तो वे अद्भुत चमत्कार दिखाती हैं और स्थूल शक्तियों के मुकाबले ज्यादा उपयोगी, स्थायी और प्रभावकारी होती हैं।

मनुष्य ने भौतिक शरीर की तरफ ही अधिक ध्यान दिया था। प्रकृति ने मनुष्य को शिक्षा देनी चाही। आधुनिक युग में स्नायुविक अथवा मानसिक रोगों का कोप हुआ। अतएव मनुष्य अब प्रकृति की ओर ही बाध्य होकर मन के साम्राज्य में भी कदम रखा और अपनी बुद्धि के द्वारा मानसिक जीवन के रहस्यमय समस्याओं की खोज की। अचेतन मन (subconcious mind) ने एक नई कुंजी दी जिसके द्वारा मनुष्य मानसिक चिकित्सा की ओर बढ़ा। अब विविध मानसिक चिकित्सा पद्धतियों का जन्म हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज कल मानसोपचार में विचार शक्ति, आत्मबल, (Will-power और Suggestion) संकेतों का प्रयोग होता है। मुख्य मानसिक पद्धतियों में हिप्नोटीज्म (Hypnotism), साइको-एनालेसिस (Psycho-Analysis) और मेग्नेटिक हीलिंग (mneagestic Healing, passes and massage) मुख्य हैं। इन सबका विकसित रूप आध्यात्मिक चिकित्सा है। भविष्य का भावी चिकित्सक (Spiritual healing) आध्यात्मवादी (Spiritualist) पुरुष होगा और चिकित्सा के क्षेत्र में आध्यात्मिक चिकित्सकों का ही बोलबाला रहेगा। वर्तमान समस्या हमारे सामने यह है कि शरीर और मन को चिकित्सा विधियों का एक संयुक्त और व्यवस्थित रूप देकर एक नया सार्वजनिक चिकित्सा-विधान तैयार करें हमको मनुष्य का भौतिक और आध्यात्मिक दोनों पहलू को समझना है।

अब स्वास्थ्य के आदर्श बदल रहे हैं उदाहरण के तौर पर हम कह सकते हैं कि अब स्नायु और ग्रन्थियों का महत्व बढ़ जाता है। और उसके उनको पुष्ट करने की कसरतों पर जोर दिया जाने लगा है। इस क्षेत्र में योगासन सर्वोच्च माने गए हैं। इनसे स्नायु और ग्रंथियाँ दोनों की स्वस्थ होती है।

स्वास्थ्य के भिन्न-भिन्न आन्दोलन से चिकित्सा का भी विकास होता जा रहा है। अब पृथक-पृथक पद्धतियों को एक जगह एक रूप देने का विधान हो रहा है। पूर्व और पच्छिम मिल रहे हैं। पच्छिमी प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली में योग-चिकित्सा का भी समावेश हो रहा है। और इस तरह एक नई चीज़ पैदा हो रही है। अब होमियो-पैथी को भी प्राकृतिक चिकित्सक अपना रहे हैं और इस तरह एक ऐसी सार्वजनिक चिकित्सा पद्धति का निर्माण हो रहा है कि जिसमें प्राकृतिक चिकित्सा, योग-चिकित्सा और होमियोपैथी मिल कर एक 'वर्ग' में रहने लगें। यह मेल हमको एक आदर्श स्वास्थ का संदेश देता है। जहाँ शरीर, मन; और आत्मा एक सामन्जस्य या संतुलन की अवस्था में अंतिम उद्देश्य की ओर ले जा रहा है।

जीवन मधु ! क्या आप जानते हैं ? जीवन मधु !!

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

(१) एक छटांक शहद पानी में मिला कर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है। (२) इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है। (३) शरीर में ताकत आती है। (४) दूध में मिला कर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुंसत्व बढ़ता है। (५) शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है। (६) यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है। (७) शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है। पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये जीवन-मधु का उपयोग कीजिए। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) २॥) सेर। बोतल और पैकिंग अलग ५ सेर से कम शहद बाहर नहीं भेजा जा सकता है। आर्डर भेजते समय कम से कम ५) पेशगी अवश्य भेजें।

मिलने का पता—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह,

११, लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

सोचिए

स्वास्थ्य की समस्या बहुत कठिन मालूम होती है पर है वह आसान। हम प्रकृति से इतनी दूर हट गए हैं कि सरलता को फिर से अपनाना हमें कठिन मालूम होता है। छोटे-छोटे और असाम सुख देने वाले आकर्षण हमें प्रकृति की ओर जाने से रोकते हैं। हम उन्हीं क्षणिक सुखों के पीछे सच्चे स्वास्थ्य तथा स्थाई सुख को भूले बैठे हैं।

"क्या हमने कभी सच्चे स्वास्थ्य का चित्र अपने सामने अंकित किया है? क्या कभी हमने यह समझने की कोशिश की है कि स्वस्थ शरीर सुगठित, सबल, फुर्तीला और कठिन परिस्थितियों में भी अच्छी तरह निभने वाला होता है? क्या कभी हमने यह सोचा है कि स्वस्थ शरीर के अन्दर ही स्वस्थ मस्तिष्क होता है? और स्वस्थ मस्तिष्क ही तेज, चौकन्ना, परिस्थिति को समझने वाला और कठिनाइयों के बीच से सफलता की राह निकालने वाला होता है? क्या हमने यह भी सोचा है कि स्वास्थ्य से मानसिक सुख और दूसरों की सेवा करने का उत्साह हृदय में आता है? स्वास्थ्य के अर्थ केवल रोगों से मुक्त रहना नहीं, वरन् अपनी सभी शक्तियों -शारीरिक, मानसिक नैतिक शक्तियों से सुसज्जित रहना है। किसी साधारण सांसारिक बात में भी स्वास्थ्य की आवश्यकता है।

जीवन सखा इन कई वर्षों से स्वास्थ्य का रास्ता दिखा रहा है। हमें इससे संतोष न होगा कि इनके ग्राहकों की संख्या बढ़े, बल्कि इससे संतोष होगा कि इसके जो भी पढ़ने वाले हैं वे प्रकृति के सरल मार्ग को अपनावें और समुचित भोजन, समुचित व्यायाम प्रर्याप्त विश्राम और अपने भाव और विचारों की शुद्धता से स्वास्थ्य रूपी अनमोल धन को पाकर संसार में आगे बढ़ें। इसमें कोई सन्देह नहीं कि 'जीवन-सखा' के बताए सिद्धान्तों के ऊपर चलने से रहन सहन सादा और प्रकृति के अनुकूल हो जायगी और तब जीवन अधिक से अधिक सुखमय होगा। तभी छोटी-मोटी कलहें दूर हो जावेंगी। पड़ोसी-पड़ोसी को प्यार करेगा, पारिवारिक जीवन आनन्द मय होगा और सभी तरह उन्नति करने की लालसा हृदय में जोर पकड़ेगी।

पाठको, स्वास्थ्य का स्वप्न देखिए, उठते-बैठते, खाते-पीते, सोते-जागते, यही सोचिए कि आप को स्वस्थ होना चाहिए। तभी आपके हृदयों में वह प्रेरणा होगी, जिससे आप स्वास्थ्य प्राप्ति के लिए अनवरत चेष्टा करेंगे और एक दिन सचमुच स्वस्थ हो जायेंगे। उत्साह बड़े काम की चीज है। लेकिन उत्साह अधिकतर क्षणिक होता है। उत्साह को बनाये रखना सफलता की पहली सीढ़ी है।

यह भी सोचिए कि आप हर रोज स्वस्थ और अधिक स्वस्थ हो रहे हैं। ऐसा सोचना न केवल आपको पुराने दोषों के पश्चात्ताप से बचाएगा बल्कि आपकी लालसा को पुष्ट करेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिए

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (चतुर्थ संस्करण) : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ... ४)
(२) सरल शरीर विज्ञान : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ... ... २।)
(३) फल उसके गुण तथा उपयोग; श्री केशव कुमार ठाकुर ... ... १॥।)
(४) मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ॥)
(५) स्वास्थ्य और व्यायाम; केदारनाथ गुप्त ... ... २।)
(६) स्वास्थ्य के नुस्खे : 'जीवन सखा' कार्यालय ... ... ।)
(७) क्या और कैसे खायें : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... ।=)
(८) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १।)
(९) सचित्र हठयोग : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १।)
(१०) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... ॥।)
(११) शक्ति दर्शन; शंकर लालतिवारी ... ... ॥)
(१२) आँख का अचूक इलाज : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २)
(१३) मन की अपार शक्ति : केदारनाथ गुप्त ... ... ॥=)
(१४) जुकाम : महेन्द्रनाथ पांड ... ... १॥)
(१५) शहद के गुण : और उपयोग श्री महेन्द्रनाथ पांडे ... ... ॥।)
(१६) आकृति निदान : लूई कूने ... ... २)
(१७) जलचिकित्सा : राखाल दास पहला भाग ... ... १॥।)
" दूसरा भाग ... ... १॥)
" तीसरा भाग ... ... १॥)
(१८) स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियाँ : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... १॥)
(१९) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदार नाथ गुप्त, एम० ए० ... ... १॥।)
(२०) सूर्य-नमस्कार : श्री भगवती प्रसाद पांडे, बी० ए० ... ... १।)
(२१) शाक और उनके गुण : श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा ... ... ॥।)
(२२) स्वास्थ्य और जल चिकित्सा : प्रिन्सिपल केदारनाथ जी गुप्त ... ... १॥।)
(२३) आहार ही औषध है : डा० एल० एन० रतरा ... ... १।)
(२४) फलाहार चिकित्सा : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २।)
(२५) Nature Cure by H. Lindlahr, M. D. ... 6 12
(२६) Practical Nature Cure by Dr. K.L. Sharma, N. D. ... 7 0
(२७) Fasting Cure by Dr. L. Sharma N. D. ... 0 6
(२८) Drugless Healing by Dr. L. Kameshwar Sharma, M.A., N.D. 0 8
(२९) Food-de-Medicine by Dr. L. N. Ratra, H.M.B. ... 2 0

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पता:—मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रन्थ-भंडार, लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

उत्तरी भारत में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रमुख केन्द्र

'प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह' प्रयाग

जहाँ अब तक न जाने कितने कथाकथित असाध्य रोगों से पीड़ित होने वाले रोगियों ने पहुँच कर अपने को नीरोग और स्वस्थ बना लिया। यही कारण है, जो यह चिकित्सा केन्द्र लगातार उन्नति करता जा रहा है।

यदि आप किसी भयानक रोग से पीड़ित हो रहे हैं, डाक्टरों और वैद्यों की दवा से निराश हो चुके हैं, तो आप फौरन यहाँ पधारें या पत्र देकर चिकित्सा के सम्बन्ध में विवरण प्राप्त करें।

यहाँ इन रोगों की सफलता पूर्वक चिकित्सा होती है—साधारण दुर्बलता, स्नायु दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग, रक्ताभाव, पुराना जुकाम, खाँसी, कब्ज, प्लुरिसी, अनिद्रा, दमा, मृगी, रक्त-चाप, मधुमेह मुटापा, मंदाग्नि, संग्रहणी, गठिया, स्नायु-शूल (scitica) उदर-शूल (colic pain), पथरी (gallstone troubles), गुर्दे की बीमारी, विषाक्त फोड़ा, नासूर, भगंदर, तथा विभिन्न प्रकार के स्त्री रोग जैसे—मासिक स्राव न होना या बहुत अधिक होना, स्राव के समय दर्द होना, प्रदर—इत्यादि इत्यादि।

यहाँ जिस चिकित्सा विधि से रोगी का इलाज किया जाता है उनमें यौगिक क्रियायें, आसन, प्राणायाम, मालिश, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, जल-चिकित्सा, मिट्टी तथा वाष्प-चिकित्सा, आहार चिकित्सा, उपवास, मानसोपचार आदि सम्मिलित हैं।

स्वास्थ्य गृह में भरती होने के नियम—(१) इस स्वास्थ्य गृह में स्त्री और पुरुष दोनों तरह के रोगी भर्ती किये जाते हैं। किन्तु संक्रामक रोगों से पीड़ित होने वाले तथा चारपाई छोड़ने में असमर्थ रोगियों के रखने का प्रबन्ध नहीं है। (२) रोगियों के रहने उपचार तथा सेवा-शुश्रूषा का प्रबन्ध संस्था की ओर से किया गया है (३) रोगियों से चिकित्सा फीस ५०) प्रति मास ली जाती है, जिसमें मकान का किराया और इलाज की फीस दोनों शामिल हैं।

विशेष जानकारी के लिए नीचे लिखे पते से पत्र व्यवहार करें :—

संचालक

प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह

११, लूकरगंज, इलाहाबाद।

Printed at the Mission Press, Allahabad,
Published by Dr. Baleshwar Prasad Sinha, 11, Lookerganj, Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन रक्षा

शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा बिहार के शिक्षा विभागों द्वारा स्वीकृत

इस अंक में पढ़िये

१—भोजन में भी अन्धकार—[श्री कृष्ण शर्मा] ११

२—शिशु व्यायाम—[श्रीयुत प्रकाश चन्द्र यादव, व्यायाम विशारद साहित्य रत्न, भू० पू० सम्पादक "यादव-संदेश"] १२

३—तत्त्व-चिकित्सा का ह्रास-काल—[श्रीयुत गंगा प्रसाद गौड़ "नाहर"] १२

४—प्राकृतिक चिकित्सा अच्छी या आयुर्वेद और एलोपैथिक—[श्रीयुत युगल किशोर चौधरी 'अग्रवाल—प्राकृतिक-चिकित्सा कार्यालय, बावड़ी दिल्ली] १२

५—भोजन का समय—[श्रीयुत जानकी शरण वर्मा] १२

६—पुस्तक-परिचय—[डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह] १३

७—रोगियों की कहानी अपनी जबानी—[श्रीयुत देवी चरण त्रिवेदी] ... १३

८—वर्षा ऋतु का भोजन—[डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह] १३

संपादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

महेन्द्रनाथ पाण्डेय

वार्षिक मूल्य ४) प्रति अंक ।=)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रति मास इक्कीसवीं तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ४) तथा एक प्रति का ।=) है।

(३) सज्जन-गण जनवरी या जुलाई से ही ग्राहक बनें; यों किसी महीने से भी ग्राहक बनाया जा सकता है।

(४) मास के अन्त तक 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोस्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए। अन्यथा मुफ्त में वह अंक फिर न मिलेगा।

(५) पत्र भेजते समय अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ साफ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।=) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

यदि आप अपना बिगड़ा स्वास्थ्य सुधारना चाहते हैं और अपने को स्वस्थ रखना चाहते हैं तो

महेन्द्र नाथ पाण्डेय की ये पुस्तकें अवश्य पढ़िये

१—फलाहार चिकित्सा—फलों से किस प्रकार चिकित्सा होती है, इनमें कौन कौन गुण हैं आदि बातों पर पूर्ण अनुभव के साथ प्रकाश डाला गया है। मू० २।)

२—स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियां—शाक तरकारियों के सम्बन्ध में वैद्यक शास्त्र से लेकर आज तक के वैज्ञानिक अनुसधानों एवं प्राकृतिक चिकित्सा के अनुभव के आधार पर लिखी पुस्तक। मू० १॥)

३—मठा उसके गुण तथा उपयोग—मठे से बिगड़ा स्वास्थ्य कैसे बनता है यह उपयोगी वर्णन पुस्तक में पढ़िए। मू० ॥)

४—आँख का अचूक इलाज—चश्मा छोड़ने की अनुभूत विधि बताने वाली पुस्तक। यदि आप चश्मा लगाते हों या लगाना चहते हों, आपकी आँख में कोई रोग हो, हर हालत में यह पुस्तक आपकी सहायता करेगी। मू० ॥)

५—जुकाम—इसमें जुकाम, ब्रोंकाइटिस, दमा, खाँसी, निमोनिया, इन्फ्लुएंजा आदि रोगों का अचूक इलाज बातया गया है। मू० १॥)

शहद के गुण और उपयोग—इसमें शहद के सम्बन्ध की सारी जानकारी और इलाज की बातें बताई गई हैं। मू० ॥।)

दूध चिकित्सा और तपेदिक नामक पुस्तकें छप रही हैं। इन पुस्तकों की माँगें बहुत आरही हैं। अपना आर्डर अभी से रजिस्टर करा लीजिए।

पता—महेन्द्र रसायनशाला, कटरा, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

वर्ष ९ | जून, १९४४ | अङ्क ६

भोजन में भी अंधकार

[श्रीकृष्ण शर्मा]

[श्रीकृष्ण शर्मा के लेख रंगों के सम्बन्ध में बराबर जीवन सखा में निकल रहे हैं। वे लेख कितने मौलिक, स्पष्ट और ज्ञानवर्द्धक हैं इसे कहने की आवश्यकता नहीं। आपका यह दूसरा लेख भोजन संबंधी है। परन्तु इस लेख पर रंगों का रंग चढ़ा हुआ है। लेखक ने बड़ी विद्वता से अपने विषय का प्रतिपादन किया है और अर्थोडाक्स चिकित्सकों के सामने एक नया सिद्धान्त रखा है जो सर्वथा ग्राह्य और मान्य है।—सं०]

'नदी में रहकर भी मगर से वैर' एक असंभव परिस्थिति! फिर भी बुद्धि-सम्पन्न मानव ने अपने प्रति वैसा ही किया। सरल, सुगम जीवन को संकटापन्न, दुर्गम बना; सानुकूल वातावरण को प्रतिकूलता की भीषणता में परिवर्त्तित कर दिया। प्रकृति के सुविस्तृत साम्राज्य में ही रहकर प्रकृति माता के आदेश और नियमों का उल्लंघन करने में कोई बुद्धिमानी नहीं। उन अमूल्य नियमों की उपेक्षा करके क्या मानव-समाज सुखी हो सका? शायद नहीं। इसी अवहेलना के परिणाम स्वरूप ही तो आज मनुष्य अपनी वास्तविक स्थित से पतित हो शरीर, मन और आत्मा से रोगी बन गया है। और बनता भी क्यों न? समतल रेणुका पर समगति से प्रवाहित नव-उत्सुक तरल धारा अज्ञानवश जब ऊँची, नीची, [illegible] चट्टानों में पहुँच जाय?

नूतन अनुभवों का उत्सुक मानव भी आज भ्रमित हो, नैसर्गिक पथ से बहुत दूर जा पड़ा। भूल गया अपनी वास्तविकता, अपने जीवन का मूल-मंत्र—आहार-व्यवहार। जीवन का आधार आहार; उसके प्राणों का अवलम्बन; नैतिक जीवन में उस का उद्देश्य है क्या, इसका उसे ज्ञान न रहा। यहाँ तक कि आज वह यह भी नहीं जानता कि उसके आवश्यकीय खाद्य-पदार्थ हैं क्या? अब मनुष्य जीवन की आशा से नहीं खाता, वरन् खाने के लिये ही जीवित रहना चाहता है।

ईश्वर ने भोजन हमारी स्वादेन्द्रियों के हेतु नहीं बनाया था। न उसने इतना समय ही खाने-पीने की व्यवस्था के लिये नियत किया था। किन्तु हमने केवल अपने शरीर को ही सब-कुछ समझकर मानसिक और आत्मिक विकास की ओर ध्यान न दिया। यथार्थ में स्वास्थ्य तो विकासशील

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर मन तथा आत्मा की परस्पर सामान्यता (Harmony) अथवा संतुलन को कहेंगे जिसमें तीनों प्रधानतायें निरन्तर पुष्पित हो रही हों। शरीर की ओर अत्यधिक चिंता के कारण ही मानव स्नायविक तथा मानसिक व्याधियों से ग्रसित हो जाता है। यदि हम प्रकृति के रहस्यमय एवं कल्याणकारी संकेतों को समझ सकें तो ज्ञात होगा कि वह हमें इस स्थूल शरीर के अतिरिक्त मन एवं आत्म-विकास की ओर भी आकृष्ट करने के लिये अविराम प्रयत्नशीला है। मनुष्य अब अनुभव करने लगा है कि शरीर से भी सूक्ष्म परन्तु आवश्यकीय उसका मानसिक जीवन है, जिसको समझे बिना उसका नैतिक जीवन अधूरा ही रह जायगा। स्नायविक एवं मानसिक रोगों ने मनुष्य को अंतः व्याधियों का चिर बन्दी बना दिया है।

सब से बड़ी भूल मनुष्य ने यही की कि उसने अपने आहार-क्षेत्र को अत्यन्त संकुचित कर लिया है। किन्तु ऐसा करते समय उसने अपने तत्वान्वेषी नेत्रों से काम न लिया। अज्ञान के बवंडर में केवल वह स्थूल वस्तुओं को ही देख सका और उन्हीं को उसने अपने प्रगतिशील जीवन का सम्बल बनाया। अपनी सर्वगामनी शक्ति से प्राणी मात्र के सूक्ष्मातिसूक्ष्म रोमकूप में स्वभावतः प्रविष्ट हो, उसमें नव स्फूर्त्ति का संचार कर देने वाली रवि-रश्मियों का वह अनुभव ही न कर सका, अथवा करने का प्रयास ही न किया। वह अन्न, शाक-भाजी आदि की ही ओर झुक पड़ा। किन्तु परिवर्त्तनों का निरन्तर प्रेमी मानव इतने से भी संतुष्ट न हो सका। उसने अपने संकीर्ण क्षेत्र को कृत्रिमता के आकर्षित रंगों से रंग कर, उसके स्वाभाविक रूप-रंग से सर्वथा वंचित कर दिया।

प्रमुख आहार, जिसके बिना, अन्न का उपभोग करते रहने पर भी यह सांसारिक जीवन दुर्वह हो जाता है, है क्या? कभी आपने इनकी शक्ति—स्रोत पर विचार किया? उसके आधार-स्तूप हैं—वायु और सूर्य-प्रकाश।

जिस प्रकार पेट के लिये ठोस भोजन वाञ्छनीय है उसी तरह फेफड़ों के लिये शुद्ध वायु समस्त शरीर को आच्छादित किये हुये, यह कोमल चर्म भी केवल आवरण मात्र ही नहीं, वरन् एक सजीव अवयव है—जिसकी सत्ता को बनाये रखने के लिये पोषित पदार्थ की आवश्यकता होती है। इसकी पोषण-सामग्री है - प्रकाश और विशेष कर सूर्य-प्रकाश —जो समस्त प्रकाश का केन्द्र है। साथ ही यह वायु भी सेवन करता है। बिना प्रकाश और स्वच्छ वायु के चर्म निर्जीव हो जाता है।

विचित्र सूझ पर हँसी आती है—प्रकाश और वायु के इस अभाव की पूर्त्ति मनुष्य ने अपने वर्त्तमान अप्राकृतिक भोजन द्वारा करनी चाही—'एक तो करेला दूसरे नीम चढ़ा'! वातावरण अब इतना दूषित हो उठा है कि हम स्वास्थ्य-प्रद सौर-रश्मियों और निर्मल वायु से पूर्ण लाभ भी नहीं उठा सकते। धुँआ और धूल से वायु-मंडल विषाक्त हो गया है—जिसे सुकुमार रवि-रश्मियाँ अत्यन्त कठिनाई से पार कर पाती है। जो कुछ किसी तरह पहुँचती भी हैं—वह क्षत-विक्षत अवस्था में शिथिल और निर्जीव हो कर।

इस प्रकार उनके बहुत से प्रभावशाली गुण विनष्ट हो जाते हैं। कुछ किरण-स्फुरण (Radiations) बीच में ही छिन्न हो जाते हैं। इस प्रकार एक निर्मल और स्वास्थ्य-प्रद वायुमंडल मानव-जाति के प्रगतिशील उद्योगों का शिकार बनकर विकृत तथा हानिकर हो जाता है।

किसी घनी बस्ती की ओर निकलने पर आप गली के दोनों ओर घने बसे हुये घरों के समक्ष तरकारियों के छिलके, बची हुई जूठन, अनाज का पछोरन भूसी आदि पड़ी हुई देखेंगे। जहाँ फलों के छिलके दिखलाई दें, तो समझिये कि या तो अमुक घर में कोई रोगी होगा या वह कोई धनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति है। किन्तु धनी हो या निर्धन भोजन का व्यवहार एक नित्य क्रिया है। तीन समय तो धुंआ उठता हुआ दिखाई ही पड़ेगा-साथ ही छौंकने की गंध और मिर्च-मसाले की भस। मुसलमानी बस्ती में मांस मछली का बचा हुआ अंश, टूटे-फूटे अंडे, लहसुन-प्याज के छिलके दिखलाई पड़ेंगे। हलवाइयों और चाट वालों की दूकानों पर इस महँगाई में भी पर्याप्त भीड़ दृष्टिगत होगी जहाँ बड़े-बड़े थालों में नाना रूप रंगों के खाद्य-पदार्थ आकर्षित रूप से सजाये रहते हैं—यह सब वाह्य दृश्य क्या जीवन और आहार के निकटतम सम्बन्ध की पुष्टि नहीं करते? साथ ही उसकी वर्त्तमान दशा पर भी प्रकाश डालते हैं।

आधुनिक काल में मनुष्य अपना मुख्य भोजन अन्न से ही लेता है। शाक-भाजी की उसके बाद गणना होती है। तत्पश्चात् अंडे, माँस की बारी आती है और सब से पीछे फलों का प्रश्न।

यदि यहीं तक बात रहती तो विशेष हानि न थी। यद्यपि अनाज को अनाज से ही खाने की प्रथा बहुत अच्छी नहीं तथापि वह इतनी हानिप्रद भी नहीं। अब किंचित भोजन के रूप की ओर दृष्टिपात कीजिये—कुछ और ही रंग दिखलाई पड़ेगा! अन्त में गेहूँ, चना, जौ और दालों में अरहर मूंग, उरद इत्यादि के छिलके बहुधा धोकर निकाल दिये जाते हैं। फलस्वरूप उनकी आधी शक्ति व्यर्थ ही निकल जाती है। बहुत सी तरकारियों के छिलके भी छील कर निष्प्रयोजन फेंक दिये जाते हैं। तदुपरान्त उसको पानी में भिगोने उबालने, पकाने आदि से उसमें विकृति उत्पन्न की जाती है। मसाले का दौर भी चलता है। इस प्रकार उसे अधिकाधिक रोचक बनाने में बुद्धिजीवी मानव विभिन्न विधियों का प्रयोग करता है जिससे भोजन निःसत्व निष्प्राण (Devitalised) हो जाता है। उसके प्राकृतिक लवण क्षीण (Demineralised) हो जाते हैं। अंत में हमारा जीवित या प्रकाशयुक्त भोजन तमोमय (Desolarised or Dark or heavy) या सूर्य की अद्भुत शक्ति से रहित हो जाता है कैसे?—अब इस पर प्रकाश डालने का प्रयास करूँगा—

यह गर्व वनस्पति जगत को ही प्राप्त है कि वह पृथ्वी में विद्यमान खनिज पदार्थों (Chemical or mineral compounds) को जीवित कोषों में परिणित कर देता है जिससे उन जड़ पदार्थों में भी जीवन-प्रदायिनी शक्ति संचरित हो उठती है। अचर वनस्पति का इतना महत्त्व बढ़ जाता है कि चर, प्राणियों (Animal beings) को अपने जीवन-यापन के हेतु उसी का अवलम्बन लेना पड़ता है। माँसाहारियों को भी जन्तु के खाये हुये वनस्पति भोजन से ही जीवन-सत्त्व प्राप्त होता है।

प्रकृति की विचित्र शक्ति से वनस्पति जगत खनिज लवण को पृथ्वी से खींच कर उसको नैसर्गिक रूप जान्तव या सजीव (Organic form) में लाता है। यही सजीव अंश हमें जीवन-शक्ति प्रदान करता है। प्रथम यह अंश हमारे अनुकूल नहीं होते पर स्वाभाविक प्रक्रयाओं द्वारा हमारे सर्वथा अनुकूल एवं उपयोगी हो जाते हैं। इन अंशों से युक्त आहार का शरीर में भली भाँति से पाचन तथा समीकरण हो जाता है।

वनस्पतियों में उपरोक्त गुण कहाँ से और कैसे आते हैं? केवल जल, पृथ्वी और वायु से ही? यदि यह तीन तत्त्व ही प्रर्याप्त होते तो शीत-प्रधान प्रदेशों में भी अन्न की बहुतायत होती। किन्तु वहाँ तो शाक-भाजी व अन्न नहीं के ही बराबर है। जल तुषार, के रूप में बराबर पृथ्वी को ढके रहता है। सूर्य के दर्शन ही नहीं होते। इसके विपरीत ऊष्णता-प्रधान देशों में पहाड़ियों पर भी, जहाँ न पृथ्वी ही उपजाऊ है, न पानी ही ठीक तरह से पहुँच सकता है—हरे भरे, सघन वन-प्रान्त पाये जाते हैं। जहाँ सूर्य है वहीं फल-तरकारियों का आधिक्य है और जहाँ सूर्य नहीं चमकता वहाँ उनका अभाव है। वनस्पतियों में अधिकांश गुण सूर्य से ही आते हैं। प्रकाश ही जीवन है आते अंध-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार मृत्यु। खाद्य पदार्थों में जीवन शक्ति सूर्य-प्रकाश से ही आती है—जो सूक्ष्म रूप से उसमें निहित रहती है। उसके वर्त्तमान रूप में अंतर करने से वह शक्तियाँ स्पष्ट प्रकट होती हैं। जो शक्तियाँ खाद्य-पदार्थों में सूर्य-रश्मि, वायु, जल, पृथ्वी आदि के प्रभाव से संचित होती हैं—कालांतर में वही विभिन्न परिस्थितियों में प्रकट होती हैं। जैसे शरीर में जाकर आहार पाचन-क्रिया के अनंतर गर्मी, विद्युत आदि के रूप में बदल जाता है।

वैज्ञानिकों ने खाद्य-सामग्री का तत्त्वान्वेषण करके उसको निम्नलिखित विभागों में विभाजित किया है :—

(i) Protein या खाद्योज।

(ii) Carbohydrates and sugars या श्वेतसार या शर्करा।

(iii) Fats या स्नेह।

(iv) Mineral Salts या खनिज लवण।

(v) Vitamins या जीवाद्यम।

(vi) Roughage or Cellulose फुजला या स्फोक।

(vii) Water जल का अंश।

पहले भोजन-विशेषज्ञ भोजन के गुण (Food values) उनमें विद्यमान खाद्योज, वसा व स्नेह की मात्रा ही में आँकते थे और उसके अतिरिक्त जो बचता था उसे 'ash' या शेष राख कहकर एक उपेक्षणीय वस्तु समझ बैठे थे। किन्तु आजकल बिलकुल उल्टा हो गया है। वही 'ash' या राख अब खनिज लवण के रूप में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त कर चुका है। स्फोक (Cellulose) जो बिल्कुल व्यर्थ समझ कर फेंक दिया जाता था—अब स्वास्थ्य-वृद्धि के लिये उपयोगी सिद्ध हुआ है। सब से अधिक धूम तो 'विटामिन' (vitamin) के प्रयोग ने मचा रक्खी है। आधुनिक आहार-शास्त्र के क्षेत्र में 'विटामिन' ने सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर लिया है। बड़े-बड़े डाक्टरों को इसका भूत सवार हो गया। परिणाम स्वरूप एक पृथक पद्धति (vitamin-therapy) का निर्माण हुआ है। आजकल की अच्छी भोजन तालिकाओं (Standard food charts or tables) में 'केलारी' या ऊष्णांक (Calories values) तो बहुत कम दिखाई पड़ता है, लेकिन प्राकृतिक लवण और 'विटामिन' के सामने धन या ऋण चिह्न से तालिका रँगी रहती है।

प्रश्न यह उठता है कि भोजन के यह पोषक तत्त्व कब और कैसे सुरक्षित रहते हैं? किन अवस्थाओं में पड़ने से उनके नष्ट हो जाने की संभावना रहती है?

यह तो सभी जानते हैं कि यह पोषक तत्त्व शाक-तरकारियों व फलों में अपने स्वाभाविक रूप में रहते हैं। पर फलों और तरकारियों में यह सब सभी दशाओं में पूर्ण और सुरक्षित (Incorruptible) नहीं रह पाते। उनकी मूल या प्राकृतिक अवस्था में किसी प्रकार की छेड़-छाड़ या परिवर्त्तन करने से इनके रंग में भंग हो जाता है। अब मैं भोजन के दो मूल तत्त्वों को लेकर उनकी उत्पत्ति और क्षीण होने के कारण पर विचार करूँगा—

प्रथम मैं प्राकृतिक लवण को ले रहा हूं। इनमें से 'पोटेशियम', 'कैलशियम', 'मैग्नेशियम', आयरन', औ सोडियम हैं। इन्हें अंग्रेज़ी में 'एलकलीज़' कहते हैं—जो रक्त में अमलता को कम करके उसे क्षारमय बनाते। यह तत्त्व हमको खनिज जगत में भी मिलते हैं, परन्तु ये हमारे लिये उपयोगी नहीं सिद्ध होते; क्योंकि हमारे शरीर में अच्छी तरह हिल-मिल नहीं जाते, वैसे वे ही तत्त्व प्राकृतिक रूप (Organic form) में समीकरण होने के फलस्वरूप हो जाते हैं। उदाहरण के लिए लोहा या चूना हम को खनिज रूप (Inarganic form) में भी मिलता है, किन्तु वह हमारे शरीर के लिये उपयोगी नहीं होता। हमारे काम के लिये वही तत्त्व अपरिलक्षित रूप से फलों और तरकारियों में विद्यमान रहते हैं। यह प्राकृतिक लवण हमारे शरीर के लिये सूक्ष्म और प्राकृतिक रूप में होना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये। लेकिन पृथ्वी में ये बहुत स्थूल रूप में होते हैं। तो वनस्पतियों में यह सूक्ष्म और प्राकृतिक रूप में कैसे बदल जाते हैं?

प्रथम वनस्पतियों में उनके विशेष गुणों के अनुकूल स्वाभाविक परिवर्तन होता है। साथ ही साथ खाद्य पदार्थ सूर्य-रश्मियों के द्वारा भी उपयुक्त तत्त्व खींचते हैं। प्रकाश के बड़े बड़े विशेषज्ञों (यथा Lockyer, Huggins, Augstrom Young and Prof. Draper आदि) का कहना है कि सूर्य प्रकाश में सोलह धातुएं विद्यमान हैं—जिनमें से मुख्य कैलशियम सोडियम, मैगनेशियम आयरन हैं। यह धातुयें बहुत ही सूक्ष्म रूप में रहती है और खनिज-धातुओं की अपेक्षा अत्यन्त कोमल, हलकी और व्यापक रूप में होती है। इस आधार पर यदि यह कहा जाय कि इन प्राकृतिक लवणों का वनस्पतियों में समावेश किन्हीं अंशों में सूर्य-रश्मियों के ही द्वारा होता है—तो अनुपयुक्त न होगा। पुष्टि के हेतु दो एक अन्य प्रमाण भी दे रहा हूँ—

प्रथम—ये प्राकृतिक लवण छिल्कों के आस-पास या उन्हीं में अधिकांश रूप से पाये जाते हैं जहाँ रवि-रश्मियों का सीधा प्रभाव पड़ता है।

द्वितीय—जो फल सूर्य में नहीं पकते उनमें (Negatively) वह गुण नहीं पाये जाते जो सूर्य में पके हरे-भरे फलों में पाये जाते हैं।

ऊपर मैंने सूर्य की रासायनिक शक्तियों (Chemical powers of sunlight) का स्पष्टीकरण किया। वह उसमें ठंढ (Electric), गर्म (Thermal) और चुम्बक (Mognetic) आदि शक्तियों के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। परन्तु इतनी खोज के बाद भी उसके सम्पूर्ण रहस्यों का पता न चल सका। सूर्य में असीम शक्तियाँ हैं पर बहुत-सी तो वायुमंडल से ही छन कर पृथक हो जाती हैं और जो कुछ पृथ्वी के निकट तक पहुँच भी पाती हैं उनमें से अधिकांश धुआं, धूल आदि से दूषित हो जाती हैं।

अब किञ्चित 'विटामिन' पर विचार करना है। 'विटामिन' के तत्त्व का पता अब तक न चल सका—वे क्या हैं और कैसे आते हैं? यह अभी तक रहस्यपूर्ण है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि अमुक 'विटामिन' की स्वल्पता से क्या हानि होती है, और उसकी पूर्त्ति से वे लक्षण दूर हो जाते हैं। किन्तु वे क्या हैं? इसका विश्लेषण न हो सका। उनके नाम की अनुमानतः रख दिये गये हैं यथा A. B. C. D. इत्यादि। इस लिये वे अज्ञात पदार्थ (Unknown Substances) कहलाते हैं। यह अद्भुत एवं रहस्य तत्त्व (जीवाद्यम) हमें फलों, तरकारियों, दूध, मक्खन, मांस तथा अंडों या मछलियों के यकृत (Liver) आदि में मिलता है। पर ऐसे उपयोगी तत्त्व आते कहाँ से हैं? क्योंकि यह नष्ट भी हो सकते हैं।

यह तो निर्विवाद सत्य है कि सूर्य-प्रकाश 'विटामिन D' का भांडार है। तो क्या अन्य विटामिन' उससे मुक्त हैं—यह कथन सत्य के परे होगा। हमें 'विटामिन' अधिकांश हरे-भरे फलों और तरकारियों से मिलते हैं—जो सूर्य-प्रकाश में ही फूलित-फलित होती है।

डा० बर्छर बेनर कहते हैं कि सूर्य-प्रकाश ही जीवाद्यम का गुप्त-सार है ('Sunlight is the hidden essence of vitamins') वास्तव में सूर्य की अदृश्य शक्ति से ही वह रहस्यमय तत्व (जीवाद्यम) उत्पन्न हो सकते हैं क्योंकि जिस प्रकार सूर्य की गुप्त शक्तियों का पूरा पता नहीं लग सका है उसी भाँति फलों या तरकारियों के पोषक तत्त्वों की सारी ज्ञातव्य बातें भी नहीं जानी जा सकीं।

खाद्य-पदार्थों का जितना तथ्यपूर्ण निर्णय अपनी स्वादेन्द्रियों द्वारा हो सकता है, उतना देखने, स्पर्श करने अथवा दूसरों के अनुभवों को पढ़ने आदि से नहीं। इसके समक्ष अच्छे से अच्छे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक विश्लेषण (Scientific analysis) के कुछ भी स्थान नहीं। वैज्ञानिक विश्लेषण करने के पूर्व प्रकृति-निर्मित वस्तु का खंडन या मंडन किया जाता है (We murder to dissect) जिससे वह अपने स्वाभाविक गुण से वंचित हो जाता है तो अब उस हीन-क्षीण पदार्थ का परीक्षण करने से लाभ? उसका यथा तथ्य निष्कर्ष आप क्या देंगे? फिर सूर्य के व्यापक प्रभाव का यथार्थ संदेश कौन सुन सकता है जब उसकी समस्त रश्मियाँ (Radiations) यहाँ तक पहुँचती ही नहीं।

अभी मैं कह चुका हूँ कि आहार में उनके मूल पोषक तत्त्व हमें अधिकांश सूर्य-प्रकाश से ही मिलते हैं—जो प्रकाश के रूप में उसमें विद्यमान रहते हैं। प्रकाश ही प्राण है—जो हमें भोजन में उसके स्वाभाविक रूप में मिलता है, अर्थात् वनस्पति और आहार जितना ही ताजा और स्वाभाविक होगा, उतना ही वह स्वास्थ्यप्रद और लाभकारी भी। कृत्रिमता की चोट से उसका स्वाभाविक रूप जीवन प्रदायिनी शक्ति व स्फूर्ति से रहित हो जायगा और शरीर में स्वास्थ्य वृद्धि के स्थान पर उसे व्याधियों का केन्द्रस्थल बनाने की आयोजना करेगा। सैकड़ों वर्ष के उपरांत मनुष्य ने आहार को विकृत या कृत्रिम (Artificial) बनाने के अनेकों उपाय निकाल लिये हैं। उसे एक पृथक कला और विज्ञान का रूप मिल चुका है। इसमें संदेह नहीं कि अपनी प्रखर बुद्धि से मनुष्य ने उसमें भी पर्याप्त योग्यता प्राप्त कर ली है और अपने सहज स्वभाव व अन्तः प्रेरणाओं (Natural inspincts) को प्रवंचित कर उसे दबा दिया। किसी जंगली जाति (जो आधुनिक सभ्यता से दूर प्रकृति के अकृत्रिम साम्राज्य में विचर रही है) का प्रतिनिधि निरीक्षण के अभिप्राय से हमारे समाज में आये, तो बेचारा साथियों के समक्ष अपने किन अनुभवों को प्रकट करेगा? कल्पना कीजिये। उसके वर्णित अनुभवों में क्या आश्चर्य की सीमा होगी? हम लोगों का रहन-सहन, खान-पान, लौकिक व्यवहार—सभी उनके लिए एक विचित्र दृश्य होंगे।

किसी ने बहुत ठीक कहा है कि ईश्वर ने हमको भोजन दिया है और दैत्य ने रसोइया—बेचारा पाचक अपने आश्रय-दाता को स्वादिष्ट भोजन बना कर उचित मात्रा से अधिक खिला देने ही में अपना कल्याण समझता है। प्रवंचना हेतु असुर उसको अनेक प्रकार की युक्तियाँ बताता है—जिससे मनुष्य की रसेन्द्रियाँ चैतन्य होते हुये भी भ्रांति में फँस कर भटक जाती हैं।

अंधकार की ओर ले जाने वाले एक ही नहीं वरन् अनेकों उपाय हैं—

खाद्य-सामग्री को अग्नि पर चढ़ाने के पूर्व दो विकृतात्मक क्रियायें होती हैं। जैसे पक्षियों को आधीन करने के लिये उनके पर कतर दिये जाते हैं, उसी प्रकार अनाज, शाक-भाजी, फल आदि के भी ऊपरी छिलके निकाल दिये जाते हैं, साथ ही उस पदार्थ की स्फूर्त्तिदायिनी अर्धप्राण शक्ति भी नष्ट हो जाती है। आजकल मशीनों से चावलों की भूसी (Polished rice) निकाल देने से वह अपने प्रकृति-दत्त उपयोगी अंश को खोकर, हानिकर ही सिद्ध होता है। छिलकों में प्राकृतिक लवण और 'विटामिन' दोनों ही में विद्यमान रहते हैं, जिन्हें पृथक कर देने से आहार निष्प्राण हो जाता है। छिलके के द्वारा सूर्य रश्मियों की शक्ति उनमें समाविष्ट हो जाती है। खाद्य-पदार्थ के छिलकों का वही महत्त्व है जो मनुष्य के शरीर में चर्म का।

शैतान की दूसरी चाल है चरपरे मिर्च, खटाई आदि मसालों का प्रयोग, जिसके द्वारा पेट के स्नायु व पाचक रसों को उत्तेजित किया जाता है। क्षणिक उत्तेजना हमें स्वाद और तृप्ति का अनुभव कराकर अधिक भोजन करने के लिये विवश करती है। इस प्रकार उससे दो हानियाँ होती हैं। पहले तो हम खाना अधिक खा जाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। दूसरे अप्राकृतिक उत्तेजना के अभ्यस्त हो जाने से बिना वैसी ही तीखी वस्तुओं के संतोष नहीं होता। अंत में इसका कुत्सित प्रभाव हमारी श्लेष्मात्मक झिल्ली और पाचक ग्रन्थियों पर पड़ता है। और वे निर्बल हो जाती हैं।

तीसरा खेल तो स्वयं दैत्य ही खेलता है। अब तो शिकार बिल्कुल पंजे में आ चुका है। अग्नि-देव की शरण लेने का विलम्ब है। अग्नि की लपटों पर धूम्र के रूप में असुर नृत्य करता है। इसी भाँति धूम्र रूपी विचार शरीर में भी उत्पन्न हो जाता है। सुकोमल प्रकृति का सारा आहार शुष्क बुद्धि की निष्ठुरता का शिकार हो, इतने परिवर्त्तनों की परिधि लाँघने के उपरांत क्या अपने पूर्व गुणों का प्रभाव स्थिर किये रह सकता है? उसका इतना विकृत रूप क्या हमें उतनी शक्ति प्रदान कर सकेगा?

ईश्वर ने प्रकृति में सुंदर, साधारण और स्वादिष्ट भोजन की व्यवस्था की है, जिसको हम अपनी स्वाभाविक क्षुधा से पर्याप्त मात्रा ही में खा पाते हैं। पकाने से भोजन प्रकाशहीन हो जाता है। हम उचित मात्रा में संतुष्ट नहीं हो पाते क्योंकि उसकी प्राकृतिक जीवन शक्ति क्षीण हो चुकती है अतः हमें उसकी मात्रा बढ़ानी पड़ती है और वह उतना स्वास्थ्यप्रद भी नहीं रह जाता।

भोजन के मूल रूप में किसी प्रकार का परिवर्त्तन या कायापलट (Transformation) करने से चाहे वह छिलका छीलने, नमक, मसाला लगाने सड़ाने व गलाने से हो; किंवा पकाने, उबालने, भूनने की गर्मी से हो, पाचन-यंत्र द्वारा पचाने या अन्य कृत्रिम उपायों से हो—भोजन की पोषक-शक्ति में न्यूनता अवश्य आ जाती है। भोजन जितना प्राकृतिक होगा, उसे रोचक बनाने में उतना ही अल्प प्रयास अपेक्षित होगा, और जितना वह अपरिष्कृतिक होगा, उसमें उतनी ही बनावट की की आवश्यकता होगी। फलों को पकाने या चरपरा बनाने की विशेष आवश्यक नहीं होती क्योंकि वे स्वयं स्वादिष्ट होते हैं। तरकारी और अन्न में कुछ बनावट या मिलावट वांछनीय है, लेकिन वे भी कच्चे खाये जा सकते हैं। हाँ, मांस पकाने में बड़ी मेहनत पड़ती है। शाक-भाजी तो उबाल कर सुविधा से खाई जा सकती है, किन्तु मांस के लिये बहुत से मसालों की आवश्यकता होती है तब जाकर वह कहीं खाने योग्य हो पाता है।

मांस को तामसी आहार क्यों कहा है? मांस का मुख्य तत्त्व तो वनस्पति से ही आता है जो मृत पशु जीवितावस्था में खाकर उसको अपने जीवित कोषों (Animal cells) में परिवर्त्तित करता है। इस प्रकार उसकी पाचन प्रणाली ने मूलतत्त्व का पाचन और समीकरण करके पहला परिवर्त्तन किया।

जानवर को मारने पर कुछ विष तो उसके मानसिक भय के कारण उत्पन्न हो जाता है और शारीरिक विकार उसकी शिराओं (Venous circulation) में स्वच्छ होने के लिये पहले से ही विद्यमान रहता है। तीसरे प्राण निकलते ही निर्जीव शरीर में तत्काल सड़नक्रिया आरम्भ हो जाती है। इन सब को मिला कर आप दूसरा परिवर्त्तन समझ लीजिये।

तीसरा मूल परिवर्त्तन उसके पकाने अथवा उससे समबद्ध मिर्च मसाला लगाने की आवश्यक क्रियायों के अन्तर्गत होता है।

अन्धकार के इन तीन आवरणों के उपरान्त ऐसे विकृत भोजन में क्या शक्ति, प्राण या प्रकाश रह जाता होगा? इसका तो एक साधारण बुद्धि रखने वाला व्यक्ति भी अनुमान कर सकता है। ऐसे ही आहार को तो भारी और तामसी (Dark) कहा गया है।

यह तो निर्विवाद सत्य है कि वनस्पति-आहार पाशविक आहार (Animal food) से श्रेष्ठ है। मनुष्य के पालन-पोषण के लिए सब से उपयोगी फल, मेवे और कच्ची शाक तरकारियाँ हैं। मध्यम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रेणी में पकी हुई सब्ज़ी और रोटी की गणना है। निम्नकोटि का भोजन पाशविक उत्पत्ति (Foods of animal origin) के हैं।

ज्यों-ज्यों आहार प्रकाश की ओर बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों वह गुणकारी होता जाता है। तरकारियों में भी कन्द-भाजी, फलदार या पत्तीदार शाक से निम्न मानी गई है। इसका कारण यही है कि पृथ्वी के नीचे रहने के कारण सूर्य-किरणें उन तक अच्छी तरह नहीं पहुंच पाती और जो कुछ पहुँचती भी हैं वे डंठल या पत्तियों के द्वारा छन-छन कर। इसलिये वे गरिष्ट होती हैं। रोगियों के लिए तो वे बिल्कुल उपयुक्त नहीं होतीं। फलों तक सूर्य-रश्मियां बहुत अच्छी तरह से पहुँच जाती हैं और वे पत्तियों की आड़ में खूब अच्छी तरह पक जाते हैं। फलों में विभिन्न रंगों का भी अपना अलग-अलग महत्त्व है—जिसके ऊपर अगले लेख में प्रकाश डाला जायगा।

कुछ फल सूर्य-प्रधान देशों की अलभ्य देन हैं। जिन्हें हम सौर-आहार (Solar foods) कह सकते हैं, जिनकी विशेषता है कि स्वल्प मात्रा में प्रयोग करने से ही हमें पर्याप्त शक्ति और स्वास्थ्य-लाभ होता है। खजूर, मुनक्का, कुछ गिरीदार मेवे यथा नारियल, बादाम इत्यादि फल इसी श्रेणी के अन्तर्गत है। अरबी और फारसी लोग इन्हीं का सेवन कर कितने स्वस्थ होते हैं।

अस्तु यह स्पष्टतया सिद्ध हो चुका है कि सूर्य-प्रकाश को हमारे आहार में एक प्रमुख स्थान प्राप्त है सूर्य-के आधार पर एक नई भोजन-तालिका का निर्माण हो सकता है। अब M. Bircher-Benner M. D. ने एक नये सूर्य-प्रकाश-पोषण-सिद्धांत (New sunlight theory of nutrition) का निर्माण किया है। रंग ने भोजन तत्त्वों पर एक नूतन प्रकाश डाला है। आशा है इस सम्बन्ध में और अन्वेषण होकर एक पृथक सूर्य-प्रकाश-पद्धति पर भोजन शास्त्र का निर्माण हो सकेगा॥

कब्ज या कोष्ठबद्धता

(लेखक—डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह)

इस छोटी सी पर महत्वपूर्ण पुस्तक में डा० बालेश्वर प्रसाद जी ने यह दिखलाया है कि मलावरोध ही सब रोगों की जड़ है। इस एक खराबी से ही सब तरह के रोग होते हैं, इसको हटाने तथा इससे बचने के उपाय बड़े विस्तार से दिये गये हैं, इससे इसकी महत्ता और भी बढ़ जाती है। इस पुस्तक की एक प्रति अपने पास अवश्य रखिए। मूल्य ॥।)

रोगों की अचूक चिकित्सा

(लेखक—श्रीयुत जानकीशरण वर्मा)

इस पुस्तक के चार संस्करण निकल चुके हैं इससे बढ़कर पुस्तक की तारीफ में क्या कहा जा सकता है। रोगियों को स्वस्थ बनाने के लिए इससे बढ़कर कोई पुस्तक नहीं है। प्रत्येक घर में इसकी एक प्रति होनी चाहिए। मूल्य ४)

स्वास्थ्य ग्रंथ भंडार, ११ लूकर गंज

इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिशु व्यायाम

"कुटुम्ब देश तथा संसार की आशा बच्चों पर है"

[श्री प्रकाशचन्द्र यादव, व्यायाम विशारद, साहित्य रत्न, भू० पू० सम्पादक "यादव-सन्देश"]

[बच्चों का व्यायाम सुनकर ही लोग आश्चर्य कर सकते हैं परन्तु सभी उन्नत देशों में इस ओर पूर्ण ध्यान दिया जाता है जिसमें शुरू से ही बच्चों के रग-पट्ठे मजबूत बनें। प्रस्तुत लेख माता-पिताओं के अध्ययन के लिए उपयोगी है जिसमें वे अपनी सन्तान को योग्य बनाने में एक दृढ़ कदम आगे रख सकें।—सं०]

बच्चों की शारीरिक उन्नति के लिये व्यायाम की अत्यन्त आवश्यकता है। यह बात कदाचित् हम लोगों के लिये आश्चर्यजनक हो कि नव-जात शिशुओं को भी व्यायाम करना पड़ता है और इस व्यायाम का बड़ा ही अच्छा फल होता है। कितने ही लोगों की यह धारणा है कि नव-जात शिशुओं के शरीर में कुछ भी शक्ति नहीं रहती। परन्तु यह भ्रम है। सच तो यह है कि अपनी देह के अनुसार बच्चे कभी दुर्बल नहीं होते। अतएव प्रत्येक माता-पिता का यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि बच्चों को कुछ ऐसे व्यायाम कराते रहें जिनसे उनकी शक्ति की वृद्धि होती रहे।

दूध पीते और दूसरे छोटे बच्चों के लिये व्यायाम या कसरत का जो महत्त्व है, उसे माता-पिता बहुत ही कम समझते हैं। साधारणतः माता-पिता यही समझते हैं कि छोटे बच्चों को कोई कसरत करने की आवश्यकता नहीं है। पर उन्हें यह स्मरण रखना चाहिए कि छोटे बच्चे के शरीर में भी उतने ही अंश होते हैं, जितने किसी वयस्क पुरुष के अंग होते हैं; यह बात दूसरी है कि उसके वे अंग उतने ही अधिक विकसित न हों। उसके लिए यह आवश्यक होता है कि उसके सभी अंग समानरूप से काम करें, और यह बात व्यायाम करने ही से हो सकती है। शरीर के रग-पट्ठों का विकास करने के लिए व्यायाम करने की आवश्यकता होती है। बिना व्यायाम के तो भोजन पाचन भी ठीक तरह से नहीं होता है। व्यायाम न करने से आंतें भी ठीक तरह से काम नहीं करती, पाख़ाना भी साफ़ नहीं होता जिससे शरीर में अनेक प्रकार के विष फैलने लगते हैं, बच्चा बहुत ही शिथिल और अकर्मण्य या सुस्त हो जाता है, उसका मन बुझा सा रहता है और उसमें उत्साह या उमंग नहीं रह जाती। हम यह भी कह सकते हैं कि बच्चा आप से आप जितना ही अधिक व्यायाम करता है, उसका स्वास्थ्य भी उतना ही अधिक अच्छा रहता है।

बच्चों को अपने रग-पट्ठों का व्यवहार करने में जहाँ तक हो सके, पूरा सुभीता देना चाहिए। यदि वे रेंग सकते हैं तो उन्हें रेंगने देना चाहिये। यदि वे खड़े हो सकते हैं तो उन्हें खड़े होने के लिए उत्साहित करना चाहिए। हाथ पैर इधर-उधर हिलाने से भी व्यायाम हो जाता है। इसका अच्छा उपाय यह है कि बच्चे को दूध पिलाने के उपरान्त यों ही लेटा देना चाहिए और वह जिस प्रकार व्यायाम करना चाहे, उस प्रकार व्यायाम करने दिया जाय। बच्चे जो चिल्लाते या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किलकारियाँ मारते हैं उससे भी उनका व्यायाम हो जाता है। इससे फेफड़े मज़बूत होते हैं।

जब बच्चा एक महीने का हो जाय, तब उसे पेट के बल लिटाना चाहिये। यदि इस अवस्था में उसे कुछ कष्ट जान पड़ेगा, तो वह आप ही किसी ओर करवट ले लेगा। दिन भर में एक बार बच्चे को इस प्रकार का व्यायाम कराना चाहिए जिससे उसे पीठ के पुट्ठों को मजबूत करने का अवसर मिले। यदि सदा पीठ के बल ही पड़ा रहेगा तो उसे इस बात का अवसर न मिलेगा। हम यहाँ यह भी कह देना चाहते हैं कि उसके शरीर का बहुत कुछ विकास उसकी पीठ के पट्ठों के विकास पर ही निर्भर करता है।

बच्चे स्वभावतः खेल-कूद पसन्द करते हैं। यह बात उनके लिए उचित भी है और स्वास्थ्य वर्धक भी। बच्चों को कभी खेलने से रोकना या मना नहीं करना चाहिये। हाँ इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि वे किसी गलत रास्ते पर न जायँ। बड़े बच्चों को घर से बाहर निकल कर खूब दौड़ने-धूपने और तरह-तरह खेल खेलने देना चाहिए। दूसरे बच्चों का साथ उनके लिए लाभदायक होता है। कुछ लोग ऐसे होते हैं कि यदि उनके बच्चे सामाजिक दृष्टि से निम्नकोटि के लोगों के बच्चों के साथ गलियों में खेलें तो वे इसमें अपना अपमान समझते हैं। पर कुछ परिस्थितियों में बच्चों को इस प्रकार खेलने देना चाहिए। यहां यह स्मरण रखना चाहिए कि धनवानों के लड़के पूरी तरह से कसरत न करने और दूसरे बच्चों के साथ न खेलने के कारण कई प्रकार की हानियाँ उठाते हैं। खेल-कूद और मनोविनोद मानों बच्चों के स्वास्थ्य के लिए पौष्टि औषधि के समान है। जो बच्चे छोटी अवस्था में दूसरे बच्चे के साथ नहीं मिलते जुलते, वे बड़े होने पर शरमीले होते हैं जिससे उनकी मानसिक और शारीरिक सभी प्रकार की उन्नतियों में बाधा पड़ती है। पर दूसरे बच्चों के साथ मिलने जुलने से उनकी झिझक निकल जाती है और यह बाधा नहीं होने पाती। जो लोग बड़े होने पर सदा मनहूस और सुस्त दिखाई देते हैं, वे प्रायः ऐसे ही होते हैं जो बाल्यावस्था में दूसरे बच्चों के साथ हँसने खेलने नहीं पाते। जो बच्चे दूसरे बच्चों के साथ मिलते-जुलते रहते हैं, वे बड़े होने पर व्यवहार के सच्चे होते हैं और लोगों के साथ मित्रता स्थापित करने का भाव भी उनमें रहता है।

जब लड़का या लड़की बड़ी हो जाय तब उसे खूब चलना फिरना और टहलना चाहिए। दौड़ने धूपने और उछलने-कूदने से बच्चे प्रसन्न भी रहते हैं और उनकी कसरत भी हो जाती है। नंगे पैर दौड़ना अच्छा होता है। रबड़ की गेंद उन्हें दौड़ाने में और भी सहायक होती है।

जब बच्चा दो वर्ष का हो जाय तब उसे ऐसा अवसर देना चाहिए कि वह झूला आदि झूलकर बांहों का व्यायाम कर सके। आगे और पीछे की तरफ़ झूलने से बच्चे प्रसन्न भी रहते हैं और उनके हाथों का व्यायाम भी हो जाती है। कुछ बच्चे इस तरह के खेल बहुत पसन्द करते हैं।

व्यायाम ऐसा नहीं होना चाहिए जिसमें बच्चे बहुत अधिक थक जाय। किसी बच्चे को उससे बड़े या अधिक बलवान बच्चे के साथ मुकाबला करने या भिड़ने के लिए विवश नहीं करना चाहिए; क्योंकि इस प्रकार के मुक़ाबला से उसके शरीर पर आवश्यकता से अधिक जोर पड़ता है और वह बहुत थक जाता है।

भारत में लोग प्रायः शरीर पर तेल मला करते हैं। यह बहुत लाभदायक होता है; क्योंकि शरीर पर तेल मालिश करने से शरीर में रक्त का अच्छी तरह संचार होता है।

उचित रीति से व्यायाम कराने का फल क्या होता है, यह हम अमरीका के कुछ बच्चों के अद्भुत व्यायाम-कौशल देख कर समझ सकते

[शेष १३५ पृष्ठ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्त्व-चिकित्सा का ह्रास-काल

[गंगाप्रसाद गौड़ 'नाहर']

[श्री गंगाप्रसाद गौड़ नाहर प्राकृतिक चिकित्सा के विशेषज्ञ है। इस लेख में आपने प्राकृतिक चिकित्सा की अवनति के कारणों पर युक्तिसंगत विचार किया है। इससे ज्ञान वृद्धि के साथ साथ पाठकों का मनोरंजन भी होगा। – सं०]

[मार्च-अप्रैल के अंक से आगे]

मोटे तौर पर कहना चाहें तो कह सकते हैं कि ज्यों ज्यों औषधियों और औषधि-चिकित्सकों का बोल-बाला होता गया, त्यों-त्यों प्राकृतिक-चिकित्सा को लोग भूलते गये, कारण, औषधियाँ विशेष कर विषैली औषधियाँ रोग को तत्काल दबाकर (दवाओं से रोग अच्छे नहीं होते, दब भर जाते हैं, और कालान्तर में फिर उसी रूप में या अन्य रूप में प्रगट अवश्य होते हैं, इस सिद्धान्त को प्रायः अब सभी लोग मानने लगे हैं। इस विषय पर [illegible]कारी के लिये लेखक की दूसरी पुस्तक 'औषधि-निषेध-तत्त्व' देखना चाहिये।) जब अपना छलनामय प्रभाव जनता के सामने प्रगट करने लगीं, तो अज्ञान जनता धोखे में आकर रोग के उस चमत्कारिक, तात्कालिक, एवं क्षणिक शमन को ही, रोग को पूर्णरूपेण गया हुआ समझने लगी, और समझने लगी कि यह औषधि-चिकित्सा ही, जो तुरन्त लाभ पहुंचा देती है, उत्तम चिकित्सा है। उसको क्या पता कि औषधियों से रोग अच्छे नहीं होते, केवल दब भर जाते हैं जो रोगावस्था से भी अधिक भयानक अवस्था होती है। साधारण जनता का यही अज्ञान एवं मिथ्या विश्वास, औषधि-चिकित्सा के प्रचार में विशेष सहायक बना और फलतः प्राकृतिक-चिकित्सा का जो वास्तव में सर्वाङ्गपूर्ण एवं वास्तविक-चिकित्सा है, दिन-दिन ह्रास होता गया।

रोग को चमत्कारिक रीति से दबाने के अतिरिक्त और औषधि-चिकित्सा में एक प्रलोभन और भी है जो जनता को अपनी ओर अधिक आकर्षित करता है, वह है औषधि लेने में सहूलियत का होना। रोग हुआ, वैद्य जी से माँग कर दो गोलियाँ निगल लीं, कर्तव्य की पूर्ति हो गयी। प्राकृतिक चिकित्सा करने वालों की भाँति, उसके लिये न भूखों मरने (उपवास, पर भूखों मरने और उपवास में आकाश-पाताल का अन्तर है) की ज़रूरत, न टब-स्नान का खटराग, और न एनिमा आदि का झंझट।

तीसरा और सर्व प्रबल कारण प्राकृतिक-चिकित्सा के पराभव का जो था वह था सामयिक सरकारों और कानूनों द्वारा औषधि-चिकित्सा एवं चिकित्सकों को प्रोत्साहन एवं संरक्षण का मिलना, तथा प्राकृतिक-चिकित्सा के प्रति उनका उदासीनता प्रदर्शन, एवं मूकवत् व्यवहार का होना। प्राचीन एवं अर्वाचीन-सरकारों की इस दुर्दमनीय नीति के होते हुए भी प्राकृतिक-चिकित्सा निर्बीज न हो सकी, यह उसके बड़े सौभाग्य की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात है। और यही उसके युक्तियुक्त एवं सत्-चिकित्सा होने का सब से बड़ा प्रमाण है।

औषधि-चिकित्सा में जहाँ अनेक अवगुण है वहाँ एक अवगुण यह भी है कि दवा लेते-लेते, मनुष्य दवा लेने का आदी-सा हो जाता है, और तब उसकी जीवनी-शक्ति इतनी बलहीन हो जाती है कि वह प्राकृतिक-चिकित्सा के सजीव नियमों को बर्दाश्त करने में अपने को अक्षम समझने लगता है, और उनसे घबराता है। इस तरह जनता का, औषधियों का आदी बन जाना, प्राकृतिक चिकित्सा के ह्रास का चौथा कारण हुआ।

वेश, व्यवसाय, तथा विज्ञापन का अवलम्बन किसी भी बात का प्रचार करने में, चाहे वह सत्य हो या असत्य, असाधारण सिद्ध होता है, और ये तीनों बातें प्राकृतिक-चिकित्सा के सम्बन्ध में अनुकूल नहीं पड़तीं, जब कि इसके विपरीत, औषधि-चिकित्सकों के, उनके औषधोपचार प्रचार के लिये, ये तीनों ही साधन अमोघ अस्त्र हैं। एक सच्चे प्राकृतिक चिकित्सक को आप कभी सूट-बूट में कसे नहीं देखेंगे, क्योंकि इस प्रकार का वेश उसके प्राकृतिक-सिद्धान्तों के विरुद्ध पड़ता है, जब कि यह सर्व विदित है कि कितने ही अयोग्य आधुनिक डाक्टरों की डाक्टरी, केवल उनकी डाक्टरोचित वेश-भूषा एवं तड़क-भड़क के कारण ही सफल होती देखी जाती है। रोगी पतिंगों की तरह उन्हें घेरे रहते हैं और वे उनको अपनी अस्वाभाविक एवं असाधारण ठाट-बाट की चकाचौंध करने वाली रोशनी से प्रभावित तथा मोहित करके, उनका मनमाना शिकार किया करते हैं। इसी प्रकार प्राकृतिक-चिकित्सा को व्यवसाय का रूप भी नहीं दिया जा सकता, जैसा कि औषधि-चिकित्सकों के पक्ष में सर्वथा सम्भव है, कारण, प्राकृतिक-चिकित्सक दवा की बिक्री तो करते नहीं जिससे मर्ज को घटा बढ़ा कर, तथा एक दवा के बाद दूसरी दवा बदल कर, रोगी से पैसा छीनने में सुभीता हो, यहाँ तो मरजों की एक दवा वाला सिद्धान्त लागू है। दवा क्या, कुछ प्राकृतिक नियम व क्रियायें होती हैं, जो इतनी सीधी और सरल होती हैं जिन्हें रोगी और चिकित्सक सभी जानते और जान सकते हैं, और जिनके बरतने में बेइमानी की कोई गुंजाइश हो ही नहीं सकती। और जब प्राकृतिक-चिकित्सा को व्यवसाय का रूप दिया ही नहीं जा सकता तो इसके सम्बन्ध में विज्ञापनबाजी का मसला कुछ अर्थ ही नहीं रखता। इस तरह से हम देखते हैं कि प्राकृतिक चिकित्सा-प्रचार में वेश, व्यवसाय, तथा विज्ञापन की अनुपयोगिता एवं अव्यवहारिकता, इस चिकित्सा-पद्धति के ह्रास का पाचवाँ कारण है।

उपर्युक्त पाँच और इनके अतिरिक्त अन्य और भी छोटे-छोटे अनेक कारणों से, औषधि-प्रचार-काल में, प्राकृतिक-चिकित्सा-रीति को जनता उपेक्षा की दृष्टि से देखने लगी, साथ-ही-साथ, औषधि चिकित्सक समुदाय, विशेषकर—एलोपैथिक चिकित्सा वाले, प्राकृतिक-चिकित्सा की जड़ खोदने के लिये और उसकी जगह, अपनी जड़ जमाने के लिये, सभी उचित और अनुचित कार्रवाइयों से काम लेने लगे। फलतः औषधोपचार का प्रचार दिन दूना, रात चौगुना बढ़ता गया, और प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली दिन-दिन अवनति के खड्ड में गिरते-गिरते एकदम लोप ही हो गयी, यहाँ तक कि आज से कुछ ही सौ साल पहले संसार यह भी न जानता था कि प्राकृतिक चिकित्सा नाम की कोई चिकित्सा कभी थी भी या नहीं।

[सर्वाधिकार लेखक के अधीन]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राकृतिक चिकित्सा अच्छी या आयुर्वेद और एलोपैथी

[युगल किशोर चौधरी अग्रवाल—प्राकृतिक चिकित्सा कार्यालय-बावड़ी-दिल्ली]

[आज भी प्राकृतिक चिकित्सा के सम्बन्ध में लोगों में कुछ भ्रम फैला हुआ है। इसी भ्रम को दूर करने के लिए श्री युगल किशोर जी का यह प्रयत्न है। प्रस्तुत लेख सुपाठ्य, उत्तम और ज्ञान वर्द्धक है।—सं०]

आज के सभ्य युग में औषधि विज्ञान चरम सीमा को पहुँच गया है—स्वास्थ्य प्राप्ति के अनेक वैज्ञानिक उपायों की खोज हो रही है—खाद्य पदार्थों की वैज्ञानिक जाँच पर लाखों रुपया खर्च किया जाता है—कीटाणुवाद सिद्ध करने में डाक्टर लोग अपनी सारी बुद्धि लगा रहे हैं! इन लोगों की धारणा है कि विज्ञान की सहायता से मानव स्वास्थ्य की रक्षा हो सकेगी और रोग समूह पर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली जायगी!

लेकिन बात इसके सर्वथा विपरीत हो रही है—औषधियों की संख्या व चीर-फाड़ की विद्या के साथ-साथ मनुष्य समाज में रोगों की अत्यधिक वृद्धि हो रही है—अनेक नये-पुराने रोग दवा और चीर-फाड़ के होते हुए भी मानव समाज को भक्षण कर रहे हैं!

हमने आँखों देखा है कि बड़े-बड़े औषधि विज्ञानवेत्ता जो हमारे रोगियों को दवा देते हैं अपने व अपने स्त्री बच्चों के रोग अच्छे नहीं कर सकते अनेक वैद्यों को साधारण बुखारों में अकाल ही काल का ग्रास बनते देखा गया है। एक डाक्टर महोदय जो दमा के इंजेक्शन दिया करते थे स्वयं दमा से पीड़ित थे और दूसरे वैद्यराज जो वात रोग, गठिया लकवा आदि के इलाज के लिए भारत प्रसिद्ध थे स्वयं इन रोगों से पीड़ित होकर मर गये! और उनकी ऋषि प्रणीत आयुर्वेदोक्त औषधियाँ तनिक भी लाभ उन्हें न पहुँचा सकी।

लेखक के सामने की बात है! एक नवजवान आयुर्वेद शास्त्री महाशय साधारण मलेरिया के आक्रमण में शास्त्रोक्त दवा, काढ़े आदि उपचारों के होते हुए भी तीन दिन में ही बिदा हो गए!

दवा, चीर-फाड़, इंजेक्शन, एक्सरे आदि प्रकृति विरुद्ध उपचारों के कारण अगर कोई रोगी मर जाता है तो यह कहा जाता है कि रोगी का भाग्य अच्छा नहीं था और इसमें इलाज या दवा का कोई दोष न था परंतु अगर रोगी इन उपचारों से अच्छा हो जाय तो यश दवा और डाक्टर को मिलता है।

विलायत के प्रसिद्ध विद्वान् डाक्टर सर विलियम हावर्ड हे का मत है कि सभी रोग केवल प्रकृति विरुद्ध आहार से उत्पन्न होते हैं और केवल स्वाभाविक आहार द्वारा अवश्य अच्छे किए जा सकते हैं—रोग समूह नष्ट करने के लिए कोई इंजेक्शन दवा या चीर-फाड़ या झाड़ा फूँकी की आवश्यक नहीं है।

उन्हें स्वयं गुरदे का रोग हो गया था जिसे वे अच्छी से अच्छी मूल्यवान् दवा इंजेक्शनों से अच्छा न कर सके और अंत में निराश होकर उन्होंने अपना आहार प्रकृति के अनुकूल बनाया—

वे केवल ताज़ा फल, हरे कच्चे शाक, कच्चा धारोष्ण दूध व कुछ मेवा खाकर रहने लगे और भूख लगने पर ही खाते थे।

धीरे-धीरे इस उपाय से उनके शरीर से रोग का कारण संचित मल पदार्थ-दूषित द्रव्य निकल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया और वे तीन महीने में रोग मुक्त हो गए--उनका वज़न जो पहले २२५ पौंड था केवल १७५ पौंड रह गया किंतु वे पहले से अधिक सुंदर सुडौल और स्वस्थ हो गए।

इसी भोजन सुधार से उन्होंने हजारों ऐसे निराश व पुराने रोगियों का इलाज किया जिन्हें बड़े बड़े डाक्टर व सर्जन असाध्य बता चुके थे और जो मृत्यु की राह देख रहे थे।

सर विलियम हे का मत है कि रोग समूह कीटाणु—सरदी या छूत से पैदा नहीं होते बल्कि प्रकृति विरुद्ध आहार व बिना भूख खाने से तथा कलेवा या नाश्ता से होते हैं। वे कहते हैं कि रोग हटाने के लिए किसी अस्पताल, औषधालय, या चीर-फाड़ के औजारों की भी जरूरत नहीं है—जरूरत केवल भोजन सुधार की है।

मेरा पाठकों से अनुरोध है कि वे किसी रूढ़िवाद के फेर में न पड़ें बल्कि स्वास्थ्य विषयक सच्चा ज्ञान प्राप्त करें। याद रखिए बीमारी खुद के अज्ञान, खुद आपकी लापरवाही, आपकी बद परहेजियों से हुई है इसमें दैव का कोई दोष नहीं है।

औषधि विज्ञान का इतिहास

मनुष्य ने प्रकृति का मार्ग छोड़ दिया। वह आग से पका गरिष्ट विकृत आहार करने लगा और इसी कारण वह रोगी हो गया। जब रोग समूह कष्ट देने लगे तो उसने औषधि विज्ञान का आविष्कार किया है—आयुर्वेद एलोपैथी, हिकमत-होमियोपैथी आदि विद्याओं का प्रचार किया गया।

सब से बड़ा व विचित्र बात तो यह है कि लोग स्वयं अपने रोगों का इलाज न करके डाक्टर वैद्य हकीमों से इलाज कराते हैं—वे स्वास्थ्य विषयक नियम नहीं जानते इसीलिए इलाज के लिए दूसरों के आश्रित हैं।

औषधि विज्ञान का प्रचार बढ़ता गया—अनेक प्रकार के चिकित्सक डाक्टर वैद्य हकीम होमियोपैथी आदि की संख्या बढ़ गई और आगे जाकर शस्य विद्या या सर्जरी की उन्नति और प्रचार बहुत बढ़ गया—भला इससे अधिक अंधकार क्या होगा कि अपने को सभ्य शिक्षित कहने वाला आज का मनुष्य अपने स्वास्थ्य के विषय में कुछ भी नहीं जानता और सदा ही उसे रोग हटाने से लिए डाक्टर वैद्य हकीम आदि से इलाज कराना पड़ता है!

कोई भी यह जानने का कष्ट नहीं करता कि रोग बाहर से नहीं आता शरीर के अंदर उत्पन्न होता है और प्रकृति विरुद्ध आहार का ही परिणाम है।

प्रकृति विरुद्ध आहार पूरा न पचकर सड़ता रहता है और समस्त शरीर धातु मांस रक्त आदि में विजातीय द्रव्य (कचरा) भर जाता है और अनेक प्रकार के लक्षण-रोग समूह उत्पन्न होते हैं। किंतु औषधि विज्ञान ने इस सच्चे सिद्धांत पर परदा डाल दिया है और वह औषधियों के बल पर रोगों का नाश करने का असफल प्रयत्न करता है।

वास्तव में औषधि विज्ञान एक ऐसी विद्या है जिसके समर्थकों ने अपना एक समुदाय बना लिया है और इस समुदाय का काम रोग समूह का इलाज करना है—रोग समूह को रोकने से उनका संबंध नहीं है बात भी सच है जो लोग स्वास्थ्य की परवाह नहीं करते बदपरहेजी करते हैं उन्हें ही दवा खानी पड़ती है, जो लोग स्वास्थ्य विषयक ज्ञान प्राप्त कर करके स्वाभाविक आहार करते हैं वे कभी किसी डाक्टर वैद्य हकीम के पास नहीं जाते और न दवा खाते हैं।

हमें औषधि विज्ञान को दोष लगाने की आवश्यकता नहीं है—दोष हमारा ही है। हम लोग दुनिया भर की विद्या सीखते हैं हुनर जानते हैं मगर अपनी तन्दुरुस्ती व शरीर रक्षा के बारे में कुछ भी जानने की कोशिश नहीं करते और अकसर लापरवाही, बदपरहेज़ी करते हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसीलिये बीमार होकर अनेक प्रकार के कष्ट सहते हैं और अपना धन औरों को अर्पण करते हैं और खुशामद भी करते हैं। इतने पर भी यह निश्चित नहीं है कि रोगों से मुक्ति मिल ही जायगी।

एलोपैथी और आयुर्वेद की शिक्षा कई वर्ष में समाप्त होती है और बहुत सा धन खर्च करके और कठोर परिश्रम करके ही कोई उपाधिधारी डाक्टर या वैद्य बन सकता है। सर्जन बनने के लिए तो इससे भी अधिक समय चाहिये। एक बड़े मजे की बात तो यह है कि इतना पढ़ चुकने पर भी औषधि विज्ञान या शल्य चिकित्सा का व्यावहारिक ज्ञान या अनुभव प्राप्त करने के लिए दो-चार वर्ष चाहिये तब कहीं वह सफल हो सकता है। लेखक ने अनेक बड़े बड़े डाक्टर वैद्यों के मुँह से सुना है कि वे औरों को दवाइयाँ देते हैं पर वे स्वयं दवा नहीं लेते क्योंकि उन्हें स्वयं अपनी दवाइयों पर विश्वास नहीं है।

एक बड़े प्रसिद्ध नाक व गले के रोगों के विशेषज्ञ सर्जन ने स्वीकार किया था कि टाँसिल अवश्य बिना चीर फाड़ अच्छे हो सकते हैं—परन्तु अगर वह ऐसा करने लगे तो उसकी सारी आमदनी मारी जाय। उसने कहा यह जानते हुए भी कि टांसिल नैसर्गिक उपचारों से ठीक हो सकते हैं वह टांसिल का आपरेशन करता है क्यों कि उसे हर आपरेशन के १००) या २००) रुपये मिलते हैं।

उसने साफ़ शब्दों में कहा कि वह इस रकम को छोड़ने को तैयार नहीं है क्योंकि जनसमुदाय ऐसे उपायों में ही रुपया ख़र्च करना चाहता है। सर्जन डा० चार्ल्समेयो का मत है कि १० के पीछे ९ आपरेशन अनावश्यक है—सर विलियम हावर्ड हे का मत है कि आजकल ९९ फी सदी चीर-फाड़ जो शरीर के अंदरुनी भागों की की जाती है वह सर्वथा अनावश्यक है और इन रोगों का इलाज केवल नैसर्गिक उपायों द्वारा भली भांति किया जा सकता है।

कितनी अच्छी बात हो यदि लोग स्वास्थ्य संबंधी ज्ञान प्राप्त करें और बदपरहेजी न करें। ऐसा करने पर वे सभी उन भयानक कष्टप्रद रोगों से तथा चीर-फाड़ के कष्ट व खतरे से बच सकेंगे जो स्वयं अपने अज्ञान व लापरवाही से उन्हें सहन करना पड़ता है। रोगों के सच्चे कारण समझ लीजिये और यह भी सीख लीजिए कि शरीर कैसे रोग रहित रह सकता है। फिर आप सभी डाक्टर सर्जन वैद्य हकीमों को सर्वथा अनावश्यक समझ कर उनकी ओर मुस्करा सकेंगे।

अगर आज लोग प्राकृतिक चिकित्सा व स्वाभाविक जीवन का ज्ञान प्राप्त कर लें और अपना जीवन प्रकृति के अनुकूल बना लें तो सभी डाक्टर वैद्य, हकीम चिकित्सक न रह कर स्वास्थ्य की ओर अधिक ध्यान इसलिए नहीं देते कि उनके खयाल से चिकित्सक को अपनी दवाइयों से उन्हें नीरोग बनाना बड़ा भारी पुण्य है किन्तु मनुष्य समाज में रोग उत्पन्न होने से रोकना अधिक श्रेष्ठ है किन्तु यह तभी सम्भव है जब हमारे डाक्टर वैद्य, हकीम दवा और चीर फाड़ का पेशा छोड़कर लोगों को स्वाभाविक रहन-सहन सिखावें जिससे लोग स्वयं पथ्य से रह कर सदा व्याधि रहित बने रहें।

लोगों को जानना चाहिए कि रोग समूह थोड़े से भोजन सुधार से अच्छे हो सकते हैं और भोजन सुधार से सदा ही वे रोग रहित स्वस्थ रह सकते हैं—किंतु आज जन समुदाय उल्टे रास्ते चल रहा है—रोगों की उत्पत्ति रोकने पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता—केवल रोग हो जाने पर उसके इलाज में अनन्त धनराशि बर्बाद की जाती है व परिश्रम किया जाता है।

सब से अच्छी स्कीम यह है कि नए-नए दवाख़ाने अस्पताल खोलना बंद कर दिया जाय और डाक्टर वैद्यों को हिदायत कर दी जाय कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बजाय दवा देने के वे लोगों को स्वस्थ रहने के नियम सिखावें।

देखा जाता है आज दवा के बल पर लोग लखपती बन गए—डाक्टर वैद्यों ने नुस्खों की रकम व पेटेंट दवाइयों की बिकरी से महल जुड़ा लिए। भला वे इन बातों पर कब ध्यान देने लगे—सब से अधिक अपराध तो पूंजीपतियों का है जो औषधि दान की बारीकी व उसके रहस्य को न समझकर नाम के लिए दवा बांटते हैं और धर्मार्थ दवाखाने खुलवाकर जनता को और भी अधिक बीमार बना रहे हैं क्योंकि लोग समझे हुए हैं कि अनाप-शनाप खूब जी में आवे सो खाओ पीओ—जब कोई रोग होगा दवा खाकर अच्छा कर लेंगे।

पाठकों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि शल्य चिकित्सा (आपरेशन) के कारण अनेक व्यक्ति समय से पहले मर गए—असंख्य व्यक्ति अंगहीन लूले-लंगड़े बना दिए गए। अगर इन लोगों को स्वास्थ्य रक्षा व प्राकृतिक चिकित्सा का ज्ञान होता तो प्रथम तो यह लोग उन व्याधियों से पीड़ित ही न होते जिनमें चीर-फाड़ कराना जरूरी समझा जाता है और यदि ऐसी व्याधियाँ हो भी जाती तो वे भली-भांति उपवास, एनिमा, फलाहार, हवा स्नान, धूप स्नान व जल व मिट्टी के प्रयोगों से उन्हें समूल नष्ट करके भयानक चीर फाड़ से बचकर भी स्वस्थ रह सकते थे।

कितने ग़ैर जरूरी आपरेशन आज किए जाते हैं उसका कोई अनुमान ही नहीं है। सर विलियम का मत है कि अपने २६ वर्ष की प्राकृतिक चिकित्सा की प्रेक्टिस में उन्होंने लगभग ४०० एपेंडिसाइटीज़ के रोगियों को अच्छी तरह रोग मुक्त किया है और आश्चर्य यह कि उनमें से एक रोगी भी नहीं मरा और किसी भी रोगी पर कोई शस्त्र क्रिया नहीं की गई और न सर्जन डाक्टर की राय लेने की जरूरत पेश आई।

सभी रोगियों का इलाज बड़ी सरलता से स्थाई रूप से हो गया—अपेंडिसाइटीज़ के इन भाग्यशाली रोगियों को एनिमा रोज दिया जाता था और आंते शुद्ध रखी जाती थी—कोई ठोस चीज़ खाने को नहीं दी जाती थी केवल थोड़ा फलों का रस मात्र दिया जाता था और शीतल जल की तथा बरफ़ की थैली पेट पर रखी जाती थी। कैसी अद्भुत व सफल चिकित्सा है। लेकिन आज अगर आप लोगों को यह कहे कि एपेंडिसाइटीज़, टांसिल अदीठ, नासूर, आदि सभी का इलाज बिना चीर-फाड़, बिना दवा हो सकता है तो वे घृणा से हँसेंगे और आपको पागल बताएँगे।

इससे यह सिद्ध हुआ कि हम लोग स्वास्थ्य रक्षा के नियमों से अनभिज्ञ हैं बीमारी क्यों होती है यह नहीं जानते और इसी लिए अज्ञान वश बीमार होने पर हम डर जाते हैं और डरकर हम डाक्टर वैद्यों की शरण लेते हैं चाहे परिणाम विपरीत ही क्यों न हो।

कितनी अच्छी बात हो हम लोग रोगों का यह रहस्य समझ जायँ कि सभी व्याधियाँ स्वयं हमारी बदपरहेजी से हुई हैं और पथ्य से ही ठीक हो सकती हैं हमारे बच्चों को स्कूलों में ही यह शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिए ताकि वे स्वास्थ्य रक्षा के सच्चे मार्ग से परिचित हो जायँ और आरंभ से ही अपने स्वास्थ्य को उत्तम रख सकें और भविष्य में सभी रोगों से बचकर सुख पूर्वक संसार में दीर्घकाल तक जी सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन का समय

[श्रीयुत जानकीशरण वर्मा]

[डाक्टर बालेश्वर प्रसाद जी के लेख 'भोजन सम्बन्धी मेरे अनुभव' के उत्तर-स्वरूप श्री वर्मा जी का यह लेख छप रहा है। उत्तर होते हुए भी यह लेख सर्वथा मौलिक उपादेय, ज्ञानवर्द्धक है।—सं०]

मार्च-अपरैल के जीवन-सखा में डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह ने अपने लेख 'भोजन-सम्बन्धी मेरे अनुभव' में पुद्दुकोटा के प्रसिद्ध प्राकृतिक-चिकित्सक के० एल० शर्मा के साथ मुझे भी अपनी समालोचना का लक्ष्य बनाया है। ऐसे लब्धप्रतिष्ठ चिकित्सक के साथ मेरा नाम देकर बालेश्वरप्रसाद जी ने मुझ गौरवान्वित किया, इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

बालेश्वरप्रसाद जी ने इस बात पर प्रकाश डाला है कि भोजन का समय कौन सा होना चाहिए। उन्होंने यह कहा है कि डाक्टर डिवी, डाक्टर शर्मा और वर्मा जी ने (मैं) दिन का मुख्य भोजन शाम को करने को बताया है। यह हितकर नहीं है, क्योंकि दिन का मुख्य भोजन सवेरे ही होना चाहिए न कि उस समय, जब कि दिन ढल रहा हो। इसमें संदेह नहीं कि डाक्टर के० एल० शर्मा ने अपनी अंग्रेज़ी की पुस्तक 'प्रक्टिकल-नेचर क्योर' में इस बात पर बहुत ज़ोर दिया है। बालेश्वरप्रसाद जी कहते हैं कि डाक्टर के० एल० शर्मा की 'प्रैक्टिकल-नेचरक्योर' और वर्मा जी की 'रोगों की अचूक-चिकित्सा' बहुत ही अच्छी पुस्तकें हैं। पर सूक्ष्म दृष्टि से देखने से वे कुछ त्रुटिपूर्ण भी हैं। जहां तक डाक्टर शर्मा की पुस्तक का सम्बन्ध है उसमें त्रुटियाँ देखना मेरी शक्ति के बाहर है पर अपनी पुस्तक 'रोगों की अचूक चिकित्सा' में मैं आदि से अन्त तक त्रुटियों की ही भरमार देखता हूँ। मैं तो उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूं जब कि इस विषय पर बालेश्वरप्रसाद जी की न सिर्फ त्रुटिरहित बल्कि सर्वांगपरिपूर्ण और सुन्दर पुस्तक निकलेगी। फिर भी मुझे ताज्जुब है कि मेरा नाम डाक्टर शर्मा के साथ क्यों लिया गया। मैंने अपनी पुस्तक में मुख्य भोजन के समय के संबंध में कुछ नहीं लिखा है!

ऐसा होते हुए हुए भी एक बात जरूर है। मैं डाक्टर शर्मा के विचारों का बहुत अंश में समर्थन करता हूँ। भोजन का समय निर्धारित करने में नीचे लिखी बातों पर ध्यान देना चाहिए :—

(१) भोजन पचाने की क्रिया शरीर के लिए बहुत परिश्रमजनक है। उसमें बहुत शक्ति लगती है। इसी से भोजन के, ख़ास कर भर पेट भोजन के, बाद शरीर में शिथिलता आती है और लेट जाने की इच्छा होती है। इसका कारण यह है कि खाये हुए पदार्थों को पचाने के लिए शरीर के अंग-प्रत्यंग की शक्तियाँ थोड़ी देर के लिए आमाशय की ओर खिच जाती है, जिससे और अंगों में शक्तिहीनता का अनुभव होने लगता है।

(२) भोजन के बाद अगर कोई शारीरिक या मानसिक परिश्रम किया जाय तो यह स्वाभाविक है कि भोजन पचाने के लिए जितनी शक्ति पाचक-यन्त्रों में पहुँचनी चाहिए उतनी उसे न प्राप्त होकर बहुत कुछ शक्ति शारीरिक रौश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिक कार्यों के संपादन में लग जायगी, इसका परिणाम यह होगा कि न तो पाचन-क्रिया अच्छी तरह हो सकेगी और न शारीरिक या मानसिक काम ही उच्च कोटि का होगा।

(३) किसी जीर्ण रोग को दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि खाया हुआ भोजन अच्छी तरह पचे, उससे अच्छा रक्त बने और वह रक्त नाड़ी-संस्थान को संपोषित और फिर से जागृत करे, जिससे रोग दूर हो और शरीर नया और सबल हो जाय। अगर जीर्ण रोग का ऐसा रोगी, जिसके लिए दस-ग्यारह बजे अपने काम पर जाना अनिवार्य है, भर पेट भोजन करके अपने काम पर जाय तो न तो भोजन ही अच्छी तरह पचेगा और न काम ही अच्छी तरह हो सकेगा। उसे जाते समय और काम शुरू करने पर आलस्य घेरे रहेगा।

(४) यह सच है कि दिन का मुख्य भोजन दिन के चढ़ाव के समय में ही, जब कि सूर्य की बढ़ती हुई शक्ति सारी प्रकृति को अधिक से अधिक मात्रा में जीवन प्रदान करती है, किया जाय, पर जहाँ ऐसा न हो सके वहाँ अनेक अनुभवी चिकित्सकों की राय में, और मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार भी, यही अच्छा होगा कि दिन में दो या तीन बार फल या दूध या मठा या फल-दूध या फल-मठे की तरह हल्के भोजन पर रहा जाय, और जब दिन का कार्य समाप्त हो जाय तब दलिया या रोटी-भाजी की तरह पदार्थ खाया जाय। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसा क्रम उपयोगिता में दूसरे दर्जे का ही होगा, पर मुख्य भोजन करके तुरन्त ही काम में लग जाने से कहीं ज्यादा अच्छा होगा।

डाक्टर शर्मा का जो कहना है वह केवल सद्धान्तिकन हीं व्यावहारिक भी है और उसका प्रयोग अपने रोगियों पर मैंने अच्छी तरह किया है। इसका फल भी संतोषजनक और उत्साहवर्धक हुआ है। स्कूल-कालेज और दफ़्तरों में काम करने वाले जीर्ण रोग के रोगियों के लिए प्रायः मैं यही भोजन-क्रम निश्चित करता हूं—सवेरे एनीमा और स्नान आदि उपचारों के बाद लगभग आठ बजे फल और दूध या मठा, फिर लगभग एक बजे दिन में सिर्फ़ फल और अन्त में काम से लौट आने और शाम के उपचारों के बाद, लेकिन संभवतः सूर्यास्त के पहले, रोटी-भाजी और मुनक्का, अंजीर या खजूर जैसा कोई मीठा सूखा फल। इस भोजन के बाद रोगी डेढ़-दो घंटे किसी मनोरंजन के काम में लगता है या थोड़ी देर हलके-हलके टहलता-घूमता है। इसका फल बहुत अच्छा होता है। लेकिन अगर रोगी को काम पर जाना नहीं होता तो वह सवेरे ही रोटी-भाजी खाता है और इसके बाद वह फल-दूध ही खाकर रहता है।

इस संबंध में मैंने एक और कठिनाई का अनुभव किया है। कुछ रोगियों के लिए शाम को या रात में फल या सिर्फ़ भाजी खाना शुरू-शुरू में कष्टवर्धक होता है। उनके पेट में वायु की वृद्धि होती है, जिससे नींद अच्छी नहीं आती। ऐसे रोगियों के लिए भी आवश्यक होता है कि उन्हें शाम को ही दिन का मुख्य भोजन दिया जाय।

सब कुछ कहते हुए अन्त में मेरा यही निवेदन है कि व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुसार व्यवहार में परिवर्त्तन करने की आवश्यकता होती है। अगर काम पर जाने से लगभग दो घंटे पहले रोटी-भाजी खा ली जाय तो ऐसे भोजन का सवेरे ही खाया जाना अच्छा है। पर यह बातें उन्हीं रोगियों के लिए हैं जिन्हें एक समय रोटी-भाजी और दूसरे या दूसरे और तीसरे समय फल या भाजी जैसी हलकी चीज़ों के देने की व्यवस्था की जाती है। बहुत हालतों में तो दोनों समय रोटी-भाजी या रोटी-नमक या सिर्फ़ रोटी ही अपने देश के लिए सुविधाजनक और हितकर सिद्ध होती है।

इस संबंध में मैं दो बातें और कहना चाहता हूँ। पहली बात तो यह है कि हर साल रमज़ान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीफ़ के महीने में बहुत से मुसलमान भाई, जो जीर्ण-रोग से पीड़ित रहते हैं, मेरी चिकित्सा में आते हैं। रमज़ान में दिन भर उपवास करने के बाद रात में खाया जाता है और यह क्रम पूरे महीने भर चलता है। अगर रात में हल्का ही भोजन किया जाय तो रोज़ा रखनेवाला कोई भी मुसलमान साल भर बीमार न हो, पर ऐसा नहीं होता। दिन के बदले रात को ही कचर-कूट किया जाता है, जिससे रोज़ा का न तो शारीरिक और न मानसिक था आध्यात्मिक लाभ होता है। जो मुसलमान भाई मेरी चिकित्सा में रहते हैं उन्हें मैं छः दाने किशमिश से रोज़ा तोड़ने का आदेश देता हूँ। फिर एनीमा लेने और नमाज़ पढ़ने के बाद वे रोटी-भाजी खाते हैं और लगभग तीन बजे रात में सहरी के तौर पर सिर्फ़ शहद या एक प्याला दूध लेते हैं। इस नियंत्रित क्रम से उन्हें बहुत लाभ होता है और फ़ी सदी ८० रोग सिर्फ़ इतने ही नियंत्रण से दूर हो जाते हैं। इन हालतों में भी चौबीस घंटे में किया जाने वाला एकमात्र मुख्य भोजन रात में ही किया जाता है।

दूसरी बात इस विषय से ख़ास संबंध नहीं रखती पर है वह रोचक और शिक्षाप्रद। इन दिनों मंहगी के कारण बहुत से घरों में या तो अपनी इच्छा से या मेरी सलाह से लोग दिन में रोटी-दाल और रात में रोटी-भाजी खाकर रह रहे हैं। वे दिन में भाजी नहीं लेते और रात में दाल नहीं। ऐसे सादे भोजन की प्रतिक्रिया भी बहुत अच्छी हो रही है।

[१३२ पेज का शेषांश]

आयुर्वेद जगत को बहुत आशायें हैं। कई प्रयोग शार्ङ्गधर, योग रत्नाकर, व भैषज्य रत्नावली से लिये गये हैं। पुस्तक आयुर्वेदिक चिकित्सकों के लाभ की चीज है।

'हम सौ वर्ष कैसे जियें'—(छात्र हितकारी पुस्तक माला-संख्या ७),—लेखक केदारनाथ गुप्त, प्रकाशक—छात्र हितकारी पुस्तक माला, दारागंज, प्रयाग, कीमत १।।।)

उक्त पुस्तक का बृहद व परिवर्धित आठवां संस्करण है। आठवां संस्करण ही पुस्तक की उपयोगिता व लोक प्रियता को प्रदर्शित करता है। लेखक ने शुद्ध जल, वायु, नियमित आहार, विहार एवं प्राकृतिक उपचारों द्वारा जीवन को पूर्ण, स्वस्थ व सुखप्रद बनाने का सरल और सुगम मार्ग बताया है। प्राकृतिक चिकित्सा विधि-द्वारा रोगों का इलाज व घायलों के प्राथमिक उपचार पर भी प्रकाश डाला गया है। प्राकृतिक नियमों का अनुसरण न रहने के कारण ही हमारी औसत आयु १०० वर्ष से घटकर २५ वर्ष रह गई जब कि अन्य देशों की ४० व ५० है। पुस्तक मनन करने योग्य है।

रागिनी—संगीत शिक्षा अंक, (जनवरी-फरवरी ४४),प्रकाशक—मधुर मन्दिर, हाथरस-यू. पी. वार्षिक मूल्य ४), इस अंक का ३)

यह संगीत संबंधी एक सुन्दर पत्र है। यह संगीत के विद्यार्थियों के लिये एक अच्छी चीज है। साधारण पाठक भी रागिणी हाथ में आते ही गुनगुनाने लगेगा। साहित्यिक व वैज्ञानिक दृष्टि से राग व रागिणियों का सुन्दर वर्णन किया गया है। इस अंक की छपाई सुन्दर व स्वच्छ है। अनेक चित्र भी हैं। रागों व गायनों को स्वरलिपि सहित निदर्शित किया गया है। संगीत संसार के लिये अनोखी चीज है। आशा है संगीत-प्रेमी इससे लाभ उठायेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक परिचय

'शहद के गुण और उपयोग'—लेखक, कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेद, विशारद, प्रकाशक-महेन्द्र रसायनशाला, कटरा, इलाहाबाद। मूल्य ।।।)

कविराज जी की कृतियों से तो हमारे पाठक परिचित ही होंगे। यह आप की छठवीं कृति है। इसमें आपने शहद के गुण और उसकी उपयोगिता का सुन्दर वर्णन किया है। शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यावश्यक वस्तु तथा औषधि है। शहद का सेवन क्षुधावर्धक, कब्ज़नाशक तथा दिल की कमज़ोरी को करता है। यह रसायन है। इसी का प्रामाणिक विवेचन इस पुस्तक में सरल भाषा में किया गया है। शहद की वैज्ञानिक परीक्षा भी दी गई है। पुस्तक पठनीय और संग्रहणीय है।

Practical Nature Cure (प्रेक्टिकल नेचर क्योर); लेखक, डाक्टर के० लक्ष्मण शर्मा, पुद्दुकोटा, मद्रास (Dr. K. L. Sharma, Pudukotah, South India, मूल्य ७)

यह डाक्टर शर्मा की अंग्रेज़ी में लिखी प्राकृतिक चिकित्सा पर अत्यन्त उपयोगी पुस्तक का छठां संस्करण है। डाक्टर शर्मा प्राकृतिक चिकित्सा के विषय को न केवल भौतिक दृष्टि से बल्कि आध्यात्मिक दृष्टि से देखते हैं। इसी से उनकी यह कृति भारत के वातावरण के सर्वथा अनुकूल है। इस नये संस्करण में लेखक ने बहुत सी नई बातें दी हैं, जिनसे पुस्तक की उपयोगिता पहले से बहुत बढ़ गई है।

उषा—दिसम्बर ४३ व जनवरी ४४, संयुक्तांक, सम्पादक शकुन्तला सेठ और अयोध्या नाथ 'वीर', उषा कार्यालय, मोती बाजार, जम्मू से प्रकाशित, वार्षिक मूल्य ५)

यह एक मासिक पत्र है। पत्र का अंतर व बाह्य उषा की ही तरह सुन्दर व आकर्षक है। ज्ञानोपयोगी लेखों के साथ-साथ भाषा की सरलता इसकी अपनी विशेषता है। सुन्दर कविताएँ इसकी सुंदरता में चार चाँद लगा रही हैं। पाठकों को इसमें विज्ञान, देश-विदेश, चिकित्सा, ब्रह्मचर्य, धर्म व राष्ट्र प्रेम की शिक्षा प्राप्त होगी। वार्षिक चंदा देखते हुये यह अन्य पत्रों से सस्ती है। हमारी यह हार्दिक इच्छा है कि उषा का आलोक जगत के कोने-कोने में व्याप्त हो।

रोगों की अचूक चिकित्सा—लेखक श्री जानकीशरण वर्मा; प्रकाशक, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, मूल्य ४)

यह वर्मा जी की सुप्रसिद्ध पुस्तक का चौथा संस्करण है। इसमें नये विषयों का समावेश तो है ही, कई पुरानी बातों में भी अनुभव के अनुसार रद्दोबदल किये गये हैं, जिनसे पुस्तक प्रायः नई सी हो गई है। जल के प्रयोग और रोगियों की देख-भाल पर लेखक ने विशेष प्रकाश डाला है और रोगों की सूची में कुछ और रोग मिलाये गये हैं। पुस्तक की पृष्ठ-संख्या पहले से बढ़ी हुई है। आशा है कि इस संस्करण से पुराने पाठकों को भी यथेष्ट लाभ होगा।

'सिद्ध योग संग्रह'—लेखक वैद्य यादव जी त्रिकम जी आचार्य, प्रकाशक—वैद्यराज पं० रामनारायण शर्मा वैद्य शास्त्री अध्यक्ष श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन, झाँसी, मूल्य २।।)

श्री वैद्य यादव जी त्रिकम जी आचार्य द्वारा अनुभूत आयुर्वेदिक प्रयोगों का संग्रह प्रकाशित किया गया है। अनुभूत रस, भस्म, वटी, चूर्ण, घृत, तैल आदि में उपयुक्त औषधियों के नाम, निर्माण विधि, मात्रा व उपयोग भी दिये गये हैं। भस्मों की शोधन मारण विधि भी दी गई है। लेखक महोदय बंबई के सफल चिकित्सक तथा आयुर्वेद के प्रथम कोटि के विद्वान व लेखक हैं। आपने कई ग्रंथों का सम्पादन व प्रकाशन किया है। आपके

[शेष १३१ पृष्ठ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगियों की कहानी अपनी जबानी

मेरा दमा कैसे अच्छा हुआ

[देवी चरण त्रिवेदी]

समझ में नहीं आता कि यह विधि की विडम्बना क्या है। इतना पूजा-पाठ जप-तप, नेम, धर्म के साथ रहता हूँ हजारों रुपया की पेटेन्ट दवाइयाँ खाईं, डाक्टरों, हकीमों, वैद्यों की जेबें गरम कीं। साथ ही प्राणदान की भिक्षा भी मांगी। परन्तु भाई द्विवेदी जी! अभी भी कोई सूरत नहीं नज़र आती कि इन दमा महाराज से छुटकरा पाऊँगा। और कभी तुम्हारी तरह घूम फिर अपने काम काज सफलता पूर्वक कर सकूँगा।

द्विवेदी जी हमारे अभिन्न मित्रों में से हैं वे मुझसे बहुत प्रेम करते थे। मेरे कन्धे पर हाथ रख कर जरा धीरज देते हुए बोले "कहो भाई क्या बात है तुम और यह दमा! कब, कैसे पकड़ लिया, समझ में नहीं आता कि आप जैसे मोटे ताज़े आदमी को भी कोई रोग सता सकता है।"

नहीं भाई नहीं! मेरी हँसी अब न उड़ाओ। बहुत दुख पा रहा हूं सभी डाक्टरों ने जवाब दे दिया है कि दमा दम के साथ जाता है अब आप अच्छे नहीं हो सकते। मर्ज पुराना और असाध्य हो चुका है। भैया द्विवेदी जी यदि कोई सूरत मेरे अच्छे होने की हो सकती है तो बताओ। नहीं तो मेरे बच्चे, मेरी बीबी सब भूखों मर जायेंगे।

द्विवेदी जी मेरी ऐसी घबराहट को देख कर बेचारे बहुत दुखी हुए और डाक्टर बालेश्वर प्रसाद प्राकृतिक चिकित्सक का नाम बताया और मेरे परिचय के लिए एक पत्र उन्होंने दिया और इस बात की हिम्मत बँधाई कि आप खुशी के साथ प्रयाग जाएं। डाक्टर साहब से मिलें और अपनी भूतपूर्व की सारी रोग-गाथा बताएं तब शीघ्र से शीघ्र वहाँ से अच्छे होकर खुश-खुश आप वापस लौटेंगे। द्विवेदी जी का पैर छुआ और प्रयाग को चल पड़ा।

डाक्टर साहब जी को देख कर ही मेरा चौथाई रोग तो यों ही भाग चला। उनसे पूछने पर अपनी सारी रोग-गाथा इस प्रकार से बताना शुरू किया।

डाक्टर साहब जी! मेरे घर ही में मेरे भाई की शादी थी। चार-पांच रात जागा था दिन-रात पूड़ी-कचौड़ी, मिठाई आदि से पेट भरता रहा। वस्तुतः ये चीज़ें मुझे अच्छी लगती भी हैं! अन्यथा कोई दूसरा उपाय भी करता। जब सब मेहमान आदि चले गए करीब एक हफ़्ते बाद से मेरे पेट में सिर में मीठा-मीठा दर्द होने लगा था। इसकी तरफ मैंने ध्यान नहीं दिया सोचा कि अपने आप अच्छा हो जायगा। परन्तु उसके ठीक तीसरे दिन ज़ोर का बुखार चढ़ आया, तीन दिन तक बुखार नहीं उतरा। घर के लोग घबरा कर एक डाक्टर बुला लाए उसने पीने को मिक्चर दिया। पिया भी, बुखार का ताप कम हो गया दो दिन में अच्छा हो गया। परन्तु एक दूसरी आफत खड़ी हो गयी वह यह कि खाँसी के मारे रात में सोना हराम होने लगा। सो डाक्टर साहब जी इस खाँसी ने हमें इस वर्तमान दशा पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ला पटका अभी खाँसी नहीं गई। और धीरे-धीरे साँस फूलने लगी। बढ़ती ही चली गई, जितना मैं दवा दारू का प्रबंध करता गया उतना ही यह तीव्र रूप धारण करती गई। इसी बीच में नहीं मालूम कितने डाक्टरों, वैद्यों हकीमों के दरवाजों को खटखटाया कितने देवी-देवताओं से दुआएँ मांगी। परन्तु किसी ने मुझे स्वास्थ्य-दान नहीं दिया। अब आपकी सेवा में प्राण-दान माँगने आया हूं। डाक्टर साहब बड़ी गम्भीर मुद्रा से मेरी एक एक बातें सुनते जा रहे थे। मेरी बढ़ती हुई घबराहट को देख कर दुःखी हुए और मुस्कराए भी और कहा भी—देखिए साहब। मैं कोई जादूगर तो हूं नहीं और न ईश्वर ही। मेरे पास कुछ तरकीबें हैं उन्हें मैं आपको बताऊँगा यदि आप वैसा करेंगे और मेरे बताए भोजन को भी कार्य रूप में परिणत करेंगे तो आप अवश्य ही स्वास्थ्य लाभ करेंगे।" डूबते को तिनके का सहारा काफ़ी होता है। डाक्टर साहब जी शीघ्र ही बताइए मैं आपकी आज्ञाओं का अक्षरशः पालन करूँगा।

डाक्टर साहब जी ने दूसरे दिन से मेरी चिकित्सा क्रम इस प्रकार रक्खा।

सबसे पहले डाक्टर साहब मुझे उपवास कराना प्रारम्भ किया। पहले दिन से ही दो बार पेड़ू स्नान और दोनों शाम आध घण्टा मिट्टी की पट्टी रखने के बाद एनिमा प्रारम्भ किया। एक दिन निराहार रहने के उपरान्त गर्म जल में नींबू निचोड़ कर पीने की आज्ञा दी। इस प्रकार से पांच दिन कर सका।

तदनन्तर पालक, चौलाई, लौकी, गाजर के रस से एक सप्ताह व्यतीत कराया और इन दिनों पेड़ू नहान, बिजली का स्पार्क देकर, धोती क्रिया आँतों को साफ़ करने तथा कफ़ निकालने के लिए प्रयोग होता रहा। छाती और स्नायुओं की मालिश बिजली यंत्र द्वारा होती रही। जब कभी टब बाथ भी दिया जाता था। इसी सप्ताह से हमारे शरीर में कुछ स्फूर्ति मालूम होने लगी साथ ही थोड़ा श्वास वेग और खांसी भी कम हो गई। जहां मुझे २४ घण्टे परेशान रहना पड़ता था वहाँ केवल रात्रि में १२ से २ बजे तक तक परेशानी शेष रह गई।

तीसरे हफ़्ते में मुझको प्रातः मुनक्के या टमाटर अथवा खरबूजे की एक दो फांक खाने और पालक, लौकी, पेठा, गाजर का अर्क पीने की आज्ञा दी गई। रात में गरम जल में शहद डाल कर पीने को बताया गया। सोते समय १ सेब खाने की आज्ञा दी गई। इसके अलावा दूसरे हफ़्ते वाली सारी क्रियाएँ मेरे शरीर के साथ होती रहीं। और चिकित्सा क्रम क्रमशः चलता ही रहा। प्रति दिन एक न एक नई क्रिया बताई जाती किसी दिन नेती बताई तो किसी दिन वस्ति क्रिया। अब सब एक साथ चल रही हैं। इस सप्ताह में तो मुझे इतना साहस हो आया कि बिना डाक्टर साहब की आज्ञा के तीन-चार मील पैदल घूम आता था आज ४ साल का दमा से पीड़ित रोगी जिसको कि एक पल भी चैन नहीं मिलता था वह तीन मील पैदल चले और स्वस्थ होने की अलामत पाकर कितना खुशी होगा कितना आनन्दित होगा। इसका अनुमान वही पाठक लगा सकेंगे जो कभी अस्वस्थ दशा में स्वास्थ्य लाभ कर पहला दिन सुख से बिताया होगा।

चौथे सप्ताह में मुझे मठा और पपीता और दो पकी हरी सब्जी और कुछ व्यायाम और घूमना और बढ़ाया गया। पेड़ू स्नान एनिमा, भाप, स्वेदन मालिश, नेती, वस्ति, यथाक्रम चलते रहे जिससे अनेक प्रकार के विजातीय द्रव्य शरीर से निकल कर आरोग्यता प्राप्त करता रहा और मुझ में नवजीवन का संचार होने लगा।

पाँचवे सप्ताह में मुझको केवल दूध और शहद तथा किशमिश दिए गए और उपर्युक्त क्रमानुसार प्रयोग जारी रक्खे गए और दूध में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। बच्चों का कंठ अभी फूटा नहीं और वे व्यायाम करने लगे, यह बात है बड़ी बिचित्र। न्यूयार्क में एक शिशु है। उसकी उम्र अभी सिर्फ पांच महीने की है। परन्तु वह लोहे के झूले में खूब मजे में झूला करता है। उसका नाम है मेथ्यू जिबेट। जब वह डेढ़ महीने का हुआ तभी से उसके माँ-बाप उसको व्यायाम की शिक्षा देने लगे। न्यूयार्क में एक और बच्चा है। उसका नाम है जिमि। वह डेढ़ साल का है, परन्तु वह झाल पर चढ़ जाता है। वस्त्र-भूषणहीन नग्न शिशु का झाल चढ़ना सचमुच बड़ा मन मोहक दृश्य है। स्पेन में मेड्रिड शहर में एक ढाई वर्ष का लड़का है। वह बाइसिकल पर चमत्कार दिखा सकता है। पनामा कैनाल की सीमा में एक लड़का पाँच साल का है वह अद्भुत व्यायाम कर सकता है। रिंग के खेल में भी वह बड़ा कमाल दिखाता है। एक बाल पहलवान पाँच साल का है। परन्तु वह अपनी छाती ढाई इंच फूला सकता है। न्यूयार्क में एक दूसरा लड़का है लेस्टर ब्रीजर, पैरललबार पर खेल दिखाता है। अभी उसकी उम्र तीन साल की है।

ऊपर जो बातें लिखी गई है वे कल्पित नहीं हैं। सब सच्ची हैं ये जादू-टोना अथवा झाड़फूँक की करामातें नहीं हैं। बच्चों पर उचित ध्यान देने से उनमें अद्भुत शक्ति आई है।

"हजारों बच्चों की मृत्यु के साथ यदि हम लाखों रोगी तथा पीड़ित और करोड़ों दुर्बल बालकों की गणना करें तो हमको अन्दाज़ा हो जायगा कि जीवन और स्वास्थ्य के नियमों से अनभिज्ञ माता-पिता अपनी सन्तान पर कितनी विपत्तियों के कारण होते हैं।"

—हरबर्ट स्पेन्सर

[१२२ पृष्ठ का शेषांश]

बदाम का तेल या पिसे हुए बादाम खाने को मिला जिससे शरीर में नवीन रक्त वीर्य का संचार हुआ और श्वास रोग दूर हो गया अब तक १० मील प्रति दिन घूमने और भरपूर शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम करने की शक्ति आ गई।

इतने समय में डाक्टर साहब जी मेरी आर्थिक दशा से पूर्ण परिचित हो चुके थे। अतएव उन्होंने आज्ञा दी कि तुम अपने घर पर रह कर चिकित्सा के क्रम से चल कर और अधिक समय तक अन्न त्याग कर कभी कभी उपवास आदि कर के पूर्ण स्वास्थ्य लाभ कर सकते थे। अब तुम्हें यहाँ रहने की ज़रूरत नहीं। उनकी आज्ञा शिरोधार्य करके मैं अपने घर चला आया और ३ माह तक अनवरत चिकित्सा क्रम जारी रख कर ४ साल के दमा से छुटकारा पाकर पूर्ण स्वास्थ्य लाभ का अनुभव किया।

अब भी मैं डाक्टर साहब की आज्ञानुसार ज्यादातर पत्तीदार शाक, रोटी, लौकी, ककड़ी और फलाहार ही, पसंद करता हूँ और अन्न की मात्रा थोड़ी से थोड़ी रखता हूँ। जहाँ तक हो सकता है घी और तेल की तली हुई वस्तुओं से अपने को बचाने की कोशिश करता हूँ। और जब कभी एक दिन का उपवास भी करता हूँ। अब मैं बिल्कुल निरोग एवं प्रसन्न हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

वर्षा ऋतु का भोजन

गरमी की भीषणता की समाप्ति के साथ-साथ बरसात का आगमन होता है। प्रकृति में हरियाली छा जाती है। पशु-पक्षी भी आनन्द मनाने लगते हैं। परन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से यह मौसिम अच्छा नहीं समझा जाता, क्योंकि अनेक प्रकार के वायु के रोग और मन्दाग्नि के रोग इसी मौसिम में शुरू होते हैं। यहाँ तक कि कालरा या हैजा के प्रकोप का समय भी यही समझा जाता है।

पानी बरसने के कारण जमीन में सील आ जाती है, इसी सील के कारण मन्दाग्नि हो जाती है। भोजन का पाचन ठीक तरह नहीं होता, भूख भी कम लगती है। वायु के प्रकोप का समय भी यही होता है। इस ऋतु में आहार बिहार और संयम की खासतौर से आवश्यकता पड़ती है। जो लोग ठीक ढंग से रहते हैं उनके स्वास्थ्य में कोई गड़बड़ी नहीं होती परन्तु अनाप-शनाप खाने वाले लोग रोग के शिकार होते हैं और दुख उठाते हैं। इस मौसिम में भोजन हलका होना चाहिये। अर्थात् इस समय भोजन ऐसा किया जाना चाहिए जो जल्द पच जाय और साथ ही अग्नि को बढ़ाने वाला भी हो। हलका भोजन से एक अभिप्राय यह भी है कि कई बार भोजन न किया जाय। यों तो भोजन का समय दो बार है ही परन्तु बरसात में केवल एक बार मुख्य भोजन करना ही अधिक अच्छा है।

इस मौसिम में मौसमी फलदार तरकारियाँ ही अधिक खानी चाहिए। बढ़िया चोकरदार आटे की रोटी सब्जी मठा दोपहर को भोजन किया जाय। शाम को फल और दूध और तरकारी लिया जाय। इस मौसिम की खास दो चीज हैं नीबू और मूली। दोनों ही अग्निवर्द्धक हैं और अन्न को पचाने में मदद देने वाली चीजें हैं। नीबू का प्रयोग खास तौर से अधिक करना चाहिए। परवल, तरोई, नेनुआ, ये अच्छी तरकारियाँ हैं।

इस मौसिम में फल भी मिलने लगते हैं, आम बरसात में ही पकता है अंगूर, नाशपाती, सेब आदि भी इसी मौसिम में शुरू हो जाते हैं। जामुन बरसात का ही फल है। परन्तु वायुवर्द्धक है इसलिए जामुन के साथ दूध का प्रयोग न करें। थोड़ी मात्रा में जामुन खाने से हाजमे में कोई गड़बड़ी नहीं आती। कटहल इसी मौसिम में पकता है परन्तु यह सब के खाने की चीज नहीं है। देर में पचता है और मन्दाग्नि उत्पन्न करता है। इसलिए इसे खाना हो तो बहुत थोड़ी मात्रा में खाना चाहिए।

बरसात में पानी की अधिकता के कारण पत्ते वाले शाक और फलदार तरकारियां भी कई होती है। उनमें हलकी जल्दी पचने वाली तरकारियों का ही प्रयोग अधिक करना चाहिए। पत्ते वाले शाक वायु को बढ़ाने वाले होते है इसलिए इस ऋतु में इसे न खाय। यदि खाना हो तो थोड़ा खाय। पत्ते वाले शाक में कीड़े लग जाते हैं वे शाक के पत्ते खा जाते हैं और उस पर जहर उगलते हैं इसलिए शाक और भी हानिकर हो जाते हैं। पालक का शाक थोड़ी मात्रा में खाया जा सकता है।

इस मौसिम में कसरत अधिक नहीं करनी चाहिये। हां, टहलने घूमने का व्यायाम खूब करना चाहिये।

पहाड़ों के सैर में अधिक आनन्द आता है। सुस्ती से बैठे रहना या सोना बुरा है। हर समय अपने को प्रफुल्लित और सक्रिय या चुस्त रखना चाहिए।

रात को यदि सम्भव हो तो कोठे पर सोवे। यदि नाचे सोना हो तो ऐसी जगह सोवे जहाँ सील न हो। वायु के कोप के कारण इस मौसिम में कब्ज अकसर रहता है इसलिए एनिमा द्वारा पेट साफ रखना चाहिये।

संक्षेप में बताया हुआ वर्षा ऋतु का यह आहार विहार सुखवर्धक और स्वास्थ्य वर्द्धक है। प्रत्येक पाठक को अपना स्वास्थ्य उत्तम और आदर्श बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइयें !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिए

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (चतुर्थ संस्करण) : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ... ४)
(२) सरल शरीर विज्ञान : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ... ... २।)
(३) मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ॥)
(४) दूध ही अमृत है : श्री हनुमान प्रसाद गोयल ... ... २।)
(५) स्वास्थ्य के नुस्खे : 'जीवन सखा' कार्यालय ... ... ।)
(६) क्या और कैसे खायें : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... ।=)
(७) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १।)
(८) सचित्र हठयोग : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १।)
(९) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... ॥।)
(१०) फलाहार और फल-चिकित्सा : श्री नारायण प्रसाद आरोड़ा ... ... १।)
(११) आँख का अचूक इलाज : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २)
(१२) आरोग्य साधन : महात्मा गाँधी ... ... ॥)
(१३) जुकाम : श्रीमहेन्द्रनाथ पांडेय ... ... १॥)
(१४) शहद के गुण और उपयोग : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... ॥।)
(१५) बच्चों की रक्षा : लूई कूने ... ... ॥=)
(१६) स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियाँ : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... १॥)
(१७) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदार नाथ गुप्त, एम० ए० ... ... १॥।)
(१८) सूर्य-नमस्कार : श्री भगवती प्रसाद पांडे, बी० ए० ... ... १।)
(१९) स्वास्थ्य और जल चिकित्सा : प्रिन्सिपल केदारनाथ जी गुप्त ... ... १॥।)
(२०) आहार ही औषध है : डा० एल० एन० रतरा ... ... १।)
(२१) फलाहार चिकित्सा : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २।)
(२२) Practical Nature Cure by Dr. K.L. Sharma, N. D. ... 7 0
(२३) Drugless Healing by Dr. L. Kameshwar Sharma, M.A., N.D. 0 8
(२४) Food-de-Medicine by Dr. L. N. Ratra, H.M.B. ... 2 0

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पताः—मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रन्थ-भंडार, लूकरगंज, इलाहाबाद

व्यायामांक

जीवन सखा का यह विशेषांक स्वास्थ्य और व्यायाम सम्बन्धी साहित्य की एक अनोखी चीज है। इसके हाथ में आते ही व्यायाम सम्बन्धी सारी जानकारियां और स्वास्थ्य की कुञ्जी प्राप्त हो जाती है बहुत थोड़ी प्रतियां बची हैं दुबारा छपने की सम्भावना नहीं है। तुरत मँगा लें जिसमें निराश न होना पड़े। मूल्य १)

मैनेजर जीवन सखा, लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

जीवन मधु ! क्या आप जानते हैं ? जीवन मधु !!

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है

(१) एक छटांक शहद पानी में मिला कर रोज सवेरे पीने से कब्ज दूर होता है। (२) इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है। (३) शरीर में ताकत आती है। (४) दूध में मिला कर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुंसत्व बढ़ता है। (५) शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है। (६) यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है। (७) शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है। पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये जीवन-मधु का उपयोग कीजिए। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) २॥) सेर। बोतल और पैकिंग अलग ५ सेर से कम शहद बाहर नहीं भेजा जा सकता है। आर्डर भेजते समय कम से कम ५) पेशगी अवश्य भेजे।

दमे का अचूक इलाज

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह, संचालक, प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह, द्वारा अब तक अनेकानेक रोगियों पर किए गए अनुभूत प्रयोगों का अद्भुत चमत्कार ! ९५ प्रतिशत रोगियों को रोग-मुक्त करने का रेकार्ड ! इसके लिए रोगियों को हमारे स्वास्थ्य-गृह में सिर्फ एक महीने से लेकर २ महीने तक रहने की जरूरत है। स्वास्थ्य-गृह में रोगियों के रहने का समुचित प्रबन्ध। घर पर रह कर चिकित्सा कराने वाले रोगियों का इलाज पत्र-व्यवहार द्वारा होता है। विशेष विवरण के लिए टिकट के साथ आज ही लिखें।

मिलने का पता—

प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह,

११ लूकरगंज, इलाहाबाद

Printed at the Mission Press, Allahabad,
Published by Dr. Baleshwar Prasad Sinha, 11, Lookerganj, Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

जीवन सखा

सम्पादक—

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

महेन्द्रनाथ पाण्डेय

वर्ष ९

अङ्क ६

जुलाई १९४४

वर्षा ऋतु के रोग

यदि शरीर शुद्ध हो, उसमें विकार न हो, खान पान रहन-सहन उचित हो तो किसी भी ऋतु में बीमार पड़ने का डर नहीं रहता। परन्तु ऐसा होता बहुत कम है। ऋतुओं का प्रभाव अकसर लोगों पर पड़ता ही है। वर्षा ऋतु का प्रभाव भी बहुत खराब पड़ता है। इस ऋतु में जो रोग होते हैं वे साधारण नहीं होते, बड़े भयानक होते हैं। यों तो कोई भी रोग किसी मौसम में हो सकता है परन्तु कुछ खास ढंग के रोग खास-खास मौसिम में अधिकतर हुआ करते हैं। वर्षा ऋतु में होनेवाले रोगों में सर्व प्रथम कालरा या हैजा है। इसके बाद ज्वर, इन्फ्लुएंजा, जुकाम, निमोनिया, टाइफायड मलेरिया, मन्दाग्नि पेचिश आदि हैं।

कोई भी रोग हो शरीर में सहन शक्ति के कम होने से ही होता है। रोग से बचने के लिए टीका इंजेकशन लेना फजूल है। इससे सहन शक्ति बढ़ती नहीं बल्कि घटती है, एक रोग दबता है दूसरा रोग उभड़ता है। रोग से बचने के लिए सहन शक्ति को ही बढ़ाना चाहिए। सहन शक्ति उचित उपवास और भोजन सुधार तथा उचित व्यायाम और विश्राम से प्राप्त होती है। वर्षा ऋतु में अपने को स्वस्थ रखने के लिए सर्वोत्तम उपाय यह है कि भोजन अधिक न किया जाय, बिना सच्ची भूख लगे कुछ भी न खाया जाय और रात को भोजन न करके केवल थोड़ा दूध लिया जाय अथवा दूध और फल लिए जायँ। नीबू और मूली का उचित उपभोग करना चाहिए। यदि अधिक भोजन से बचा जाय तो खाँसी जुकाम, निमोनिया आदि कोई रोग न हो और कालरा तो कभी पास भी न फटके। इस छोटे से नोट में इन सभी रोगों का उपचार दे सकना असम्भव है। श्रीयुत जानकी शरणजी वर्मा के इसी अंक में छपे मलेरिया शीर्षक लेख से इस मौसम के रोगों के उपचार पर भी प्रकाश पड़ता है।

ग्राहकों से निवेदन

वर्तमान समय में कागज की कठिनाई बढ़ गई है। गवर्नमेंट का आर्डर हो गया है कि १९४३ में जो आकार था उसका एक तिहाई ही पेज रखे जायँ। उसी व्यवस्था के अनुसार वर्तमान संस्करण ८ पेज का प्रकाशित किया जा रहा। हमारी इस मजबूरी को आशा है पाठक क्षमा करेंगे। जैसे जैसे कागज की सुविधा मिलती जायगी हम वैसे वैसे पृष्ठ संख्या बढ़ाते जायँगे। चित्रों की व्यवस्था भी की जायगी और हम अपनी ओर से पूरी कोशिश इस बात की करेंगे कि जीवन सखा पहले से भी सुन्दर और ठोस सामग्री से युक्त निकले। हमें विश्वास है कि इस कठिनाई के समय जीवन सखा के पाठक वर्तमान आकार से सन्तोष करेंगे और पूर्ववत स्नेह बनाये रखेंगे।

मैनेजर—

जीवन सखा,

११ लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक भोजन न करें

स्वामी शिवानन्द

यह सभी स्वीकार करेंगे कि लोग अधिक खाया करते हैं। मनुष्य की अधिक बीमारियां अधिक खाने के कारण ही हुआ करती हैं। लड़कपन से ही माताएँ और बूढ़ी दादियाँ बच्चों को प्यार के कारण अधिक खाने की आदत डाल देती हैं।

जब आप भूखे नहीं होते हैं तब भी मसालों चटनी अचार का सहारा लेकर अपने पेट को ठूंसते हैं। जीभ ही या रसना ही ऐसी है जो आपको अपने बस में कर के अनेक उपद्रव खड़े करती है। यह आप को यह चीज और वह चीज खाने के लिए विवश करती है। पेट को तो दरअसल बहुत थोड़े भोजन की आवश्यकता रहती है। फिर भी जब आप इस पर अधिक बोझ लादते हैं तो वह फालतू भोजन के द्वारा बाहर निकाल फेंकता है आपको मजबूर करता है कि आप दुबारा भोजन न करें।

सादा और प्राकृतिक भोजन स्वास्थ्य को अच्छा रखने के लिए तथा बल और जीवनी शक्ति बढ़ाने के लिए पर्याप्त होता है। उपवास द्वारा भूख बढ़ती है न कि तरह तरह के स्वादिष्ट भोजन और अचार तथा चटनी द्वारा।

घड़ी में भोजन का समय देखकर ही लोग खाते हैं जबकि दरअसल उनको भूख नहीं रहती है। भूख नहीं है तो मत खाइए। ऐसा करने से दूसरे वक्त के भोजन के लिए आपको अच्छी भूख लग जायगी हजारों शिक्षित व्यक्ति उस वक्त अपने पेट को भरा करते हैं जबकि उनको भूख नहीं रहती या जब उन्ह मन्दाग्नि सताती रहती है। और क्षुधावर्धक गोली और चूरन खाया करते हैं। लोग इस तरह की मूर्खता करते हैं और दुख भोगते रहते हैं फिर भी वे अपने को उच्च शिक्षित और सभ्य समझते हैं।

सादा और प्राकृतिक भोजन कीजिए। उसी वक्त भोजन करें जिस समय आप दरअसल भूखे हों। अपने पेट को ठूँस ठँस कर न भरें। यदि आप इस सीधे-साधे नियम के पालन करने से आपके स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक वृद्धि होगी।

प्रकृति स्वयं भोजन पहुंचाती है। यदि आप मिठाइयाँ बहुत खायँ और अधिक मात्रा में चीनी खायँ तो पैन क्रिया का काम बढ़ जाता है और मधुमेह हो जाता है। प्रकृति आप को मजबूर कर देती है कि आप चीनी न खायँ। यदि आप बहुत अधिक मांस या प्रोटीन खायँ तो गुरदों का काम बढ़ जाता है और एल्ब्यू मिनेरिया हो जाता है और प्रकृति आपको मजबूर कर देती है कि आप प्रोटीन खाना बन्द कर दें।

आप कुछ दिनों के लिए अपना भोजन बन्द कर सकते हैं परन्तु पानी नहीं बन्द कर सकते। यदि आप चाहें तो कुछ समय के लिए पानी भी बन्द कर सकते हैं परन्तु हवाँ तो आप थोड़ी देर के लिए भी नहीं बन्द कर सकते। परन्तु योगी लोग अपनी साँस रोक लेते हैं और कुछ महीनों के लिए अपने को दफना देते हैं फिर भी उनके अन्दर जान रहती है। उनका जीवन किसी रहस्यमय जीवनदायक रस द्वारा सुरक्षित रहता है। यह जीवनदायक रस सहसदल कमल चक्र द्वारा जिसका स्थान मस्तक में है चूता है। आधुनिक शरीर विज्ञानी इस बात को न तो समझ सकते और न समझा सकते हैं कि योगियों में भोजन पानी और हवा बन्द कर देने पर जीवन कैसे रह जाता है और दफना देने के बाद भी उनका शरीर पोषण कैसे प्राप्त करता है। पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु सूक्ष्म आकाश तत्व के पैदावार हैं। यदि आप योग के द्वारा यह बात जानलें कि आकाशतत्व को उत्तेजित करके रस किस प्रकार ग्रहण किया जाता है तो उससे आप सभी तत्व ग्रहण कर सकते हैं जो भोजन पानी और वायु द्वारा प्राप्त होते हैं। क्योंकि आकाश में सृजन शक्ति है।

योगी लोग मस्तिष्क में स्थित आकाशतत्व को उत्तेजित करके रस ग्रहण करते हैं और अमृत पान करके अपने शरीर के अन्दर जीवन को रक्षित रखते हैं।

अधिक भोजन करनेवाला योगाभ्यास के लिए अयोग्य होता है। जो अधिक भोजन करता है वह दूसरों को भोजन से वंचित करता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् दूसरों का भोजन चुराता है और पाप करता है। उसे अवश्य सजा मिलनी चाहिए। उपवास द्वारा पाचन प्रणाली को विश्राम पहुँचाइए आप को स्वास्थ्यपूर्ण दीर्घजीवन प्राप्त होगा।

आज से आप सद्बुद्धि सीखें और सादा प्राकृतिक भोजन ग्रहण करके तथा अधिक भोजन बन्द करके स्वास्थ्यपूर्ण जीवन व्यतीत करें।

प्राकृतिक उपचार

मैलेरिया

श्रीयुत जानकीशरण वर्मा

प्राकृतिक उपचारों के बारे में एक विशेषता यह है कि अगर शुरू से ही इनका सहारा लिया जाय तो रोग बात की बात में भागता है।

अगर बुखार में शुरू से उपवास या रसाहार किया जाय एनीमा लिया जाय और बुखार की तेजी का विचार करते हुए दिन भर में २ से ४ बार कमर-नहान (Hip bath) लिया जाय तो बुखार अगर उस दिन नहीं तो दूसरे दिन जरूर जाता रहेगा। यह देखने की जरूरत नहीं कि कैसा बुखार है और बीमारी शुरू होते ही २-३ दिन तक इतनी ताकत रहती है कि रोगी २-३ बार टब में बैठ सकता है। पीछे टब में न बैठकर दिन में ३-४ बार पेडू पर मिट्टी की पट्टी, एक बार सारे शरीर को गीले कपड़े से पोंछना काफी होगा लेकिन शुरू होते ही कमर या और कोई नहान का प्रयोग जरूर करना चाहिए।

ऊपर कहा गया है कि बुखार उस दिन नहीं तो दूसरे दिन जरूर जायगा। इस के २-३ अपवाद हो सकते हैं। चेचक के पहले का बुखार नहीं जायगा पर इन उपचारों से दाने निकलने में सुविधा होगी और खतरा न रहेगा। टायफायड (मियादी बुखार) भी नहीं जायगा पर २१ दिन चलने वाला बुखार १४ दिन में ही चला जायगा और कोई उपद्रव नहीं होगा। शर्त यही है कि बुखार शुरू होते ही उपचार भी शुरू किये जायँ। अगर और हाथों में रहकर रोगी अपने हाथ में आयेगा तो देर लग सकती है।

एक बार एक ७ वर्ष का लड़का मेरे सिपुर्द किया गया जो ८-१० दिन पहले से बीमार था। उसके बाहरी लक्षण यह थे—१०२ से १०४-बुखार, गर्दन और रीढ़ जकड़ी हुई, फेफड़े में ब्राको-निमोनिया, पतले दस्त थोड़ी मात्रा में, खाँसी व, बोलना बन्द, बेहोशी। उसको अपने हाथ में लेकर इलाज शुरू करना मौत से लड़ना था, लेकिन इलाज शुरू किया गया। दिन में दो बार शरीर की गीली पट्टी, १-२ बार पेडू पर मिट्टी और १ बार एनीमा और आहार में लड़का जब मुँह खोले सन्तरा या अनार का रस—बस यही सारे-उपचार थे। तीन दिन में लड़का 'अम्मा' 'अम्मा' कहने लगा। पांचवे दिन से बुखार ज्यादा से ज्यादा १०० रहने लगा पर आठवें दिन फिर १०४ तक पहुँचा। बहुत पूछताछ के बाद मालूम हुआ कि लड़के को महाबीर जी का प्रसाद लड्डू दे दिया गया था। खैर, इस बढ़े बुखार को ठीक करने में १५-२० दिन लग गये। लड़का अच्छा हो गया। कहने का मतलब यह है कि अगर यही रोगी शुरू से प्राकृतिक चिकित्सा करता तो उपयुक्त उपद्रवों में से एक भी न होता और बुखार ज्यादा से ज्यादा एक हफ्ते में चला जाता।

मैलेरिया बुखार भी जल्दी नहीं जाता, पर इस में शुरू से ही उपयुक्त उपचारों के लगाने से बहुत आसानी होती है। बुखार न रहने के समय में दो कमर-नहान जरूर देना चाहिए और जाड़ा शुरू होने के समय और एक बार और पैरों का गर्म-नहान भी जरूर होना चाहिए। इन गर्म नहानों से बहुत लाभ होता है। बुखार न रहने के समय भाप-नहान देकर पेडू-नहान देने से मैलेरिया बहुत जल्द चला जाता है, लेकिन यह रोग के शुरू में ही संभव है, जबकि रोगी बहुत कमज़ोर नहीं हुआ है। भाप-नहान एक दिन बीच देकर देना चाहिए। जब तक मैलेरिया दूर न हो जाय अन्न नहीं देना चाहिए—सिर्फ़ फलों का रस और दूध-फटा पानी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राकृतिक उपचारों के सिद्धांत को अच्छी तरह समझना चाहिए, तब उनके प्रयोग में कठिनाई न होगी और उनका प्रभाव अच्छा होगा।

पुराने रोग के जो रोगी और-और चिकित्सा-पद्धति में रहकर इधर आते हैं उनके रोग देर से जाते हैं, पर रोगी महाशय जल्दी से जल्दी अच्छा होना चाहते हैं, जो असम्भव है। गठिया, दमा, खाज इत्यादि के रोगियों के लिए मैं पहले एक सीधा क्रम चलता हूँ, जिस से सकड़े ८० रोगी भले-चंगे हो जाते हैं। क्रम यह है :—

दो महीने के लिए—सवेरे शोच के बाद एनीमा। पहले १० दिन सेर भर गर्म (१०१०) पानी, तीन मिनट रोकना; फिर २० दिन ऐसा पानी जो न ठंडा हो न गर्म, सवा या डेढ़ सेर, १० मिनट रोकना, लगभग १ महीना तीन पाव मामूली ठंडा (८००) पानी, १५ मिनट रोकना। इस से आँत में इकट्ठा मल दूर हो जाता है और ठंडे पानी से आँतों को बल मिलता है, जिसका प्रभाव सारे शरीर पर पड़ता है। दो महीने भोजन रहता है, सवेरे कोई मौसम का ताजा फल या किशमिश, रात में किशमिश और दोपहर में रोटी और एक भाजी—और कुछ नहीं। रोगी पहले दुबले होते हैं पर आगे चलकर इसी भोजन से तगड़े भी हो जाते हैं। आगे दूध इत्यादि भी दिये जाते हैं।

प्राकृतिक उपचारों को समझिए।

तुम्हारी प्यारी !

श्रीयुत हर्षवर्द्धन वर्मा

सुशील बाबू ने दफ़्तर से मकान लौट आने पर बड़ी तेजी से अपना कोट एक तरफ कुर्सी पर फेंक दिया और टोपी दूसरी तरफ मेज पर फेंक दी, फिर कड़क कर बोले, "क्यों, रमा चाय तैयार है ?"

रमा—पानी आग पर चढ़ा है। उसके खौलने में सिर्फ पाँच मिनट की देर है, फिर पत्ती डालने और चाय के तैयार होने में कितनी देर लगेगी। आप तब तक मुँह हाथ तो धोइए।

सुशील—मुँह-हाथ धोऊँ कि अपना सिर जलाऊँ। तुम शायद मेरे मरने पर ही यह जानोगी कि दफ़्तर में कितनी परेशानी होती है।

रमा—मैं इसे अच्छी तरह जानती हूँ कि आप को दफ़्तर में बेतरह खटना होता है और आप वहाँ से थके हुए लौटते हैं। लेकिन आपके लौटने का समय भी तो बँधा हुआ नहीं है। आप कभी सवा पाँच, कभी साढ़े पाँच और कभी छः बजे लौटते हैं। अगर टाइम ठीक हो तो मैं उसी अन्दाज से पानी तैयार रक्खूँ।

सुशील—तुम विधवा होने पर ही सब कुछ जानोगी। औरों के घर में सभी काम किस तरह ठीक समय पर हो जाता है।

आज रविवार है, सुशील और रमा आपस में हँस-हँस कर बातें कर रहे हैं। सुशील ने रमा को बाज़ार ले जाने का वायदा किया है। लेकिन कुछ ही मिनटों में दोनों में फिर अनबन सी हो गई।

रमा—मुझे यह कभी आशा न थी कि मेरे रहते तुम्हारे दिल में एक और के लिए चाह रहेगी।

सुशील—तुम झूठ बोलती हो। मैं कसम खा सकता हूँ कि मैं किसी और को नहीं चाहता। अगर तुम कहो तो मैं गंगा में खड़ा होकर कसम खाऊँ।

रमा—इन बातों से क्या हो सकता है। जिसे मैंने प्रत्यक्ष देखा है, जो बात हर रोज़ मेरी आँखों के सामने होती है, उसे मैं क्यों कर अनदेखी कर सकती हूँ।

सुशील—मैं सचमुच हैरान हूँ, मेरी समझ में नहीं आता कि तुम क्या कह रही हो।

रमा—तुम बात टालना खूब जानते हो मैं तो इससे हैरान हूँ कि तुम यहाँ रहो या और कहीं जाओ लेकिन उसके बिना तुम्हें चैन नहीं। उस दिन हम लोग सैर के लिए लखनऊ गए थे, लेकिन वहाँ भी उसके बिना तुमसे न रहा गया।

सुशील—अच्छा, बहुत हुआ, उसका नाम तो बताओ।

रमा—चाय।

सुशील बाबू हँस पड़े, रमा ने फिर बोलना शुरू किया—

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या तुम इनकार कर सकते हो कि तुम मुझसे भी ज़्यादा चाय को चाहते हो ? चाय तुम्हें सुबह शाम चाहिए और कभी कभी दोपहर में भी चाहिए। उसी के कारण मैं इतनी झिड़कियाँ सहती हूँ। दफ़्तर से लौटने पर तुम 'रमा-'रमा' पुकारने के बदले 'चाय-'चाय' पुकारते हो। अब बताओ कि मैं तुम्हारी प्यारी हूँ या चाय तुम्हारी प्यारी है ?

चाय सचमुच बड़ी जबरदस्त चीज है और इसकी पकड़ से बचा रहना कठिन बात है। आश्चर्य तो यह है कि पढ़े-लिखे लोग, ख़ास कर अँग्रेज़ी पढ़े सभ्य सज्जनगण, इसके फंदे में बे-तरह फँसे हैं, लेकिन अब तो गाँव गाँव में भी इसका प्रचार है।

परिस्थिति भी ऐसी है कि चाय की शरण लेनी ही पड़ती है। जिस भारतवर्ष में दूध-दही की नदियाँ बहती थीं, वहाँ दूध मिलना प्रायः असंभव सा हो गया है। जो दूध मिलता है वह बिलकुल फीका और पानी से भी ख़राब रहता है। विपरीत इसके एक छटाँक दूध के सहारे चार-पाँच प्याली चाय बन जाती है। चीनी पड़ी रहने से उसका स्वाद भी मज़ेदार होता है और गर्म-गर्म पीने से थकावट भी दूर होती है।

इन दिनों सब रोगों में थकावट रोग ही बहुत भयानक है। जिसे देखो वह थकावट-रोग से लाचार है। कमज़ोरी से थकावट, ग़रीबी से थकावट, परिश्रम की थकावट जीवन के सभी तरह के हल-चल से थकावट, चारों ओर थकावट ही थकावट तो है। उधर चाय थकावट को कम-से-कम उतने समय के लिए—जरूर दूर करती है। ऐसी हालत में अगर चाय को न अपनाया जाय तो उद्धार कैसे हो।

चाय के पीने में शान-शौकत भी तो है। शान-दार पॉट, सुन्दर प्लेटों में रखी मनमोहिनी प्या-लियाँ, चमचमाती चम्मचें, दूध और चीनी के बढ़िया बर्त्तन, फिर दो चार दोस्तों की लच्छेदार बातें—सचमुच, चाय का छोटा जलसा बड़ा शान-दार होता है। और खर्च ?—कुछ नहीं के बराबर।

इन्हीं कारणों से चाय इतनी लोकप्रिय हो रही है। फिर इसे बहुत से लोग हानिकर क्यों बताते हैं ? बात यह है कि चाय की पत्तियों में कई तरह ज़हर छिपे रहते हैं। उसमें 'टैनिन' जो पदार्थ है वह चमड़े को टैन करती, चिकना बनाती है। भोजन-प्रणाली का स्तर ज़्यादा अंशों में खुरदरा है उसमें कई तरह की गिल्टियाँ हैं। जिनसे पाचक रस निकलते हैं। चाय के पेट में जाते समय उसके अन्दर का 'टैनिन' पदार्थ उन गिल्टियों को चिकना करता है या यों कहो कि उनका मुँह बंद कर देता है, जिससे आगे चलकर पाचक रसों के निकलने में कठिनाई होती है। इससे पाचन-शक्ति का ह्रास और धीरे धीरे कई खराबियाँ हो जाती हैं।

चाय की एक और खराबी यह है कि उससे नाड़ियों को हल्की उत्तेजना मिलती है और फिर प्रत्येक उत्तेजना की प्रतिक्रिया सुस्ती भी आ जाती है। इससे नाड़ियाँ खींचा-तानी की हालत में रहती हैं और धीरे-धीरे कमजोर होती जाती हैं। फिर कमजोर नाड़ियों की प्रतिक्रिया सारे शरीर पर पड़ती है।

चाय अगर अकेली पी जाय तो बहुत खराबी न हो, लेकिन लोग उल्टा ही कहते हैं कि खाली पेट चाय न पियो। सच्ची बात यह है कि कुछ खा कर या खाते समय चाय पीने से खाई हुई चीज अच्छी तरह नहीं पचती, जिससे और-और खरा-बियाँ पैदा होती हैं।

अगर चाय अकेली पी जाय और उसमें चीनी न डाली जाय तो बहुत कम खराबी हो, और अगर चाय में दूध और चीनी न डालकर नींबू का रस डाला जाय तो और कम खराबी हो। पश्चिम के बहुत से प्राकृतिक चिकित्सा-गृहों में रोगियों को हल्की बनी 'चायना टी' (चीन की एक प्रकार की चाय) बिना चीनी के पी जाती है। उससे, कहते हैं कि, कुछ भी खराबी नहीं होती।

चाय से सबसे खराबी यह होती है कि उसके बिना रहा नहीं जाता। समय पर उसके मिल जाने से ही चैन मिलता है। यह नैतिक कमजोरी सबसे ज़्यादा खराब है।

सुशील बाबू ने कहा, 'रमा, चाय तो तुम्हारी भी प्यारी है। मेरे साथ तुम भी तो बैठती हो और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका आनन्द लेती हो।' रमा ने उत्तर दिया, 'यह तुम्हारी ही कुसंगति का फल है।'

मेरी खाँसी कैसे अच्छी हुई

श्रीयुत गोपालकृष्ण मलिक

मुझे खाँसी थी और इसके कारण मैं भगवत चिन्तन नहीं कर सकता। मैं कुछ पहाड़ी और स्वास्थ्य प्रदस्थान में गया। वहाँ के शुद्ध वायु मात्र से संतोष करना पड़ता था, विशेष सुधार नहीं हुआ। तब सेवा ग्राम से व्यवस्था संबन्धी दिन-चर्या लिख कर आयी। जिसमें भोजन संबन्धी व्यवस्था का प्रकरण भी था। साथ ही यह भी बताया गया था कि वीर्य दोष के कारण भी अकसर खाँसी जोर पकड़ती है, इसका ठोस अनुभव मुझे अभी तक नहीं मिल सका है। पर इसमें तथ्य मालूम होता है।

नियम साधारण था। भोजन में रोटी और फल ही लेना। कुछ कच्चा और पक्का शाक, ताजा दूध और मठा भी। भोजन हमेशा हलका करना। दो से लेकर तीन बार से अधिक न खाना। रात में न खाना शुद्ध हवा का हमेशा सेवन करना। मिर्च-मसाला का नितान्त त्याज्य। अगर प्याज और लहसुन से आप को घृणा न हो तो उसे भी भोजन के साथ अवश्य मिलाना"।

इस नियम के विस्तार से पालन करने पर खाँसी से मेरा पिंड छुटा। चेहरे में भी रौनकता आने लगी। मैंने इस प्रयोग को किस तरह क्या-क्या किया यह आगे थोड़े में उद्धृत करता हूँ। दोनों शाम गेहूँ की रोटी, (गेहूं के सिवा अन्य अन्न की भी रोटी ली जा सकती है। जिसकी रोटी बनती हो और बन सकती हो। वह पचने में हलका भी होना चाहिये।) कच्चा और पक्का शाक ही भोजन की वस्तु रखा। करीब करीब नित्य यही भोजन रहता था। दूध-घी और मठा तथा फल आवश्यक रूप से नहीं लेता था। क्योंकि मेरा प्रयत्न इस ओर भी था कि गरीब जिन्हें दूध-घी मठा और फल क्या अन्न भी उचित मात्रा में मुहैया नहीं है, उनके लिये भी यह प्रयोग सफल हो तो कारगर ठहरे। कुछ दिन तक मैं केवल पक्के केले पर भी रहा था क्योंकि यह यहाँ प्रचुर और सस्ता रहता था। पर इससे मुझे अधिक फायदा का अनुभव नहीं हुआ। रात को मैं आकाश के नीचे सोता था और सुबह चार बजे मैदान में घूमा भी करता था। यही मेरा उपचार था जिससे मैं खाँसी से निवृत्त हो सका।

जिस समय मैं प्रयोग कर रहा था शीत का मौसम था। इस समय जब कि कड़कती जाड़ा में एक क्षण के लिये बाहर आना लोग दुःसाध्य मानते थे मुझे रात को आकाश के बीच शीत में सोते देखकर लोगों ने मेरा पागलपन समझा। लोगों के पूछने पर मैं इतना ही बता सकता था कि भविष्य का नतीजा देखने पर ही ख्याल हो सकता है। क्योंकि इसका अनुभव मुझे नहीं था। कच्चे शाक को खाते देखकर भी लोग मेरा पागलपन समझते थे। मालूम नहीं अब क्या है।

खाँसी रोग होने का कारण क्या २ हो सकता है, यह मैं पूरा २ नहीं कह सकता पर मैं अपने अनुभव पर नम्रता से कह सकता हूँ कि खाँसी के रोगी के भोजन और जीवन के अन्य विरोधी व्यवस्था के कारण ही खाँसी बढ़ती है। जैसा कि मुझे स्वतः अनुभव होता रहा है। इस रोग से छुटकारा मिल ही नहीं सकता यह तो मुझे विश्वास ही नहीं रह गया। ठूंस-ठूंस कर भोजन करने, दाल खाने, रात को खाने से खाँसी बढ़ती है। क्योंकि अधिक पेट भरकर खाने से खाँसी का प्रकोप होने का स्वभाविक भय रहता है दाल खाने से भी। रात में खाँसी का प्रकोप रहता है इसलिये रात को खाना भी वर्जित है। खाँसी का प्रकोप अकसर शीत मौसम में रहा करता है। जिस समय खाँसी के रोगी को घर में ठूँस २ कर रखा जाता है कि कहीं सर्दी न लग जाय। यह इस बीमारी का एक मुख्य अप्राकृतिक व्यवहार है। शुद्ध वायु और खुली हवा के अभाव में भी खाँसी रोग बढ़ता है। और उसके लिए नुकसान देह होता है। गाँव के घरों में तो खिड़कियाँ प्रायः नहीं ही होती हैं। और मैं समझता हूँ जिनको कफ का दौरा रहता हो इस तरह के विरोधी आचरण से भी खाँसी रोग हो सकता है और बढ़ सकता है। खाँसी रोग वाले चाहे अमीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हों या गरीब उन्हें इस प्राकृतिक चिकित्सा से राहत मिल सकती है और रोग से मुक्ति भी।

खाँसी या अन्य रोग में औषधि का प्रयोग होता है वह रोग के मूल को शरीर से बाहर निकालने के बजाय भीतर ही दबा देता है इस कारण इससे भारी नुकसान है। उससे कई नये २ रोग हो जाते हैं। खाँसी रोग दबाने की औषधि लेने से रोग भयंकर ही होता है। सिर्फ खुली हवा के सेवन से कफ भीतर से बिना तकलीफ के बाहर निकलता रहता है। जब आप खुली हवा में सोयेंगे, टहलेंगे तो नित्य सुबह में आपको बिना तकलीफ के सूखा या ढीला कफ गिरेगा। ऐसा मेरा नित्य का अनुभव है। और जब पुराना कफ नित्य गिरता रहेगा फिर नया कफ नहीं बन सके तो क्यों नहीं इस रोग से मुक्ति मिल सकती है? लेकिन नया कफ का बनना या न बनना भोजन पर अवलंबित है।

बच्चे का भोजन और देख-रेख

श्री ब्रजमोहन मिहिर

शरीर के प्रत्येक अवयवों की आवश्यकता के अनुसार उसकी एक परिमित शक्ति होती है। उस शक्ति के अनुसार जब उससे कार्य लिया जाता है तो उसकी कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। आवश्यकतानुसार जब भोजन मेदे में पहुँचता है तो उसे पचाने के लिये मेदे को उतना ही परिश्रम करना पड़ता है जितने की उसे जरूरत होती है। जरूरत के माफिक शक्ति खर्च करने से उसमें कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। इसके विरुद्ध जब मेदे में अधिक भोजन पहुँच जाता है तो उसे पचाने के लिये उसे अपनी संचित शक्ति खर्च करनी पड़ती है। यह संचित शक्ति शरीर के अन्य उपयोगी काम में खर्च होती है। जब उसे केवल अधिक भोजन किये हुए पदार्थों को पचाने में अपनी शक्ति कम करनी पड़ती है। बच्चोंके भोजन के सम्बन्ध में उनके संरक्षक को अपने भोजन से कहीं अधिक सावधानी रखनी चाहिये। अधिक और गलत भोजन से स्वास्थ्य का अच्छा रहना और उसमें उन्नति होना तो बहुत दूर की बात है वे सदा निर्बल, क्षीण, अस्वस्थ और स्फूर्तिहीन दिखलाई पड़ेंगे। इसलिये बच्चों को क्या, कब और कितना भोजन देना चाहिये इसमें कभी असावधानता नहीं दिखलाना चाहिये। अधिक भोजन करने वाले चाहे वे बालक हों या बड़ी आयु वाले हों कुछ निर्बल और दुबले पतले दिखलाई पड़ते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि मेदे को भोजन हजम करने के बाद उसे भली प्रकार शोषण करके रक्त और रस बनाने का अवसर नहीं मिलता। अतः अधिक भोजन करके मोटे ताजे होने की बात गलत है और किसी को मुख्यतः बालक को आवश्यकता से अधिक भोजन नहीं देना चाहिये। अधिक भोजन ही रोगों के कारण हैं। बच्चों को अधिक भोजन से भाँति-भाँति की भीषण बीमारियाँ हो जाती हैं।

कुछ गरीबी, कुछ आलस्य और कुछ भोजन के सम्बन्ध में ठीक बात को न जानने से वे यह चाहने लगते हैं कि बच्चा जल्दी से जल्दी कुछ खाने-पीने लग जाय। अक्सर तो यह भी देखने में आता है कि बच्चे के दांत जब निकलना भी नहीं शुरू होते हैं तभी से उसे कुछ खाना-पीना दिया जाने लगता है। इससे बच्चे को बहुत हानि होती है। ठोस भोजन का लाभ तो केवल उस समय ही ही होता है जब वह अच्छी तरह से चबा हलक के नीचे उतार जाता है। केवल इससे ही अन्दाजा लगाया जा सकता है कि इससे कोमल शिशु के स्वास्थ्य को कितनी अधिक क्षति पहुँचती है। बच्चे को इस ढंग का भोजन देने वाले यह कहते हैं कि वे उसे वही चीजें देते हैं जिसे दाँत से चुभलाने की कोई आवश्यकता नहीं रहती। यह उनका एक बहुत बड़ा भ्रम है। नौ महीने तक की आयु के बच्चे के लिये तो उसका स्वाभाविक भोजन ऊपर का दूध भी नहीं है। क्योंकि ऊपर का दूध जब उसे दिया जाता है तो वह गले से लेकर सीधा उसके पेट में चला जाता है। मां का दूध पीते समय बच्चे को अपनी ओर से जो स्वाभाविक प्रयास करना पड़ता है वह ऊपर का दूध पीने में कुछ भी नहीं करना पड़ता। जैसे ठोस भोजन करने में मुँह की लार उसे तरल बना कर पचने में सहायता करती है वैसे ही मां का दूध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीते समय बच्चे का वह प्रयास दूध को शीघ्र पचा देता है। बच्चे को ऊपर का दूध देना तो ऐसा ही है जैसे कि बीमारी के बाद किसी पशु को ढरके से कोई औषधि पिलाना।

जो बच्चा मां का दूध पीता है उसे नौ महीने तक मां के दूध के अतिरिक्त और कुछ नहीं देना चाहिये। इस आयु के कुछ पहले से ही बच्चे को दांत निकलना शुरू हो जाता है। किन्तु आगे के दो दांतों के निकल आने का यह मतलब नहीं है कि बच्चा कोई कड़ी चीज मुँह से चबा सकता है। आगे वाले ऊपर नीचे के दो दांत तो सिर्फ इतना ही काम करते हैं कि उनसे वह बाहर की कुछ चीजों को पकड़ सकता है। अतः बच्चा जब नौ महीने की आयु प्राप्त कर ले तो उसे दिन में एक दफा ताजा बकरी या गाय का दूध पीने को देना चाहिये। दूध में गुड़ या चीनी न मिलाई जावे। इस प्रकार बकरी या गाय के ताजे दूध के साथ जब बच्चे का ऊपरी भोजन आरम्भ किया जाता है तो बच्चा स्वयं भी अपनी ओर से दूध की स्वाभाविक मिठास के अतिरिक्त मीठे की इच्छा न प्रगट करेगा। अगर किसी बच्चे को उस दूध के पीने में दिक्कत मालूम होवे, जो कि मेरे अनुमान से कभी नहीं होनी चाहिये तो दूध में थोड़ी सी मिल्कशूगर या शुद्ध पहाड़ी शहद मिलाया जा सकता है। किन्तु इसके लिये भी अपनी ओर से कोई कोशिश न करनी चाहिये। अच्छा यही है कि वह चीजें भी दूध में न मिलाई जायं। जब बच्चे को ऊपर का दूध दिया जाय तो इसके साथ, संतरा, अंगूर, सेब, अनन्नास, टोमाटो या पीली गाजर का दो चमच्चम तक रस भी पिला दिया जाय। और दूसरे फलों के रस भी दिये जा सकते हैं किन्तु इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि वे पाचन में भारी न हों और न ज्यादा खट्टे ही हों।

ज्वर अथवा जुकाम खाँसी यह साधारण बीमारी हैं जो अगर बच्चा एक दिन उपवास कर ले या संतरे के रस पर रह ले तो जरूर अच्छी हो जाती हैं। लेकिन जब बच्चा बीमार पड़ता है तो ऐसा भी नहीं किया जाता है। बच्चे को बीमार पड़ने के साथ ही घर के दूसरे लोग भी अपनी परेशानी में पागल होकर बीमार पड़ जाते हैं। बच्चे के बीमार होने से उनके सुख और आराम में खलल पड़ता है इस लिये वे यह चाहने लगते हैं कि बच्चा जल्दी से जल्दी अच्छा हो जाय ताकि उनके सुख के दिन फिर लौट आयें। यह बात उनके दिमाग में पहले आती है और बच्चे की बीमारी बाद में। लेकिन इस मामले में लोग इतने बेहोश रहते हैं कि बाहर वे यही प्रगट करते हैं कि उनकी सारी परेशानी बच्चे की बीमारी है। मैं चाहता हूँ कि तनिक इस मामले पर गौर करें। [illegible] को उनकी इस अचेतनावस्था से बहुत कुछ हानि उठानी पड़ती है। साधारण कष्ट के समय किसी औषधि के प्रयोग से रोग उस समय के लिये अन्धा हो जाता है। किन्तु रहन-सहन और खान-पान का तरीका तो वही बना रहता है इसलिये अब बच्चा अक्सर बीमार होने लगता है। हर बीमारी के हमले में उसे कुछ न कुछ दवा दी जाती है। जब तक शरीर के अन्दर शक्ति रहती है तब तक दवा लाभ पहुँचाती है, अर्थात् रोग को तुरन्त दबा देती है। जब शक्ति ह्रास होने लगती है तो वही दवा जिसने अमुक रोग पर लाभ पहुँचाया है अब कोई लाभ नहीं पहुँचाती। शरीर के इस स्थिति पर पहुँचने पर वह अपने विष को किसी कठिन रोग द्वारा सूचित करता है। लीवर, रिकेट आदि ऐसी कोई बीमारी उसे घेर लेती है। इस ढङ्ग की कोई भी एक बीमारी जब घर कर लेती है तो बच्चा करीब-करीब हमेशा बीमार रहने लगता है। बीमारी का मुकाबला करने के लिये अब उसके अन्दर कोई शक्ति नहीं रह जाती और न उसे कोई दवा ही कुछ लाभ पहुँचा पाती है। हमेशा बीमार रहने के कारण बच्चा धीरे-धीरे क्षीण होने लगता है। अब वह केवल अपने जीवन के दिन व्यतीत करता है। न उसे कोई आराम पहुँचा पाता है और न कोई औषधि ही उसे लाभ पहुँचाती है। अन्त में एक दिन बच्चे की मृत्यु हो जाती है।

Printed at the Mission Press, Allahabad.
Published by Dr. Baleshwar Prasad Sinha, 11, Lookerganj, Allahabad.
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by

जीवन सेवा

शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा बिहार के शिक्षा विभागों द्वारा स्वीकृत

इस अंक में पढ़िये

१—योग चिकित्सा—[डा० बालेश्वर प्रसादसिंह] १४५
२—बिहार में हैजा—[" "] १४७
३—धातुक्षीणता की चिकित्सा—[श्रीयुत मोहनसिंह] १४८
४—एक और नशा—[डा० बालेश्वर प्रसादसिंह] १४९
६—मूँगफली—[डा० सुरेन्द्र प्रसाद गर्ग] १५०
६—स्त्रियां और उनके रोग—[लेखिका—डा० इन्दुमती सिनहा, एन० डी० डी० वाई०] १५१
७—चिकित्सा में कठिनाई—[श्री जानकीशरण वर्मा] १५३
८—तत्व-चिकित्सा का पुनरुत्थान—[श्रीयुत गंगा प्रसाद गौड़ 'नाहर'] ... १५४
९—दो साल लगेंगे ! [श्री जानकीशरण वर्मा] १५६
१०—रोग से कैसे बचा जाय—[श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय] १५७
११—मेरा पुनर्जन्म कैसे हुआ—[श्रीयुत सरदार नानवसिंह] १५९
१२—मलेरिया—[डा० बालेश्वर प्रसाद सिनहा] १६१
१६—स्त्री रोग—[श्रीयुत सीताराम सिनहा] १६२

क्र० ग्र० कु० में ७ नंबर ४४ को प्राप्त। ह० प्रसादसिंह

संपादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

महेन्द्रनाथ पाण्डेय

वार्षिक मूल्य ४)

प्रति अंक का (=)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रति मास इक्कीसवीं तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ४) तथा एक प्रति का ।=) है।

(३) सज्जन-गण जनवरी या जुलाई से ही ग्राहक बनें; यों किसी महीने से भी ग्राहक बनाया जा सकता है।

(४) मास के अन्त तक 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोस्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए। अन्यथा मुफ्त में वह अंक फिर न मिलेगा।

(५) पत्र भेजते समय अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ सा. ऋरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।=) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

यदि आप अपना बिगड़ा स्वास्थ्य सुधारना चाहते हैं और अपने को स्वस्थ रखना चाहते हैं तो

महेन्द्र नाथ पाण्डेय की ये पुस्तकें अवश्य पढ़िये

१—फलाहार चिकित्सा—फलों से किस प्रकार चिकित्सा होती है, इनमें कौन कौन गुण हैं आदि बातों पर पूर्ण अनुभव के साथ प्रकाश डाला गया है। मू० २।)

२—स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियां—शाक तरकारियों के सम्बन्ध में वैद्यक शास्त्र से लेकर आज तक के वैज्ञानिक अनुसंधानों एवं प्राकृतिक चिकित्सा के अनुभव के आधार पर लिखी पुस्तक। मू० १॥)

३—मठा उसके गुण तथा उपयोग—मठे से बिगड़ा स्वास्थ्य कैसे बनता है यह उपयोगी वर्णन पुस्तक में पढ़िए। मू० ॥)

४—आँख का अचूक इलाज—चश्मा छोड़ने की अनुभूत विधि बताने वाली पुस्तक। यदि आप चश्मा लगाते हों या लगाना चाहते हों, आपकी आँख में कोई रोग हो, हर हालत में यह पुस्तक आपकी सहायता करेगी। मू० ॥)

५—जुकाम—इसमें जुकाम, ब्रोंकाइटिस, दमा, खाँसी, निमोनिया, इन्फ्लुएंजा आदि रोगों का अचूक इलाज बतया गया है। मू० १॥)

शहद के गुण और उपयोग—इसमें शहद के सम्बन्ध की सारी जानकारी और इलाज की बातें बताई गई हैं। मू० ॥।)

दूध चिकित्सा और तपेदिक नामक पुस्तकें छप रही हैं। इन कां की माँगें बहुत आरही हैं। अपना आर्डर अभी से रजिस्टर करा लीजिए।

पता—महेन्द्र रसायनशाला, कटरा, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

जीवन सखा

सम्पादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

पं० महेन्द्रनाथ पाण्डेय

वर्ष ९] अगस्त, सितम्बर, अक्टूबर १९४४ [अङ्क ८-९-१०

योग चिकित्सा

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

['जीवन सखा' के पाठकों को, जो अब तक प्राकृतिक-चिकित्सा के विविध प्रयोगों से परिचित होते थे, इस लेख में एक और भी श्रेष्ठ प्रणाली और एक नया स्वास्थ्य-जगत का मार्ग बताया जा रहा है। उतना ही स्वास्थ्य पर्याप्त नहीं है जितना कि साधारणतः लोग समझते हैं, और अपनी कल्पना से अपने सामने चित्रित करते हैं। सच्चा स्वास्थ्य एक बहुत गंभीर और बहुमूल्य पदार्थ है और जो सौभाग्यशाली मनुष्य उसे पा जाता है वह अपने शरीर और मन को बहुत ऊँचे ध्येय की तरफ़ लगा सकता है। ऐसा स्वास्थ्य योग विद्या से ही प्राप्त हो सकता है। उसकी संभावनाओं की झलक इस लेख में दर्शाई जा रही है। अगले अङ्कों में इसके संबंध में और बातें बताई जायँगी।]

यह तो ठीक है कि अपने कर्मों के फलस्वरूप बीमारी और दुःख होता है और इससे मुक्ति पाने के लिये तपस्या और प्रायश्चित्त की आवश्यकता है। जो मनुष्य अपने को भूल जाता है, इन्द्रिय लोलुपता को ही अपना जीवन समझता है और यह समझता है कि कोई दूसरा मनुष्य उसके दुःख का निवारण करेगा, उसका कल्याण कदापि नहीं हो सकता। रोग से मुक्ति पाने के लिए यह ज़रूरी है कि मनुष्य अपने को समझे, अन्तरमुखी हो और अहमन्यता को मिटा कर अपने को विश्व-शक्ति में मिला दे, अर्थात् विश्व-शक्ति को समझ कर अपनी शक्ति या जीवन को उस में मिलाने का संकल्प करे। मेरे दुःख या रोग का अस्तित्व अज्ञान पर निर्भर है। जब तक मनुष्य अहमन्यता के संसार में विचरण करता है तभी तक उसे बीमारियाँ, दुःख सताते हैं। जैसे ही वह अहमन्यता का नाश कर विश्व-शक्ति से संयुक्त होता है, उसके सारे दुःख और बीमारियाँ दूर हो जाती हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा कहती है कि रोग इसलिये होता है कि मनुष्य का शरीर विजातीय द्रव्य से भरा होता है। जब विजातीय द्रव्य शरीर से निकल जाता है तब शरीर शुद्ध हो जाता है। जब यह विजातीय द्रव्य तीव्र गति से निकलता है तब तीव्र (Acute) बीमारी का रूप धारण करता है। यह विजातीय द्रव्य जब किसी कारण से दब जाता है और निकलना बन्द हो जाता है तो इस बीमारी को पुरानी बीमारी कहते हैं। इन रोगों के निकलने के लिये प्राकृतिक-चिकित्सक फल-चिकित्सा, उपवास, आध्यात्मिक चिकित्सा या इसी तरह के और अनेक उपाय काम में लाते हैं।

स्वभावतः मनुष्य-शरीर के अन्दर पाचन, सात्मीकरण, विसर्जन ये तीन क्रियाएँ आप ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप हुआ करती हैं। पर मनुष्य जब अधिक भोजन कर लेता है तो इन तीनों क्रियाओं में अन्तर आता है और यहीं से बीमारी की शुरुआत होती है। प्राकृतिक चिकित्सक ऐसा समझते हैं कि सिर्फ़ अधिक भोजन ही नहीं, पर बेमेल भोजन और प्राकृतिक लवण-रहित भोजन होने से भी बीमारी उत्पन्न होती है, अब हमें यह देखना है कि रोग तो सिर्फ़ इसलिये होता है कि मनुष्य का चित्त चंचल है, एक जगह टिकता नहीं, कभी यहाँ, कभी वहाँ, सर्वत्र घूमता रहता है। रोग एक दैवी विधान है, इसके द्वारा मनुष्य का चित्त अपनी ओर खींचता है अर्थात् चित्त को अन्तरमुखी बनाने की चेष्टा करता है। स्वस्थ केवल वही मनुष्य हो सकता है, जिसका चित्त चंचल नहीं है। ऐसे तो मैं अपने बारे में चिन्ता नहीं करता कि मैं कौन हूँ ? मेरे इस जीवन का क्या उद्देश्य है ? पर जैसे ही मुझे शारीरिक कोई भी कष्ट होता है शीघ्र ही मैं उस ओर खिंच जाता हूँ और फिर यहाँ तक हो जाता है कि सारा संसार तथा तमाम आकर्षित करनेवाली वस्तुओं से मन विमुख हो जाता है। सब ओर से आ कर मन उसी बीमारी पर अन्दर केन्द्रित होता है। यह बीमारी की भयंकरता पर निर्भर करता है। जितनी ही बीमारी भयंकर होगी, उतना ही चित्त एकाग्र होगा, यदि मैं बीमारी के उद्देश्य को नहीं समझता और दूसरे पर भरोसा करता हूँ या चित्त को किसी पर अटकाए रखता हूँ अथवा मैं यह समझता हूँ कि किसी वैद्य या डाक्टर द्वारा मैं अच्छा हो जाऊँगा तब तक वह मनुष्य दुःख से छुटकारा नहीं पा सकता, उसकी निवृत्ति का एक ही मार्ग है, वह है चित्त का अन्तरमुखी होना। अधिक भोजन करना यह भी अवश्य निषेध है, उसी प्रकार से तीता, चरपरा भी मना करते हैं। पर साधारण भोजन, लवण रहित या लवण युक्त हो। इसके लिए भी वे चिन्ता नहीं करते। वे सिर्फ़ इस बात का ध्यान रखते हैं कि भोजन के साथ दूध, घी तथा मीठी चीज़ों का समावेश अवश्य हो। पर इन सब का मात्रा से अधिक व्यवहार ठीक नहीं। साधक की अवस्था तक तो भोजन के इन नियमों का पालन किया जाता है परन्तु थोड़ा सा अभ्यास करने के बाद भोजन के नियम योगी के लिये लागू नहीं होते। कोई भी भोजन उसके लिए ग्राह्य होता है। योगी अपने ख़ून को गंगाजल बना लेता है अर्थात् दूसरा जल रखने से गन्दा होता है, कीड़े पड़ जाते हैं, परन्तु गंगाजल सालों रक्खा जाता है, उसमें कीड़े पड़ते या खराब होते नहीं सुना गया। इसी प्रकार योगी जब खेचरी मुद्रा करता है, वह जिह्वा द्वारा अमृत पान करता है और उसका ख़ून गंगाजल बन जाता है। इस अवस्था के बाद उसको कोई भी संक्रामक रोग नहीं लग सकता। इस मुद्रा के कुछ अभ्यास के बाद उसे कोई संक्रामक रोग नहीं लगता और वह भोजनों के नियमों से परे हो जाता है। इसको हम वैज्ञानिक दृष्टि से देखने की कोशिश करें कि यह समीकरण, विसर्जन ये सभी क्रियाएँ बन्द हो जाती हैं। और उस हद तक बन्द रहती है जब तक वह खेचरी मुद्रा में बैठा रहता है, घन्टे दो घन्टे, दिन दो दिन, हफ़्ते दो हफ्ते, महीने दस महीने—जितने भी समय तक योगी की खेचरी-मुद्रा, में बैठने की इच्छा होती है, वह बैठा रहता है और उक्त क्रियायें बन्द रहती हैं। इस समय वायु की उत्पत्ति या संचार बन्द हो जाता है जितने प्रकार के कीटाणु या जीव हैं अपने जीवन के लिये उनको वायु की आवश्यकता है। वायु के अभाव में किसी चीज़ का सड़न या पाचन हो ही नहीं सकता। इस नियम के अनुसार योगी के शरीर के अन्दर अर्थात् जो 'खेचरी मुद्रा' का अभ्यास करता है उसके शरीर के अन्दर कीटाणुओं का रहना असम्भव है। जो खतरनाक कीटाणु शरीर के अन्दर आ भी गए हों वे खतरा नहीं कर सकते। बल्कि वे शरीर के पोषक बन जाते हैं न कि घातक। और उस शरीर में रह कर अपनत्व खो बैठते हैं। बड़े से बड़े संक्रामक रोग सूज़ाक-गर्मी इत्यादि रोगों का सदा के लिए नाश हो जाता है। योगी अपने शरीर को क़ायम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए जब तक कि शरीर की क्रियाएं जारी रहती हैं तब तक तो भोजन की आवश्यकता ज़रूरी समझता है। पर वह ऐसे भोजन की आवश्यकता समझता है, जिससे उसको शक्ति मिले, अङ्गों में चिकनई पैदा हो। इसलिए वह घी, दूध और मीठी चीज़ों का प्रयोग करता है। उपवास करना जब तक पाचन, विसर्जन, समीकरण क्रियाएँ जारी हैं तब तक मना समझता है या निरा फलाहार भी ठीक नहीं समझता। पकाया हुआ भोजन या तला हुआ भोजन वह ग्राह्य समझता है। कारण कि वह प्राण-शक्ति भोजन द्वारा नहीं लेता बल्कि वह अपनी प्राण-शक्ति विश्व शक्ति द्वारा लेता है। योगी थोड़े ही अभ्यास से पाचन समीकरण और विसर्जन सभी क्रियाओं पर अधिकार जमा लेता और वह इच्छानुसार इन क्रियाओं को संचालित करता है। योगी प्रकृति का अनुयायी नहीं बनता बल्कि प्रकृति ही उसकी अनुयायी अथवा दासी बन जाती है।

आगे के लेखों में हम विचार करेंगे कि क्या योग सभी दुःखों से मुक्ति प्राप्त करा सकता है? रोग और रोग से मुक्ति ही इस जीवन में कोई बड़ी चीज नहीं है। योग तो मनुष्य को साक्षात शंभु बना देता है।

बिहार में हैज़ा

डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह

आजकल बिहार में हैज़े का बड़ा ज़बरदस्त प्रकोप है। सभी अख़बार पढ़नेवाले लोग इस ख़बर से परिचित होंगे। अनेक दयालु लोग और जन-सेवा करनेवाली संस्थाएँ बिहार के रोग-पीड़ित लोगों की सहायता के लिए उत्सुक हैं और प्रयत्न भी कर रहे हैं। प्राकृतिक चिकित्सक के नाते हमारा भी यह कर्तव्य है कि हम बिहार-निवासियों की सेवा अपने ढङ्ग से करें। प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा इस रोग में जितना लाभ होता है उतना अन्य किसी चिकित्सा-पद्धति से शायद ही होता हो। यदि रोग शुरू होते ही प्राकृतिक चिकित्सा शुरू कर दी जाय तो ९९ प्रतिशत रोगी बचेंगे ही।

प्राकृतिक चिकित्सा-पद्धति से इलाज करने में खर्च भी कम पड़ता है। साधन भी बहुत से नहीं जुटाने पड़ते। इस चिकित्सा में १ रोगी को आराम करने के लिए २ दर्जन नीबू, एक टब, थोड़ी सी मिट्टी, पानी की ज़रूरत पड़ती है।

हैज़े से बचने के लिये आसान नियम यह है कि नीबू का इस्तेमाल खूब किया जाय। यथासंभव पानी में नीबू का रस मिला कर पीया जाय। मूली का साग खाने के साथ खाया जाय। भूख से कुछ कम ही भोजन किया जाय। सदैव ताज़ा भोजन किया जाय। बासी भोजन भूल कर भी न किया जाय। इस रोग से डरना न चाहिये, हिम्मत रखी जाय। ताज़े दही मठे का इस्तेमाल किया जाय। कच्ची प्याज़ का सलाद खाया जाय। रात को खाना न खाया जाय तो अच्छा।

जब यह रोग होता है तो क़ै होती है, प्यास लगती है, जी घबड़ाता है, पतला पाखाना होता है। प्रायः एक ही क़ै दस्त के बाद रोगी बहुत कमजोर हो जाता है। पेट में दर्द भी होता है। हाथ-पाँव में ऐंठन होती है।

रोग शुरू होते ही प्राकृतिक चिकित्सा शुरू कर देनी चाहिये। रोगी को टब में बैठा देना चाहिये टब में कुंयें का ताज़ा पानी भरा जाय तो अच्छा हो। टब में बैठाने पर क़ै या दस्त के समय रोगी को बाहर निकाल कर पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी रखनी चाहिये। इसके बाद ही फिर टब में बैठाना चाहिए। इस प्रकार बार बार टब में बैठावे और पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी रखे। रोगी को प्यास बहुत लगती है, इसलिए पानी में नीबू का रस मिला कर थोड़ा थोड़ा पानी देता जाय। नीबू का पानी पहुँचने से रक्त में क्षार की मात्रा बढ़ जाती है, पेट के रोगाणु मर जाते हैं। अधिक पानी एक बार न पिलाया जाय। यदि बरफ़ मिल सके तो कभी कभी बरफ का टुकड़ा चूसने को दिया जाय। अथवा बरफ़ से ठंडा किया हुआ पानी नीबू का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस मिला कर दिया जाय। जहाँ नीबू न मिले वहां पानी में प्याज़ का रस मिलाकर दिया जा सकता है। इस उपचार से रोगी की तबीयत जल्द संभल जाती है, घबराहट मिट जाती है, प्यास कम हो जाती है, रोगी को आराम मिल जाता है, रोग के लक्षण दूर हो जाते हैं।

जहाँ पोदीना मिल सके वहाँ पोदीने का रस दे अथवा केवल पानी ही थोड़ा थोड़ा दे, लेकिन वाथ और मिट्टी की पट्टी बार बार देता रहे जब तक कि रोग अच्छा न हो जाय। यदि रोगी को ज्वर हो जाय तो समझ ले रोग अच्छा हो गया और उसका इलाज ज्वर की तरह करे।

रोग अच्छा हो जाने पर भी २-३ दिनों तक कुछ खाने को न देना चाहिए, केवल नीबू का रस पानी में मिलाकर देना चाहिए। जब भूख खूब लग जाय तब पहले थोड़ा सा मठे का पानी देना चाहिए। इसके पच जाने पर फल का रस, उसके बाद फल देना चाहिए। उसके अभाव में उबली हुई हलकी तरकारी का रस और थोड़ी सी तरकारी भी दी जानी चाहिए। इसके बाद रोटी का छिलका देना चाहिए। नीबू रोज़ देते रहना चाहिए। इसके निर्विघ्न पच जाने पर थोड़ी मात्रा में रोटी सब्जी देनी चाहिए और धीरे धीरे पूरी खुराक पर आना चाहिए। जहाँ आटा न मिले वहां पहले चावल का माड़ देना चाहिए, इसके पच जाने पर लेई जैसा पकाया चावल या खिचड़ी थोड़ी मात्रा में देना चाहिए। फिर धीरे धीरे पूरी खुराक पर आना चाहिए।

धातुक्षीणता की चिकित्सा

श्रीयुत मदनमोहन सिंह

मैं यहाँ पर उस अवस्था की चिकित्सा के बारे में कुछ कहना चाहता हूँ, जिसे अक्सर धातुक्षीणता के नाम से पुकारा जाता है और जिसमें देह, दिल, दिमाग़, तीनों की कमज़ोरी जीवन को दुखमय बनाती है। धातुक्षीणता का बुरा असर कहाँ तक पहुँचता है, उससे आनेवाली सन्तान को भी कितना दुख भोगना होता है, इसके बारे में मैं कुछ कहना नहीं चाहता। मैं सिर्फ़ उसकी चिकित्सा पर यथाशक्ति प्रकाश डालूँगा।

पहली बात तो यह है कि पुष्टिकारक दवाओं से बचना चाहिए। उनसे प्रायः उत्तेजना होती है और और भी धातु-क्षय होता है। दूसरी बात यह है कि चिकित्सा के दिनों में और कुछ समय तक बाद भी यह देखना ज़रूरी है कि किसी भी तरह वीर्य-नाश न हो और न मन में उत्तेजना या काम-भावना ही हो। बुरी किताब, बुरी संगति और सस्ते सिनेमा के चित्रों से बचना चाहिए। खुली जगह और साफ़ हवा में रहने से मन में बुरे भाव नहीं या बहुत कम आते हैं। तीसरी बात यह है कि वीर्य-दोष देर में दूर होता है और कभी-कभी रोगी को निराशा घेरती है। इससे बचना चाहिए। जितना ज़रूरी साफ खुला हवा में रहना है उतना ही ज़रूरी प्रसन्नचित्त और आशान्वित रहना है। नैराश्य के वश में रहनेवाले किसी रोग, किसी कठिनाई से छुटकारा पा नहीं सकते।

धातुक्षीणता में शरीर की सभी क्रियाएँ शिथिल पड़ जाती हैं। पहले नाड़ी संस्थान कमज़ोर पड़ता है, उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप मन्दाग्नि और कोष्ठ-बद्धता होती है। उससे रक्त दूषित होता है और इन सबों से फिर नाड़ियों की कमज़ोरी बढ़ती है। साथ ही दिमाग़ कमज़ोर होता जाता है और नैतिक बल का ह्रास होता है। इन सब को दूर करना मानो शरीर को नया बनाना है।

धातुक्षीणता के रोगियों को नीचे दी बातों पर ध्यान देना चाहिए :—

(१) पहले ५-७ दिनों तक फल खाकर ही रहना। दिन में तीन बार और एक बार एक ही तरह का फल। एनीमा प्रयोग। (२) फिर १०-१५ दिनों तक हर बार के फल के साथ पाव डेढ़ पाव अच्छा दूध। आवश्यकता होने पर एनीमा प्रयोग। इस ढाई-तीन हफ़्ते के सात्विक भोजन से शरीर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन, नाड़ियाँ और सभी कल-पुर्ज़ों को आराम मिल जायगा और तनाव की हालत जाती रहेगी। पेट भी कुछ अच्छी दशा में रहेगा। जब से दूध शुरू किया जाय टहलना शुरू करना चाहिए और धीरे-धीरे उसकी मात्रा और अवधि बढ़ानी चाहिए। गहरी सांस भी दिन में २-३ बार लेनी चाहिए। फल-दूध की अवधि के बाद भी सुबह-शाम फल-दूध को जारी रखना चाहिए पर दोपहर में रोटी या चावल और सादी पकी भाजी खानी चाहिए। अब चिकित्सा-स्नानों को भी शुरू करना चाहिए—दोनों समय कमर-नहान या एक समय कमर और दूसरे समय उपस्थ-स्नान। सबेरे के नहान के बाद थोड़ी कसरत और शाम के नहान के बाद तेज़ी से टहलना या दोनों समय टहलना ज़रूरी है। टहलना कम से कम ३ से ५ मील शक्ति के अनुसार होना चाहिए। अगर योगासन सीखने की सुबिधा हो तो उन्हें सीखकर शाम को हल्का टहलने के बाद आसन करना चाहिए और तेज़ी से टहलना सुबह में ही खत्म कर लेना चाहिए। दो सप्ताह के बाद दोनों समय रोटी-भाजी ले सकते हैं। इस तरह दो महीने करके ऊपरवाले क्रम को दुहरा देना चाहिए।

रोग के बारे में सोचते न रहना चाहिए। नियमित रूप से चिकिसा-क्रम को पालन करते हुए पढ़ने-लिखने और और अच्छे कामों में लगा रहना चाहिए।

एक और नशा !

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

शराब, भंग, गांजा, चरस इत्यादि पीने से जो नशा होता है उसीको लोग नशा समझते हैं; लेकिन एक और नशा है, जो बिना नशीली चीज़ों के ही होता है और बना रहता है।

क्या आपने कभी सोचा है कि आप भी नशे में हैं? क्या आपको हर समय सुस्ती घेरे रहती है? क्या आपका शरीर भारी-भारी मालूम होता है? क्या आपके दिमाग़ में एक तरह का गुब्बार बना रहता है? क्या आप अवसरों पर उस तरह चौकन्ने और काम के लिए तैयार नहीं रहते, जिस तरह कि एक बिल्ली 'अपने लक्ष्य पर झपटने के पहले रहती है? अगर ऐसा है तो समझ लीजिए कि आप नशे में हैं।

कौन सा नशा? शरीर के अन्दर तैयार की गई नशीली चीज़! अगर आप अपने भोजन को अच्छी तरह पचा लेते हैं, अगर पेट बिल्कुल साफ़ हो जाया करता है, अगर खाई हुई चीज़ों से बना हुआ रस दूषित नहीं है, अम्ल-गुण से भरा नहीं है, तब तो आप नशे में न रहेंगे; पर अगर आप अधिकांश दूषित पदार्थ खाते हैं, अगर आपका पेट साफ़ नहीं हो जाता, अगर आपके शरीर से काफ़ी पसीना नहीं निकलता, अगर आप अपनी सांस के साथ काफ़ी आक्सीजन नहीं लेते और काफी कार्बन-डाय-आक्साइड नहीं निकाल देते तो आप निश्चय ही नशे में रहेंगे और आपकी योग्यता में कमी बनी रहेगी। ज़रा इस पर ध्यान दीजिये और देश के हित के नाते अपनी योग्यता को सोलहो आना क़ायम रखने की कोशिश कीजिये।

बुख़ार या खाँसी या पेचिश का हो जाना ही बीमारी नहीं है। देह में आलस्य और निस्तेज भाव का बना रहना भी बीमारी है। इसे तो पास आने ही न देना चाहिए।

फिर इस नशे से कैसे बचा जाय? शरीर की अन्दरूनी सफ़ाई कीजिये। जल्दी से जल्दी ३-४ दिनों के रसाहार, फिर ५-७ दिनों के फलाहार, इस अवधि में दोनों या एक समय एनीमा-प्रयोग, फिर इसके बाद १० दिन एक समय रोटी-तरकारी और दो समय फल या दूध या मठा या दोनों और अन्त में एक समय फल-दूध और दो समय रोटी या चावल और भाजी का कार्यक्रम चलाइए और उससे यथेष्ट लाभ उठाइए। हाँ, इसके बाद बद-परहेज़ी पर न तुल जाइए। इस पत्र में अन्दरूनी सफाई का नुस्खा बार-बार निकल चुका है और श्रीजानकी शरण वर्मा की 'अचूक चिकित्सा'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(चौथा संस्करण; पृष्ठ १०५) में भी इसका विवरण है।

खेद है कि हम अपने स्वास्थ्य की ओर समुचित ध्यान नहीं देते। हम न तो खुद आनन्द से रह सकते हैं और न दूसरों को ही सुख पहुँचा सकते हैं। करें तो क्या, हम तो खुद ही नशे में रहते हैं!

मूंगफली

डा० सुरेन्द्रप्रसाद गर्ग

सर्दी में शरीर की रक्ताभिसरण एवं एकीकरण की शक्ति बढ़ जाती है, जिससे हमें कुछ अधिक प्रोटीन-प्रधान भोजन की आवश्यकता होती है। अतः मांस, मछली, दाल आदि के रूप में अधिक प्रोटीन न खाकर गिरीदार मेवे, जैसे बादाम, अखरोट, काजू, नारियल की गरी, चिलग़ोज़ा आदि खाना चाहिए। जो लोग बादाम तथा इस जाति के अन्य मेवे नहीं खा सकते, उन्हें मूँगफली खानी चाहिए।

वैसे तो मूँगफली का स्थान छीमीदार (Leguminous) पौधों में है, पर यह रासायनिक मिश्रण एवं आकार-प्रकार की दृष्टि से बादाम, अख़रोट जाति के मेवों से अधिक मिलती है। सर्वप्रथम यह पौधा ब्राज़ील से आया था। भारतवर्ष में मद्रास, मध्यप्रान्त आदि में मूँगफली की पैदावार खूब होती है। चूँकि यहाँ इसकी खपत काफ़ी नहीं होती, इसका तेल और "केक्स" (Cakes) अत्यधिक मात्रा में दूसरे देशों को जाते हैं।

रासायनिक मिश्रण, रासायनिक विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि मूँगफली में प्रतिशत २५ से ३३ ग्राम प्रोटीन, ४०-५० ग्राम चर्बी, १०-१२ ग्राम कार्बोहाइड्रेट हैं। इनमें फ़ासफ़ोरस लवण तथा खाद्योज 'ब' की अधिकता है। इसमें खाद्योज 'अ' तथा कैलशियम की बड़ी कमी है। कूनूर (Coonoor) की प्रयोगशाला में मूँगफली पर कई प्रयोग हुए हैं। इनसे पता चलता है कि यद्यपि मूंगफली दूध के समान गुण नहीं रखती, तथापि इसमें बादाम आदि के समान पौष्टिक पदार्थ हैं। जो लोग दूध नहीं पी सकते, उन्हें मूँगफली खानी चाहिए।

हमारा भ्रम—बहुत से लोगों का ख्याल है कि मूँगफली वायु उत्पन्न करती है और इससे बचना ही उचित है। पर इन पंक्तियों के लेखक का अनुभव है कि मूँगफली खाने से शरीर की कोई हानि नहीं होती। हमें इसे प्रतिदिन यथेष्ट रूप में भोजन का एक विशेष अङ्ग समझकर खाना चाहिए। प्रायः लोग मूँगफली खाने की ठीक विधि नहीं जानते। दो बार भर पेट भोजन करके फिर मूंगफली आदि का खाना, जैसा कि प्रायः होता है, हानिकारक है और तब ही वे माफ़िक़ नहीं आतीं। भोजन के साथ मूँगफली का खाना भी अनुचित है। यदि बिना सिकी मूँगफली खाई जावे तो सर्वोत्तम है। भोजन और मूँगफली खाने में कम से कम चार-पाँच घन्टे का अन्तर रहना चाहिए। एक बार में अधिक मात्रा में मूँगफली खाने से जी मचलाता है और सिर में दर्द हो जाता है। अतः प्रति दिन पाव, आधपाव (बिना-छिली) मूंगफली से अधिक खाना अनुचित है। विशेष अवस्थाओं में यह मात्रा बढ़ा सकते हैं। मूँगफली के आटे का हलवा या मिठाई खाना भी स्वास्थ्य को बिगाड़ता है। मूँगफली के साथ जरा-सा गाँव का बना देशी गुड़ खा लेने से कब्ज नहीं होता। रोगियों के लिए मूँगफली खाना वर्जित है।

मूंगफली का तेल—विदेशी डाक्टरों का कहना है कि ज़ैतून का तेल बड़ा गुणकारी है। वे लोग अनेक रोगों में इसे प्रयोग में लाने का आदेश करते हैं। भारत में यह तेल महँगा पड़ता है। हमारी राय में भारतवासियों को मूँगफली का तेल काम में लाना चाहिए। हम स्वयं कुछ वर्षों से अपने रोगियों के लिए इसे ही बर्तते हैं। क्षयरोग,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में शरीर की मालिश के लिए यह तेल उत्तम दवा है। तेल को खाया भी जा सकता है। बनस्पति घी में इसी तेल की प्रधानता रहती है।

जिन बच्चों को गिरीदार मेवा, जैसे बादाम, अखरोट आदि नसीब नहीं होता, उन्हें मूँगफली मिलनी चाहिए। आवश्यक है कि मूँगफली को खूब चबा-चबा कर खाया और निगला जाय।

छोटे बच्चों को मूंगफली न दें, क्योंकि इसके खिलाने से उनके पेशाब में चूना जमने लगता है।

स्त्रियां और उनके रोग

लेखिका—डा० इन्दुमती सिनहा, एन० डी०, डी० वाई०

पुरुष और स्त्री की शारीरिक बनावट, रहन-सहन आदि में जो एक प्रकार की भिन्नता पाई जाती है, उसी के अनुसार उनके रोगों में भी अन्तर पाया जाता है। कुछ रोग ऐसे हैं जो साधारतः स्त्रियों और पुरुषों दोनों को समान रूप से सताते हैं। लेकिन कुछ रोग ऐसे भी हैं जो केवल स्त्रियों से ही अपना सम्बन्ध रखते हैं और उनकी प्रकृति के ही कारण होते हैं। आमतौर से स्त्री-रोगों की उत्पत्ति उन अङ्गों में होती है जिनका संबंध प्रजनन से होता है, इसलिये यह बिलकुल स्पष्ट है कि स्त्री की जननेन्द्रियां उसके स्वास्थ, आरोग्य और जीवन के लिये कितनी अधिक महत्वपूर्ण होती हैं।

आजकल स्त्री के जननेन्द्रियों से संबंधित रोगों की भयानकता बराबर बढ़ती ही जा रही है। यह साफ ज़ाहिर है कि आधुनिक डाक्टरी चिकित्सा प्रणाली स्त्री रोगों के निवारण अथवा निराकरण में बिलकुल असमर्थ हुई है और इसमें भी संदेह नहीं कि जबतक इन रोगों की मूल उत्पत्ति के कारणों पर न विचार किया जायगा तब तक इसकी बाढ़ अधिकाधिक बढ़ती ही जायगी। स्त्री-रोगों की उत्पत्ति के बारे में सबसे पहले यह जान लेने की आवश्यकता है। स्त्री के प्रजनन संबंधी इन्द्रियों की बनावट बहुत नाजुक होती है और वे शरीर के ऐसे भाग में स्थित हैं जिनके ऊपर की तरफ़ के तथा अपने आस-पास के अङ्गों के कारण उनमें सहज ही ख़राबी पैदा हो सकती है। दूसरी बात जानने योग्य यह है कि मासिक-धर्म के रूप में प्रकृति ने नारी जाति को अपने शरीर में उत्पन्न होने वाले विजातीय द्रव्य को बहुत कुछ अंशों में दूर करने का एक उत्तम साधन दिया है जिस लाभ से पुरुष-जाति वंचित ही है।

आमतौर से यह देखा जाता है कि अपनी अदूरदर्शिता के कारण डाक्टरी चिकित्सा-प्रणाली स्त्री-रोगियों के खान-पान और रहन-सहन तथा उनकी जननेन्द्रियों की गड़बड़ी इन दोनों के बीच कोई सम्बन्ध नहीं मानती। लेकिन अगर इस प्रश्न पर गंभीरता के साथ विचार किया जाय तो यह प्रकट हो जायगा कि स्त्री के इन अङ्गों की विकृति अथवा ख़राबी का उसके खान-पान और रहन-सहन से प्रत्यक्ष संबंध है। उदाहरण के लिये, गर्भाशय की स्थिति स्त्री के शरीर के एक ऐसे भाग में है कि अगर अंतड़ियों में लगातार गैस भरता रहे, या उनमें भोजन-तत्वों का आवश्यकता से अधिक जमाव होता रहे तो फलस्वरूप गर्भाशय तथा उसके आस-पास के तन्तुओं पर लगातार नीचे या आगे की तरफ़ दबाव या भार पड़ता रहता है और अगर किसी स्त्री के क़ब्ज़ की पुरानी शिकायत रहती है तो उसकी यह गड़बड़ी और भी बढ़ जाती है क्योंकि पीछे की तरफ़ के आवश्यकता के अधिक मल से भरे हुए मलांत्र (colon) का भी उसपर भार का दबाव पड़ता रहता है। इस प्रकार हम अच्छी तरह समझ सकते हैं कि गर्भाशय का अपने स्थान से हट जाना तथा गर्भाशय से संबंध रखने वाले दूसरी तरह के रोग इस तरह के ग़लत आहार-बिहार से स्पष्ट रूप से संबंधित हैं।

इसके अलावा जो स्त्रियाँ बदन पर कसी हुई या चुस्त पोशाक, अंगिया-कुरती आदि धारण करती हैं, उनके आन्तरिक अवयवों के निर्विघ्न रूप से अपना कार्य करते रहने में बाधा उत्पन्न होती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इस प्रकार भी उनके गर्भाशय और उसके आस-पास के तन्तुओं पर अतिरिक्त भार या दबाव पड़ता है और इसी तरह लगातार खड़े रहने या झुककर बैठने की आदत से भी आगे चलकर ठीक यही हालत होती है।

आवश्यक व्यायाम न करने और शारीरिक दुर्बलता के कारण उदर (abdomen) की आन्तरिक पेशियाँ ढीली पड़ जाती हैं और वे गर्भाशय तथा उसके आस-पास के तन्तुओं को अपने ठीक स्थान पर बनाये रखने में असमर्थ हो जाती हैं और इस तरह इसका भी वही दुष्परिणाम होता है, जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है।

इस प्रकार गर्भाशय संबंधी गड़बड़ी को दूर करने में नारी की शारीरिक अवस्था में उसका पहनावा और ख़ास करके उसकी आमाशयिक इन्द्रियों की अवस्था पर ध्यान रखना बहुत आवश्यक है। क्योंकि यदि इस प्रश्न पर ध्यान पूर्वक विचार करें तो यह साफ़ जाहिर हो जायगा कि इस तरह की ख़राबी कोई स्थानीय विचार नहीं बल्कि शरीर को स्वास्थ्य और सारी शरीर प्रणाली पर प्रभाव डालने वाले कार्यों का परिणाम है।

वयः संधि होने पर स्त्रियों के लिये रजोदर्शन इस बात का सूचक होता है कि डिम्बकोष से डिम्बाणु चलकर गर्भाशय (womb) में पहुंच गये हैं और वह गर्भाधान के लिए तैयार हैं। इस अवस्था पर पहुँचते ही स्त्री की शरीर-प्रणाली के भीतर के विजातीय द्रव्यों अथवा विकारों के बाहर निकलने का एक उन्मुक्त साधन प्राप्त होता है। जिन स्त्रियों का स्वास्थ्य औसत से कम होता है या जिसके रक्त और शरीर-प्रणाली में बहुत अधिक ज़हरीला पदार्थ भरा रहता है उनके विकारों को शरीर से बाहर निकाल फेंकने में प्रकृति इस साधन (मासिक धर्म) का बहुत अधिक अंशों में सहारा लेती है। ऊपर बताई गई बातों के साथ ही साथ इस बात को भी ध्यान में रखने से यह रहस्य प्रकट हो जायगा कि स्त्रियों को कष्ट के साथ मासिक धर्म अथवा बहुत अधिक मात्रा में मासिक धर्म क्यों होता है अथवा साधारण तौर के मासिक धर्म सम्बन्धी और सब विकृतियाँ या खराबियाँ क्यों उत्पन्न होती हैं।

जब किसी स्त्री के शरीर में मासिक धर्म संबंधी इस तरह की कोई ख़राबी या ख़राबियाँ उत्पन्न हो तो यह निश्चित रूप से समझ लेना चाहिये कि उसका साधारण शारीरिक स्वास्थ्य औसत से कम है और उसकी जनन-प्रणाली (Sex organism) में ज़हरीले पदार्थ भरे हुए हैं। इसलिये मासिक स्राव में उसे चाहे कितना भी कष्ट क्यों न होता हो किन्तु यह यक़ीन करना चाहिये प्रकृति अपनी शक्ति के अनुसार उसकी शरीर-प्रणाली को मल अथवा विकार के शुद्ध बनाने के लिये मासिक धर्म के रूप में पूरी तौर से कोशिश कर रही है।

लेकिन अगर किसी स्त्री में आहार-विहार और ख़ास तौर के खान-पान संबंधी वे बुरी आदतें बनी हुई हैं, जिनके कारण उसकी शरीर प्रणाली दूषित हुई थी तो निस्संदेह मल की इस प्राकृतिक वहिष्करण क्रिया से—मासिक धर्म के रूप में शरीर के विजातीय द्रव्य के बाहर निकल के—उसकी ख़राबी दूर होने में कभी सफलता नहीं प्राप्त हो सकती। इस बीच अगर कोई स्त्री अपने कष्ट को दूर करने के लिये डाक्टरों की सहायता लेती है, अपनी शल्य चिकित्सा (अपरेशन या चीर-फाड़) कराती या रोग को दबा देने वाली दवाइयाँ आदि का सेवन करती हैं तो उससे उसका कष्ट जड़ से दूर होने के बजाय और भी जड़ पकड़ लेता और स्थायी बन जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा में कठिनाई

श्री ज्ञानकीशरण बर्मा

मेरी पुस्तक 'रोगों की अचूक चिकित्सा' ने मेरी कठिनाई बढ़ा दी है। जो मुझे मालूम है वह मैंने उसमें लिख रखा है और अपनी शक्ति भर मैंने सब बातों को साफ़ साफ़ समझाने की कोशिश की है, फिर भी रोगी-पाठक ख़त भेज भेज कर सवाल पूछते हैं। पहले मैं इन ख़तों के जवाब दे देता था पर अब मेरे पास समय नहीं है। जो मुझे ज़्यादा बुरा मालूम होता है वह यह है कि अपनी बुद्धि लगाने को लोग बिल्कुल तैयार नहीं हैं। जो बात बात में दूसरे का सहारा ढूंढते हैं वह न तो अपना रोग दूर कर सकते हैं न दूसरों का। सिद्धान्त वेही हैं। अगर उन्हें अच्छी तरह समझ लिया जाय और उन्हीं के अनुसार चिकित्सा विधि और क्रम निश्चित किया जायँ तो आगे का रास्ता स्वयं साफ़ होता जाता है। मैंने भयानक रोग से अपनी रक्षा आप की है—इसमें संदेह नहीं कि मेरी चिकित्सा किसी अन्य सज्जन ने शुरू की थी। बीच-बीच में भी मैं अपने चिकित्सक-मित्रों से सलाह लेता रहा, पर अधिकतर मैंने अपनी चिकित्सा आप ही निश्चित की। पुस्तकें पढ़-पढ़ कर मैं अपने ऊपर प्रयोग करता गया। दूसरों की चिकित्सा में भी मैंने अपनी बुद्धि लगाने की चेष्टा की है और उससे मुझे सच्ची सहायता मिली है। जो अपना या औरों के चिकित्सक बनना चाहते हैं उन्हें ऐसा ही करना चाहिए। चिकित्सा में मुझे कैसी कैसी कठिनाइयाँ हुई हैं उनका एक उदाहरण मैं यहां दे रहा हूँ। मैंने चिकित्सा करना शुरू ही किया था कि एक १२ साल का बीमार लड़का मेरे सिपुर्द किया गया। उसे बुख़ार था। बारह घंटे तक १०२ डिग्री का बुख़ार रहने के बाद बुख़ार की हालत में ही उसे ठंड लगने लगी और तब बुख़ार धीरे-धीरे १०४ डिग्री का हो गया।

अब मैंने अपनी बुद्धि लगानी शुरू की। पहले जब बुख़ार १०२ डिग्री का था, मैंने पेड़ पर तीन-चार बार मिट्टी की पट्टी रखी थी एक बार ठंडे पानी में भिगोये कपड़े से सारा शरीर भी पोंछा था, पर बुख़ार टस से मस भी न हुआ। इसके विपरीत जाड़ा लगकर बुख़ार और भी बढ़ गया। मेरा मन डगमगा उठा। मैंने एक अच्छा काम यह किया कि जाड़ा लगने के समय रोगी के लेटे रहने की अवस्था में ही उसके पैरों को गर्म नहान दिया। बुख़ार धीरे धीरे बढ़ा। अब मैंने एक बार और सारे शरीर को स्पंज किया। बुख़ार कम होने के बदले १०६ डिग्री तक पहुंच गया। रोगी बेहोश हो गया। मैंने सिर पर ठंडी पट्टी रखनी शुरू कर दी, पर यह भी सोचा कि होमियोपैथिक दवा दे दूं। दवा दी, दो घंटे बाद फिर दी, पर कुछ असर न हुआ। मैं घबराया; साथ ही सोचने लगा कि मिट्टी की पट्टी, कपड़े की पट्टी, स्पंजिंग इत्यादि से बुख़ार क्यों न कम हुआ। क्या मैंने ग़लती की? क्या ये उपाय हर हालत में सफल नहीं होते? मैं बहुत घबराया, निराश हुआ। छः घंटे १०६ डिग्री का बुख़ार रहकर अब वह धीरे-धीरे कम होने लगा। दवा तो मैंने दो ही ख़ुराक दी थी, पर सिर पर मैं ठंडी पट्टी रखता जाता था, साथ ही पेड़ू के चारों तरफ़ भी ठंडी पट्टी लपेट रखी थी। बुख़ार ७ घंटे में उतरा बड़ी ख़ुशी हुई, समझा कि अब मैंने इसे भगा दिया। लेकिन यह क्या? वह तो लगभग २ घंटे नार्मल रहकर फिर बढ़ने लगा। मैंने देखा कि यही सुअवसर है, इसे कमर-नहान (Hip bath) दो। पैरों को गर्म पानी में रखते हुए मैंने कमर-नहान दिया। बुख़ार धीरे-धीरे बढ़ता रहा। जब १०२ डिग्री बुख़ार हो गया, तब मैंने एक बार और पैरों के गर्म नहान के साथ कमर-नहान दिया। बुख़ार फिर १०६ डिग्री तक जा पहुंचा। फिर बेहोशी और फिर मेरी घबराहट! बेहोशी की हालत में मैंने पेड़ू के चारों तरफ़ ठंडी पट्टी लगा रखीं और सिर पर भी ठंडी पट्टी रखता गया। साथ ही साथ यह भी सोचता रहा कि इस बार बुख़ार उतरने पर कुनैन क्यों न दे दूँ। फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़याल आया कि यह तो अपनी और अपने सिद्धान्तों की हार होगी। रोगी के अभिभावक भी उतावले हो रहे थे और डाक्टर बुलाने का निश्चय कर रहे थे। इसी समय मुझे कुछ महीने पहले का एक केस याद आया। उस रोगी को जब २५ कमर-नहानों के बाद उसका जाड़ा बुख़ार न गया तो कुनैन दे दी गई थी। बुख़ार उसी दिन रुक गया पर ३ हफ़्ते बाद फिर लौटा। फिर कुनैन दी गई, बुख़ार का आना बंद हुआ पर १ महीने बाद फिर आने लगा। अब उसे फिर से कमर-नहान दिया जाने लगा—छः ही नहान के बाद बुख़ार जाता रहा। मैंने सोचा कि इस रोगी को भी कुनैन से स्थायी लाभ न होगा। इस दिन एक उत्साह-जनक बात भी हुई। बुख़ार ६ घंटे १०६ पर रहने के बदले ३ ही घंटे रहा और २ घंटे में उतर गया। मैंने अभिभावकों से कहा कि मुझे दो दिन का समय और दीजिए। उन्होंने भी थोड़ा लाभ देख कर मुझे समय दिया। मैं उन्हीं प्रयोगों को करता गया और दो ही दिनों में सफल हुआ।

बुख़ार तो जाता रहा पर मेरी निजी कठिनाई दूर न हुई। मैं इस उधेड़-बुन में था कि मिट्टी की पट्टी, स्पंजिंग, कमर-नहान इत्यादि के होते हुए भी बुख़ार क्यों बढ़ता ही जाता था। सोचते हुए मैं दो नतीजे पर पहुंचा—

(१) जितना बुख़ार आप ही आप हुआ था वह शरीर के अंदर के रोग को पूरा-पूरा निकालने में असमर्थ था। पानी के प्रयोग से सारा रोग अपनी भयंकरता के साथ बाहर निकल आया। अगर उस समय मुझे समझ होती तो मैं ख़ुश होता कि अब मैंने दुश्मन को पूरा पूरा बाहर आ जाने के लिए विवश किया है, पर मैं तो नौसिखिया था—१०६ डिग्री, बेहोशी, डिलीरियम, न्युमोनिया इत्यादि से डरता था। (२) हर रोग की अपनी शक्ति और अवधि होती है। शक्ति के क्षीण पड़ने और अवधि के पूरा होने पर ही रोग जाता है। ठीक ठीक और समयानुकूल प्राकृतिक उपचारों से रोग निश्चय जाता है, जड़-मूल से जाता है और रोग के रहने की हालत में कोई उपद्रव नहीं होता, जैसा कि और चिकित्साओं में होता है। इस रोगी का बुख़ार तब तक नहीं गया जब तक कि उसकी जीभ बिल्कुल साफ़ न हो गई। जीभ का मैला रहना यह बताता था कि अंदर विकार है।

ऊपर यह कहना मैं भूल गया कि प्रायः हर रोज़ अक्सर मिलने पर मैं रोगी को कम से कम एक बार, कभी-कभी दो बार, एनीमा देता था—पानी न ठंडा न गर्म। फिर जब तक बुख़ार रहा मैंने रोगी को संतरे के रस और नीबू मिले पानी ही पर रखा।

इस तरह की कठिनाई हर चिकित्सक को हो सकती है, पर जो सिद्धान्तों को समझने की कोशिश करते हैं और ठीक उपचारों का प्रयोग करते हैं वे प्रत्येक सफलता के साथ बहुमूल्य अनुभव भी प्राप्त करते हैं। कठिनाई में न घबराना और अपनी बुद्धि अच्छी तरह लगाना सफलता की कुंजी है।

तत्त्व-चिकित्सा का पुनरुत्थान

श्रीयुत गङ्गाप्रसाद गौड़ 'नाहर'

[जून के अङ्क से आगे]

औषधि-चिकित्सा की भाँति ही, प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति के भी सर्वप्रथम ज्ञाता भारत-वासी थे सही, किन्तु प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली के संसार से लोप हो जाने के बाद उसके पुनर्निर्माण का श्रेय पाश्चात्य देशों को ही प्राप्त है, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। वहां के सुप्रसिद्ध डाक्टरों ने जब औषधियों के, विशेषकर एलोपैथिक औषधियों के, प्राणघातक प्रभाव अपनी आंखों देखे एवं अनुभव किये तो उनसे और अधिक चुप न रहा गया। वे जनता को जान-बूझकर धोखे में डालना न चाहते थे। फलतः उन लोगों ने औषधि-चिकित्सा के विरुद्ध विद्रोह करना आरम्भ कर दिया जो कालान्तर में प्राकृतिक चिकित्सा के पुनरुत्थान में सहायक सिद्ध हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधियों के विरुद्ध विद्रोह करनेवालों में हेनिमैन नामक एक जर्मन डाक्टर भी था. जो बाद में होमियोपैथी-चिकित्सा-शास्त्र का आविष्कारक हो गया। उसने इस बात को साबित किया कि औषधियां, व्याधियों को दूर नहीं करतीं, अपितु उन्हें जहां की तहां दबा भर देती हैं जो अतीव भयानक है। उसने यह बात जान तो ली कि दवाइयों से रोग अच्छे नहीं होते, और यह भी कि केवल प्रकृति रोग को अच्छा कर सकती है और करती है। किन्तु प्रकृति किस प्रकार रोग को अच्छा करती है, और हमें रोगावस्था में, रोग मुक्त होने के लिये, प्रकृति का हाथ कैसे बटाना चाहिये, इस विज्ञान को वह न जान सका। उसका विश्वास था कि प्रकृति पूरे तौर से रोग अच्छा करने में अक्षम है, इसलिये उसे कुछ मदद दरकार है, और वह मदद उसने दवा की एक अति सूक्ष्म मात्रा देकर पूरा करने की पद्धति चलाई। इस चिकित्सा-पद्धति को हम अर्द्ध-प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति भले ही कह लें, किन्तु पूर्ण प्राकृतिक-चिकित्सा प्रणाली इससे फिर भी कोसों दूर रह जाती है। प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली का आधुनिक विकास पिछले सौ वर्षों के अन्दर ही हुआ है। यह चिकित्सा-प्रणाली अति प्राचीन होते हुए भी ऐसा लगता है जैसे अति नवीन हो। जर्मनी के लूईकूने ने तो प्राकृतिक-चिकित्सा की अपनी एक पुस्तक का नाम ही 'नवीन चिकित्सा-विज्ञान' रख छोड़ा है। एक मानी में प्राकृतिक चिकित्सा को नवीन चिकित्सा-प्रणाली कहना ठीक भी है; क्योंकि, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, गत सौ वर्षों में जितने भी उन्नायक, प्रवर्तक, एवं आविष्कारक इस प्रणाली के विविध अङ्गों के हो चुके हैं, सब के कार्य्य, इस विषय में मौलिक एवं आरम्भ से ही नवीन थे। अपने अन्वेषण काल में किसी भी प्राचीन साधनों की सहायता उन लोगों ने न ली थी। उन्होंने नकल न की। एक पाश्चात्य जल-चिकित्सक ने तो पहले-पहल जल-चिकित्सा का प्रयोग अपनी पाली हुई बिल्ली से सीखा था। उसकी बिल्ली मछली खाने की बड़ी शौक़ीन थी। वह अक्सर मछली की चोरी घर में स्थित मछलियों से भरे एक कुण्ड से किया करती थी। एक दिन मछली की एक हड्डी उसके मुंह में इस प्रकार चुभ गई, जिससे उसके जबड़े बन्द नहीं हो पाते थे। किसी तरह वह हड्डी उसके मुंह से निकाली तो गई, पर इससे उसे अधिक पीड़ा होने लगी। वह पानी के कुण्ड के पास गई और उसके अन्दर मुँह डाल कर पड़ी रही। थोड़ी देर में पीड़ा शान्त हो जाने पर वह पूर्ववत् स्वस्थ हो गई। इस दृश्य को देख कर उक्त चिकित्सक ने यह सिद्धान्त निकाला कि पीड़ा और कष्ट निवारण के लिये जल अद्वितीय है।

वास्तविक प्राकृतिक-चिकित्सा के पुनरुत्थान में मदद देनेवाले अनेक प्रभावशाली व्यक्ति हो गये हैं और ये या तो वे लोग थे जो औषधियों द्वारा रोगों का उपचार करते-करते अपनी आयु का बड़े से बड़ा भाग समाप्त कर देने पर भी शान्ति न पा सके थे, तथा औषधि-विज्ञान पर ईमान न ला सके थे, या वे लोग थे जो कभी स्वयं रोगी रहकर औषधि-चिकित्सा-प्रणाली के कटु फल चखे थे और बाद को जिनके प्राण प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा बचे थे।

पहली श्रेणी के व्यक्तियों में दो प्रमुख एलोपैथिक डाक्टर जेम्स करी (James currie) और सर जान फ़्लायर थे, जो अठारहवीं शताब्दी के अंत में हो गये हैं। डाक्टर फ़्लायर, (Sir John Floyer) इङ्गलैण्ड के लिचफ़ील्ड नगर के निवासी थे। लिचफ़ील्ड के पास के एक सोते के पानी में कुछ किसानों को नहला कर स्वास्थ्य लाभ करते देख उन्हें जल के स्वास्थ्यवर्द्धक प्रभाव के सम्बन्ध में अधिकाधिक जाँच-पड़ताल करने की प्रबल इच्छा हुई थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो साल लगेंगे !

श्री जानकीशरण वर्मा

रोगी ने ख़ास तौर पर पूछा कि अच्छा होने में मुझे कितना समय लगेगा। उन्होंने अपना सारा हाल बताया—दस साल से मुझे गठिये की बीमारी है, बायें हाथ की उँगलियां सख़्त हो गई हैं, दाहिने पैर का घुटना नहीं मुड़ता, पाख़ाना साफ नहीं होता, तबियत में चिड़चिड़ापन रहता है··· ··मैं सब तरह के इलाज करके हार गया। एक वैद्यजी ने कई हफ़्ते तक ५-५ दिन पर जुलाब दिया, पेट ख़ूब साफ हो जाता था, फिर भी दर्द नहीं गया·····अब मैं प्राकृतिक चिकित्सा की ओर झुका हूँ, कृपाकर बताइये कि कितने दिनों में मैं अच्छा होऊंगा।

मैंने भी कहा—आपने बड़ी कृपा की कि प्राकृतिक चिकित्सा की तरफ़ झुक पड़े, पर क्या यह ज़रूरी है कि आप उससे अच्छे हो जायँ। जब और वैज्ञानिक पद्धत्तियाँ चूक गईं तो यह आपको कैसे मालूम हुआ कि प्राकृतिक चिकित्सा रोगों की अचूक चिकित्सा-प्रणाली है। पहले यह तो तय हो जाय कि आप अच्छे होंगे या इन्हीं लक्षणों को लिये हुए चोला बदलेंगे, फिर यह तय होगा कि अच्छा होने में कितना समय लगेगा।

आप बड़े निष्ठुर मालूम होते हैं—रोगी ने कहा—ईश्वर की कृपा से मेरे बाल-बच्चे हैं, आप को इस तरह न बोलना चाहिये।

मैंने कहा—ईश्वर बाल-बच्चा को रखे, पर आप शरीर छोड़ने से इतना क्यों डरते हैं। क्या आप का यह रोग कहीं ऊपर से आ गिरा है या बाहर से आकर चिपक गया है। यह तो आपकी ही करनी का फल है। शरीर तो एक न एक दिन छूटता ही है, पर आप ने इसे जल्दी और दुर्गति के साथ छोड़ने के उपाय किये हैं। फिर अगर उसी बात को मैं कहूं तो आप बुरा क्यों मानते हैं। ग़लत खान-पान, ग़लत रहन-सहन और उस पर ग़लत इलाज—ये तो जल्दी से जल्दी शरीर छोड़ने के उपाय हैं।

रोगी ने पूछा—अच्छा, मैं अच्छा होऊँगा ?

मैंने उत्तर दिया—उम्मीद तो है, क्योंकि आपकी जीवन-शक्ति अभी बिल्कुल शेष नहीं हुई है।

रोगी ने पूछा—अच्छा, अब बताइए, कितने दिनों में ?

मैंने कहा—ज्यादा समय न लगेगा, अगर आप बीच-बीच में ३-४ दिनों का उपवास करते हुए, भोजन, विकारों के निकलने, कसरत और आराम के नियमों का पालन करेंगे और पंचतत्वों का प्रयोग करते हुए प्रकृति का सहारा लेंगे तो दो साल में अच्छे हो जायंगे।

रोगी बहुत आश्चर्यित हुआ। आँखों को निकाल कर, कुछ भय और कुछ आश्चर्य का सम्मिश्रण चेहरे पर दिखाते हुए उसने पूछा—दो साल लगेंगे ?

मैं ने कहा—जब और इलाजों से आप दस साल में भी अच्छे न हुए तो इस इलाज से दो साल में ही अच्छे हो जाने की सम्भावना से आप क्यों चकित होते हैं।

× × ×

प्राकृतिक चिकित्सा को ऐसे ही ज़ुल्म सहने पड़ते हैं। रोग होते ही कोई इस चिकित्सा को शुरू न करेगा, वर्षों भटक कर, हताश होकर, इसे करना चाहेगा, फिर भी वह चाहेगा कि रात भर में ही अच्छा हो जाय। इस संबंध में कुछ बातें समझनी चाहिए—

प्राकृतिक पद्धति में रोग से लड़ा नहीं जाता। रोग स्वयं कोई चीज़ नहीं है। स्वास्थ्य के अभाव को ही रोग कहते हैं। स्वास्थ्य-निर्माण की कोशिश में ही रोग भाग जाता है। स्वास्थ्य किस तरह बनता है, इसका इशारा ऊपर किया गया है। उचित भोजन से पाख़ाना, पेशाब और पसीना के रूप में और सांस के साथ शरीर से विकारों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टहलते रहने से, शक्ति भर व्यायाम और आवश्यकता भर आराम से और साथ ही—जो सब से ज़्यादा ज़रूरी है—अच्छे विचार और आशायुक्त भावना से स्वास्थ्य बना रहता है और उन्नत होता है। अगर स्वास्थ्य का अभाव है तो इन्हीं उपायों से, जब तक जीवन-शक्ति है, वह अभाव भी दूर हो सकता है, पर इतना करने में, इन उपायों के सफल प्रयोग में देर लगती है। किसे नहीं मालूम कि जब चिकित्सक बता देता है कि दाल न खाओ तो रोगी बार-बार पूछता है—क्या मूँग की दाल भी नहीं; हकीम साहब क्यों मूंग की दाल बताते थे? आदतों को ठीक करने में देर लगती ही है, और जब तक आदत नहीं सुधरती पुरानी खराबी नहीं जाती। यहां तो जब तक चिकित्सा होती रहे सिर्फ़ दाल को न छोड़ना है बल्कि उसके बारे में सोचना भी नहीं है। सोचा जा सकता है कि क्या ऐसी साधना आसान है। इसमें तो समय लगेगा ही।

दूसरा पहलू यह है—जीर्ण रोगों में, जो कि बार-बार नये रोगों के दबाने से होता है, न सिर्फ़ मांसपेशियाँ, न सिर्फ आमाशय और हड्डी और खून ही विकारयुक्त रहते हैं बल्कि शरीर का कोष कोष विकारों से घिरा और विकारों में उलझा रहता है। कोष का महत्व हम नहीं जानते। शरीर का प्रत्येक छोटा कोष (cell) सारे शरीर के लक्षण अपने में रखता है। वह शरीर ही के बिल्कुल अनुरूप, शरीर का छोटा से छोटा लेकिन पूरा प्रतिनिधि है। जब तक प्रत्येक कोष शुद्ध और परिष्कृत न हो लेगा शरीर परिष्कृत और स्वस्थ न होगा। कोषों को या कोष-समूह शरीर को स्वस्थ बनाने के लिए उसकी राह से अड़चनों को दूर करके उसके परिष्कृत होने की परिस्थिति बना देनी चाहिए, फिर तो वह अपने आपको ठीक कर लेगा। पर यह ज़रूरी है कि कोष कोष ठीक हो जाय। ऐसी हालत में सिर्फ़ जुलाब के सहारे ज़बर्दस्ती आँतों को साफ़ करने से क्या हो सकता है।

जिस तरह कोष शरीर का प्रतिनिधि है उसी तरह जीवात्मा परमात्मा का प्रतिनिधि है और मनुष्य देहधारी जीवात्मा है। जीवात्मा अजर, अमर, अविनाशी, चेतन, अमल, सहज सुखराशी है। अगर यह धारणा बंध जाय तो सारी मुश्किलें आसान हो जायँ। शरीर की समस्या को इसी ऊँचाई से देखना चाहिए, पर मनुष्य तो माया-जाल में फँसा रहना पसंद करता है। वह तो ग़लतियाँ करता हुआ भी चकित होगा और पूछेगा—क्या दो साल लगेंगे सचाई को समझने में, असली समस्या को हल करने में तो युग-युगान्तर लग सकते हैं; क्या शरीर को ठीक करने में दो साल की भी अवधि बहुत लंबी मालूम होती है?

तीसरी बात यह है। 'अच्छा होने' का मतलब सिर्फ़ रोग का ही दूर होना नहीं बल्कि पूरा पूरा तन्दुरुस्त, मज़बूत और तगड़ा होना, साथ ही अच्छे तेज़ दिमाग का भी, होना है। शरीर के भीतरी कल पुर्जे और बाहरी अंग-प्रत्यंग के ठीक होने में समय लगेगा ही। अगर हमें और आपको ज़रा भी इस बात का अन्दाज़ा होता कि 'अच्छा होने', 'तनदुरुस्त रहने' का सच्चा मतलब क्या है तो हम में से कोई भी आश्चर्य से न पूछता कि क्या तनदुरुस्त होने में दो साल लगेंगे।

रोग से कैसे बचा जाय

श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय

रोग हो जाने पर उसे इलाज द्वारा अच्छा कर लेने की अपेक्षा यह कहीं अच्छा है कि रोग होने ही न दिया जाय। हमारे यहाँ के मेडिकल कालेज में सारी शक्ति इस व्यर्थ के काम में खर्च कर दी जाती है कि अमुक रोग किस कीटाणु से पैदा होता है और किस इंजेकशन या औषधि द्वारा उस कीटाणु का नाश करके रोग मुक्त हुआ जाय। रोगनिवारक शक्ति की ओर अधिक से अधिक इतना ही ध्यान दिया जाता है कि किस रोग से बचने के लिए क्या इंजेकशन लिया जाय। ये दोनों उपाय इतने निकृष्ट और हानिकारी साबित हुए कि "मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों ज्यों दवा की।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जितने ही अधिक अस्पतालों की स्थापना हुई, जितने ही अधिक डाक्टर पैदा हुए उतने ही अधिक रोगों की संख्या में वृद्धि हुई। यह हमारी अपनी राय नहीं है, संसार के बड़े बड़े विचारकों की राय है।

एलोपैथी औषधियों और इंजेकशनस हमारी जीवनी शक्ति को बढ़ाते नहीं, घटाते हैं, शरीर से विकारों को निकालते नहीं बल्कि उनकी और वृद्धि करते हैं, इसी हेतु उनसे मानव जाति का अपकार ही हुआ। अपकार होने का एक कारण और भी है वह यह कि आज तक एलोपैथी वालों ने जो कुछ सोचा और समझा है व्यापारिक लाइन पर सोचा है। व्यापार में स्वार्थ होता है, और स्वार्थी से परोपकार की आशा नहीं की जा सकती।

ईश्वर ने हमें बहुत अधिक जीवनी शक्ति दी है, औषधि रूप में अनेक तरह के फल और तरकारियाँ को हमारे लाभ के लिये पैदा किया है। यदि हम ईश्वरीय नियमों का पालन करें, सही सही भोजन ग्रहण करें, अपने शरीर की भीतरी और बाहरी सफ़ाई पर यथोचित ध्यान दें और अन्दर या बाहर, शरीर में या मस्तिष्क में, कहीं कोई गन्दगी न रहने दें, अपने शरीर से उपयुक्त काम लें और उसे पूरी मात्रा में विश्राम दें तो कोई वजह नहीं कि हमारा और देश का स्वास्थ्य क्यों न ठीक रहे, मस्तिष्क और शरीर का पूरा पूरा विकास क्यों न हो और सफलता-पूर्वक रोगों का और रोगाणुओं का मुक़ाबला क्यों न कर सकें।

भारतवासियों का सामूहिक रूप से स्वास्थ्य इसलिये खराब है कि बालकपन से हमारे बच्चों को स्वास्थ्य-विद्या की सही शिक्षा नहीं दी जाती। स्वास्थ्य-विद्या के नाम पर जो पाठ या साहित्य पढ़ाये जाते हैं वे बहुत ही दूषित और निन्दनीय हैं, साथ ही भारतीय वातावरण के प्रतिकूल भी हैं। उदाहरण के तौर पर हम यह पेश करना चाहते हैं कि हमारे बच्चों को आरम्भ से ही यह ग़लत बात सिखाई जाती है कि प्लेग, कालरा या चेचक से बचने के लिये इन रोगों का इंजेकशन लेना चाहिये। उनको सही रहन-सहन, भोजन, व्यायाम, विश्राम आदि के नियम नहीं सिखाये जाते बल्कि उनके मस्तिष्क में ज़हर बोया जाता है और आशा की जाती है कि उससे उत्तम फूल मिले। इस शिक्षा का अर्थ जो कोई कुछ भी समझे हम तो यही समझते हैं कि बच्चों के मस्तिष्क पर बचपन से ही विदेशी औषधियों की महत्ता की मुहर लगा दी जाय, जिससे समझदार होने पर भी बचपन का संस्कार न छूटे। यह है व्यापारिक कूटनीति।

इस दूषित शिक्षा-प्रथा को हटा कर बच्चों को यह पढ़ाने की ज़रूरत है कि हमारे शरीर की जीवनी शक्ति और रोग निवारक शक्ति किस प्रकार बढ़ाई जाती है, शरीर से किस प्रकार विकार दूर किये जाते हैं, मस्तिष्क और शरीर का पूर्ण विकास कैसे होता है। इस उपयोगी शिक्षा के लिये साल में दो चार पाठ पढ़ा देना ही पर्याप्त नहीं हो सकता। इस विद्या का व्यावहारिक ज्ञान कराना चाहिये। शिक्षकों के ऊपर यह ज़िम्मेदारी होनी चाहिये कि वह प्रत्येक बच्चे से इन नियमों का पालन कराये। उनके स्वास्थ्य की पूरी निगरानी रखे और इस बात का पूरा ध्यान रखे कि बच्चों में रोग निवारक शक्ति और जीवनी शक्ति का पूर्ण रूप से विकास हो। महीने में एक दिन डाक्टर को बुलाकर जीभ दिखाने का नाटक बन्द हो जाना चाहिये।

इसी तरह की शिक्षा का प्रसार जनता में होना चाहिये। इसके लिये प्रचारकों को नियुक्त किया जाना चाहिये। ऐसे लोगों की नियुक्ति हो जो स्वयं इस विद्या से जानकार हों और जनता की सेवा का भाव उनमें भरा हो। वरना उनका काम म्युनिसिपैलिटी के काम की तरह भार स्वरूप हो जायगा। आज म्युनिसिपैलिटी की हालत यह है कि कानून उनके हाथ में होते हुये भी शुद्ध घी नहीं मिल सकता।

जनता को शिक्षित करना बहुत जरूरी है। स्वास्थ्य विद्या का मौलिक ज्ञान देना ही पर्याप्त न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा बल्कि इसका व्यावहारिक ज्ञान करा देना चाहिये। शरीर की जीवनी शक्ति की महत्ता समझाई जाय। जब तक ऐसा न किया जायगा तब तक रोगों से बचने की शक्ति हममें या हमारे देशवासियों में नहीं आ सकती।

रोगों से बचे रहने के लिये यह आवश्यक है कि सादा भोजन किया जाय। भोजन में फल और शाक तरकारियां अधिक रखी जायं। प्रतिदिन नियमित रूप से शक्ति के अनुसार व्यायाम किया जाय। शरीर क्षीण न होने देने के लिये आवश्यक विश्राम किया जाय। भोजन की कमी की पूर्ति के लिये प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम आध सेर दूध प्रतिदिन मिलना चाहिये। सप्ताह में एक दिन पेट को आराम दिया जाय। कुछ भी भोजन न किया जाय। इस दिन हर दो दो घंटे पर एक गिलास पानी पिया जाय। दूसरे दिन एनिमा लेकर पेट साफ कर दिया जाय। भोजन के सम्बन्ध में हमारी पुस्तक 'फलाहार चिकित्सा' और स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियों से मदद ली जा सकती है।

मौसिम के परिवर्तन के समय अकसर रोग का आक्रमण होता है। उस समय उपवास, एनिमा आदि के द्वारा शरीर-शोधन करके ऋतु के अनुसार भोजन और विहार ग्रहण करना पड़ता है। संक्षेप में जो नियम स्वस्थ रहने के ऊपर बताये गये हैं उनका पालन करके कोई भी अपने को सुखी और स्वस्थ रख सकता है।

मेरा पुनर्जन्म कैसे हुआ

(जलोदर से मुक्ति मिली)

लेखक—श्रीयुत सरदार नानब सिंह

मैं इंजीनियर था, नैपाल गया था, इसी सिलसिले में यहां मुझे एक दिन ज़ोर का जुकाम हो गया। सोचा था, जुकाम ही तो है, ठीक हो जायगा। कुछ दिनों के बाद मेरी बदली हो गई। वहाँ से बनारस चला आया; फिर वहाँ से बहराइच चला गया। यहाँ मैं कुछ दिनों तक भागर की तराई में ही रहा। यहाँ मुझे नज़ला से दमा हो गया। मैं परेशान हो गया, अजीब तमाशा है। ख़ैर, दवा-दारू करना शुरू किया। आप जानते ही हैं, मैं इंजीनियर था ही। किसी चीज की कमी थी नहीं। पता नहीं, लाभ हुआ या नहीं। यहां से आजमगढ़ आया। भगवान की लीला तो देखिये, यहां दमा दब गया। पाठक समझते होंगे कि यह ज़िक्र मैं सन् १९२२ का कर रहा हूं। इसके पहले क़रीब आठ वर्षों से, जबकि मैं नैपाल में था, वहीं से बीमारी की शुरूआत हुई। कुछ समय बाद फिर दमा शुरू हुआ। अब क्या करूं? सोच समझ कर 'एफ़ेजोन' नामक दवा को प्रयोग किया। बस क्या था मर्ज के अनुकूल दवा मिल गयी, मर्ज दब गया। अब मैं फिर खुश था। अरे, यह क्या? सन १९४१ में फिर दमा शुरू हुआ। अबकी बार भी "एफ़ज़ोन" लिया। परन्तु निराश होना पड़ा। यद्यपि इलाज बराबर जारी रक्खा, तथापि रोग से नजात नहीं मिली। लखनऊ के प्रसिद्ध डाक्टर ने इलाज करना शुरू किया। फलस्वरूप वज़न कम होता गया। बीमारी जस का तस। यही क्रम चलता रहा, फिर भी छुट्टी मैंने नहीं ली। इस समय तक मैं काफ़ी कमज़ोर हो चुका था। अतएव मैं छुट्टी ली और बनारस में रह कर फुटकर इलाज करना शुरू किया। दमा बढ़ता ही गया, कोई लाभ नहीं। मैंने किसी भी नामी डाक्टर, हकीम को न छोड़ा। सभी का दरवाज़ा खटखटाया, जेवें गरम कीं परन्तु जीवनदान नहीं पाया। वज़न घटता ही गया। इसके बाद मैं शहर इलाहाबाद आया। यहां के किसी भी डाक्टर या वैद्य को न छोड़ा। परन्तु यहां बीमारी में कुछ उलट-फेर जरूर हुआ। चिन्ता बढ़ती ही गई। अब मैं शरीर से बिलकुल निराश था; फिर भी पुतली की तरह, दवा के लिये डाक्टर के पीछे घूमता रहा कि कोई मुझे जीवन-दान तो दे दे।

किन्हीं डाक्टर महोदय की कृपा से मेरे शरीर की चिन्ता कम हुई, क्योंकि बीमारी रुकती नज़र आने लगी। पर कुछ ही समय बाद, पेट में पानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भर आयां, चेहरे और पैर के भी रंग बदल गये। चिन्ता और बढ़ी। अब यहीं पर डाक्टर साहब की कारगुज़ारी आप लोग देखें—वे कहते हैं, 'देखिये महाशय? अब आप पूरा आराम Complete Rest करें। आपको Heart Trouble है! ऐसा कह सुन कर उन लोगों ने मुझे आठ मास तक चारपाई पर लिटाये रक्खा। मैं जीवन से ऊब चला था। किसी से मुक्ति हो जाती तो ठीक था। इस समय डाक्टरों ने जवाब भी दे दिया था कि 'महाशय? अब आप बचेंगे नहीं, आपके पेट का पानी यों मैं ज़रूर निकाल दूंगा, परन्तु इसके चौदह-पन्द्रह दिनों के बाद क्या होगा, ईश्वर जाने, यदि आप चाहें तो अपने संबंधी आदि लोगों से मिल लें।' अब आप ही लोग समझें कि मेरी और मेरे घरवालों की उस समय कैसी दशा रही होगी। मेरा लड़का अलग बिलखता था, बच्चे सब अलग। अब यह तैयारी होने लगी थी कि मुझे पंजाब ले जाया जाय। अचानक मेरे दिमाग़ में एक बात सूझ पड़ी कि अब तो मैं मर ही रहा हूं, प्राकृतिक-चिकित्सा (Nature cure) का क्यों न सहारा लेकर मरूँ। अपना यह विचार अपने घर वालों के सामने रक्खा। उन लोगों के मन में यह बात जम गयी और शीघ्र ही उन लोगों ने प्राकृतिक चिकित्सक डाक्टर बालेश्वरप्रसाद जी को बुलाया। वे आये और उन्होंने मुझे देखा-भाला। मैंने सारा गाथायें कह सुनायीं। धैर्य-युक्त शब्दों में उन्होंने मुझे आश्वासन दिया और कहा कि ईश्वर की कृपा हुई तो आप अवश्य अच्छे हो जायंगे। मैं उनके बताये हुए नीचे लिखे नियमों के अनुसार चलने लगा। शुरू में डाक्टर साहब ने पानी बिलकुल बन्द कर दिया। पानी की जगह पर दूध का फाड़ा हुआ पानी और मीठे नीबू तथा मौसंबी के रस दिए जाने लगे। दस मिनट के लिये चारपाई-सहित मैं धूप में रख दिया जाता था। बस पहले हफ़्ते तक यही इलाज़ जारी रहा। इसमें मुझे पतली दस्त और पेशाब आ जाते थे। इस क्रिया से तीसरे दिन सूजन में फ़ायदा मालूम होने लगा। दसवें दिन ऐसा मालूम पड़ने लगा कि अब सूजन बिलकुल रहा ही नहीं; और ऐसा जंचता था कि जैसे कोई अस्थि-पंजर लेटा हो। यह दशा देखकर डाक्टर साहब ने मुझे दुग्ध-कल्प देने की ठानी। अब मुझे दूध और दूध का फाड़ा पानी दिया जाने लगा। दूध क़रीब एक हफ़्ते तक दिया गया होगा कि पेट और पैरों में फिर शोथ हो गया। डाक्टर साहब ने फिर देखा और बताया कि लीवर काफ़ी बढ़ गया है जिससे दूध का पाचन अभी ठीक नहीं हुआ है। अब फिर वही दूध का पाना और फल का रस दिया जाने लगा और यकृत के लिए सूर्य किरण द्वारा तैयार पानी दिया जाने लगा। धीरे-धीरे मेरी तबियत अच्छी होने लगी, कमज़ोरी काफी बढ़ गई। इस अवसर पर मुझे ताजा "नीरा" अर्थात् ताड़ी दी जाने लगी। इससे मुझको विशेष लाभ मालूम हुआ। कुछ दिनों तक अच्छा रहने बाद के मुझे दही का पानी और उसी में थोड़ा दही मिलाकर दिया जाने लगा। इससे मुझमें कुछ शक्ति का समावेश होता हुआ दीख पड़ा और मैं चारपाई पर उठकर बैठने लगा। इसके बाद ही एक एक क़दम रखकर चलने भी लगा। दूध फिर दिया जाने लगा। अब तीन सेर दूध रोज ले रहा हूं। अब लीवर की कोई शिकायत नहीं रही। धीरे धीरे मैं मामूली भोजन पर आ गया परन्तु अभी तक दाल नमक नहीं दिया जाता था। इलाज का क्रम चार मास तक चला। ईश्वर की कृपा और प्रकृति की दया से अच्छा हूँ और शहर में साइकिल रिक्शा पर घूम भी आता हूं। अब मेरा वजन आजमगढ़ से आने के बाद से अधिक है। हाँ, एक बात मैं भूल ही गया था, वह यह है कि डाक्टर साहब ने चिकित्सा के दौरान में थोड़ा सा गोमूत का सेवन भी मुझे कराया था। अब यह मेरा नया जन्म डाक्टर साहब की कृपा द्वारा हुआ? अब मैं इस जन्म में उनका रोम-रोम से आभारी एवं कृतज्ञ हूं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मलेरिया

श्रीयुत डा० बालेश्वरप्रसाद सिन्हा

तीसरे साल का ज़िक्र है कि बाबू पुरुषोत्तमदास जी टंडन यू० पी० लेजीस्लेटिव एसेम्बली के स्पीकर प्रयाग में गंगा के तट पर दुग्धकल्प ले रहे थे। उसी समय राष्ट्र भाषा प्रचार के सम्बन्ध में श्री काका साहब कालेलकर उनसे मिलने आये थे। संयोगवश मेरा भी उनसे वहीं पर परिचय हुआ। प्राकृतिक चिकित्सा के संबंध में अनेक बातें हुईं। उन्होंने मुझको बताया कि प्राकृतिक चिकित्सा से मुझको विशेष प्रेम है। यह मैं समझता हूं, और मानता हूं कि प्राकृतिक चिकित्सा से सभी प्रकार की बीमारियाँ अच्छी हो सकती हैं। पर मलेरिया एक ऐसी बीमारी है जो आसानी से प्राकृतिक चिकित्सा से नहीं जाती। और जाती भी है तो काफी समय लेकर इतना समय ठहरने को मुझे धैर्य नहीं। मैं तो कुनैन खाकर जल्दी से अच्छा हो जाना चाहूंगा।

काका साहब ने कहा—"कुनैन खाकर मैं जल्दी मलेरिया से अच्छा हो जाना चाहूंगा।" यह बात मुझे खटकी। पहली बात जानने की यह है कि मलेरिया होते ही क्यों है। क्या कुनैन खाने से मलेरिया के कारण मिट जाते हैं? जिस प्रकार और जिन कारणों से दूसरी तीव्र बीमारियाँ होती हैं, उसी प्रकार मलेरिया भी होता है। एलोपैथी चिकित्सा के लिए बहुत बड़े डाक्टरसर अरबथ-नॉटलेन, एम० डी०, जो शाही चिकित्सक भी हैं, उन्होंने अपनी पुस्तक (Sewage Sysfem of the body) में लिखा है कि बहुत सी बीमारियों की उत्पत्ति के कारण मलारोध है। उस पुस्तक में उन्होंने मलावरोध से होने वाले रोग की एक सूची दी है उसमें मलेरिया भी है। प्रकृतिक चिकित्सा भी यह मानती है कि विजातीये द्रव्य ज्यादा शरीर में इकट्ठी हो जाने के कारण बीमारियाँ होती है। और मलेरिया भी इसी का फल स्वरूप है। जिस प्रकार हम घर के बाहर घर के कूड़ों को रखकर उसमें आग लगा देते हैं, उसी प्रकार ज्वर भी है। ज्वर होने से शरीर की सफ़ाई हो जाती है। पर यदि हम कुनैन साकर मलेरिया को दबाते हैं, तो शरीर की सफ़ाई न हो सकेगी। और शरीर के अन्दर गन्दगी पूर्ववत जमा रहेगा। यदि हम विजातीय द्रव्यको तीव्र बीमारियों द्वारा निकलने से रोकते हैं। अर्थात् ऐसा समझें कि शरीर के प्रयास को रोकते हैं तो इससे जीवनी शक्ति (की सरास) होती है और तीव्र बीमारी दबकर पुरानी बीमारी बन जाती है। अक्सर यह देखा गया है कि मलेरिया कुनैन द्वारा रोकने के बाद मन्दाग्नि, यकृत की बीमारी प्लीहा, बवासीर या इसी प्रकार के और भी दूसरी बीमारियाँ हो जाती हैं।

अभी हाल ही में एक मलेरिया से सताये हुए एक मारवाड़ी सज्जन यहाँ चिकित्सा कराने पधारे। उनका कार्यक्षेत्र बङ्गाल रहा है। तीन साल हुए, इनको मलेरिया ने पकड़ा था, इन्होंने करीब पचास-साठ ग्रेन कुनैन लिया था। उस समय मलेरिया रुक गया था, पर कुछ ही दिनों के बाद फिर आने लगा, इसी तरह कुनैन लेते गये, और ये दबता गया और फिर उभार होता गया। आगे चलकर इनकी हालत बहुत बुरी हो गयी, लीवर सी (Sblion) यकृत और प्लीहा दोनों बढ़ गया, आँखें पीली हो गयीं। एक बार पाण्डु रोग भी हुआ। इनको उन्होंने किसी तरह दवा खाकर दबाया। इसके बाद इनका दम फूलने लगा, और हलका ज्वर भी रहने लगा। इनको कुछ घबराहट हुई, तब ये प्राकृतिक चिकित्सा के लिए पधारे। इनको बताया गया कि देखिये आप घबरायेंगे नहीं, आपके जितने पुराने मित्र हैं, एक-एक कर सब वापस आयेंगे। अर्थात् मलेरिया आदि का दौरा फिर भी होगा, इससे आप घबरायेंगे नहीं। पंद्रह दिनों तक तो इनकी तबियत काफी अच्छी होती गयी, भूख बढ़ गयी, बदन में स्फूर्ति आ गयी। पर पंद्रहवे दिन मलेरिया का दौरा फिर हुआ अब इनको मलेरिया का इलाज दिया जाने लगा। यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इलाज करीब चौबीस दिनों तक चला और तब जाकर इन्हें मलेरिया से छुटकारा मिला। पहले इनको एक दिन बीच कर मलेरिया का दौरा हुआ करता था, पर तीन-चार दौरा के बाद समय बदलने लगा। और धीरे-धीरे उसका दौरा भी हलका होने लगा। आखिर में एक बार फिर उसका दौरा हुआ और एक दो दौरा के बाद ज़्वर का आना बन्द हो गया। अब खूब घूमते-फिरते खाते-पीते आनन्द पूर्वक रह रहे हैं। न इनको मलेरिया का दौरा ही आता है, और न यकृति और प्लीहा की ही शिकायत है। इनकी आँखें पीली नहीं है, साफ और स्वाभाविक हैं। इनका इलाज इस प्रकार हुआ:—

पहले तीन दिनों तक सिर्फ रसाहार दिया गया, एनिमा और मिट्टी की पट्टी दोनों समय। साथ ही दोपहर में एक पेड़ू स्नान। चौथे दिन से कुछ फल दिये जाने लगे और एनिमा, पट्टी वैसे चलता रहा। सातवें दिन से कुछ तरकारी दी जाने लगी और साथ ही पंद्रह मिनट का मेहन स्नान दिया जाने लगा। दसवें दिन इनको दूध अन्न दिया जाने लगा। एनिमा अब सिर्फ सुबह में एक ही वक्त दिया जाने लगा। इस तरह से पंद्रहवें दिनों तक कार्यक्रम जारी रहा अब ज्वर का दौरा आ जाने पर इनको अब पैर का गरम स्नान (Netfoot Bath) और साथ ही पेड़ू पर मिट्टी दी गयी। पर, ज्वर एक सौ छ तक गया ही। दो तीन मिट्टी की पट्टी देने पर भी ज्वर में कमी न हुई। ज्वर स्वभावतः आपसे आप ही कम हुआ। दूसरे दिन ज्वर नहीं रहता था, उस दिन इनको गरम जल का स्नान (Netural) दिया गया। अर्थात् इनको गरम पानी के टब में लिटा दिया गया पंद्रह मिनट तक ये लेटे रहे और सर के ऊपर गरम तौलिया रक्खी गयी। इस क्रिया से इनको काफी पसीना निकलता था। इसके बाद बदन पोछ कर चादर ओढकर बिस्तर पर लेट जाते थे। लेटने पर भी इनको काफी पसीना आता था और बिस्तर भींग जाता था। खाने के लिए इनको सिर्फ फल के रस दिये जाते थे हम समझते हैं कि इनको सिर्फ गर्म पानी और खट्टे नींबू ही दिये जाते तो इनकी बीमारी जल्दी अच्छी हो जाती पर यहां रोगी के स्वभाव को देखकर ऐसा नहीं किया गया। इसलिये बीमारी अच्छा होने में थोड़ा ज़्यादा समय लगा। जिस दिन दौरा नहीं होता था, उस दिन थोड़े फल और तरकारी के रस भी दिये जाने लगे। ज्वर अच्छा होने पर इनको मट्ठा भी दिया जाने लगा। और तीन चार दिनों के बाद इनको मामूली भोजन भी दिया जाने लगा और अन्त में कुछ आसन भी इन्हें सिखाये गये।

स्त्री रोग

आयुत सीताराम सिनहा

स्त्री शरीर सम्बन्धी कुछ विशेष रोग सभ्य जातियों में लगभग सर्व देशीय हो गये हैं। कदाचित अधिकतर स्त्री रोगों के लिये किये जाते हैं। स्त्रियों की अपने मासिक धर्म, सन्तानोत्पत्ति तथा (Climotric) के समय की व्यथा उनका भाग्य समझा जाता है। किन्तु अफ्रीका, सैन्डविच द्वीप समूह, और दक्षिणी अमेरिका की स्त्रियों में इन यंत्रणाओं का अभाव यह सूचित करता है कि स्त्री रोगों का प्रधान कारण हमारे अप्राकृतिक रहन-सहन और हमारी अप्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली है। इसको लोग आज पहचानने लगे हैं और वह समय अब दूर नहीं है है जब स्त्री जाति अपनी इस युग युग की शरीरिक यंत्रणाओं से भी अपनी सामाजिक परतन्त्रता की भांति स्वतन्त्र हो जायगी।

हमारे पास स्त्री रोगिणियाँ आती हैं और कहती हैं कि वे वर्षों से 'स्त्री रोगों' से पीड़ित हैं। उनके नेत्रों की दशा से उनकी निष्क्रिय त्वचा और त्रुटिपूर्ण रक्त संचालन स्पष्टतः दीख पड़ता है। पायन क्रिया तथा पसीने के निकलने में भी अवश्य ऐसी दशा में त्रुटि होगी। पेट और आंतों के विभिन्न भागों में सूजन और भारीपन भी पाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिया में दोष की ओर संकेत करते हैं। जननेन्द्रिय का नीचे उतर आना तथा गर्भाशय का अपने स्थान से हट जाना भी पेट की दोष पूर्ण क्रियाओं के परिणाम हैं। हम उन रोगिणियों के सन्मुख केवल उनकी आंखें भर देखकर पहुंच गये अपने निष्कर्ष रखते हैं और अपने को ठीक पाते हैं? किन्तु उन्हें इससे संतोष नहीं होता। बड़े बड़े डाक्टरों और प्रोफेसरों से हमारी राय मेल नहीं खाती। उन्हें हमारे इस अत्यन्त ही सहल हल पर विश्वास करने का एकबारगी साहस नहीं होता। डाक्टरों और प्रोफेसरों ने उन्हें हर बार यही बताया है कि उनका गर्भ स्थान उलटा हो गया है और उनके मल-निराकरण के स्थान को दबाता है तथा उसकी एक मात्र मुक्ति गर्भस्थान को Operation द्वारा अपने उचित स्थान पर पहुंचा देने में है। किन्तु हमने अपनी लगभग सभी रोगिणियों में उर्भ स्थान के खिसक जाने का कारण पेट और आंतों का आलस्यपूर्ण व्यवहार ही पाया है। अपनी इस राय को हमने साफ़ से साफ़ शब्दों में उनके सन्मुख रक्खा है और उपवास, रक्तवर्धक औषधियों तथा अन्य प्राकृतिक उपाय उन्हें बताये हैं। हाइड्रोपैथिक इलाज द्वारा पेट के समस्त अंगों को अधिक कार्य्य-शील और सजीव बनाना चाहिये। मालिश, धूप स्नान तथा वायु स्नान भी उचित ही है। इन्हीं आधार पर हमने सहस्रों स्त्रियों को बिना किसी विशैली औषधि या आपरेशन के उनके रोगों से थोड़े से थोड़े समय में मुक्त किया है।

इस सम्बन्ध में हम 'पेसरी' के प्रयोग के विरुद्ध पाठकों को विशेष रूप से सावधान करेंगे। वे केवल एक यंत्र है और शरीर की रोगमुक्ति में उनका कोई हाथ नहीं होता। बल्कि वे अपने भार से पेट के अंगों में जलन और फलतः निकट-वर्ती अंगों में सूजन तथा अन्य असाधारण परि-वर्त्तनों के कारण ही होते हैं।

जननेन्द्रिय में सूजन इत्यादि के लिये विशैली औषधि अथवा लेप आदि का प्रयोग केवल उसकी Chronic दशा की ओर अग्रसर ही करता है। यह सब जानते हैं कि पचास और पचहत्तर वर्ष की अवस्था के बीच सभी स्त्रियों की जनने-द्रिय अपने पूर्व स्थान से हट जाती है किन्तु इससे अधिकतर स्त्रियों को किसी प्रकार की जलन, सूजन इत्यादि की शिकायत नहीं होती। वस्तुतः जननेद्रिय का अपने स्थान से हट जाना कभी उपरोक्त भयानक यंत्रणाओं का कारण नहीं हो सकता। वास्तव में गर्भ का आपरेशन या उसके अनावश्यक भाग का आपरेशन द्वारा निराकरण उसके सूजने को नहीं रोक सकता। किन्तु उसकी कोमल त्वचा को छिन्न भिन्न कर केवल आगे सदा के लिये रोग का शिकार बना देता है।

'थूर-ब्रान्ड्ट्' मालिश, जो कि अन्दर की मांस पेशियां तथा पेटियों को नवजीवन प्रदान करती है, के द्वारा किसी भी प्रकार के स्थान परिवर्तन सूजन या जलन का बिना किसी प्राकर की बिशैली औषधि या आपरेशन के इलाज किया जा सकता है। किन्तु अधिकतर रोगों में इसकी आवश्यकता ही नहीं पड़ती। आपरेशन द्वारा स्थान परिवर्तन के इलाज में गर्भाशय को पेट के साथ सी दिया जाता है। अधिकतर यह यहां पर रुकता नहीं है, सिलाई ढीली पड़ जाती है और वह पुराने स्थान पर वापस आ जाता है। यदि वह रुक भी जाता है तो स्त्री को गर्भाधान वास्तव में नरक से किसी तरह कम यंत्र लाकर नहीं होता। गर्भाधान काल में प्रतिपल होते रहने वाले परिवर्तनों को वह सिला हुआ गर्भाशय संभाल नहीं पाता और परि-णाम होता है Abortion यह बच्चे का दोष-पूर्ण शारीरिक विकास और निर्माण।

हम जननेद्रिय को मस्तिष्क को हानि पहुंचायें बिना काट नहीं सकते। स्नायुजाल एक अविच्छिन्न इकाई है और मस्तिष्क जननेद्रिय को अत्यन्त कोमल स्नायुकेन्द्र से बड़ी गम्भीरता और आतरं-ग्यपूर्वक सम्बन्धित है। अतएव जननेद्रिय की कोमल स्नायुसंस्था में किसी भी प्रकार की चोट या हानि स्त्री को मानसिक और भावनात्मक जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को अत्यन्त दुर्भावित करती है। जिन स्त्रियों के गर्भाशय या Overies को हटा दिया गया है वह मानसिक और भावनात्मक दोनों रूपों में असाधारण होती है चिड़चिड़ापन और लगभग अर्ध-विक्षिप्तता बहुत अधिक संख्या में इस प्रकार के अप्राकृतिक कर्मों के परिणाम होते हैं।

'क्लाइमेटिक' या परिवर्तन

'परिवर्तनकाल में भी नारी अनगिनत ही शारीरिक यंत्रणाओं का शिकार बनती है और वह भी उसका आवश्यक भाग्य या परिवर्तन का आवश्यक फल कह कर टाल दिया जाता है। बात रोग, 'न्यूरेस्थेनिया' या 'न्यूरेग्लिया की तरह 'क्लाइमेटिक' भी डाक्टर की अनभिज्ञता पर पर्दा डालने वाला एक किसी भी प्रकार की शिकायत को उसे परिवर्तन का ही कोई स्वरूप मान कर टाल दिया जाता है।' तुम 'क्लाइमेक्टिक' में हो। तुम परिवर्तन के से पीड़ित हो। यही जैसे सब डाक्टरों का तोते का पाठ है। गरीब रोगिणी को उसे सुन कर संतोष नहीं होता पर फिर वह अवश्यमभावी के सन्मुख अपने को असहाय पाकर संघर्ष से हट जाती है।

प्रश्न उठता है क्या यह परिवर्तन के नाम पर टाल दी जाने वाली सभी पीड़ायें परिवर्तन का आवश्यक और प्राकृतिक विकास है? अफ्रिका इत्यादि के आदि निवासियों तथा यूरोप के ग्रामीण समाज में इस प्रकार की पीड़ायें दुर्लभ वस्तु हैं। हमें फिर कहना पड़ता है कि इसका कारण भी हमारे जीवन और चिकित्सा प्रणाली का अप्राकृतिक स्वभाव ही है। अन्य साधारण शारीरिक क्रियाओं के अलावा मासिक धर्म स्त्री शरीर की बुराइयों और अनावश्यक वस्तुओं को बाहर निकालने का एक मासिक प्रबन्ध है। स्वास्थ्य दशा में यह निराकरण फेफड़े, त्वचा, मेदा और जननेन्द्रिय से होता रहा रहता है। मासिक धर्म के समय का छोटा या बड़ा होना स्त्री के स्वास्थ्य पर निर्भर है। रोग की मात्रा के साथ साथ मासिक धर्म का समय और पीड़ा बढ़ती जायगी। क्लाइमेक्टरिक के साथ जाने वाले शारीरिक परिवर्तनों के कारण मासिक धर्म बन्द हो जाता है और पहले महीने महीने साफ हो जाने वाली अनावश्यक और हानिकर वस्तुएं और शरीर में ही जमा होती जाती हैं। यही जमाव 'परिवर्तन' काल की सब यंत्रणाओं का मूल कारण है।

यह स्पष्ट है कि मासिक धर्म के अभाव में यदि फेफड़े और त्वचा इत्यादि की निराकरण गति को बढ़ा दिया जाय, उन्हें अधिक कर्म शील बना दिया जाय, तो हमारी समस्या हल हो जायगी। प्राकृतिक चिकित्सा इसमें धूप-स्नान, वायुस्नान, मालीस, उपवास या अन्य भोजन सम्बन्धी संयम, होमियोपैथिक या जड़ी बूटी इत्यादि की सहारा लेती है और निराकरण के सारे साधनों को फिर से सजग करती है। योगिक क्रियाएं यदि वैज्ञानिक ढङ्ग से की जायें तो मनुष्य शरीर के अनु-अनु को जगा देती है। इस प्रकार जब शारीरिक संतुलन स्थापित हो जाता है तो 'क्लाइमेक्टटिक' की आज आवश्यक पीड़ाओं का प्रश्न ही नहीं उठता। इसे हमने सहस्रों रोगिनियों के साथ सफलता पूर्वक प्रयोग किया है।

यह अनुभव इतने साधारण हैं कि जनता का उनके प्रति आकृष्ट न होना हमें उनकी सहज बुद्धि में संशय उन्नति कर देता है। प्राकृतिक चिकित्सा सहज बुद्धि में संशय उत्पन्न कर देता है। प्राकृतिक चिकित्सा सहजबुद्धि की चिकित्सा है, वैज्ञानिक डाक्टर आधार को भुलाकर इमारत पर ही अपनी सारी नज़र गठा बैठती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिए

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (चतुर्थ संस्करण) : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ५)
(२) मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ॥)
(३) स्वास्थ्य और व्यायाम; केदारनाथ गुप्त ... ... २।)
(४) स्वास्थ्य के नुस्खे : 'जीवन सखा' कार्यालय ... ... ।)
(५) क्या और कैसे खायें : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... ।=)
(६) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १॥)
(७) सचित्र हठयोग : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १।)
(८) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... १)
(९) शक्ति दर्शन; शंकरलाल तिवारी ... ... ॥)
(१०) आँख का अचूक इलाज : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २)
(११) जुकाम : महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... १॥)
(१२) शहद के गुण : और उपयोग श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... ॥।)
(१३) आकृति निदान : लुई कूने ... ... २)
(१४) जलचिकित्सा : राखाल दास पहला भाग ... ... १॥।)
" तीसरा भाग ... ... १॥)
" तीसरा भाग ... ... १॥)
(१५) स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियां : श्री महेन्द्रनाथ पांडे ... ... १॥)
(१६) आकृति निदान : लुई कूने ... ... २)
(१७) जल चिकित्सा : राखाल दास पहला भाग ... ... १॥।)
" दूसरा भाग ... ... १॥)
" तीसरा भाग ... ... १॥)
(१८) स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियाँ : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... १॥)
(१९) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम० ए० ... ... १॥।)
(२०) सूर्य-नमस्कार : श्री भगवती प्रसाद पांडे, बी० ए० ... ... १।)
(२१) स्वास्थ्य और जल चिकित्सा : प्रिन्सिपल केदारनाथ जी गुप्त ... ॥।)
(२२) आहार ही औषध है : डा० एल० एन० रतरा ... ... १॥।)
(२३) फलाहार चिकित्सा : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २।)
(२४) Nature Cure by H. Lindlahr, M.D. 7 8
(२५) Practical Nature Cure by Dr. K. L. Sharma, N.D. 7 8
(२६) Fasting Cure by Dr. L. Sharma N.D. ... 0 6
(२७) Drugless Healing by Dr. L. Kameshwar Sharma, M.A., N.D. 0 8
(२८) Food-de Medicine by Dr. L. N. Ratra, H.M.B. ... 1 4
(२९) Universal un-cooked food 3 8

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पता:—मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

जीवन मधु ! क्या आप जानते हैं ? जीवन मधु !!

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है

(१) एक छटांक शहद पानी में मिला कर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है। (२) इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है। (३) शरीर में ताकत आती है। (४) दूध में मिला कर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुंसत्व बढ़ता है। (५) शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है। (६) यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है। (७) शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है। पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये जीवन-मधु का उपयोग कीजिए। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) २॥) सेर। बोतल और पैकिङ्ग अलग ५ सेर से कम शहद बाहर नहीं भेजा जा सकता है। आर्डर भेजते समय कम से ५) पेशगी अवश्य भेजें।

दमे का अचूक इलाज

डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह, संचालक, प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह, द्वारा अब तक अनेकानेक रोगियों पर किए गए अनुभूत प्रयोगों का अद्भुत चमत्कार ! ९५ प्रतिशत रोगियों को रोग-मुक्त करने का रेकार्ड ! इसके लिए रोगियों को हमारे स्वास्थ्य-गृह में सिर्फ एक महीने से लेकर २ महीने तक रहने की जरूरत है। स्वास्थ्य-गृह में रोगियों के रहने का समुचित प्रबन्ध। घर पर रह कर चिकित्सा कराने वाले रोगियों का इलाज पत्र-व्यवहार द्वारा होता है। विशेष विवरण के लिए टिकट के साथ आज ही लिखें।

मिलने का पता—

प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह,

११ लूकरगंज, इलाहाबाद

Printed at the Mission Press, Allahabad,
Published by Dr. Baleshwar Prasad Sinha, 11, Lookeaganj, Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

सम्पादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

पं० महेन्द्रनाथ पाण्डेय

वर्ष ९] नवम्बर १९४४ [अङ्क ११

रक्तचाप (Blood Pressure)

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

हरएक मनुष्य के शरीर में रक्त का संचार आजीवन होता ही रहता है। दिल की धड़कन कभी बन्द नहीं होती। जबतक मनुष्य की आयु रहती है, तबतक दिल भी क़ायम रहता है। कभी तेज़ी से काम करता है और कभी धीरे से। जब मनुष्य कोई हरकत करता है जैसे कसरत या बोझा ढोना, तब हृदय की गति बहुत तीव्र हो जाती है और जब आराम करता है अथवा सोता है, उस समय हृदय की गति कम हो जाती है। कभी-कभी किसी को ऐसी बीमारी भी होती है, जिसमें इसकी गति औसत गति से तेज़ रहती है, और कभी कम। हृदय हमेशा ही काम करता है। यह किस ताक़त से काम करता है, इसे अच्छी तरह डाक्टरों ने जाना है। एक समय की बात है, एक घोड़े की धमनी द्वारा रक्त प्रवाह हो रहा था। एक डाक्टर ने उस धमनी को रबर की नाली द्वारा, पारे की नली (Mercury column) से मिला दिया। मिलाते ही पारा ऊपर चढ़ गया। पारा उतना ही चढ़ा जितना घोड़े के खून में दबाव था अर्थात् घोड़े का हृदय जिस ताक़त से काम कर रहा था। इसे घोड़े का रक्तचाप कहेंगे।

रक्त का दबाव साधारणतः इस प्रकार होना चाहिए। २० वर्ष की अवस्था में १२० M. M. Pressure होता है। प्रति दो वर्ष १ M. M. Pressure बढ़ता जाता है। अगर किसी मनुष्य की अवस्था ४० वर्ष की है तो उसके रक्त का दबाव १२०+१० होना चाहिए। पर ५० वर्ष से ज़्यादा होने पर भी १४० M. M. Pressure का होना सुन्दर और आदर्श समझा जाता है। पर एलोपैथिक डाक्टरों के मतानुसार १५० या १५५ भी स्वाभाविक और सुन्दर ही समझा जाता है। जब रक्त का दबाव किसी कारण से अधिक या कम होता है तो इसी अवस्था को बीमारी कहते हैं, यदि रक्त का दबाव कम होता है तो उसे Low blood pressure कहते हैं। यह कमज़ोरी और ख़ून का कम होना सूचित करता है। इसे अंगरेजी में ब्लड-लेसनेस (Blood lessness) कहते हैं। इसी प्रकार यदि रक्त का दबाव अधिक होता है तो उसे High blood pressure कहते हैं। इस बीमारी की अवस्था में चक्कर आता है, नींद नहीं आती, सिर भारी रहता है, इत्यादि शिकायतें होती हैं। यह सब इस बीमारी के स्वाभाविक लक्षण हैं। इस बीमारी में अनेक लोगों के अलग अलग लक्षण होते हैं। कितने लोगों को तो २५० M. M. Pressure में भी कोई तक़लीफ नहीं मालूम होती। कुछ लोगों को १६० M. M. Pressure के दबाव में ही सिर में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चक्कर आना, नींद नहीं होना इत्यादि शिकायतें अनुभव होने लगती हैं। कुछ तो १८० M. M. के दबाव में ही अन्त कर जाते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें २९० और ३०० M. M. दबाव में भी कुछ नहीं होता।

रक्तचाप की बीमारी बड़ी भयंकर बीमारी समझी जाती है और अक्सर आगे चलकर रोगी का ख़ात्मा हो जाता है। इस बीमारी में धमनियों (Arteries) में सख़्ती आ जाती है। जिससे ख़ून का दबाव बढ़ जाता है। दरअसल यह ज्यादा ख़ून बढ़ने की बीमारी नहीं है। जब ख़ून का दबाव ज़्यादा हो जाता है तब डाक्टर धमनियों से ख़ून निकालते हैं। इससे दो-तीन दिनों के लिए दबाव जरूर कुछ कम सा मालूम होता है परन्तु फिर जैसा का तैसा हो जाता है। ऐसी कुछ दवायें भी हैं जो ख़ून के दबाव को कम कर देती हैं। पर दवा लेने से बीमारी का कारण नष्ट नहीं होता। प्रायः यह बीमारी खाने-पीने की गड़बड़ी से होती है। जब तक खाने पीने का समुचित प्रबन्ध न हो, तब तक इससे मुक्ति पाना कठिन है।

रक्तचाप का अचूक इलाज़:—रक्तचाप के रोगियों के मुझे बहुत अनुभव हैं। उन अनुभवों में से कुछ का वर्णन मैं यहाँ कर रहा हूँ।

(१) कई एक रोगियों को पेडू स्नान, मेहन-स्नान और भोजन लूई कुइने के मुताबिक दिया गया। इसमें संदेह नहीं, आराम जरूर मिला; पर दो-तीन महीने इलाज़ करने पर भी बीमारी में कमी नहीं मालूम हुई। शुरू अवस्थावालों के लिए यह काफ़ी अच्छा इलाज़ है।

(२) कई एक रोगियों पर मैंने फल के रस और एनिमा का प्रयोग किया। इससे भी पहले तो बीमारी कुछ घटती हुई नज़र आती है, पर आगे चलकर इस प्रयोग में ज़्यादा समय और अधिक धैर्य की आवश्यकता पड़ती है। सबसे अच्छा और कम समय लेने वाला प्रयोग उपवास (fasting) साबित हुआ। इसमें रोगी चुपचाप लेटा रहता है, गरम पानी और नीबू पर्याप्त मात्रा में पीने के लिए दिया जाता है, सुबह-शाम मिट्टी की पट्टी और एनिमा दिया जाता है और इसके अलावे कुछ खाने अथवा पीने के लिए नहीं दिया जाता है।

सच्चा स्वास्थ्य

श्रीयुत् कीर्तिनारायण सिंह

हममें से कितने स्वास्थ्य को समझते हैं?

साधारणतः लोग उसे ही अच्छा स्वस्थ समझते हैं, जिसे रोग-शय्या पर लेटना नहीं पड़ता और जो अपने जीविकोपार्जन के लिये दैनिकचर्या में किसी तरह लगा रहता है।

सच्चे स्वास्थ्य के कुछ और ही मानी हैं। इसके मानी हैं ऐसी जीवन-शक्ति और साहस, जो जीवन को सदा सुखमय बनाता है। स्वास्थ्य का अर्थ है अपनी इन्द्रियों को वश में रखने की शक्ति जिससे हम प्रतिदिन, प्रति सप्ताह, प्रति मास अपने काम को सुन्दर और सुचारु रूप से कर सकते हैं। सच्चे स्वास्थ्य से तात्पर्य है वह शारीरिक बल और धैर्य, जिसकी सहायता से हमारा उत्साह बराबर अक्षुण्ण बना रह सकता है। अंत में सच्चे स्वास्थ्य से यह भी आशय है कि हम रोग से सर्वथा मुक्त रहें।

क्या हम आप ऐसे स्वस्थ हैं? अगर नहीं तो यह विश्वास करना चाहिए कि हम वैसे स्वस्थ हो सकते हैं, यदि हम तन-मन से स्वास्थ्य-प्राप्ति की चेष्टा करें। यदि हम अपने आपको स्वस्थ बनाना चाहते हैं तो हमें कोई अलौकिक बात नहीं करनी है। हमें न किसी रसायन की दूकान पर जाने की जरूरत है, न चीड़-फाड़ कराने की, न एक्सरे की, न रेडियम की, न बिजली की और न दूसरे रहस्यमय साधनों की। जिन चीजों की आवश्यकता है, वे हैं शरीर-स्वस्थ रखने के नियम, जिनका पालन हमें करना चाहिए। हमें इन बातों पर ध्यान देना चाहिए—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) भोजन पर ध्यान देना चाहिये—भोजन की सामग्री, उसकी विधि, उसका समय इत्यादि बातों को निश्चित करना।

(२) व्यायाम जानना और करना चाहिये, जिससे शारीरिक क्रियाएँ ठीक-ठीक हों और शरीर सुगठित हो।

(३) यह भी जानना चाहिये कि साँस कैसे ली जाती है, आराम कैसे किया जाता है और शरीर को ढीला और शिथिल कैसे किया जाता है। ये स्वास्थ्योपार्जन के अमोघ उपाय हैं, जिनसे हम-आप अपनी शरीर-सम्पत्ति की वृद्धि कर सकते हैं। अगर हम उस सुन्दर स्वास्थ्य और जीवन-शक्ति से, जो हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है, सुसज्जित नहीं हैं, तो हम उस ओर क्रियाशील हों। उन सभी का स्वास्थ्य सुन्दर हो सकता है, जो नियमित रूप से सभी काम सच्चे हृदय से करते हैं।

ऊपर बतायी सभी बातें आवश्यक हैं पर व्यायाम विशेषरूप से आवश्यक है। व्यायाम हजार दोषों को ढँक लेता है। अंगरेजों का खान-पान ठीक नहीं है पर व्यायाम के बल से ही वे स्वस्थ और सबल रहते हैं। अगर उनका भोजन भी प्राकृतिक नियमों के अनुसार होता तो वे कहीं और स्वस्थ होते।

जब कभी हम व्यायाम की महत्ता की बात-चीत करते हैं तो हम उन पेंचीदी कसरतों को, जिसमें औज़ारों की जरूरत होती है, ज़्यादा महत्त्वपूर्ण समझते हैं बनिस्बत उनके, जिनमें न तो औज़ारों की ही जरूरत है न अत्यंत कठिन परिश्रम की। स्वास्थ्य और जीवनी-शक्ति को बढ़ाने के लिये दूर तक और शक्ति भर तेज़ी से टहलने को कोई कसरत नहीं पा सकती। हर रोज एक दो मील टहलना अच्छा है; पर तीन-चार मील तेज़ी से टहलना और अच्छा है। यह ठीक है कि जो टहलने के आदी नहीं हैं, उन्हें शुरू में कठिनाइयाँ होती हैं, फिर भी बराबर आदत डालने से टहलना बिल्कुल आसान हो जाता है और दो-तीन महीने ही नियमितरूप से टहलने से पाचन-शक्ति अच्छी हो जाती है, धमनियों में स्वच्छ रक्त दौड़ता है, मांसपेशियाँ पुष्ट हो जाती हैं और चेहरा स्वास्थ्य की चमक से दमकने लगता है।

टहलते समय पीठ और रीढ़ को सीधा रखना चाहिये और नाक से गहरी साँस लेनी चाहिये। दोनों भुजाएँ तेज़ी से आगे पीछे जायँ और चाल में फुर्ती हो। कुछ दिन ऐसे टहलने का अभ्यास करने से ही लाभ मालूम होने लगता है।

बीमारियों को दूर करने और शरीर को सच्चे आशय में स्वस्थ रखने के लिए योग-व्यायाम अद्वितीय हैं, पर वे किसी सच्चे जानकार से ही सीखे जा सकते हैं।

स्वास्थ्य के साधन

श्रीयुत् कीर्ति नरायण सिंह

इस लेख में प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह, इलाहाबाद के संचालक और इस पत्र के सम्पादक, डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह के एक विद्वता पूर्ण व्याख्यान का सारांश है। व्याख्यान का आनन्द तो उसे सुन कर ही प्राप्त हो सकता था और सभी बातों को यहाँ क्रमबद्ध रखना भी आसान नहीं है, पर उसका सारांश 'जीवन सखा' के पाठकों के लिये देने की चेष्टा करता हूँ।

डाक्टर साहब ने भोजन और व्यायाम इत्यादि की बातों पर ज़ोर देते हुए विशेष महत्त्व इस बात को दिया कि मनुष्य को अपने जीवन का सुन्दर लक्ष्य निश्चित करना चाहिये और प्राणिमात्र और संसार के सभी पदार्थों में एक ईश्वरीय सत्ता का आविर्भाव देखते हुए उसीके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करना चाहिये। मनोवृत्तियों का निरोध और मन और शरीर का शिथिलीकरण आदर्श स्वास्थ्य के सच्चे साधन हैं, और ये तभी संभव हैं, जब कि मनुष्य अपने जीवन का लक्ष्य ऊंचा रखे। इसी दृष्टिकोण से स्वास्थ्य की समस्या को देखने से सच्चे स्वास्थ्य की कुंजी हस्तगत हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाक्टर साहब नें शरीर के शिथिलीकरण पर बहुत जोर दिया और कहा कि इसके सहारे शरीर के सभी रोग दूर किये जा सकते हैं। शिथिलीकरण का सबसे अच्छा साधन शवासन है, जिससे जीवनी-शक्ति संचित होकर शरीर के विकारों को निकालने में और उसकी सभी क्रियाओं को अच्छी तरह संचालित करने में समर्थ होती है। स्वास्थ्य के लिये, डाक्टर साहब ने कहा, नाड़ियों की शुद्धि आवश्यक है, और यह शुद्धि समुचित आहार विहार, व्यायाम, विशेषकर योग-व्यायाम और शिथिलीकरण से हो सकती है। इन विषयों पर 'जीवनसखा' में कई बार लेख निकल चुके हैं और आगे भी निकलेंगे।

स्त्रियाँ और उनके रोग

लेखिका—डा० इन्दुमती सिंह, एन० डी०, डी० वाई०

[गतांक से आगे]

आमतौर से यह समझा जाता है कि अगर किसी स्त्री को बहुत थोड़ी मात्रा में मासिक-स्राव होता है या असमय में ही मासिक स्राव बन्द हो जाता है, तो वह इस बात की निशानी है, कि उसका साधारण स्वास्थ्य ठीक नहीं है। किन्तु लोगों की यह धारणा सर्वथा सत्य नहीं कही जा सकती। अमेरिका के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डा० शेल्टन का विचार है कि एक स्त्री को मासिक धर्म जितनी ही कम मात्रा में हो, उसके स्वास्थ्य को उतना ही अच्छा समझना चाहिए और यह कि युवावस्था में मासिक-स्राव का बिल्कुल बन्द हो जाना, एक बहुत ही अच्छी बात है, न कि कोई अवांछनीय बात, जैसा कि साधारणतः लोग समझ लेते हैं। उनका यह निष्कर्ष उनके निजी अनुभव पर आधारित है। उनका कहना है कि आधुनिक सभ्य-जाति की स्त्रियों के खान-पान और आहार-विहार की गड़बड़ी के कारण उनकी प्रजनन-प्रणाली (sex-organ) में जो रक्त-विकार भर उठता है उसे शरीर के बाहर निकाल फेंकने के लिए प्रकृति का यह एक स्वाभाविक प्रयत्न है, इस प्रकार उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला है कि कम मात्रा में मासिक धर्म होना इस बात का सूचक है कि उसके शरीर को शुद्ध करने के लिए इस मासिक प्रक्रिया की कम आवश्यकता है। डा० हेरी बेन्जमिन का यही विचार है कि अगर कोई स्त्री साधारण रूप से स्वस्थ है तो उसे कम मात्रा में मासिक धर्म होना या असमय में ही मासिक धर्म का बिल्कुल बन्द हो जाना कतई कोई चिन्ता या व्यग्रता प्रकट करने की बात नहीं है, लेकिन अगर उसका साधारण स्वास्थ्य औसत दर्जे का नहीं है और उसे प्रकट रूप से कई एक बीमारियों का शिकार होना पड़ता है तो उस हालत में निस्सन्देह अल्पार्त्तव या असामयिक नष्टार्त्तव इस बात का सूचक है कि उसकी प्रजनन-प्रणाली उस तरह कार्य नहीं कर रही है जिस तरह उसे करना चाहिए।

हम यह देख चुके हैं कि तरह-तरह के स्त्री-रोगों का मूल कारण प्रायः एक ही होता है और यही बात अपेक्षा से अधिक गम्भीर रोगों—जैसे गर्भाशय का बढ़ जाना (Growth) आदि—के भी सम्बन्ध में कही जा सकती है। अगर शरीर में रक्त का जमाव होने तथा बच्चेदानी (Womb) और उसके आसपास की रगों में ऐंठन (Cramping) होने की पुरानी शिकायत है तो उस हालत में बच्चेदानी के बढ़ जाने की पूरी सम्भावना रहती है। क्योंकि वहाँ पर एकत्र हुए ख़ून और मल युक्त पदार्थों का जो जमाव हुआ रहता है उसके बाहर निकलने का कोई ज़रिया नहीं होता। जो स्त्रियाँ पहले से बहुत सी दवाइयों का इस्तेमाल कर चुकी हैं, उनके सम्बन्ध में यह शिकायत और भी गंभीर रूप धारण कर लेती है, और इसमें भी सन्देह नहीं कि आर्त्तव-क्षय की अवस्था (Change of life) में जब मासिक-धर्म होना बन्द हो जाता है तो उस हालत में बच्चेदानी में सूजन हो जाने (Growth) और ख़ासतौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के कैंसर—जहरीला फोड़ा—हो जाने की सम्भावना नीचे लिखे कारणों से हो जाती है।

हम बता चुके हैं प्रकृति स्त्री की शरीर प्रणाली से मल की गन्दगी की सफाई के लिए बहुत अधिक अंशों में मासिक धर्म का सहारा लेती है। लेकिन जब मासिक धर्म का होना बन्द हो जाता है तो उसके साथ ही साथ मल को बाहर निकालकर प्रणाली को शुद्ध करने का यह प्राकृतिक साधन भी मिट जाता है। इस तरह अब जो उनकी बच्चेदानी में मल-युक्त पदार्थ या विकार इकट्ठा होगा उसके निकालने का यह प्राकृतिक साधन न रह जाने पर बच्चेदानी में सूजन होने या उसके फूल जाने की शिकायत बहुत बढ़ने लगेगी। और यह सारी बातें स्त्री के स्तनों के सम्बन्ध में भी लागू होती हैं; क्योंकि स्तन और बच्चेदानी इन दोनों में एक दूसरे से गहरा सम्बन्ध है।

स्त्री रोगों के कारणों पर विचार करने के समय यह भी ध्यान में रखना होगा कि अनुचित आचरण या बच्चा पैदा होने के समय गलत तरीकों से काम करने या बहुत अधिक गर्भ धारण करने से इन शिकायतों के पैदा होने में मदद मिलती है। जान-बूझ कर गर्भ-पात कराने से बहुत अधिक इन्द्रिय चालन से, इन्द्रिय-दमन (Sexperversion) और सन्तान-निरोध के आधुनिक तरीकों (Contraception) से काम लेने पर भी स्त्री की जनन-प्रणालियों के रोगों में वृद्धि होती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आजकल जो सन्तति निरोध—(Birth Control) बच्चा न पैदा करना—का सभ्य समाज में प्रचार हो रहा है उससे आधुनिक स्त्रियों के जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोगों की वृद्धि होने में बहुत अधिक सहायता मिल रही है।

स्त्री रोगों के कारणों और उनके पहलुओं पर संक्षेप में विचार कर लेने के उपरान्त अब हमें थोड़ा सा इस प्रश्न पर विचार कर लेना चाहिए कि आजकल के डाक्टर लोग इन रोगों का इलाज़ किस तरह करते हैं। हम यह पहले ही देख चुके हैं कि आजकल के डाक्टरों के मस्तिष्क में यह विचार समाया हुआ है कि शरीर का एक अंग दूसरे अंग से प्रायः बिलकुल भिन्न है, उनका एक दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं। और यही उनका दक़ियानूसी विचार स्त्री-रोगों के भी सम्बन्ध में रहता है। आजकल के कट्टर पंथी डाक्टर यह नहीं समझ सकते कि स्त्री-रोगों का सम्बन्ध स्त्री की सम्पूर्ण शरीर-प्रणाली तथा उसके शारीरिक स्वास्थ्य से है। इसलिए वे जो उपचार बताते हैं वह पूरी तौर से स्थानिक और डाक्टरी परम्परा के अनुसार बहुत ही दमनकारी या मारक होते हैं। हम यह कह सकते हैं कि बच्चेदानी या गर्भाशय सम्बन्धी बीमारियों से पीड़ित होनेवाली महिलाएँ डाक्टरी उपचार से कोई वास्तविक या स्थायी लाभ नहीं उठा सकतीं।

इन रोगों के उपचार के लिए डाक्टर लोग बेधड़क होकर दवाइयों का प्रयोग करने के अलावा शल्य-चिकित्सा (आपरेशन) का भी खुलकर उपयोग करते हैं और इसके फलस्वरूप बहुत सी स्त्रियों को शारीरिक और मानसिक दोनों दृष्टियों से अपना सारा जीवन संकटपूर्ण बना लेना पड़ा है। कट्टरपंथी डाक्टर बग़ैर इस पर विचार किये कि इस रोग के लिए क्या करना चाहिए और इसका उसके भावी जीवन पर क्या प्रभाव पड़ेगा, आपरेशन कर बैठते हैं, फिर इसके परिणाम स्वरूप अगर उसका सारा जीवन नष्ट हो जाता है, तो इसमें कुछ भी आश्चर्य की बात नहीं। बहुत से लोगों की यह धारणा है कि डाक्टरों को इस तरह के रोगों का पूरा ज्ञान है और वे जो राय देते हैं वह ग़लत हो ही नहीं सकती। इसलिए वे इस बात का कुछ भी विचार न करके, कि इसका आगे चलकर क्या परिणाम हो सकता है, डाक्टरों को बच्चेदानी और गर्भाशय आपरेशन के द्वारा काट कर निकाल फेंकने की अनुमति दे देते हैं। उधर डाक्टर भी इस प्रश्न पर दूरदर्शिता पूर्वक विचार करने से उदासीन ही रहते हैं।

लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि डाक्टर-लोग रोगिणी के भावी स्वास्थ्य को सुधारने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बजाय आपरेशन आदि के द्वारा नष्ट करने का जान बूझकर क्यों प्रयत्न करते हैं। असल बात तो यह है कि इस तरह के रोगों में स्त्री की जनन-प्रणाली के उस रोग-ग्रस्त समूचे अंग को काट कर दूर कर देने के सिवाय डाक्टरों को कोई दूसरा उपाय ही नहीं देख पड़ता। और अगर इस तरह के उपचार का रोगिणी के सम्पूर्ण शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है तो वे इसके लिए अपने को या अपनी चिकित्सा प्रणाली को दोषी नहीं समझते। वे तो अपने विचार से रोगिणी की मौजूदा शिकायत को दूर करने के लिए अपनी शक्तिभर प्रयत्न करते हैं और आशा करते हैं कि इसके द्वारा आगे चलकर रोगिणी का स्वास्थ्य सुधर जायगा। लेकिन यदि भविष्य में उनकी आशा के विपरीत परिणाम निकलता है तो इसके लिए वे अपने को बिलकुल दोषी नहीं समझते।

यहाँ पर यह ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है कि स्त्री और पुरुष दोनों के ही लिए जननेन्द्रियाँ शारीरिक रूप से अधिक महत्त्वपूर्ण अंग हैं। अगर इन अंगों के सम्बन्ध में कोई अनधिकार चेष्टा की जाती है या उनको काट कर निकाल फेंका जाता है तो उस व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर उनका बहुत ही बुरा असर पड़ना अनिवार्य है। क्योंकि अगर शरीर के इन प्राणधारक केन्द्रों को निकाल फेंका जाता है तो उसके साथही साथ उस व्यक्ति की शरीर प्रणाली में होने वाला जीवनप्रवाह भी बहुत अधिक अंशों में मिट जाता है।

एक समय था जब कि डाक्टर लोग बच्चेदानी (Ovaries) को काट कर बिलकुल साफ कर देते थे, लेकिन अब ऐसा नहीं किया जाता, क्योंकि डाक्टरों को यह ज्ञात हो गया है इस तरह का उपचार करानेवाली स्त्रियों को उन्माद रोग (Insanity) का शिकार बन जाना पड़ा है। अब इस भयानक परिणाम से बचाव के लिए आपरेशन के समय बच्चेदानी का एक छोटा सा हिस्सा छोड़ दिया जाता है। इससे निर्विवाद रूप से यह सिद्ध हो जाता है कि इन सुकुमार जननेन्द्रियों का मानसिक और शारीरिक जीवन से कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है, और यह कि आधुनिक शल्य-चिकित्सा के द्वारा इस तरह के रोगों में अनुचित हस्तक्षेप करना कितना ख़तरनाक होता है।

ऊपर बतायी गई बातों से यह प्रकट हो जायगा कि स्त्री रोगों का एकमात्र युक्तियुक्त और उचित उपचार यही है कि उनके किसी एक ख़ास अङ्ग को नहीं बल्कि उनकी समूची शरीर प्रणाली की कार्य शक्ति और स्वास्थ्य में सुधार को लक्ष्य बना कर इलाज किया जाय— स्त्री रोगों से वास्तव में छुटकारा पाने का एक मात्र उपाय यही है। अब तक इस तरह के रोगों से परेशान होने वाली बहुत सी महिलाएँ प्राकृतिक चिकित्सा से लाभ उठा चुकी हैं और आशा है कि हमारी अन्य रोग-ग्रस्त मातायें और बहनें भी इस प्रणाली को अपना कर वास्तविक आरोग्य और स्वास्थ्य-लाभ करेंगी।

योग-शिथिलीकरण

डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह

मैं जो भी काम करता हूँ, चाहे वह शारीरिक हो या मानसिक, इसका असर मेरे शरीर पर पड़ता ही है। कुछ देर बैठकर मैं कुछ सोचता हूँ या पढ़ता हूँ तो दिमाग़ थक जाता है, सर में भारीपन मालूम होता है। ज्यादे देर तक देखने का काम करता हूँ, आँखें थक जाती हैं। हाथ से शारीरिक परिश्रम करता हूँ तो मांशपेशियाँ थक जाती हैं। मैं कोई भी काम करता हूँ तो थकावट इसका ख़ास परिणाम सा जान पड़ता है। मामूली थकावट होने पर, यदि मैं अपना काम जारी रखता हूँ तो थकावट और बढ़ जाती है, यहाँ तक कि जिस अंग से काम करता हूँ, उसमें दर्द होने लगता है, सूजन आ जाती है और ज्वर भी हो आता है। कोई भी काम करने से मांशपेशियों में एक प्रकार का अम्ल पैदा होता है इसको अंगरेज़ी में साइकौलैक्टिक (Syco lactic acid) कहते हैं। यह मांशपेशियों में थकावट पैदा करती है और नाड़ी-संस्थान में जलन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैदा करती है। यह जलन काफ़ी देर तक क़ायम रहती है तो नाड़ी-संस्थान कमज़ोर पड़ जाता है और बीमारी की शुरूआत यहीं से होती है। हमारे शरीर के जितने अवयव हैं, उन्हें नाड़ी-संस्थान द्वारा ही संचालित किया जाता है। नाड़ी-संस्थान की कमज़ोरी के कारण, सुचारु रूप से कोई भी काम मैं नहीं कर सकता। मैं काम करने का प्रयास करता भी हूं तो मेरी कमज़ोरी और बढ़ जाती है और यहाँ तक बढ़ सकती है कि वह अंग सदा के लिए काम करना बन्द कर दे। उदाहरण के लिए, एक चीज़ ले लीजिये—आँखों की कमज़ोरी। जब मैं अपनी आंखों से काम करता हूँ, कुछ देर काम करने के बाद इनमें थकावट जान पड़ती है, इनमें से पानी आता है। यदि इस पर भी अपना काम ज़ारी रखता हूँ तो चश्में की ज़रूरत होती है। जैसे-जैसे समय बीतता है, वैसे-वैसे चश्मे का नम्बर बढ़ता ही जाता है। कुछ लोगों की हालत ऐसी हो जाती है कि चश्मा भी बेकार साबित होता है और उन्हें काम बन्द कर देना पड़ता है। सिर्फ आँखों की ही ऐसी बात नहीं है, हर एक अंग की यही हालत हो सकती है। थकावट का उत्पन्न होना एक छोटी सी बात है, पर डाक्टर से लेकर एक साधारण मजदूर तक यही ग़लती करता है और इस थकावट को बहुत कम ही लोग समझ पाते हैं। जब मुझको आंख की कमज़ोरी मालूम होती है तब मैं क्या करता हूँ, डाक्टरों के पास जाता हूँ और डाक्टर समुचित उपाय नहीं बतलाते। बताएँ तो क्या? वे ख़ुद ही नहीं जानते। चश्मा लगाने को बताते हैं और वे यह दावे के साथ कहते हैं कि आँखों की कमज़ोरी तो जा ही नहीं सकती। चश्मा लगाना ही एकमात्र उपाय है। ऐसे दावे से मुझको बड़ी हँसी आती है। ऐसा दावा करना सिर्फ अज्ञान का सूचक है। महज़ छोटी सी बात है; बिलकुल साधारण सा नियम है—कि जब थकावट मालूम पड़े तो आराम करो। पर यह बात अवश्य जानने की है। सारी बीमारियों का कारण ही एकमात्र थकावट है।

साधारणतः स्वस्थ अंगों में लचीलापन होता है, उस समय नाड़ी-संस्थान ठीक से काम करता है। पर यदि धीरे-धीरे अंगों में विजातीय द्रव्य जमा होता है तब नाड़ी-संस्थान अपना काम बन्द कर देता है तो उस अंग में कड़ापन आने लगता है। अंगरेज़ी में एक कहावत है—Mobility is life, regidity is death अर्थात् लचीलापन ही जीवन है और कड़ापन मृत्यु। आयुर्वेद ऐसा विश्वास करता है कि कफ, पित्त, वायु की गड़-बड़ी होने के कारण बीमारियों की उत्पत्ति होती है। योग शास्त्र सिर्फ एक ही बात मानता है लालात् रोगः अर्थात् बीमारी होने का कारण कफ ((Mucus) है। यह कफ सिर्फ गले से ही उत्पन्न नहीं होता, वरन् सभी त्वचाओं से उत्पन्न होता है—नाक से, कान से, पेट से, और शरीर के हर एक अणु और परमाणु से उत्पन्न होता है।

हरएक अणु और परमाणुओं के भोजन, समीकरण विसर्जन के द्वारा कफ, पित्त, और वायु उत्पन्न हुआ करती है और यह उचित मार्ग (Proper Channel) के द्वारा शरीर से बाहर हुआ करती है। पर यदि शरीर के किसी अंग में कड़ापन होता है तो मल निकलने का मार्ग बन्द हो जाता है और उस अंग में मल धीरे-धीरे जमा होने लगता है। इससे सूजन पैदा होती है, सूजन से दर्द और फिर ज्वर उत्पन्न होता है। यह ज्वर तब तक क़ायम रहता है, जब तक सूजन रहती है। सूजन की हालत में यदि वहाँ पर ख़ून का संचार अच्छी तरह हो सका, उस अंग में शिथिलीकरण हो सका तो धीरे-धीरे वहाँ का मल निकल जाता है वहाँ से दर्द और तक़लीफ मिट जाती है और मनुष्य पुनः स्वस्थ हो जाता है। पर यदि उसको मैं शिथिल नहीं कर सका, कड़ापन जैसे का तैसा बना रहा तो सूजन में संचित-मल के कारण सड़न शुरू हो जाती है, पीब बनता है और ज़खम (फोड़ा) बन कर निकलता है। मल के निकल जाने पर ही शान्ति आती है। जितने प्रकार के ज्वर हैं, सभी सूजन के कारण ही हुआ करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे मोतीझरा (Typhoid) में पेट में सूजन होती है। निमोनिया (Pneumonia) में फेफड़ों में सूजन आती है। Influenza जुकाम करके गले में सूजन होती है। चेचक (Pox) निकलना, या प्रायः जितनी भी बीमारियाँ हैं, सूजन ही द्वारा हुआ करती हैं। यदि रक्त का संचार ठीक ठीक हर अंग में हुआ करे और किसी क़िस्म की रुकावट न हो तो बीमारी का होना असंभव है। रुकावट प्रायः कड़ापन (Regidity) के कारण ही हुआ करती है। कड़ापन (Regidity), थकावट (Strain) के द्वारा ही हुआ करता है। कड़ापन (Regidity) सूचित करता है कि नाड़ी-संस्थान ठीक से अपना काम नहीं करता और वहाँ पर किसी न किसी प्रकार की थकावट (Strain) अवश्य मौजूद है। यह थकावट कोई जरूरी नहीं है कि शारीरिक परिश्रम करने से ही पैदा हो। यह विचारों से भी उत्पन्न होता है—जैसे—एक आदमी का स्वभाव चिड़चिड़ा है, किसी भी बात से चिड़चिड़ाता है, किसी भी बात से उसकी अहमता को ठेस लगती है तो इसका परिणाम यह होता है कि उसकी भौंहें हमेशा चढ़ी हुई रहती हैं। इससे आँख की माँशपेशियों में थकावट आती है। थकावट द्वारा कड़ापन (Regidity) आता है। इससे आंखें कमज़ोर होती हैं। इसी थकावट की वजह से वहाँ की नाड़ी भी कमज़ोर होती है। कभी कभी यह भी देखा गया है कि आँख की नाड़ी बिल्कुल काम करना बन्द कर देती है और वह मनुष्य अन्धा हो जाता है। यह नाड़ियों की थकावट (Nervous Strain) आज्ञा-चक्र होकर अनहद (Cardiac Plexs) तक पहुँचता है, अर्थात् आज्ञा-चक्र भौंहों के बीच में नासिका के ऊपर है और अनहद चक्र हृदय-स्थान में। इसलिये मनुष्य जैसा विचार करता है उसका असर उसके शरीर पर पड़ता है, वैसी ही उसकी बीमारियाँ होती हैं। अगले लेख में मैं चक्रों का वर्णन करूँगा और उसके अगले लेख में किन विचारों से कैसी बीमारियाँ होती हैं उनके वर्णन करने का प्रयास करूँगा।

कहने का अभिप्राय यह है कि मनुष्य-जाति की जितने प्रकार की भी बीमारियाँ हैं सभी थकावट (Strain) द्वारा ही होती हैं। पहले हम यह थकावट शारीरिक परिश्रम करके मांसपेशियों द्वारा अनुभव करते हैं। इसके बाद यह थकावट नाड़ियों (Nerves) तक पहुँच जाती है। शरीर में जितने प्रकार के अवयव हैं, सब नाड़ी द्वारा ही संचालित होते हैं। कुछ नाड़ियां ऐसी हैं, जिनका सम्बन्ध सीधे मस्तिष्क से है और विशेष नाड़ियों का सुषुम्ना (Spinal cord) से है। नाड़ियों की कमज़ोरी मस्तिष्क तक पहुँचती है और यहाँ पर विचारधारा में परिवर्तित होती है। थका हुआ मस्तिष्क उत्साहवर्धक विचार नहीं ला सकता और फिर भी उत्साहहीन विचारों से थकावट बढ़ती है। इसका प्रभाव सारे शरीर पर पड़ता है। किसी अंग के स्वास्थ्य के लिये या सारे शरीर के स्वास्थ्य के लिये यह जरूरी है कि मनुष्य थकावट का अनुभव न करे। यदि थकावट हो तो उसे दूर करने की कोशिश करे। कुछ क्रियाएँ नीचे दी जाती हैं, जिनसे थकावट दूर की जा सकती है—

(१) शवासन—इस आसन में मनुष्य का शरीर शव (मुर्दे) की भाँति दीखने लगता है। इसी कारण इसको शवासन कहते हैं।

विधि—आसन पर पीठ के बल लेट जाइए। हाथों को बगल में शरीर छूते हुए ज़मीन पर रखिये। पैर दोनों सीधे रहें, एड़ियां सटी रहें। अब आँखें बन्द कर लीजिए और अपने समस्त शरीर को इतना ढीला कर दीजिए कि वह प्राण-रहित मालूम हो। इस समय सांस भी धीरे धीरे लीजिए। शरीर की जितनी मांस-पेशियाँ हैं उन सब को ढीला रक्खा जाय। इस आसन में वही लोग जल्द पूर्णता प्राप्त कर सकते हैं जो शरीर को शिथिल करने की विधि से अभ्यस्त हैं।

लाभ—थकावट के बाद इस आसन को करने से असीम आनन्द का अनुभव होता है। शरीर में शक्ति और स्फूर्ति आ जाती है। सब आसनों के करने के बाद इस आसन को करना चाहिये।

(शेष क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

कांगड़ी गुरुकुल में १२ मार्च १९४५ ई० को प्राप्त
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

जीवन सखा

सम्पादक
डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह
पं० महेन्द्रनाथ पाण्डेय

वर्ष ९] दिसम्बर १९४४ [अङ्क १२

प्राकृतिक चिकित्सा और औषधि

श्रीयुत जानकीशरण वर्मा

"क्या प्राकृतिक चिकित्सा में भी औषधि का स्थान है"? मेरे मित्र बद्रीनाथजी ने आश्चर्यित होकर मुझ से पूछा। मैं एक रोगी की चिकित्सा कर रहा था, जिसे ९९° के लगभग ज्वर रहता था। उसे मैं धूप-नहान और कमर (पेड़)-नहान देने के अलावा दिन में दो बार कच्ची पालक और कच्ची गाजर का रस भी पिलाता था। इसी पर मेरे मित्र आश्चर्यित हुए और उपर्युक्त प्रश्न किया। मैंने कहा, "प्राकृतिक चिकित्सा में औषधि का स्थान अवश्य है। अगर वह विषमय न हो और लक्षणों को न दबाये। प्राकृतिक चिकित्सा के श्रद्धेय संपोषकों में से एक, अमेरिका के विद्वान डाक्टर हेनरी लिंडल्हार, एम. डी., ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि जो कुछ भी शरीर के अंदर के रक्त को ठीक अवस्था में रखे और प्राकृतिक विधि से उसे परिष्कृत और स्वस्थ बनावे वही प्राकृतिक चिकित्सा है। उन्होंने इस पद्धति में जड़ी-बूटियों और होमियोपैथिक औषधियों को भी सम्मिलित किया है। होमियोपैथी की कुछ औषधियाँ विषैले पदार्थों की बनी होती हैं; पर लिंडल्हार के अनुसार उनकी मात्रा कभी-कभी १ के १००० वें हिस्से के बराबर भी नहीं रहती और उनसे कोई अप्राकृतिक प्रतिक्रिया नहीं होती। वह सभी रोगों में इन औषधियों के व्यवहार के पक्ष में नहीं है। जिन जीर्ण या कठिन तीव्र रोगों में और उपचारों से अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं हो पाती उनमें इन औषधियों के व्यवहार का परामर्श लिंडल्हार ने दिया है। फिर बवेरिया के फादरनीप ने (यह भी एक प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक हुए हैं) जड़ी-बूटियों के व्यवहार पर बहुत ज़ोर दिया है।" मैंने अपने मित्र से कहा कि सन्तरा इत्यादि जो फल हम खिलाते हैं या दूध-मठे का प्रयोग करते हैं उनसे भी तो औषधियाँ शरीर को मिलती हैं। गाजर और पालक के रस से इस रोगी की लोहे और चूने की कमी को मैं पूरा करना चाहता हूं, इससे रोग का कोई भी लक्षण न दबेगा, फिर इस तरह के औषधि-प्रयोग में क्या हानि है।

इस विषय पर ज़रा और विचार किया जायगा। इसे अच्छी तरह समझना चाहिए कि प्राकृतिक पद्धति में औषधि का विरोध इसीलिए किया जाता है कि उस से रोग नहीं दूर होता पर शरीर के अन्दर ही दबकर रह जाता है। अगर औषधि विषैली है तो वह और ढंगों से शरीर को दूषित करती है और नये-नये रोग पैदा करती है। एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीसरा कारण यह है कि जो औषधि के अभ्यस्त हो जाते हैं वे प्राकृतिक नियमों की अवहेलना करते हैं और औषधि के सहारे सभी तरह की चीज़ें खाते-पीते हुए, सभी तरह के आनन्द उठाते हुए, रोगों से बचना चाहते हैं। ऐसा नहीं होता, साथ ही उनका चरित्र-बल भी क्षीण हो जाता है। अगर इन दोषों और त्रुटियों से बचकर औषधि प्रयोग किया जाय तो वह कदापि प्राकृतिक पद्धति के विपरीत न होगी।

हड़ खा-खाकर क़ब्ज़ को भगाना अवश्य बुरा है, क्योंकि क़ब्ज़ तो प्राकृतिक जीवन के ही सहारे दूर किया जा सकता है, पर किसी कठिन रोग में हड़ या पुनर्नवा या मुलहठी या अजवाइन जैसे विषदोष-रहित पदार्थों का प्रयोग बुरा नहीं है। हड़ का दास बन जाना या उसके बल पर हर रोज़ स्वादिष्ट पर हानिकर चीज़ें खाना निन्दनीय है, पर चार-छः बार हड़ के प्रयोग से किसी कठिन रोग को दूर करने में सहायता लेना न केवल अप्राकृतिक ही नहीं वरन् श्लाघ्य है।

एक बात और है। कभी-कभी प्राकृतिक उपचारों के साथ-साथ इन त्रुटिहीन औषधियों के व्यवहार से खींचातानी की अवस्था पैदा हो जाती है। औषधियाँ एक तरह से अच्छा करना चाहती हैं और नहान इत्यादि प्रयोग दूसरी तरह से। इस को समझना और इस से बचना चाहिए, लेकिन एनीमा-प्रयोग के साथ-साथ तुलसी की चाय के प्रयोग जैसे प्रयोगों में कोई हानि नहीं है।

प्राकृतिक चिकित्सा जिन औषधियों का घोर विरोध करती है वे अधिकतर एलोपैथी की औषधियाँ हैं। देखिए, उसी पद्धति के कुछ प्रतिष्ठित डाक्टर अपनी औषधियों के संबंध में क्या कहते हैं:—

डाक्टर सर विलियम ऑस्लर—हम लोग औषधियाँ, जिन के बारे में हम बहुत कम जानते हैं, ऐसे शरीरों में डालते हैं, जिनके बारे में हम और भी कम जानते हैं।

डाक्टर एफ. टी. फ्रेडरिक्स—जो कुछ हम बीमारी के बारे में समझते हैं उसका हमारी औषधियों से कुछ संबंध नहीं रहता। बीमारी कुछ और रहती है और हमारी औषधियाँ कुछ और।

डाक्टर वियर मिचेल—बीमारी के सच्चे कारणों तक औषधियाँ पहुंच ही नहीं पातीं।

डाक्टर हेस्टिंग्स—पच्चीस साल के अनुभव के बाद मैं शेक्सपियर के चेले की तरह कह सकता हूं कि औषधियों को कुत्तों के सामने डाल दो।

डाक्टर बास्टक—औषधि की प्रत्येक मात्रा रोगी की जीवन-शक्ति के लिए अंधे की लकड़ी की तरह काम करती है।

डाक्टर अर्टल—जो अपने स्वास्थ्य से प्रेम रखता है वह औषधि वाले डाक्टरों से दूर रहना अपना सिद्धान्त बना ले।

डाक्टर रैमेज—मैं निर्भीक होकर कह सकता हूं कि बहुत हालतों में रोगी डाक्टर से दूर रहकर ही स्वस्थ हो सकता है।

प्रोफेसर अलांज़ो क्लार्क, एम. डी.—हमारी प्रायः सभी औषधियाँ विष हैं, परिणामतः प्रत्येक मात्रा रोगी की जीवन-शक्ति को कम करती है।

डाक्टर सर विलियम ऑस्लर (फिर)—सभी तरह के विनाशकारी विष हमारे नुस्ख़ों में पाये जाते हैं ये शरीर में इकट्ठे होते हैं, ताप पैदा करते हैं और कोषों को विध्वंस करते है। जीर्ण रोगों में से बहुत से रोगों का कारण इन्हीं विषों के द्वारा तीव्र लक्षणों का दबाया जाना (और इन विषों का प्रभाव भी) है।

इस तरह की बहुत सी उक्तियाँ हैं, जिनसे हमारी आँखें खुलती हैं, और हम अनुचित औषधियाँ या औषधियों के अनुचित प्रयोग की बुराई को समझते हैं, पर साथ ही साथ यह भी है कि प्राकृतिक उपचारों से भी हम लक्षणों को दबा सकते हैं और दबा देते हैं। ज्वर में जल का प्रयोग उचित ही नहीं बल्कि सर्वथा प्राकृतिक है। पर ज़्यादा ठंढे जल या बर्फ़ के प्रयोग से ज्वर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को भगाना उसके लक्षणों को दबाना ही तो है। ज्वर में जल का इतना ही प्रयोग करना चाहिए जितने से रोगी ख़तरे से बचा रहे। अगर १०४° का नाप है तो उसे १००° तक लाकर छोड़ देना चाहिए, क्योंकि अगर ज्वर बिल्कुल शांत कर दिया जायगा तो शरीर के अन्दर के विकारों को जलाने का काम अधूरा रह जायगा। जल का अत्यधिक प्रयोग करना त्रुटिपूर्ण औषधियों के प्रयोग से ज़रा भी कम नहीं है और इसके विपरीत तुलसी की चाय या गुरिच (गुडुच) का कढ़ा पीकर ज्वर को भगाना हानिकर नहीं है।

प्राकृतिक चिकित्सा के प्रश्न को उदार दृष्टिकोण से देखने और समझने की आवश्यकता है। यह सच है कि प्रायः शत-प्रतिशत तीव्र रोगों में और प्रायः नब्बे जीर्ण रोगों में किसी तरह की भी औषधि की आवश्यकता नहीं है। इन में से प्रायः चालीस प्रतिशत सिर्फ़ उपवास या रसाहार या फलाहार से चले जायँगे, शेष रोगों में जल, धूप, भाप इत्यादि की आवश्यकता हो सकती है, पर कुछ कठिन हालतों में बुद्धि काम नहीं करती। इस संबंध में भी कई बातें हैं—हमारा ज्ञान अधूरा है। हमारा अभ्यास पक्का नहीं, अनुभव की कमी है, हमारे पास सभी साधन नहीं और अंत में चिकित्सा रोग की है न कि मृत्यु की। अगर ऐसी कठिन परिस्थिति में औषधि से काम चल जाय तो उसके प्रयोग में मुझे आपत्ति न होगी। आपत्ति उसी में है, जिस में औषधि की कुछ आवश्यकता नहीं, फिर भी हम औषधि-प्रयोग करते हैं। मुझे जल के प्रयोग में भी, जिसमें ऐसे प्रयोग की आवश्यकता नहीं, जैसे, आज ही शुरू हुए १०० या १०१ के ज्वर में, आपत्ति होगी।

प्राकृतिक उपचारों का आधुनिक रूप पश्चिम के देशों में तैयार हुआ है। उसे अपने देश के अनुकूल बनाने के लिए हेर-फेर, रद्दोबदल और कुछ मिलाने-जुलाने की आवश्यकता है। पश्चिम-देश के लोगों के शरीरों में (बहुत मांस भक्षण इत्यादि से) बहुत गर्मी रहती है। उनके लिए जितनी ठंडाई के जल का प्रयोग उचित होगा वह शायद अपने देशवालों के लिए ठीक न होगा। इसी तरह बहुत बातों में गंभीर विचार की आवश्यकता है। दूसरी बात यह भी है कि दूसरी-दूसरी पद्धतियों के प्रयोगों द्वारा जो लाभदायक बातें मिली हैं उन्हें भी अपनाना पड़ेगा। आयुर्वेद के नाड़ी-ज्ञान, खाद्य-ज्ञान, काष्ठौषधि-ज्ञान को ठुकराना मूर्खता की बात होगी। इसी तरह एलोपैथी के शरीररचना-ज्ञान, आवश्यक हालतों में नश्तर देना इत्यादि बातों से लाभ न उठाना संकीर्णता की बात होगी।

इस पत्र के संपादक ने जलोदर, दमा इत्यादि कुछ रोगों के अपने सफल प्रयोग निकाले हैं। इन बीमारियों में अगर स्नान इत्यादि का सहारा लिया जाता है तो या तो कुछ भी नहीं या बहुत देर में लाभ होता है, साथ ही संपादक महोदय के प्रयोग सर्वथा प्राकृतिक हैं। इसी तरह के विचार-शील प्रयोगों से प्राकृतिक पद्धति और भी उपयोगी होगी। कट्टरपने से काम नहीं चलने का।

मालूम नहीं, बद्रीनाथ जी का आश्चर्य इस लेख से कम होगा या नहीं!

मियाँ-बीवी का झगड़ा

श्रीयुत् जानकीशरण वर्मा

रामनाथ—मैंने कौन ऐसे पाप किये थे कि ऐसी चुड़ैल से ब्याह हुआ! मेरा तो जीवन नष्ट हो गया। वे ही अच्छे हैं, जो ब्याह नहीं करते। अब मैं क्या करूं—गङ्गा में डूब मरूँ या ज़हर खालूँ!

माया—हाय, हाय! मैं कहाँ आ फंसी। मैंने अपने बाप का क्या बिगाड़ा था कि उसने ऐसे निर्दयी के घर मुझे ढकेल दिया। इससे तो अच्छा होता कि मैं कुँवारी ही रहती या कुएँ में डाल दी जाती। अब मैं क्या करूँ—कपड़े में आग लगा लूँ या कहीं भाग जाऊँ!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामनाथ—तू तो मेरा एक भी कहा नहीं करती। मैं आलू पसंद करता हूं तो तू घुइयां बनाती है।

माया—यह तो वह कहे जो स्त्री की भी बात माने। जब महीनों रट लगाती हूं तो कहीं एक सड़ियल धोती मिलती है। मुहल्ले भर की औरतें नये-नये गहने पहनती हैं पर मेरे पास तो वही शादी के समय के बाप के दिये गहने हैं।

रामनाथ—शैतान, चुप रह, अगर तुझे गहनों का शौक़ है तो किसी और के घर चली जा।

माया—भगवान, मैं मर क्यों नहीं जाती! मुझे तो इसने रसोइदारिन ही बना रखा है। अब मुझसे यह काम न बनेगा। और मैं तो सच कहीं चली जाऊँगी। भीख मांगकर पेट पालना और फटे चीथड़े पहनना अच्छा है पर ऐसे दुष्ट के घर रहना ठीक नहीं।

दूसरे दिन—

माया—ओ रे छोकड़े, अपने बाप से कहता क्यों नहीं कि रोटी खाकर दफ़्तर जाय?

रामनाथ—सुन बे छोकड़े, मैं इस घर में अब नहीं खाने का। दो-चार दिनों में अपना इन्तज़ाम और कहीं कर लूंगा। यहाँ तू और तेरी माँ के लिए ही जगह है।

कुछ दिनों के बाद—

माया—अगर डाक्टर चटर्जी से तुम्हारा रोग दूर नहीं होता तो किसी और डाक्टर का इलाज क्यों नहीं करते?

रामनाथ—करूँ तो क्या करूँ, शहर भर के डाक्टर, वैद्य, हकीम को आजमाया, पर वही क़िस्सा है कि मर्ज़ बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की!

माया—मेरी तबियत बहुत घबराती है। मैं तो हर रोज़ सोकर उठने पर यही मनाती हूं कि तुम अच्छे हो जाओ तो गंगा मइया को मिठाई चढ़ाऊँ।

रामनाथ—तुम तो सोकर उठती हो तो दुआ मांगती हो, मैं तो सारी रात जगा-जगा मनाता हूं कि मेरी मौत हो जाय तो सब बखेड़ों से छुटकारा पा जाऊँ।

माया—चलो तुम तो ऐसी ही बातें करते हो, न जाने कब ढंग की बातें सीखोगे।

आख़िर डाक्टर कामेश्वर प्रसाद सिंह बुलाये गये। उन्हों ने कहा कि सारी तकलीफ़ बढ़े रक्त-चाप (हाई ब्लड प्रेशर) के कारण हैं। इसी से चिड़चिड़ापन भी बढ़ गया है। माया ने कहा, 'मैं ही हूं कि सब कुछ सह लेती हूँ, दूसरी औरत तो जहर खा लेती।' रामनाथ ने कहा, 'तो दोनों को एक ही बीमारी है।' खैर, डाक्टर कामेश्वर जी ने अपना इलाज शुरू किया। पहले ४-५ दिन सिर्फ़ पानी में नीबू का रस निचोड़ कर पिलाया, फिर १५ दिनों तक संतरे के रस पर रोगी को रखा। बेचारे रामनाथ सूखकर कांटा हो गये। माया बीच-बीच में बहुत घबराती पर डाक्टर उसे संभाल लेते। रसाहार के बाद रामनाथ एक हफ़्ता सिर्फ़ संतरे खाकर रहा। इन दिनों बराबर एनीमा भी जारी रहा। फिर कुछ दिन संतरा-मठा, उसके बाद दो बार संतरा-मठा और एक बार रोटी-भाजी—इस तरह लगभग चार महीने के इलाज से रामनाथ ४० साल की उम्र होने पर भी ३० वर्ष का ही मालूम होने लगा। उन्होंने लगकर इलाज किया और शवासन के अभ्यास से विशेष लाभ उठाया।

एक दिन माया ने कहा, 'तुम तो बहुत भले दीखते हो। और न मालूम तुम्हारा गुस्सा कहां गया। अब तो घर हँसी-खुशी की जगह मालूम होता है।'

रामनाथ—अभी नहीं, अभी तो तुम्हारी जबान पैनी छुरी का काम करती है। अच्छे पाचन और अच्छी नाड़ियों के कारण वह मुझे लगती नहीं। अब तुम्हारा इलाज करूँगा।

माया—मैं यह इलाज कभी न करूँगी। तुम्हें संतरे खिलाते-खिलाते बाप के दिये गहनों को गिरवी रखना पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामनाथ—जाने दो चाँदी के गहने भी गहने होते हैं; अब तो सोने के गहने बनवा दूंगा। साहब मेरे काम से बहुत खुश रहता है और मुझे जल्दी ही तरक्की मिलने वाली है।

माया—यह सब गंगा मैया की कृपा है।

डाक्टर कामेश्वर प्रसाद फिर आये। माया ने लजाई आँखों से नीचे देखते हुए, साफ़-साफ़ कह दिया—मैं मर्द से इलाज न कराऊंगी। औरतों की बीमारी औरत ही समझे। बेचारे डाक्टर बहुत दुखी हुए, कहा कि भूल हो गई जो मैंने अपनी स्त्री को यह चिकित्सा न सिखाई। रामनाथ बोले, 'माया, सुन लो, तुम्हें यह पद्धति सीखनी पड़ेगी'।

शहर में ही श्रीमती कुमुदनी सिनहा रहती थीं। उन्होंने माया का इलाज किया। चार-पांच महीने में उसका भी काया-कल्प हुआ। अब तो मियाँ-बीवी के बीच लड़ाई-झगड़े का मौक़ा ही न आता।

आज रामनाथ के बेटे मुन्नू का तिलक था। दोनों डाक्टर कामेश्वर प्रसाद और कुमुदनीसिनहा वहां थे। रामनाथ ने कहा, 'देखो, मुन्नू की शादी हो रही है। जब घर में बहू आ जाय तो उसकी चिकित्सा जरूर कर देना, नहीं तो वह मेरे बच्चे का दिमाग़ चाटा करेगी।' माया ने उत्तर दिया, 'और तुम मुन्नू का इलाज करने के बाद उसका ब्याह करो, नहीं तो वह तुम्हारी ही तरह बहू को डांटा करेगा।' डाक्टर साहब ने कहा, 'सच है, जिसकी तन्दुरुस्ती ठीक नहीं रहती वही चिड़चिड़ा, पस्त-हिम्मत और काहिल रहता है।'

श्रीमती कुमुदनी ने भी कहा, 'चिकित्सा की जरूरत नहीं, लेकिन मामूली तौर पर खाने-पीने, हवा-पानी का ख़याल रखना चाहिए। देखिए न, मेरे यहां लल्लू के पिता जी और मेरे बीच कितना सद्भाव रहता है। अगर हम दोनों की तन्दुरुस्ती ख़राब रहे तो मियाँ-बीवी को झगड़ते ही बीते। ईश्वर इससे बचावे।

तुलसी

लेखक—श्रीयुत् श्रीनाथदास अग्रवाल

'माँ, आजकल तुम तुलसी की पूजा क्यों किया करती हो? तुलसी भी कोई देवता है क्या?' सुशीला ने अपनी माँ को तुलसी के छोटे से वृक्ष की पूजा करते देखकर पूछा। माँ—हाँ, बेटी! तुलसी सालिगराम को बड़ी प्रिय है इसलिये वह देवता हो मानी जाती है। दूसरे आजकल कार्तिक का महीना है। हमारे धर्मशास्त्रों में कार्तिक मास में तुलसी और आँवला के वृक्षों के पूजन का बड़ा माहात्म्य लिखा है। इसकी १०८ फेरी लगाई जाती है।

सुशीला—इसकी फेरी लगाने से क्या लाभ होता है माँ? क्या यह खायी भी जाती है?

माँ—हाँ बेटी, मैंने तुम्हें अभी बतलाया है न कि भगवान शालिग्राम को तुलसी दल बड़ा ही प्रिय है। बिना तुलसी के उनकी पूजा अधूरी ही रहती है। जबतक भोजनों में तुलसी दल न पड़े तब तक भगवान उसे आरोगते नहीं। इन्हीं सब कारणों से तुलसी की पूजा करने से शालिग्राम की ही पूजा का अर्थ माना जाता है। भगवान के प्रसाद स्वरूप यह खाई भी जाती है। इसके खाने से कितने ही प्रकार के रोग नष्ट होते हैं। पाश्चात्य डाक्टरों एवं वैज्ञानिकों ने भी इसकी बड़ी प्रशंसा की है। आज दोपहर को तुम्हें तुलसी संबंधी बहुत सी बातें बताऊँगी जिनसे तुम्हें अपने गृहस्थ जीवन में बड़ा फायदा रहेगा।

सुशीला—ज़रूर, ज़रूर माँ, तुम मुझे तुलसी की विशेषता ज़रूर बतलाओ।

× × ×

'माँ, अब तो तुम खाना खा चुकी। तुलसी के बारे में बताओ'—सुशीला ने माँ को उस समय छेड़ा जब कि वह भोजनोपरान्त जरा आराम कर रही थीं।

'हाँ बेटी, आओ बैठो। ध्यान पूर्वक सुनो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले तुम्हें मैं इसका आकार-प्रकार, क़िस्म आदि बताऊंगी।

आकार-प्रकार—तुलसी का पेड़ भारतवर्ष के प्रायः सभी हिस्सों में पाया जाता है। इसकी पत्ती कुछ गोलाई लिये हुए और मुलायम होती है। इसका रंग हरा और श्याम होता है। हरी रंग वाली तुलसी को रामा तुलसी कहते हैं और श्यामता लिए हुए रंग वाली तुलसी को श्यामा तुलसी कहते हैं। पत्ती को मसलने से एक प्रकार की तीव्र गंध निकलती है जो मधुर और प्रिय मालूम देती है। यह गंध कीटाणु-नाशक भी है। इसका पेड़ पुराना होने पर अधिक से अधिक ४ फीट लम्बा होता है।

नाम—तुलसी के बहुत से नाम हैं। भिन्न भाषाओं में भिन्न प्रकार के नाम हैं। कुछ भाषाओं के नाम मैं तुम्हारी जानकारी के लिए बतलाती हूं।

तुलसी; सुरसा, ग्राम्या, सुलभा, बहुमंजरी।
अपेतराक्षसी गौरी, शूलघ्नि देव दुन्दुभिः॥

अर्थात् तुलसी, सुरसा, ग्राम्या, सुलभा, बहुमंजरी, अपेतराक्षसी, गौरी, शूलघ्नि, देव-दुन्दुभि आदि कितने ही नाम हैं।

उपरोक्त प्रकार के नाम तो संस्कृत के आयुर्वेद ग्रंथों और धार्मिक पुस्तकों में पाये जाते हैं। अब विभिन्न भाषाओं के प्रचलित नाम तुम्हें बताती हूं।

हिन्दी—तुलसी, वरंडा, काली तुलसी। बंगला—तुलसी, काली तुलसी। महाराष्ट्र—तुलसी चे झाड़। तैलंगी—कृष्णा, गडोर चेट्टू, इल्युपसि, तुलसी चेतु, कृष्णा तुलसी। तामिल—तुलसी, अलंगई, पिरुन्दम। द्राविड़—तुलसी। कनाड़ी—एरेउ तुलसी मिडा। मद्रासी—तुलसी। पंजाबी—तुलसी, बन तुलसी। मलाया—निपल्ल, निरुनुआ, नल्लु तिरतु, कृष्णतुलसी। ब्राह्मी—लुन। सिंहाली—मुदुर, तुल्ला। फारसी—रेदान, शाह शिफरम। अंग्रेजी—व्हाइट बेसिल (White Basil), होली बेसिल (Holy Basil), परपल बेसिल (Purple Basil), लैटिन—ओसिनम सैन्कटम. (Ocinum Sanctum सफेद तुलसी) ओसिनम डिलोसम (Ocinum Dilosum काली तुलसी)।

गुण—तुलसी कीटाणु-नाशक होने के साथ ही शरीर के लिए बड़ी लाभदायक है। इसके रसमें एक प्रकार का तेज क्षार होता है जो पेट में पहुंचकर विजातीय द्रव्यों को जला कर इन्हें बाहर निकाल देता है। कम पेशाब होने की बीमारी में वैद्यों को इसका प्रयोग करते देखा गया है। हमारे धार्मिक और आयुर्वेदीय ग्रंथों में इसकी बड़ी महिमा गायी गयी है।

तुलसी कटुका तिक्ता हृद्योष्णा दाहपित्त कृत।
दीपनी कुष्ठ कृच्छ्रास्र पार्श्व सक्कफ वातजित॥
शुक्ला कृष्ण च तुलसी गुणेस्तुल्या प्रकीर्तिता।
[शारङ्गधर निघण्टु]

अर्थात् तुलसी कड़वी, तीती, हृद्य, उष्ण, दीपक तथा दाह पित्तकारक, एवं, कुष्ट, मूत्रकृच्छ्र, रक्त विकार, पार्श्वशूल, और कफ वात-नाशक है। काली तुलसी भी सफेद तुलसी के समान ही गुणवाली कही गई है।

कफानिल विनिःश्वास कासादि दौर्गन्ध्यनाशनः।
पित्तकृत पार्श्व शूलघ्नः सुरसः समुदाहृतः॥
[सुश्रुत]

अर्थात् तुलसी, कफ, वायु, विष, श्वास, खाँसी और दुर्गन्ध को नाश करनेवाली है। पित्तकारक है और पार्श्व शूल को हरनेवाली है।

हिक्काकास विश्वास पार्श्व शूल विनाशनः।
पित्तकृत् कफ कफ वातघ्नः सुरः पूतिगंधनुत।
[चरक]

अर्थात् यह खाँसी, विष, श्वास, एवं पार्श्वशूल को नाश करती है। साथ ही पित्तकारक है और कफ, वायु, दुर्गन्ध को नाश करनेवाली है।

अस्थिजस्य कालीसस्य तनूजस्य च यत्त्वचि।
दूश्यातस्य ब्रह्मणा लश्मश्वासम वीनशत्॥
सरूप कृतत्त्व औषधे सासरूप मिदं कृधि।
श्याभा सरूप करणीपृथिव्यां अत्यद्भुता॥
इदमूषु प्रसाधय, पुनारूपिणा कल्पय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

078767

अर्थात् त्वचा, मांस तथा हाड़ में जो महारोग प्रविष्ट हो गया हो वह भी रामा तुलसी से नष्ट हो जाता है। श्यामा तुलसी स्वरूपवान करने वाली है। उसके सेवन से शरीर पर का श्वेत दाग (कोढ़) एवं चमड़े का अन्य रोग भी नष्ट हो जाता है।

हमारे धर्मशास्त्रों में भी इसकी बड़ी महिमा गायी गई है।

तुलसी कानन चैव गृहे यस्यावतिष्ठते।
तद् गृहम् तीर्थ भूतं हि नायान्ति यम किंकराः॥

अर्थात् जिस गृह में तुलसी का बगीचा (वन) है वह घर तीर्थ के समान पवित्र है और वहाँ यमदूत नहीं आते।

तुलसी विपिनस्यापि समन्तात्यावनं स्थलम्।
क्रोशैमात्रं भवत्येव गङ्गे यस्येव पायसाः॥

अर्थात् तुलसी के वन के चारो तरफ एक कोस तक की भूमि गंगाजल के समान पवित्र रहती है।

तुलसी गंध मादाय यत्र गच्छति मारुतः।
दिशो दश पुनात्याशु भूतग्रामांश्चतुर्विधान्॥

तुलसी की गंधयुक्त हवा जहाँ तक जाती है। उसके दशो दिशाओं एवं चारो भूत ग्राम (आकाश, पृथ्वी, जल और वायु) शुद्ध हो जाते हैं।

मैं तुम्हें कहाँ तक बतलाऊं। सारे आयुर्वेद शास्त्र, धर्मशास्त्र तुलसी की गाथाओं से भरे पड़े हैं। हमारे यहाँ ठाकुर जी को भोजन भोग लगाने के वक्त एक-एक पत्ती तुलसी सभी सामग्री पर डालने का विधान है। क्यों? सिर्फ धार्मिक दृष्टि से ही उसका महत्व नहीं है बल्कि वैज्ञानिक महत्व भी उसका बहुत बड़ा है। तुलसी की तीव्र गंध के कारण मच्छर भोजन के पास फटक नहीं पाते और खाद्य पदार्थ विषाक्त होने और भोजन करने वाला हैजा, कै, दस्त आदि रोगों से त्राण पा जाता है।

हमारे आचार्य लोग बड़े ही विचारवान थे। उन्होंने शरीर को आरोग्य रखने वाले सभी वैज्ञानिक साधनों को धार्मिक सांचे में इसलिए ढाला था कि भारतवर्ष की धर्मप्राण जनता उनको अपना धर्म समझ कर करे और दीर्घजीवी तथा आरोग्य रहे। आज कल के पाश्चात्य शिक्षा पाये हुए युवकों में किसी को तुलसी की पूजा करते, गले में तुलसी की माला धारण किए हुए एवं भोजन में तुलसी डालते देखकर उनकी खिल्ली उड़ाने की प्रबल आकांक्षा पाई जाती है। परन्तु, बेटी यह तुम न भूलो कि ये सब कर्म भी वैज्ञानिक हैं। जहां तुलसी का जंगल होता है वहां की मिट्टी तुलसी के तेजाबी अंश से पूर्ण रहती है और हवा तुलसी के स्पर्श से विकार रहित होती है। जब आदमी नंगे पाव तुलसी की फेरी करता है उस समय पांवों द्वारा जमीन से रस शरीर में पहुँचता है। स्वच्छ हवा फेफड़ों में जाती आती है, इससे शरीर के विकार युक्त कीटाणु नष्ट हो जाते हैं और चित्त प्रफुल्लित हो जाता है। गले में तुलसी की माला या कंठी धारण करने का भी यही उद्देश्य है। इसीलिए हमारे शास्त्रों में फेरी करने का समय आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्तिक शुक्ल एकादशी तक का बताया है। क्योंकि बरसात के दिनों में अनेक प्रकार के कीटाणु पैदा होते हैं जिनसे तरह-तरह के रोग पैदा होते हैं और तुलसी उन सबसे रक्षा करती है। गले की तुलसी की कंठी और माला की गंध श्वास-प्रश्वास-द्वारा बराबर भीतर जाती रहती है जिससे किसी भी प्रकार के कीटाणु अन्दर प्रवेश नहीं कर पाते।

जहां कहीं तुलसी का वन हो, वहाँ की मिट्टी अथवा जिस गमले आदि में तुलसी लगी हो उसकी मिट्टी को शरीर में मलकर खूब अच्छी तरह स्नान करने से सभी प्रकार के चर्म रोग नष्ट होते हैं। त्वचा कोमल और कान्तिवान हो जाती है तथा मन प्रफुल्लित हो जाता है।

जहाँ कहीं तुलसी का समूह हो वहाँ व्यायाम करने से शरीर को बड़ा लाभ पहुंचता है। श्वास-प्रश्वास द्वारा तुलसी की तीव्र गंध शरीर के अन्दर जाती है और सभी प्रकार के विषाक्त पदार्थों को नष्ट कर बाहर आती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह तो मैं तुम्हें बता ही चुकी हूं कि रामा तुलसी और श्यामा तुलसी के गुण प्रायः समान ही हैं बल्कि श्यामा तुलसी रामा की अपेक्षा कुछ अधिक गुण वाली है। इस छोटे से पौधे के पास मच्छर नहीं रहते। तुलसी का रस शरीर में मलने से खटमल और मच्छर काटते भी नहीं। मेस्मेरेजिम के प्रयोग में इसकी लकड़ी बड़ा काम देती है। इस छोटे से पौधे के पास सांप नहीं आता। जिन स्थानों में साँपों की बहुलता होती है वहां तुलसी के वृक्ष विशेष रूप से लगाये जाते हैं।

यूनानी मतानुसार यह पहले दरजे में गरम, दूसरे में रूखी, मस्तिष्क के रोध की उद्घाटकर, शोथ, वायु एवं मन्दाग्नि को दूर करने वाली है। रुधिर विकार में भी बड़ी ही लाभदायक है। घर में इसका पौधा रहने से मच्छरों और खटमलों का भय नहीं रहता।

बड़े-बड़े पाश्चात्य वैज्ञानिकों एवं डाक्टरों ने इसकी बड़ी प्रशंसा की है। विदेशों से कितनी ही प्रकार की दवाइयाँ तुलसी से तैयार होकर भारत में आती हैं और हम लोग उन्हें बड़े चावसे खरीदते हैं।

भोजनोपरान्त तुलसी चबाने की प्रथा हमारे यहाँ बहुत ही पुरानी है। तुलसी चबाने में मुँह से बदबू नहीं निकलती, दांतों में पायरिया नहीं होता। इसके साथ मुँह का वह रस जो भोजन करने के बाद बनता है, पेट में जाता है जिससे भोजन बड़ी आसानी से हजम होता है।

आशा है, अब तुमने तुलसी के गुणों को खूब अच्छी तरह समझ लिया होगा बेटी! अब तुम्हे दो एक सच्ची घटना सुनाकर बाद में इसके भिन्न प्रयोग बताऊँगी। सन् १९२७ में मद्रास के दो प्रतिष्ठित मुसलमान शिकार खेलने के लिए जंगल में गए। वहाँ पर एक भयानक विषधर ने एक को काट लिया। शिकारी का साथी और उसका नौकर दोनों ही किं कर्तव्य विमूढ़ हो गए थे। ऐसे ही समय में एक किसान उधर से निकला और उसने सब हाल सुनकर थोड़ी सी श्यामा तुलसी मंगाई। बेहोश शिकारी के सिर पर चाकू से थोड़ा घाव बनाकर उसने थोड़ी सी तुलसी की पत्ती उसमें भरकर पट्टी बाँध दी। थोड़ा-सा तुलसी का रस भी उसे पिलाया गया। थोड़ी देर में ही उस शिकारी को होश आगया और उस उस दिन तुलसी का रस और थोड़ी सी तुलसी चबाने को दिया गया, दो ही दिन में रोगी भला चंगा हो गया।

क्रमशः

अगला क़दम

इस अंक के साथ 'जीवन-सखा' का ९वाँ वर्ष शेष हो रहा है। इन नौ साल की अवधि में जीवन-सखा का किन-किन प्रतिकूल परिस्थितियों से गुजरना पड़ा है, यह कदाचित् आपसे छिपा नहीं! फिर भी हम अपने स्थान पर अचल और अटल हैं! हम जानते हैं कि 'जीवन-सखा' का यह वर्त्तमान काल इसके सर्वथा विरुद्ध रहा, खास कर कागज की रोक ऐसी रही कि इच्छा रहत हुए भी, हम इसके कलेवर को अनुरूप बनाए न रख सके! इसकी क्षीणकाय हमारे लिए बड़ी कष्टकर रही, जिसके लिए आपसे क्षमा की याचना करते हुए भी हमें लज्जा आती है पर यह हमारी विवशता थी। हम अब भी अपने प्रयत्नों में शिथिल नहीं हैं। केन्द्रिय सरकार के साथ लिखा पढ़ी चल रही है और हमें आशा है कि यदि सरकार की ओर से कागज की प्राप्ति के सम्बन्ध में हम सफल रहे तो 'जीवन-सखा' की अगली सेवायें आपके सर्वथा अनुकूल और उपयोगी सिद्ध होंगी। अभी के लिए तो, अपनी विवशता, प्रतिकूलता और अपनी कमी के लिए आप-सहृदय ग्राहकों-अनुग्राहकों, शुभचिन्तकों, पाठकों और अपने लेखकों और मित्र की सहयोग ही हमारा संवल रहा है—क्षमा की याचना करते हैं और नव वर्ष के लिए आपकी उदार भावना का सादर आह्वान। मङ्गलमय प्रभु हमारे मङ्गलमय अनुष्ठान को सार्थक कर।

Printed at the Mission Press, Allahabad,
Published by Dr. Baleshwar Prasad Sinha, 11, Lookerganj, Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक प्राप्ति का वर्तमान पता।

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रन्थ भंडार

२८७ बादशाही मंडी

चौक

इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1990-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri